(१३) भाँग, तम्बाकू, अफीम पोस्त, गाँजा, चरस, सुल्फा आदि नशों से तथा मास मदिरा जूआ आदि सर्व व्यसनों से रहित होना। और व्यसनी व बुरे पुरुषों की संगति से बचना।

(१४) बाह्याडम्बर में रत न हो गुरु अथवा सात्विकी रंग रंजित वस्त्र धारण करना और हर समय ईश्वर को याद करते रहना।

(१५) भ्रमात्मक मीढ़ता में न फँस कर सद्गुरुद्वारा प्राप्त वेदानुकूल सत्य का अनुसरण करना।

(गुरुवाणीसे उद्धृत)

फल तरुतें तूटाँ पछै, वधै न विलगै जाय।
गुरुवेमुख नहिं नीपजै, भावै गोविन्द गाय ॥ १ ॥
गुरुधर्म सिखकर किया, गुरुका किया न मान।
जमहरिया गुरुधमको, इसे आरसे जान ॥ २ ॥
हरिया करणी क्या करै, गुरुसे वेमुख थाय।
तोरै तूटी वरत ज्यों, खपडराच को जाय ॥ ३ ॥
(श्रीहरि. वाक्यम्)

तुम सद्गुरु मैं शिष्य हौं, मेरा किया न होय।
सघर देख शरणो लियो, भव डर डारो खोय ॥ ४ ॥
(श्रीराम वाक्यम्)

कै दिन बीतां कह्यो मोर भोपो हुय भाई ।
नहिंतो सान्यो करों गुसांई मना न लाई ॥
तव विकल चित्त सुधि नाँहि तन पीपाड़ भ्रमतो आपन्यो ।
प्रेमदास सतसंगते देवपुरीको दुख टन्यो ॥ २ ॥
नित नेम हजूरी महन्त गुरु, देह लग तिनके संग रह्यो ।
प्रेमदास ता प्रती पूछ सव कह्यो राम भज ।
देवपुरी दृढ़ धार राम मुख रट्यो रात मँझ ॥
भैरव दूरे हूत क्रोध कर वहुत डराये ।
राम टेक विश्वास धार गुरु दरशन आये ॥
गुरु रामदास महाराजकी ले दीक्षा आनन्द भयो ।
नित नेम हजूरी महन्त गुरु देह लग तिनके संग रह्यो ॥ ३ ॥

छन्द मनहर ।

राजगुरु पुरोहित नाम सगरामदास ।
ईडरके मध्यवास साधुसंग भयो है ॥
देवी देव मात त्याग साचो राम इष्ट जान ।
सत्तगुरु रामदास शरण आन लयो है ॥
राजा शिवसिंह कहैं पूज तमें वेचरा की ।
छोड़दई ताको फल अवी पाय गयो है ॥
भ्रात रामसिंह हू की वधू स्यानगत्त हुई ।
साधु शोभाराम पास दुःख सबे कयो है ॥ १ ॥
तवै साधु कह्यो एम मास एक मध्य खेम ।
धरो प्रण प्रीति नेम गुरू साच आनियो ॥
ताहीदिन रामसिंह लियो खण सिध्रह् को ।
जाऊं रामधाम तवै पाऊं एम जानियो ॥
एक दिन भूलचूक वटत प्रसाद साथ ।
लेतही शयन माँझ गैव छड़ी हानियो ॥
वोल कह्यो मूढ तुम किरी चूक गयो अहो ।
ऊठ के किवाड़ देखे जड्यो हाथ जानियो ॥ २ ॥

दोहा ।

मास दिवस आयो जवै, शुद्ध भई ता नार ।
फिर गुरुदर्शन आयके, लह्या दर्श सुखसार ॥ १ ॥
दास सगराम जु भक्तिभल, गुर्जर वधी सवाँय ।
अनता जीव चेतायके, मिले मोक्षके माँय ॥ २ ॥

वाणी-विषय-सूची।

(प्रथमपरिच्छेदः)

परमात्मासे यही प्रार्थना है कि कठिन कुटिल कलिकालकी कुचालसे अनाक्रान्त हमारे इस रामस्नेहधर्मको सिंहथल खेडापेके आचार्य अपनी छत्रछायामें प्रथमतः जिसप्रकार सुरक्षित रखते आएहैं उसीप्रकार पुनरपि रखतेहुए सुखी समृद्धिशाली और चिरंजीवी होवें।

इन गुरुधामठिकानोंमें साधुसेवा, शिष्टाचार, सद्धर्मोपदेश, विद्याध्ययन, अतिथिसत्कार, अनाथोंका पालन, रोगियोंको औषधिप्रदान, गरीबोंको सदावर्त, गौरक्षा, पक्षियोंको चूण आदिके प्रबंधकी परंपरासे जैसी मर्यादा चली आरही है और उदारबुद्धिसे जिसका पालन हो रहा है इसी प्रकार प्रभु सदाकाल इसको निभाते रहें।

शान्तिः पुष्टिस्तुष्टिश्चास्तु।

विनीत
राम नारायण वैद्य.

1 करुणासागरमें ५२ कथाएँ और २ दृष्टान्त हैं।

राग केदारो।

पद ३१

रहिये राम रंग में डूब चंगा राखि तन मन खूब ॥ टेक ॥
सावा पीला लाल सपेता केता रंग लगाया।
जबलग राम रंग नहिं लागा उडताँ वार न लाया ॥ १ ॥
सिरपर सांग पहरि भयो स्वामी छापा तिलक बणाय।
जबलग हरि की भक्ति न जानी संग दुनी के जाय ॥ २ ॥
करि करता पूजै कृत्रिम कूं हेत घणै हितकार।
जबलग प्रेम पियास न हरिका मोह्या मोह विकार ॥ ३ ॥
वेद कथा बहु करत उचारा अनुभव ज्ञान सुणाय।
जबलग आपा खोजत नाहीं भूलो और भुलाय ॥ ४ ॥
बाजा राग छतीसूं सा रे करि तणतण तांत बजाय।
जब अंतर अनुराग न उपज्यो गाय भाँवै मत गाय ॥ ५ ॥
जन हरिराम रची है रंगत करि करि अधिकी ख्याँति।
प्रेम पास दे रंगी पिछोरी लगै न दूजी भाँति ॥ ६ ॥

पद ३२

रहियै नाम में गलतान नहि तो जाहिंगो निसतान ॥ टेक ॥
मारि द्वंदर मेट दुवध्या धारि अधरा ध्यान।
होइ तन मन माहिं परचा दाखिया गुर ज्ञान ॥ १ ॥
शब्द कुहाडी सूड़ साँसौ सुकृत करि किरसान।
नाम निज कण बहुत नेपै भूख दुःख नसान ॥ २ ॥
मन पवना मिल लियो लाटो सिखर आई साख।
ज्ञान की भरि गुण गाढी लदे बालद लाख ॥ ३ ॥
तत्त ताँडै तणो नायक जाय समदाँ पार।
हरिरामां जब आय बैठा आर भार उतार ॥ ४ ॥

पद ३३

जिंदरिया जाहिंगी रहता है हरिनाम ॥ टेक ॥
जिंद थकी नहि जाणियो प्राण आपणो पीव।
औथ पड़ै कर पारकै जम लेजासी जीव ॥ १ ॥
बालपणै नहि जाणियो भर जोवनमें काम।
तन तरुणा वृद्धा भयो तोइ न चेतै राम ॥ २ ॥

काला। २ एक प्रकार का निकृष्ट लोहा।

१ अज्ञात वश कोई टहनी टूट गई हो तो अपराध क्षमा करें।

राग रागनियें गाने का समय।

(चार वजे से सूर्योदक तक)

विभास, जोगिया, ललित, कालिंगडा, भैरव।

(सूर्योदय से १० वजे तक)

आसावरी, टोडी, भैरवी, विलावल।

(दिनके ११ से २ वजे तक)

सूहासुघराई, सारंग, भीमपलासी, जिंझोटी।

(दिनके ३ वजे से सूर्यास्त तक)

जयश्री (जैतश्री) धनाश्री, पीलू, पूरवी, पूरिया, पहाडी, गौडी।

(सूर्यास्त से लेके रात्रि के १० वजे तक)

कल्याण, ईमनकल्याण, केदारा, हमीर, खम्बायच, पहाड़, नट, छायानट, भोपाली।

(रात्रि के १० वजे से १२ वजे तक)

जैजैवन्ती, कान्हडा, माढ, गिरनारी, देश, सोरठ, विहाग, मारू।

(रात्रि के १२ वजे से ४ वजे तक)

मालकोंस, सोहनी, परज।

नोट—परिचय १३ पृष्ठके लाइन २२ मे (शाभवी और खुदव) के स्थानमें संभव और खुदवह पाठ जानना। इस पुस्तकमें समस्त पद ३०० हैं।

अथ प्रश्नोत्तर ।

चौपाई ।

निश्चल कहा ब्रह्म गुसाईं । चंचल कहा माया है भाई ॥
जीवन कहा भुजन भलजानो । मृतक कहा अपयशहि बखानो॥१॥
जागै कौन विवेकी होई । सोवै कौन मूढ़मति सोई ॥
बडा कौन जरणा उरपेरो । दाना कौन सत्यगुरु देरो ॥ २ ॥
गहियै कहा वचन गुरुमानो । तजियै कहा विकर्म अजानो ॥
सद्गुरु कौन तत्व के वेता । धन्य कौन ब्रह्म निज हेता ॥ ३ ॥
बुधिवंत कौन जोनिसे टारै । मोक्ष कहा निजज्ञान विचारै ॥
जानै कहा साख्य विधिसारी । साधै कहा मन पवन विचारी ॥ ४ ॥
शुचिहै कौन दमन इंद्र्यानो । पंडित कौन विचारै नीको ॥
कौन विचारै नित्य अनित्य । विषमु कहा गुरु निन्दा चित्त ॥५॥
कृतघ्न कौन प्रीतिही चोरै । नदी कहा तृष्णा बहु बोरै ॥
सार कहा चित शुद्ध विचारै । वचन कहा सत वचन उचारै ॥६॥
अध कौन अति क्रोध अनीता । सूर कौन मनसे बुध जीता ॥
सुनै कहा हरिगुन उपदेश । पीयै कहा प्रेम रस वेश ॥ ७ ॥
जिह्वरस कहा वचन सुध भाखै । दान कहा ज्ञानागुण दाखै ॥
शीतल कहा हिरदै सन्तोष । तप्त कहा आहै अतिदोष ॥८ ॥
सुखी कौन जग वाछा तजै । दुखी कौन भव बन्धन भजै
अथिर कहा धन जोवन जानो । गरवा कौन सन्त सो मानो ॥ ९ ॥
नरक कहा गर्भवासा सोई । बन्धन कहा पराधिन होई ॥
मुक्ति कहा स्वाधीन अदोष । भूषण कहा शील सन्तोष ॥ १० ॥
करियै कहा सत्सगति सोई । सन्त कौन उपकारी होई ॥
मित्र कौन अशुभते टारै । वैरी कौन आलस ठग मारै ॥ ११ ॥
बुरा कौन हरि विमुख विराम । चिन्ता कहा चिन्तवन साम ॥
निंदियै कहा मिथ्या ससार । वंदियै कहा सन्तजन सार ॥१२॥
दुर्लभ कहा प्रीति निरवाय । सुमरियै कहा राम निज राग ॥
विसरियै कहा पर अनगुण सोई । पापमूल कहा लोभहि होई ॥ १३ ॥
दु:खमूल कहा मूर्ख से प्रीति । तीर्थ कहा सत्सगति नीत ॥
शुभहि कहा सबसे मित्राई । धन्य कहा हरिनाम सदाई ॥ १४ ॥
पढियै कहा भगवन्त वाच । सुनियै कहा हरि कथा जु साच ॥
जीतिय कहा लोभ अरु मोह । सोभ कहा हरि भजन अदोह ॥ १५ ॥
डरसो कहा कालको मानो । तपभय कहा विषय सो जानो ॥
वश कहा कीजै मन मतवारो । मीठो कहा जग चाह विचारो ॥ १६ ॥

सद्गुरु विन अजपा नहिं जाणै । रोम रोम रस किसविधि माणै ।
सद्गुरु विना वंक नहिं पीवै । कैसे मिलकर जुगजुग जीवै ॥ १२ ॥
सद्गुरु विना पंच नहिं उलटै । काग वंश कहु किसविधि पलटै ।
सद्गुरु विना अधः नहिं जाणै । ऊर्ध्व कमल कहँ किसविधि माणै॥१३॥
सद्गुरु विना मेरु नहिं छेदै । आकाश कमल कहु किसविधि मेदै ।
सद्गुरु विन अनहद नहिं पावै । त्रिवेणी तट कैसे न्हावै ॥ १४ ॥
सद्गुरु विना लिव्व नहिं लागै । ब्रह्मजोति कहु किसविधि जागै ।
सद्गुरु विन दशमा नहिं जाणै । सहज समाधि किसीविधि माणै॥१५॥

साखी

सद्गुरु विन सुधि ना लहै, कोटिक करो उपाय ।
रामदास सद्गुरु विना, सब जग जमपुर जाय ॥ १ ॥

चौपाई ।

कोटि कोटि वहु ज्ञान दिढावै । कोटि कोटि धुन ध्यान लगावै ।
कोटि कोटि वहु देव अराधै । कोटि कोटि किरिया जो साधै ।
तोहि गुरु गोविंद विन मुक्ति न जावै । सतगुरु विना काल सब खावै ॥१॥
कोटि कोटि तीरथ फिर आवै । कोटि कोटि असनान करावै ।
कोटिइक दै पृथ्वी परदखिणा । निज्ञ नाम विन प्रेम न चखणा ॥ २ ॥ तो० ।
कोटि कोटि वहु तुलाविसावै । सोना रूपा दान दिरावै ।
और द्रव्य वहुतेरा देवै । सहस्र नाम निशीदिनलेवै ॥ ३ ॥ तोहि० ।
कोटि कोटि जिग होम करावै । कोटिक ब्राह्मण नोति जिमावै ।
कोटिक गउवाँ दान दिरावै । कोटि कोटि वहु हेत लगावै ॥ ४ ॥ तोहि० ।
धर्म करै कन्या परणावै । दत्त दायजो कोटि दिरावै ।
कोटि कोटि कन्या फल लेवै । सर्व भेप कूँ वहु धन देवै ॥ ५ ॥ तोहि० ।
कोटि कोटि जत सत्त कमावै । कोटिक तपस्या तप्प करावै ।
कोटिक वरत करै वहुतेरा । पोत पहर लूटावत डेरा ॥ ६ ॥ तोहि० ।
कोटि कोटि ऋधि सिद्धि कमावै । कोटि कोटि भंडार भरावै ।
सदावरत वहुतेरा देवै । कानगुरूकूँ निशिदिन सेवै ॥ ७ ॥ तोहि० ।
कोटिक कहत कहत वहु कहणी । कोटिक रहत रहत वहु रहणी ।
रेचक कुंभक जोगजु साजै । ताटक ध्यान धरै मन छाजै ॥ ८ ॥ तोहि० ।
कोटि कोटि उडता वहु गडिता । कोटिक पढ्या होय जो पँडिता ।
कोटिक अगम निगम की सूझै । कोटि कोटि सूरा हुय जूझै ॥ ९ ॥ तोहि० ।
कोटि करै वारै पतसाई । नवाँ खँडामें नोवत वाई ।

॥ ॐ नमः श्रीमदाचार्येभ्यः ॥

परिचय

नित्यं शुद्धं निराभासं निराकारं निरंजनम् ॥
नित्यबोधचिदानंदं गुरुं ब्रह्म नमाम्यहम् ॥ १ ॥
यावदायुस्त्रयो वन्द्या वेदान्तो गुरुरीश्वरः ॥
आदौ ज्ञानप्रसिद्ध्यर्थं कृतघ्नत्वापनुत्तये ॥ २ ॥

श्रीसंप्रदायाचार्य[1] श्रीरामानुजस्वामी की २३ वीं पद्धति में श्रीरामानंदस्वामी हुए। और इनकी ११ वीं पद्धति में कोडमदेसर (बीकानेर) के रामानंदी वैष्णव महंत श्रीचरणदासजी महाराज के शिष्य श्रीजैमलदासजी महाराज हुए। आप सांवतसर ग्राम में विराजमान होकर परंपरानुसार वैष्णवधर्म की मूर्तिपूजनादि सगुणोपासना बाल्यावस्था में ही करने लगे। स० १७६० के चौमासे में दोपहरी के समय श्रीगोपालजी के मंदिर में आप श्रीमद्भगवद्गीता की कथा कर रहे थे। उसीसमय परब्रह्मराम पथिक का रूप धारण कर वहां पधारे। और श्रीजैमलदासजी महाराज को सम्बोधन करके कहा "अरे जैतराम[2]! जल ला"। आपने पथिक की ओर देखा तो अलौकिक दिव्यमूर्ति योगिराज दिखाई दिए। आपने झट अलांबु (तूम्बी) पात्र में जल ला हाजर किया। योगिराजने प्रेमदत्त जल पानकर कहा कि भाई! अगले ग्राम जाने का मनोरथ है रास्ता बतावें।

१—सप्रदाय चार हैं:—

१ श्रीसंप्रदाय, २ शिवसप्रदाय, ३ सनकादिकसंप्रदाय, और ४ ब्रह्मसंप्रदाय। जिनके चार ही आचार्य हैं।

१ श्रीरामानुजस्वामी, २ श्रीविष्णुस्वामी, ३ श्रीनिम्बार्कस्वामी, ४ श्रीमध्वाचार्य।

रमा पद्धति रामानुज, विष्णुस्वामी त्रिपुरारि।
निम्बादित्य सनकादिका, माधव गुरुमुख चारि ॥ १ ॥

२—दीक्षाके प्रथम का नाम है।

वक्तव्य ।

एकसमय पहाड़ की गुफा में विराजे हुए श्रीदयालुदासजी महाराज भजन कर रहेथे । उससमय देवताओंसे जिद्द कर महाराज कों छलनेके लिये एक देवांगना स्वर्गसे उतरी और हाव भाव कटाक्ष से मोहित करने को अनेक यत्न किये परंतु सारे निष्फल हुए । उसने कहा कि मै देवताओं से जिद्द करके आई हूं एकवेर नेत्र भरकर मुझे देखतो लै। पर आप नही माने । तब देवांगनानें कुपित होकर शाप दिया कि आप असह्य नेत्रों की वेदना से पीडित होवो । यों कह पीछी चली गई । और उसीक्षण आप के नेत्रों में व्यथा शुरु होगई । तो इस कदर हुई कि आप उसे सह नहि सके । अनेक उपचार किये गये किसीसे कुछ भी नहिं हुआ और दृष्टिभी नष्ट होगई । तब तो अत्यंत दुःखित होकर जिसके अक्षर अक्षर मै करुणारस भरा है उस "करुणासागरग्रन्थ" की रचना कर भगवत् को सुनाया । तब तो श्रीराममहाराजने ऐसी आप की करुणा सुनी कि उसीक्षण आप के नेत्र खुलगये और नेत्रों की सारी व्यथा मिटगई । वडा भारी परचा हुआ । वह भक्तिप्रधान यही करुणासागर ग्रंथ है जिसका पाठ करनेसे त्रयतापादि अनेक बाधाएँ दूर होजाती है । और आबालवृद्ध राम-स्नेह धर्मावलंबी साधु सद्गृहस्थ जिसका नित्यप्रति पाठ करते हैं । अर्थज्ञान सहित पाठ करनेका शास्त्रों में अधिक माहात्म्य लिखाहै । इस लिये सर्व साधारण के लाभार्थ करुणासागर की तरणी नामक टीका सेवा में सुस-ज्जित कीगई है पाठकवृन्द अवगाहन करै ।

इस के निर्माण में रतलामनिवासी श्रीमान् आत्मारामजी महोदय व रामविलासजी महोदयने पूर्णरीति से सहायता दी है जिसका आभारीहूं ।

विनीत—

चतुर्भुजदास वैद्य.

यों कहकर आप रवाने होगये और जैमल्दासजी महाराज को साथ लेलिये। फिर उनको एकांत में शमी (खेजडी) वृक्षके नीचे ले जाकर कहा "अवधू तुम क्या साधन करते हो?" जैमल्दासजी महाराजने अपना आद्योपांत सारा वृत्तांत कह सुनाया। भगवान् ने कहा, इनके करनेसे तुमको कुछ निश्चय हुआ या नहीं? आपने कहा कि, भगवन्! आपही बतलावें। तब महापुरुष परब्रह्मराम ने शुद्धान्त करण देख ब्रह्म की प्राप्तिके लिये योग-क्रियासहित मूलतारकमन्त्रका उपदेश दिया। पूजनादि सब क्रियाकांड छुडवाकर आप वहीं अंतर्धान होगये। इस बात का जैमल्दासजी महाराज को बडा आश्चर्य हुआ और उनकी चारों ओर बहुत खोज की परंतु कुछ पता नहीं मिला। फिर आप मंदिरमें पधारे तो भी आपको यही चिन्ता थी कि मुझे कहीं भ्रम तो नहीं आगया है? अथवा किसी ने मुझको धोखे से छला है। इस विचारमें उन्हों ने कुछ न खाया न पिया निराहार ही रहे। निद्रा भी नहीं आई। अर्धरात्रि होगई तब विचार आया कि स्वयम् ईश्वर ही ने ऐसा किया है परन्तु मेरा ऐसा भाग्य कहाँ? मैंने ऐसा कौनसा जप तप किया है जिससे ऐसा होता। उसी समय आकाशवाणी हुई "हे बालक! तू मेरी खोज में इतना आतुर क्यों होरहा है? साक्षात् सच्चिदानन्द अविनाशी पूर्णब्रह्म प्रकाशमान महापुरुष मैंने ही दिव्यरूप धरकर उपदेश और दर्शन दिए हैं और सत्य २ कहता हूं, आदि अन्त में तू मेरा ही जन है। संकल्प विकल्प छोड दे। तेरा अन्त-करण शुद्ध होगया है। इसलिये ब्रह्मज्ञान की प्राप्ति के लिये सगुणउपासना को छोड कर ध्यानावस्थित हो और राम राम रटता हुआ निर्गुण-भक्ति कर"। इस आकाशवाणी को सुनते ही चित्त में शान्ति आगई और भेषपथका सारा झमेला छोडकर योगाभ्यासपूर्वक राम राम रटण करते हुए योगारूढ होगए। और अलौकिक वैराग्योत्पादक निर्गुण पद वाणी का वर्णन किया। दर्शनार्थ यात्रियों की भीड अधिक रहने से आप खिन्न

१—भेषपंथ का संग तज दीया।
होय निरंतर हरिपद लीया।
(श्रीराम परची वि.राम १)

(अरुणजी की कथा)

(१) जिसपर ईश्वर की कृपा होती है उसका कोई कुछ नहीं विगाड सकता है, जैसे सूर्य भगवान् के सारथी अरुण उसकी माता ने जब कि अरुण का अण्डा कच्चा ही था अज्ञान वश पका समझ कर फोड़ दिया उस समय अरुण उसमें से पाँगले निकले । अरुण का विचार हुवा कि क्या मैं भी इस पगु अवस्थामें कभी पर्वतोंको उल्लंघन कर सकुंगा ? पर ईश्वर की कृपा से वह सूर्य का सारथी हुवा और उसकी मनोकामना सिद्ध होगई और भगवान् ने उसे अक्षयलोक का वास दिया ।

एक समय कश्यपजी ने यज्ञ करने के लिये इद्रादि देवताओं को आज्ञा दी कि, तुम सब मिलकर यज्ञकाष्ठ लाओ तव सब चले, आज्ञा पाकर अगुष्ठ प्रमाण साठ हजार वालखिल्य भी चले । वन में जाकर एक लकडी उठा कूदते फादते पीछे आरहेथे इतनेमेंही अकस्मात् रास्तेमे जलसे भरा हुवा एक गऊका खुर आगया उसमे सबके सब साठहजार ही डूबगए, उधर से इंद्र भी आ पहुचा । वालखिल्यों को तलफते हुए देखकर हंसी की । ओहो इनके लाए हुए काष्ठ से ही यज्ञ पूर्ण होगा । यों कह इद तो चलबना । इधर डूबते हुए वालखिल्यो ने भगवान् से प्रार्थना की तव हरि अवतार धार उस खुर समुद्र से उन्हें बाहर निकाले, तव वालखिल्य इंद्र पर क्रुधित होकर दूसरा इन्द्र बनाने के लिये तपस्या करने लगे और दूसरा इन्द्र बनाही दिया । यह सुन इद्र सहित कश्यपजी वहा आए और कहा इन्द्र पर क्षमा प्रदान करो, आपका बनाया हुवा इन्द्र पक्षियों का राजा होगा । बस वालखिल्य प्रसन्न हो तपस्या के बलसे दो अडे रच कश्यपजी द्वारा पक्षीमाता विनता को दिलवादिये । तव तो इंद्रादि सब प्रसन्न हो वापिस चले आए । कुछ समय बीतने पर अज्ञान वश माताने कच्चा ही अडा फोड डाला तव उसमे से एक पंगला अरुण नाम का बालक निकला और कहने लगा कि माता ! गजब करदिया । अब दूसरे अडे को तो पूरा पकने देना जिससे तुमको सुख होगा ऐसा कह अरुण तो भगवत् कृपासे सूर्य का सारथी बन पंगू था तो भी गिरि आदिकों को उलंघन करता हुवा अत में अक्षय लोक को प्राप्त होता भया । तथा हजार वर्ष बीतने पर दूसरे अडे से पक्षिराज गरुड़जी उत्पन्न हुए जो कि भगवान् के वाहन बने । इति ।

(जटायु की कथा)

(२) मरणोन्मुख जटायु जिसको भगवान् रामचद्रजी के दर्शन की उत्कट इच्छा थी उसको श्रीभगवान् ने अंतकाल में दर्शन दिया और परम धाम का वासी बनाया ॥ ६ ॥

दोहा ।

गोद शीश धरि पितुसखा, जानि कृपाके धाम ।
झारी धूरि जटायु की, निज जटानसे राम ॥ १ ॥

होकर दुलचासर पधार गए। कुए पर एक हजार प्रेत रहतेथे उनकी गति कर आप धोरे (टीवे) पर निवास करने लगे। यहाँ पर भी भीड़ अधिक होने लगी तब तो आप रोड़े ग्राम में पधार गए। और यहीं संवत् १८१० में पांचभौतिक शरीर को त्यागकर परमधाम पधारे।

भगवद्दर्शनोपदेश से पहले आपके एक रामदासजी नामक शिष्य हुए थे। जो दीक्षा लेते ही अयोध्याजी की तरफ चले गए और आपने जीवन का सारा समय भगवद्भक्ति आदि सगुणोपासना में उधर ही विताया। वृद्धावस्था होने पर आप दुलचासर पधारे उस समय गुरुदेव तो परमधाम पधार ही चुके थे। फिर आपने यहाँ पर एक ठाकुरमंदिर बनवाया और उनकी सेवा पूजा में लवलीन रहने लगे। अकस्मात् एक-दिन मंदिर के बारे में एक राजपूत से बोल चाल होगई तब केवल मंदिर की सेवा के लिए आपने एक शिष्य को वहां छोड कर आप रोड़े को मुख्य गुरुस्थान समझकर वही पधारे। और वहां भगवन्मंदिर बनवाय भगवत् सेवा में समय व्यतीत किया और दो चार नये शिष्य भी होगए। आपके परलोक पधारनेपर रोड़ा दुलचासर में आपकी दो गद्दी हुई जो अभीतक चली आती हैं और उनके गद्दीधर रामानंदी वैरागियों में (रामावत साधुओं में) महंत कहलाते है। गुरुपरंपरा से ये दोनों सिंह-थल के गुरुस्थान हैं और सिंहथल में जब दोनो स्वामीजी महाराजको पधराते हैं तब बधावणा भेट पूजादि क्रम प्राचीन रीतिअनुसार किया जाता है।



(श्रीहरिरामदासजीमहाराज)

बीकानेर राज्यातर्गत सिंहथल नामक ग्रामके ब्राह्मण भाग्यचदजी जोशी के घर आपने शुभनक्षत्र में शरीर धारण किया। पिता ने शास्त्रविहित सपूर्ण सस्कार कराकर शुभनाम श्रीहरिरामदासजी महाराज रक्खा। अत्युग्र बुद्धि होने से बाल्यावस्था में ही वेदातादि शास्त्रों में पारंगत होगये और गणित (ज्योतिष) विद्या में प्रथमश्रेणी के पडित गिने जाते थे। पूर्वजन्मोपार्जित पुण्यप्रभाव से छोटी अवस्थामें ही योगागों में योग्यता सपादन करलेने के बाद किसी ब्रह्मनिष्ठगुरुदेवके शरण होने की अभिलाषा प्रगट की तो रामसर ग्राम के उदयरामजी नामक सद्गृहस्थ ने आपको साथ दुल्चासर ग्राम लेजाकर श्रीजैमल्दासजी महाराज के दर्शन करवाये। आपने साष्टागे दडवत प्रणाम पूर्वक विनयै की और

१—रामानन्द अनन्तानन्द कर्मचन्द देवाकर।
पूरणमालवि शिष्य दामोदरदास उजागर॥
नारायण मोहनदास दास माधव मैदानी।
ता शिष सुन्दरदास चरणन्यास निज ज्ञानी॥
जिन जैमल प्रगटे नमो हरिरामदास के सत्र सुतन।
रामदास वन्दन करत पदपङ्कज अनुचर यतन॥ १॥

२ साष्टांग दडवत प्रणाम —

दे पुनि पांच प्रदक्षिणा अष्ट अंग परणाम।
स्वामी जैमल्दास के, परसे पद हरिराम॥ १॥

३ विनय —

धन्य २ मम भाग आज अनुराग दरस्सं।
धन्य २ मम भाग मिले वैराग्यपुरस्सं॥
धन्य २ मम भाग प्रेम अरु क्षेम प्रकास।
धन्य २ मम भाग जाग भव मर्म विनास॥
धन्य आज मम जन्म धन्य तातें तुम दर्शन भयो।
जा काज सकल पूछन फिरत सो मनवाञ्छित फल लयो॥ १॥

I उर शिरं दृष्टी वचन मन पद कर जानु प्रमान।
अष्ट अंग से होत है नमस्कार सविधान॥ १॥



Sri Hari Ramdasji Maharaj Achariya
(Singhthal).

नम्रता के साथ श्रीजैमलदासजी महाराज के उपदेश से अपनी शंकाओं का निवारण कर संवत् सत्रहसो के सईके में आषाढ कृष्णा त्रयोदशी को दीक्षा धारण की। श्रीगुरुदेव ने प्रसन्न हो आशीर्वाद प्रदान किया। बाद आप आज्ञा मांग सिंहथल पधारे। और नियम किया कि सिंहथल से दुलचासर जो ७ कोश है वहांपर संध्या होते ही श्रीगुरुदेवजी के पास चला जाना और रातभर गुरु सत्संगति कर प्रातः सूर्योदय से पहले ही वापिस आजाना इस प्रकार छः मास बीत गये। श्रीगुरुदेव ने आपको कहा कि तुम अब वहीं पर भजन किया करो पर आप माने नहीं तो दश दश दिन का नियम किया। इस के कुछ दिन बाद फिर गुरुदेव ने एक एक मास से आने की आज्ञा दी तो आपने हट करना अनुचित समझ शिरोधार्य की और उसीपर चलते रहे। शिलोंछवृत्ति से निर्वाह कर भजन करते करते थोड़े ही काल में दशमद्वारसमाधिस्थ पूर्ण योगिराज होगये। और जीवों के परमकल्याणार्थ वेद वेदान्त उप-

---

छप्पय।

१—परा परम को धरम गुरू उर परम गुनायो।
दे करमें परसाद राम निज मंत्र सुनायो॥
नासा निरतहु सुरति आन घर एक हुयातें।
जोग जुगति की बात कही सब परम कृपातें॥
उर भये जयहु मंगल परम, करम भरम सब कप्पिया।
हरिरामदासकूं परमगुरु, यह उपदेश जु अप्पिया॥ १॥
मंत्र सजीवन जास, जो गिरिजाप्रति शिव कह्यो।
श्रीगुरु जैमलदास, (सो) यह उपदेशजु अप्पियो॥ १॥

कुंडलिया।

२—धन्य २ शिषधर्म यह, कहे निगम लछ जेम।
परस्यो मम तुम उरन मध, परा परम जन प्रेम॥
परा परम जन प्रेम, नेम नित क्षेम निवासा।
बहुत बढे परताप मान, सत वचन सुदासा॥
निज हरिजन दिनकर धरनि, गुप्त रहै सो केम।
धन्य २ शिषधर्म यह, कहे निगम लछ जेम॥ १॥

निषद् योगसारगर्भित अनुभववाणी का प्रकाश किया । आपके सैंकडों शिष्य हुए, अनेक परचे हुए, परतु विस्तारभयसे थोडेसे लिखने में आते हैं।

एकबार आप भजन कर रहे थे कि देवताओं की भेजी हुई एक अप्सरा परीक्षा के लिये आई और आपके पास बैठ गई । ध्यानसे आप की आख खुली तो मालूम हुआ कि छलने के लिये माया आई है तो आपने उसके उल्टे हाथकी थाप मारी और पूर्ववत् ध्यानावस्थित होगये ।

एकबार आपके शिष्य विहारीदासजी महाराज से एक विद्वेषी निष्कारण द्वेष करने लगा तो आप अनुचित समझ वहा से एक कोश दूरी पर नापासर ग्राम म पधार गये । वहा पर ठाकुर देवीसिंहजी ने ग्रामसहित आपका बहुत स्वागत किया । पीछे से उस पुरुष के तीन पुत्र एकही दिनमें पचत्व को प्राप्त होगये और अग्नि के प्रकोपसे घर धन सब स्वाहा होगया तब घबराकर विलाप कलाप करने लगा । लोगोंने उसे समझाया कि यह फल महात्माओं से विद्वेष करनेका है । सारे गाव के लोग डरने लगे । तब तो करणीदानजी ने ढोल बजवाकर पाचों वास इकट्ठे किये और उस को साथ लेकर नापासर आये और श्रीहरिरामदासजी महाराज के चरणों में पडकर अपराध क्षमा कराकर वापस पधराये ।

बीकानेर शहर के दो वैश्य जिनका नाम नेतराम और मुरलीदास था उन्हों ने विचार किया कि रातही रातमें चलकर सिंहथल श्रीजी महाराज के दर्शन कर आवें । ऐसी सलाह कर घरवालों से कहदिया कि हम लक्ष्मीनाथ भगवान् के दरबारमें ही आज जागरण करेंगे और सिंहथल का रास्ता लिया। बीकानेर से ९ कोश दूरी होने के कारण अर्धरात्रि को वहाँ पहुचे । श्रीमहाराज ध्यानावस्थित हो चुकेथे और दीपक रोशनी का कुछ भी प्रकाश नहीं था तो उनके लिये यह बहुत दु ख की बात हुई कि

१—पुत्र मुवा अति दुख पऱ्यो छीन भयो धन साज ।
घर छिरणाय्यो दुखयो कहा हम कियो अकाज ॥ १ ॥
(श्रीहरि. परची)

हम विना दर्शन किये पीछे कैसे जाँय । श्रीजी महाराज ने उनकी ऐसी उत्कट इच्छा जान एक ऐसा दिव्य प्रकाश प्रकट किया कि वे आश्चर्य में भरगये और आपके दर्शन किये और स्तुति की। तब श्री-महाराज नें उनसे फरमाया कि यह सब ईश्वर की माया है इसके विषय में किसीसे कुछ मत कहना । इस आज्ञा को शिरोधार्यकर रातकी रात में वे दोनो पीछे बीकानेर आगये ।

सरूपसिंहजी नामक बारट जो दैवयोगसे निर्धन हो गये थे अतः उनके घर बारादि सब गिरवी होगये । जब बहुतही दुःखित होकर आप श्रीजी महाराज के पास आये और अपना सारा वृत्तांत कह सुनाया तब श्रीमहाराज दयार्द्रचित्त हो उनको शिष्य बनाकर लक्ष्मीपात्र बनादिया ।

एकबार सब शिष्यों ने आपके जीवितमहोत्सव (मेला) के लिये संवत् १८३४ चैत्रकृष्णा ७ का निश्चयकर सब को आमंत्रण देदिया। मेले की सारी तय्यारियां होने लगी। अकस्मात् ऐसा हुआ कि आप १५ दिन पहले ही शरीर को छोड परलोक पधार गये। शिष्यों को बहुत दुःख और चिंता हुई। उनकी ऐसी स्थिति देख आप भगवान् से एकमास की आज्ञा लेकर पीछे पधारे तब तो सारे काम बडी धूमधाम से होने लगे। नियत तिथि पर सारा आमंत्रित समाज एकत्रित होगया। और जिनको पानीका ठेका दिया गयाथा वे पर्याप्त पानी नहीं देसके। इसलिये लोगों को पानी विना बड़ा कष्ट होने लगा । शिष्यों ने ये सारी बातें श्रीगुरुदेव से अर्ज की। आपने फरमाया कि ईश्वर सब इच्छाओं को पूर्ण करेगा। और आप अपनी कुटी में ध्यान लगाकर

१—गायो गुण गोविंद को, पायो द्रव्य अमाप ।
आयो साच स्वरूप के, सतगुरु दयाल प्रताप ॥ १ ॥
(श्रीहरि. परची)

२—कारज करवा कारणे, शरणायक रिछपाल ।
करवाचा करतार सूं, आये यहा दयाल ॥ २ ॥
(श्रीहरि. परची)

विराजगये। इसके दो घड़ी बादही उत्तर की तरफ से एक छोटी सी बादली उठी और उसका इतना विस्तार हुआ कि उसने वहा बरस कर पानी ही पानी कर दिया। फिर महोत्सव पाच दिन तक बडे समारोह के साथ मनाकर सब लोग अपने अपने स्थान को चले गये। तब कई दिन के बाद आप अपनी प्रतिज्ञा को यादकर सवत् १८३५ मिती चैत्रशुक्ला ७ शुक्रवार को तीन पहर पहिले से ही अन्त्येष्टि क्रिया की सारी सामग्री मगवाली। दर्शनाथ हजारों पुरुष इकट्ठे हुए। उस समय बीठू चारणों ने आपकी बडी सेवा बनाई। तब आपने जीवनदान चारण को बुलवाया और उसे कुछ सनमे कहा। वह जहा अब देवल बने हैं उस स्थानको गया और वहा पर बेरी वृक्ष के पास एक रेत का दूवा जो महोत्सव के पहिले ही से बनाथा वह ज्यों का त्यों मिला। और जैसे ही उसके हाथ लगाया इधर श्रीजी महाराज ने इस पच-भौतिक शरीर को त्याग दिया। आपका विमान जो बनाया गया वह बडा बनगया। लोगों को चिंता हुई इसको बारणे (दरवाजे) में से किस तरह से निकालेंगे। तब पूर्ण विश्वस्त बीदा नामक सुथार ने कहा आपकी गती अपरपार है "कैतो होय बारणो चोडो के बैकुठ होय जावै सोडो" यों कह विमान बाहर पधराया तो झट बाहर आगया। देवलोंके स्थान में पधराकर अगर कपूर घृत खोपरा (गिरी) चदनादि से आपकी अन्त्येष्टि क्रिया की। चिता ठडी होनेपर नारायणदासजी महाराज की प्रार्थनानुसार अबोट एक नारियल एक गादी और पाच सात पटल-दर्शनार्थ मिले। और भी ऐसे आपके अनेक परचे हुए।

भूत ग्रह दुज पीडा पगुल, अध मूक जड़ दीन।
दृष्टि देखता किये सुखारी, पर उपकार प्रवीन॥ १॥





Sri Chet I j M haraj
(S gi tbai)

(श्रीरामदासजी महाराज)

जोधपुर राज्य के बीकोकोर नामक ग्राम में राष्ट्रीय शार्दूलजी के घर में सवत् १७८३ फाल्गुण कृष्णा १३ के दिन शुभ मुहूर्त में आप प्रगट हुए। आपके जन्मसमयमें बहुत आनदोत्सव हुआ। बडे होनेपर थोडे काल में विद्या प्राप्त करली और शाक्तिक मतावलम्बी होकर वैराग्य धारण कर जहा तहा विचरने लगे। द्वादश गुरु किये परन्तु चित की शाति कहीं भी नहीं हुई। ऐसे विचरते विचरते बीकानेर पधार गये। वहा एक सद्गृहस्थ के मुखसे श्रीहरिरामदासजी महाराजका रेखता सुना। सुनते ही उस गृहस्थसे सारा पता पूछ आप साथे सिंहथल पधारे। और श्रीहरिरामदासजी महाराज के चरणों में पड विनयं की कि महाराज! मैं

१—क्षेत्र भक्त ऋषभसुत नामा सुरधरदेश प्रकट तनु धामा।
अवनीपति इस ऋषि जनो, जनगुण नाम प्रगट दरसानो ॥
उदय अकूर अनवरल वरषा भयो सुकाज भक्तजन हरषा।
सादूलाम लकार सिधता, धन धन पिता पुत्र जनमता ॥
(श्रीराम परची)

२ रैखता —
अगम अगाध में ज्ञान पोथी पढ्या भरम अज्ञान कू दूर डाऱ्या।
नाम निरधार आधार मेरे भया गहर गुम्मान मन मोह माऱ्या ॥
तीन चक्र चूर करि चित्त चौथे गया नाभि अस्थान धुनि धम्मकारा।
सास उस्सास में वास निरभै किया रम रह्या एक आतम्म यारा ॥
सहज में साम सुमरास ऐसे मडे रोम म रोम ररंकार लागे।
दास हरिराम गुरुदेव प्रताप तें हदहू तीत बेहद्द लागे ॥ १ ॥

३ छप्पय —मडे होण के काज लाज छांडी जगकेरी।
इठ पच किया अनक तृषा उर मिटी न मेरी ॥
द्वादश गुरु फिर किया लिया मत मिल्या स जोइ।
मन उद्वग अपार थान सरिया नहिं कोइ ॥
अनुक्रम सिधात कायब अनत आप अप्र भाखे सबै।
अनाथ नाथ अशरण शरण महरवान हूज अबै ॥ १ ॥

दोहा —अरज हमारी एह नित दुस्कर कठिन तराय।
लाखा बातां बात इक, वस्यो रावरे थाय ॥ १ ॥
(श्रीराम परची)

वहुत जगह भटक लिया और द्वादश गुरु भी करचुका परंतु मुझे सच्चा और पूरण ज्ञान किसी से नहीं मिला। अब मुझको सिवाय आपके कहीं पर भी आश्रय नही है अतः कृपाकर इस दास को दीक्षा दीजिये। श्रीजी महाराज ने आपके ओघड रूप को देखकर फरमाया-भाई! रामस्नेही ऐसा रूप नहीं रखते है। यह सुनते ही आपने सेली, सिंगी, टामण, टूणादि सारे आडंबरों को दूर फेंक दिये। तब श्रीगुरुदेव ने आज्ञा दी कि एक वर्ष के अनंतर तुम शिष्य वनाए जावोगे। तब आपने अधीर होकर प्रतिज्ञा के साथ कहा कि, या तो आप अपना शिष्य वनालें, नहीं तो अन्न और जल परित्याग कर शरीर छोडदूंगा। यह सुन एक दूसरे शिष्य को परीक्षा लेने के वास्ते आज्ञा दी कि वास्तव में इनकी दीक्षा लेने की सच्ची इच्छा है या नहीं। परंतु सोने को जितना तपाया जाय उतना ही वह उत्तम होता है इसी तरह आपभी कसोटी पर पूर्ण उतरे। तब तो आपको सच्चे जिज्ञासू समझ संवत् १८०९ वैशाख शुक्ला ११ को प्रातःकाल सिद्धियोग में सन्मुख[1] आसन लगवाकर राममंत्रोपदेश दे शिष्य वना लिये। और राममंत्र का प्रभाव भक्ति ज्ञान योग क्रिया सहित भजन की सारी विधि वताकर सदुपदेश दे रामस्नेहधर्म के संपूर्ण नियम वतलाये। और फरमाया कि इस रामस्नेह[2] संगत में आजसे तुम्हारा

१—गुरु धर्म मर्यादारीति अनुसार खैडापाके महन्त आज दिनपर्यंत सिंहथल में सन्मुख ही विराजते हैं।

२—रामदास तोहि नाम सदाई। राम सनेह सगति के मॉई ॥ १ ॥
आन सनेह जाल जग झूटा। जामण मरण काल क्रम कूटा ॥ २ ॥
मोह सनेह जन्म घर धरणा। जाति सनेह चौरासी फिरणा ॥ ३ ॥
काम क्रोध के लोभ सनेही। खान पान अन मनू मिलेही ॥ ४ ॥
देह अवस्था प्रकृति सनेहा। कर्म प्रधान सजोग मिलेहा ॥ ५ ॥
पाच पचीस सनेह सनेहा। पाच कोस मध चितवन देहा ॥ ६ ॥
एता नेह तजैरे भाई। एक प्रीति गुरुचरण सभाई ॥ ७ ॥
रामसनेही जाको नामा। हरि गुरु साधु सगति विश्रामा ॥ ८ ॥
श्रीगुरुदेव कृपा भइ भारी। मान लई सिख परा परारी ॥ ९ ॥
(श्रीराम. परची विश्राम ८)

नाम रामदासजी है। ऐसा सुनते ही आप तो कृतकृत्य होगये। श्रीजी महाराज के फरमाए हुए सारे उपदेशों को शिरपर चढा प्रणाम कर आज्ञा ले विनयकर मारवाड में मह्लाणे ग्राम पधारे। लोगों ने एक पर्णकुटी बनवा दी तो आप वहीं पर श्वासोच्छ्वास भजन करणे लगे। दो मास के अनतर कुछ घट चिन्ह दिखाई दिए और गुरुदर्शन की इच्छा हुई तब तो आप रवाने होकर राममगर गाँव जो गुरुधाम से चार कोश है वहीं से पनही परित्याग कर दडवत प्रणाम करते हुए सिंहथल पधारे और श्रीगुरुदेवजी के चरणारविंदो में पडकर साष्टाग दडवत प्रणाम किया और सब गुरु भाइयों से मिले। गुरुदेव ने सबोधन किया तो आपने और कुछ नहीं कहा। केवल यही कहा कि "परचै नाद हमारे स्वामी"। तब श्रीगुरुदेव ने आज्ञा दी कि अभी तुम भ्रम में हो। दूसरे शिष्यों के साथ तुम्हारी भी परीक्षा ली जायगी। और ली गई। उसमें आप सब से पीछे रहगये। तो आपको इस बात का अत्यत खेद हुआ। श्रीगुरुदेव ने आप की ऐसा स्थिति देख फरमाया कि तुम इस बात का क्या दुःख करते हो? तुम्हारी भक्ति मेरे प्रति सबसे अधिक है। और आगे चलकर तुमही सबसे बढकर होवोगे। ऐसे आशीर्वादात्मक गुरुवाक्य सुनकर आप बडे प्रसन्न हो एक पखवाडा और कुछदिन गुरुचरणों में निवास कर पीछे मह्लाणे ही पधार गये। छ मास के अनतर आप फिर गुरु दर्शनार्थ सिंहथल पधारे तब श्रीगुरुदेवने आपको अपने उत्तम शिष्य

१—वार वार कर जोर के बहु विधि कर्यो प्रणाम।
श्रीगुरु शरण राखियो खाला नाद गुनाम॥ १॥
(श्रीराम परची विश्राम ११)

२—अधिकारीजन विहारीदासा तासु मिले रामजनदासा।
गुरु भाई वृध होत जता, सबसु मिले परसर हेता॥
(श्रीराम परची विश्राम १३)

३—मीर भरका दूर कराए। श्रीगुरु सनमुख दास बैठाए।
अब सनमुख होय भजन कराओ। आतम परच सुरत लगावो।
(श्रीराम परची विश्राम ११)

बताये। और शिष्य बनाने तथा उपदेश[1] देने की आज्ञा दी। आप कई दिन गुरुधाम में निवास कर पीछे ही पधारगए। और भजन करने लगे। नाभीचिन्ह प्रगट होने पर फिर सिंहथल पधारे। अपना बनाया हुवा "ज्ञानविवेक" ग्रंथ श्रीजी महाराज को सुनाया, सुनकर महाराज ने फरमाया कि पुत्र! तुम्हारे घट में ज्ञान प्रगट होगया है।

दोहा।

नाभि लयो विश्राम मन, वंक नाल रस लेत।
रामदास पच्छिम दिशा, शब्द चलण का नेत ॥ १ ॥

चौपाई।

श्रीगुरु आगम यों वरणै। तिरसी जीव तुम्हारे शरणै ॥ १ ॥
रामदास कहै मैं जु अनाथा। आप प्रताप आप मम नाथा ॥ २ ॥
(श्रीराम. परची विश्राम १४)

आज्ञा ले फिर पीछे पधार गए। इस भांति श्रीगुरुदेवजी के दर्शनार्थ आप कई वार पधारे। बहुत से पुरुष आपके शिष्य होने को पहले आए थे पर आपने उनको दीक्षा नहीं दी। फिर श्रीगुरुदेवजी की आज्ञा[2] से दीक्षा देनी आरंभ करदी। आपके ५२ शिष्य हुए। शिष्यों के आग्रह से मालवा, मेवाड आदि देशों में रामत कराते हुए पहिले गुरुदर्शनार्थ सिंहथल पधारे, फिर मारवाड़ बडूग्राम पधारे, वहां कुछ समय विराजे और वहां से आसोप पधार गए। वहीं पर आपके दशवें द्वार की समाधि सिद्ध हुई। और गुरुमहिमा, भक्तमाल, चेतावनी, जमफारगती आदि अनेक ग्रंथ तथा अंगवद्ध अनुभव वाणी की रचना हुई। जिन वाणी के दास, उदास, शांभवी, और खुदव करके चार भेद हैं। इस प्रकार वाणी-रचना के बाद फिर आप सिंहथल पधारे। यहां एक दिन बाहिर की तरफ आप संध्या करा रहे थे इतने में ही तो आपको श्रीकबीर साहब का

१—दो उपदेश जिग्यासी आवै। गुरुपद दरस्या गुरुपद पावै।
(श्रीराम. परची विश्राम १३)

२—रामभजन को दो उपदेसा, परा परायण गावत शेसा।
(श्रीराम. परची विश्राम १५)

लौटते हैं। बडे मुश्किल से पींछे लौटवाये । ऐसा भाति श्रीगुरुदेवजी महाराज की पधरावणा कई वार हुई । एकवार आपने श्रीगुरुदेव से अर्ज की कि महाराज! गाव क अदर का स्थान आपके परिवार के लिये छोटा है अन अत्र कोइ बडा स्थान बनवाने की आज्ञा फरमावें। तब आपने ग्रामसे पूर्व की ओर पहाडी की तलहटी म जगह बतलाई कि यहा बनवा लो । तब तो श्रीश्री महाराज की आज्ञा से यहीं पर सवत् १८३४ फाल्गुण कृष्णा ४ के दिन स्थान की नीव डालदी गई। और कई वर्षों में जाकर यह आलिशान स्थान सपूण हुआ। आप के जीवन-काल में जितने परचे हुए हैं वे सब परची में श्रीदयालुदासजी महाराजने सविस्तृत वणन किए हैं । जिनका सक्षिप्त सार जो श्रीअर्जुनदास जी महाराज करके बनाया गया है वह यहा पर उद्धृत किया जाता है।

अथ परची सार।

श्रीहरि गुरु हरिराम चित, रामदास मुख न्याम।
द्यालपुरणपूरण प्रती, अजुन की परणाम ॥ १ ॥

दोहा।

नित अवतारी सत चित, जीवा करण उधार।
भरतखड मुरधर धरा, आन लियो अवतार ॥ १ ॥

छप्पय।

सवत सतरहसो जान वप तैंयास्यो कहिये।
फागण वद त्रयोदशी रामदास जनमइये ॥
चोपत वप पचीस मिले गुरु हरियानदा।
नव को वर्ष प्रसिद्ध गुरु वैराग लहदा ॥
लेर ग्यारस अग्या रमता आप देशमज।
गाव मेलाणे विराजकर सुमरण विध एकत मज ॥ १ ॥
वप तीन इम भये जुगल्मत अडिग सधीरा।
वप दुकाल सु माहि नाजनी अतिशय भीरा ॥
नारपान जदुवश सुनी है गॉवज राकर।
उपज भावना ताह भेट कपियो ले थाकर ॥
कहे साधु हम राखाँ नहीं करो पुण्य दूजा घणा।
रामराय पूरे सवन हम शरणागत स्या तणा ॥ २ ॥

इंदव छंद ।

मान लई सत वात तिही दिन नित्य रसोई सु आन जिमावै ।
फाल वारोतड़ लोक दुखी तव संत को चित अत्यन्त दुखावै ॥
लेत उदे कण पंच पिये जल पूछ तिनां प्रति सांच वतावै ।
एम भये दिन सात अखंडसु तो पण ध्यान अडिग्ग लगावै ॥ १ ॥
सेवगरूप धरे तव माधव चून गेहूं घृत दाल ले आए ।
साधु हि राम रसोइ करो तुम राम गुरू पति भोग लगाए ॥
आजहुं ते दुख दूरि भयो तुम कहकर आपन धाम सिधाए ।
नार जु खान आए ढलते दिन संतहुते सव दुःख जु गाये ॥ २ ॥

मनहर छंद ।

कहै नारखान अहो वड़ो दुःख समय मांहि
पुसी गूघरी जु पाय आज हमें आये हैं ।
साधूराम कहे तुम आये परभात इहां
लायके रसोई हमें कह्यो गांव जाये हैं ॥
तवै नारखान भाखै गांव जो विराई हूंत
आए तुमे पास जेज घड़ी नाँहि लाये हैं ।
साधूराम हूंत कह्यो रामदास वोल एम
इने केश वधे पटफटे देख थाये हैं ॥ १ ॥

दोहा ।

नारखान मन विसम हुय, अद्भुत वात निहार ।
भाग वड़ो मेरो अहो, इसे संत हम द्वार ॥ १ ॥

कवित्त ।

ताहि समें देशमाँझ दिखणी फौज लेरु आए
राज विरोध राज काज देश पेसवार है ।
गाम जो मेलाणा हूत लोक सवै भाग चले
भाटी आय संत पास स्वाल एम डार है ॥
मात आज्ञा देहु सो तो चलत कवीला साथ
आप हमें चढां पाड़ वहाँ सॅभ्या सार है ।
रामदास कहै तुम मेरी चिंत करो नाहिं
तुम्हें घट सोई राम उनमें निहार है ॥ १ ॥

तबै नारखान कहै आज्ञा आप सोई करू
बोल सैन कह्यो साही जाय जाय कीजिये ।
चले आज्ञा पाय तबी जायके बजार मांही
कही तुम्हें शुद्ध है बकार पहल दीजिये ॥
पीछे हीरा हाथ देख मन में निहार भय
तोहि मोहि जोड कहा गहपति छीजिये ।
तबै सेनापति पाग पहल जु भ्रात भयो
ऐसो रजपूत कहा मिले मोहि रीझिये ॥ २ ॥
आय गाँव कहै तोहि कोन ऐसी मत्त भई
तबै नारखान कहै गुरू परतापही ।
आय सेनापति संग संत को नवाय शीश
धरी भेट कहै ये तो रामरूप आपही ॥
लई नाँहि संत सोई कियो हठ फेर यह
एसेही अचाही ताके दर्श आय पापही ।
नारखान दृढ धार लेऊ दीक्षा आज अहो
लायके प्रसाद कह्यो देवो मन्त्र आपही ॥ ३ ॥
तबै रामदास मान गुरू कह्यो सत्य सोई
आदू रीत जान नारखान दीक्षा दए हैं ।
धन्यो दाम ताके वक्र साधुराम किया जबै
आन राम हेत संत दास आस लए हैं ॥
अब शिषशाखा बहु रमत करत गए
रहे यहू गाँवमाँझ घाल जन्म भए हैं ।
फेर कई मास गाँव आसोप विश्राम ल्यो
करे भाव भक्ति जहा संत आय रए हैं ॥ ४ ॥

इंदव छंद ।

एक दिनाँ संत आये खेडापे हि, मोहित नाम पद्मम मिलानो ।
बोल कहे यह गाँव तुमारो हि, यादि कृपाकर वासहि ठानो ॥
आनि आँपूर उदै जहा विराजत, यप धाईम्र के धाम बखानो ।
शिष्यशाखा बहुते मिलता मति, श्रीगुरु आवत मो गुरु आनो ॥१॥

दोहा ।

हरियानन्द आप यहाँ, उच्छव करे अपार ।
एक समय जा प्रातहि शरद शिष गुण विचार ॥ १ ॥

रामदास कीनी अरज, आशा दीजै मोय।
आप काथ मांच नहीं, करांज अस्थल सोय ॥ २ ॥
गाँव हूत पूर्व दिशा, पँचशत पैंडसु जाय।
शुभ पुल इच्छा जोय के, सतगुरु दई वताय ॥ ३ ॥

छंद पद्धरी।

शुभ संवत अठारहसो प्रवान। भल वरप तिये चोके निधान ॥
फागन वद चौथज नींव दीध। यह राम चौक कोठार कीध ॥ १ ॥
उतराद दपिन भंडार सोय। चहुं कोट इन्द्र पौलसजु होय ॥
फिर उरधखंड महलॉ झरोख। छवि अद्भुत वरनूं केम गोख ॥ २ ॥
तहां भ्राजमान गुरुदेव आप। शिपहृंत मेट तन त्रिविध ताप ॥
अव राम भजनको वन्यो ठाट। चत वरण न्हाय गुरु चरण घाट ॥३॥
कर रामत मुरधर देश मॉहि। लद उष्टर घोड़ा वहल तॉहि ॥
तंवू कनात सव रीत जोय। द्वेपी तव देखे दुखी होय ॥ ४ ॥
इम भाव अभावी पक्ष दोय। कोउ साध असाधहु कहै सोय ॥
कोउ भुरकी मोहनिमंत्र भाख। कोउ आदि अवीको पंथ आख ॥५॥
इन तीर्थ मंदिर सेव नॉहि। सव शूद्र विप्र सिल एक ठॉहि ॥
इम दुष्ट जाय गुरुराज पास। सव अधिकी ओछी कही तास ॥ ६ ॥
इक आज खेड़ापे पंथ जोय। सो वजै आप महाराज होय ॥
इनको नहिं पूछै कोन जाय। नव विजयसिंह राजा रिसाय ॥ ७ ॥
लिख हुकुम दिवाणीपत्र जोय। चत अश्व चढे भृत चले सोय ॥
उन राम महोलै आय देख। अद्भुत सतसंगति भजन पेख ॥ ८ ॥
मुखसे अति सेवक भाव वात। कित स्वामीजी को दरश पात ॥
सव घाल दीन आगम जनाय। जन सेवादासहि को सुनाय ॥ ९ ॥
सर राम कुंड मरमत्त जान। श्रीरामदास तहां विराजमान ॥
कर दरश वोल नाँहिन कहाय। जो लिख्यो पत्रिका मॉय ताय ॥१०॥

दोहा।

कौन जाति पुज्यक पधति, यो कैसो उपदेश।
कोप नृपति ऐसो कह्यो, छोडो म्हारो देश ॥ १ ॥
पद्धति जानो रामजी, रामजनॉ उपदेश।
रामजनॉ ऐसो कह्यो, ओ लै थारो देश ॥ २ ॥

(परची)

१—दिवानी हुक्म सं. १८४६ फा. सु. ६ को हुआ।

चौपाई।

इतना कहकर चेले ते सारा। राम जनागति अगम अपारा॥
जैसे सग सराय बसेरा। पनग काचली दृष्टि न हेरा॥ १॥
आवनहारा देखत वाता। कहा जानू का करिहै दाता॥
पैदल हुय कर सग चलाये। रामदास जुत शिष्य सरमाये॥ २॥
कोस तीन पैदल सब आए। वहासे बल दास औताए॥
आगेहुता थाट सवाया। दिनदिन निभो चमत्त दरसाया॥ ३॥
देवगढ़में भक्त सवाए। राज रैत सब वदत पाए॥
प्रेत इग्यारे भयो उद्धारह। निराजे एक मास दिन तेरह॥ ४॥
वहासे आगे गाँव करेडे। राम गोपालदास तहाँ तेडे॥
दिन तेवीस निराजे स्वामी। दिन दिन प्रेम भाव निध पामी॥ ५॥
आज्ञा माग चले गुरुदरसन। स्निहथल महत मिले मन परसन॥
माँडेल्यामें आन विराजे। सेवग भाव चरण होय राजे॥ ६॥

दोहा।

मडलावत ठाकुर शुभी, इन्द्रसिंह तेहि नाम।
सारूडे हितभाव कर, परचो पायो ताम॥ १॥
सत छोड चाले जबी, मारवाड दुख थाय।
पितापुत्र भूत वदल सब, खोसा रिलमिल खाय॥ २॥
दखिणी जाल न पाति रहु, ऑण फिरी तिण वेर।
वही ज्ञात सो रल गया, हरि की गति नहिं हेर॥ ३॥
वीकाणे का राजमें, सुख सपति वरताय।
सारूडे में आयकर, मुरधर रहे उमाय॥ ४॥

चौपाई।

मुलक घोस्ते करिहैं निंदा। जैसो भाव फलै कर वदा॥
हिंदू राममहोले माँही। मारे जीव मरजाद हटाँही॥ १॥
ठाकुर मूरति निकसी तामें। परचो भयो देख भय पामे॥
अद्भुत भक्तचरित सुन जाने। हरिमरजाद ताहि को माने॥ २॥

१—श्रीगुरुभ्यो परणाम करि, हरियानदप्रताप।
रामदेयमें रामदास राम हमारे द्वार॥ १॥
हाथ छडी गुरुदेवकी कबली गुरु अस्थान।
बैठे ज्यूइ उठचले हरि धनजीवनप्रान॥ २॥
(श्रीराम परची वि २५)

अस्थल मांहि चीज थी सारी । रामदास हरिजन सव डारी ॥
सूंगी जानर लीन्ही सोई । अजरी भोजन जिमि गति होई ॥ ३ ॥
लीजे हरिजन माल तुमारो । नहिं लॉ हरिअरपन है सारो ॥
रामदास ऐसे अनचाही । सुरतसिंह ऐसी सुन पाई ॥ ४ ॥
हे महाराज हाल का मेरो । धिन धिन धनी रामजी तेरो ॥
रामदास कै नहीं सिधाई । जिसी भावना फलै सदाई ॥ ५ ॥
रामदास ऐसे अनचाई । सुरतसिंह मनभाव जु थाई ॥
चातुर्मास की अर्ज करावो । लिखो पत्रिका तुरत बुलावो ॥ ६ ॥
संत भाव वस जानो सारा । करी वीनती आवनहारा ॥
रामदास संग शिष ले सवही । वीकानेर पधारे तवही ॥ ७ ॥
राजा के विश्वास विशेषा । विन वरषा निंदक कर धेषा ॥
स्वतः शिष्य सोधी जन आई । सो सुरतेश सुनी मनभाई ॥ ८ ॥
दिवस तीसरे मेह जु कीयो । सूरसागर सूतॉ भरदीयो ॥
दिन दिन भाव उछाह जु सारा । सतसंगति वहु भीर अपारा ॥ ९ ॥
दिन प्रति राज रसोई आवे । पंच पकवान मिठाई लावै ॥
राजस भोजन कामन काई । रामदास यों कहे समुझाई ॥ १० ॥
मोदी एक बुलायो राजा । रुचै रसोई सो विधि साजा ॥
चातुरमास दिन दिन अधिकाई । राजा परजा भाव वधाई ॥ ११ ॥

दोहा ।

विजयसिंह भृत सवनसों, कही हमें दुख काय ॥
गढ़ छूटो सुत वदलियो, पासवान मरवाय ॥ १ ॥
चंडावल ठाकुर शुभी, कहि हरिसिंह वखान ।
रामदास कूं सीख दी, ता दिनते दुख जान ॥ २ ॥
कह राजा साची कही, क्यों ऐसी वुधि आय ।
होनहार सो नाँ टरै, कहो अव कौन उपाय ॥ ३ ॥
संत पधारे सो विधी, कीजे राज विजेश ।
ता दिन अपने आश्रमहिं, आयाँ सव सुख देश ॥ ४ ॥

छंद पद्धरी ।

लिख पत्र भाव भक्ती समेत, दे भेट पठाये संत हेत ।
सो वॉच पत्रिका संत राज, लखि भाव चलनको कियो साज ॥ १ ॥

१—मेह वरषायो वापजी, दुनिया पावै दु.ख ।
रामदास की वीनती, जना ऊपजै सुक्ख ॥ १ ॥
मेह वूठा हरिया हुआ, भाजगया भयकाल ।
रामदास सुख ऊपज्या, जहँ तहँ भया सुकाल ॥ २ ॥

सुरतेश नृपति बहु भाव लाय, दिन सप्त फेर थिरता कराय।
मो भाव सफल कीजै दयाल, धरे अन्न वसन दुपटा दुसाल ॥ २ ॥
सेंजूप रथ उपर लदाय तम्बू कनात पयक साय।
गदराजु बिछायत भट कीन, हडवाई बरतन अति नवीन ॥ ३ ॥
बहुभाति विनय कीनी नरेश, तब सत शिष्य ज्ञानोपदेश।
पुनि पूरब राजजु मिल्यो आय, फिर कीजै कमज्या समक्ष राय ॥ ४ ॥
लख लोक हुक्ममें चले सोय, ज्यू राज करे त्यू रैत जोय।
है देग फतै तिन तेग जीत, गुरु ज्ञान रखै मो चलै नीत ॥ ५ ॥
प्रतिबोध यह जन उधर ताम, विचरत्त भये गुरु राम साम।
पधरावण आये सोइ पास, गुरुधाम चला कह रामदास ॥ ६ ॥
सिंहथल नगर पहुचेसु जाय, गुरु गादी महँता मिले आय।
निजधर्म जान तहा भेट कीन, हरिदेव महन्त सो संग लीन ॥ ७ ॥
हुय गाव गाव मनवारताय, भृत विनयसिंह चापर कराय।
नृपभाव जान तन देश लोय, धन धन्य करत नरनारि सोय ॥ ८ ॥

दोहा।

खेडापै आवत भये, पुरोहितजी कर भाव।
रामसनेही हरप बहु, राम महोले चाव ॥ १ ॥
संवत अठारहसो प्रसिध, वरप उनचासो जान।
काती बद चोथहु दिने, अस्थल विराजे आन ॥ २ ॥
भाटी रणछोडजु सुबुधि, जालम खीची ताय।
जोधाणे जावत भया, सतां सीख सुपाय ॥ ३ ॥
भृत रावापै जायकर, कही अनुक्रम बात।
सत बिराजे सदन में, आनद मे गुनगात ॥ ४ ॥
कहत भूप सुण गोरधन, यह विधि करो विचार।
मेरो पातक दूर व्है, सत सेवा वण सार ॥ ५ ॥

चौपाई।

नृप पठये भृत रामसनाके, आये वस्थल भाव तिनाके।
करी वीनती भूप कही सो, लीजे अपनी वस्तु यहीसो ॥ १ ॥[1]
भेट गाम इक अस्थल लारे, सत वचनसे काज हमारे।
राम जना यह पटा सदाई, चढै ऊतरै नाँहि कदाइ ॥ २ ॥

१—और पन किसकामका चन्मी ऊनर जाय।
राम पटा है रामदास, दिन दिन दूणा थाय ॥ १ ॥
(श्रीरामवाक्यम्)

दोहा ।

भाव माँहि सब जान ज्यो, व्है निश्चै मन थाय ।
गढ़ चढ़ नौबत बाजसी, बार प्रताप सवाय ॥ १ ॥
परगट परचो दीसियो, भाव अभाव कराय ।
आगे अबै नजीक है, भक्तीवस हरि राय ॥ २ ॥
फिर सिख पीथो दास की, पूरन कीनी आस ।
रामत कर रतलाम दिशि, अनत जीव सुख रास ॥ ३ ॥

छन्द पद्धरी ।

जन चले पंथ निर्भय सदाय, मँझ गाम गाम विश्राम थाय ।
मिल राम सनेही भाव चाव, रतलाम धाम उच्छव बनाव ॥ १ ॥
सिष कनीराम गुरु धर्म काज, तन मन धन अरपे सबै साज ।
नित प्रति रसोई नवी विद्धि, गुरु भोग धरै अक्खूट ऋद्धि ॥ २ ॥
तहाँ अखै राजप्रोहित प्रवीन, उच्छव में उच्छव करसु लीन ।
फिर गाँव सारंगी दासभाव, पधराय संतकर चित्त चाव ॥ ३ ॥
इक गाँव दोतरिये दुष्ट पत्ति, बहु विकट घाट झाड़ीसु अत्ति ।
उन तेड़े संताँ पत्र मेल, हरिजन के हरिका करै खेल ॥ ४ ॥
मनमांहि हुतो खोसण विचार, कर दरश पलट सब कुबुधि टार ।
पड़ चरन मांहि कर गुना माफ, मैं दास तुम्हारो गुरू आप ॥ ५ ॥
जिन भाव रसोई भेट कीन, संग सचिव मेल पहुंचाय दीन ।
हुइ महिमा सबही मुलक माँय, फिर संत शहर रतलाम आय ॥ ६ ॥

दोहा ।

दिन तेवीश विराजिया, रामदास महाराज ।
सिष पीथल परिवार के, पहुंचावन संग काज ॥ १ ॥
सोंखेड़ आये जना, दुष्टी चित ललचाय ।
सारंगी भाटी प्रसिध, ठीकरियाके माँय ॥ २ ॥
रिल मिल खोसा सामठा, दोबे दबिया आय ।
याँसे बाबा जावसी, लेसां माल छिनाय ॥ ३ ॥
लछमण कहै दयालसों, दुई दिन विराजो और ।
इतने बीखर जावसी, गांव मरजादन तोर ॥ ४ ॥

छन्द भुजंगी ।

तबै धाल बोले सुणो दास सांची, कहूं बात तोकूं कदे नाहि काची ।
इसैं राम रिच्छा नितूप्रत्ति करही, उन्हें दुष्ट इच्छा दिमां तीन भरही ॥१॥

अपू पाश भरियो अरे नाश पामी, सबै लोक मोजू चढे सिद्ध गामी।
तुमे मच्च चिन्ता करो दास मेरी चिहे शरण लीहौं तिहे लाजमेरी॥२॥
हरी मच्च फेरी खोसा और सूजी रग जेज साधा करो धाड लूजी।
चले रात आधी खोसे गाम जाई, पगो ठोड माँझी धसे गेह माई॥३॥
तहां हाथ नारी फस्यो बीरा जोये, लखे सगनाला मना मोहिरोये।
दफ्यो बड दुखियो नहीं नीर पायो, मरे न्विस तीजे वचन सत गायो॥४॥

दोहा।

रामदास महाराज इम, सयकू कह्यो सुनाय।
चलो अभी जेमन करो, हुई आज्ञा हरि राय॥ १॥

छन्द त्रोटक।

हरि पाय आज्ञा विचरे जबही, सब दास उदास भये तबही।
पहुँचावण हाकम आदि सहू, कह ठाकुर के दिन साथ रहू॥ १॥
महाराज कहे तुम भाव इसो, रख पाल गुरू तव शक किसो।
थिरताय सबै संत पथ लयो, इम आनद मग्न न दुःख भयो॥ २॥
कहै लोक तुमें सिधरान खरे, उन महाजन राजमें दंड भरे।
फिर चोकिय नाम न लेत कहूँ, जहँ जावत जोरत हाथ सहूँ॥ ३॥

दोहा।

मागरोल चीतोड हुय, घाटे उतरे आय।
सेहापै अस्थल महीं, उच्छव करे सजाय॥ १॥
रामदास महाराज का परचा अगम अपार।
सो बुधिसम वरणन कन्या, पञ्च छद अनुसार॥ २॥

कवित्त मूल।

रामदास महाराज का फिर परचा वरणन कन्या।
प्रेमदास शिष व्याधि अन जमदूत जु आये।
करि करुणा गुरु हूत तत्तच्छिन आन बचाये॥
यो पालक है राम तुम्हारो काम न कोई।
गुरु बेमुख भवधाम सोच तुम लेतो सोई॥
मुख फेर हाथ थिर ताय सिर आधि व्याधि दूरे हन्या।
रामदास महाराज का परचा फिर वरणन कन्या॥ १॥
प्रेमदास मतमगते देवपुरी को दुख टन्यो।
वैश्य वरणमें जन्म गुसाँई भेष बनायो।
भैरव जुग बस करे जगतमें परचो थायो॥

१—सं १८१२ पीछे सैहाप पधारे।

कवित्त ।

विप्र एक याही शहर राज कामदार हुतो ।
देस चूक भारसीमें बेडी घाल डार है ॥
कहत सगराम ताहि सुनो बात मेरी अहो ।
गुरु रामदास तोहि दु खसे निवार है ॥
ताही निशा जाम दोय गयाँ भयो दर्श दिव्य ।
कह्यो ताहि आय अब टर्‍यो ताहि मार है ॥
तीसरी निशाहू फेर भयो दर्श वाही वेर ।
काढ भारसीसें बेडी काढ कीयो पार है ॥ १ ॥

दोहा ।

यह परचो इहर मही, जानत अजहू लोय ।
राम गुरू अतर नहीं, शिष विश्वास जु होय ॥ १ ॥

कवित्त ।

रामाराम शिष्य नदी डूबत पुकार सुन ।
धाररूप गहे वाँह कर्‍यो गुरू क्षेम ही ॥
एक समय मारी गाँव डेरो सर पाल शोभे ।
व्याल दौरि आय गोदमाहि कीयो प्रेम ही ॥
जीभ हूत चरण चाट गयो वृक्ष तणी वाट ।
कहे सत इने जीभ ढठी गडे जेमही ॥
कहाँ लग गाऊ परचा रामदास गुरू तणा ।
काल आदि वदे पाँव और कहो केमही ॥ १ ॥
सप एक गाँव जो दैहापा माँझ कहू सोय ।
झास्यो झले नाँहि कोऊ सबी हार थाकेहैं ॥
गुरू रामदास आय कहे साप राम सुनो ।
थानक तुमारे अर्मा आय हम नाखे हैं ॥
सुन्यो व्याल सत मुख नसजु पसार दई ।
झाल डार ताही वेर फेर नहीं झाके हैं ॥
दीन काल ऊंट पर सत पथ आन अर्‍यो ।
रहे घड़ो दूर एम रामदास भाखे हैं ॥ २ ॥

कुडलिया ।

उष्टर चल्यो न पैंड इक, धणि आयो पचिहार ।
विनय करी सता प्रती, कह्‌ इलको उपचार ॥

कहो इनको उपचार तवै सो छड़ी झलाई।
या तुम देहु लगाय होय आगे जिम जाई॥
(उन) जाय सोई विधि करि तवै, उधर चल टोलै गयो।
रामदास महाराजको अद्भुत परचो सव लयो॥ १॥

छंद मनहर।

शिष्य फेर सेवादास पुत्र सोधनेकी आस।
गुरू रामदासपास मांग आज्ञा चाले हैं॥
विकट पहाड़ झाड़ी अकेलो चलत तहां।
देख सिंह रूँख आय आगे रींछ भाले हैं॥
टेर रामदास हूंत मीचसे वचाय अवी।
करत हुँकार यहां तहां दुःख टाले हैं॥
पायके अंदेश जु शिष्य अर्ज करत भये।
फरमायो राम कहो तवै चुप्प झाले हैं॥ १॥
यहां रूप धार छड़ी हाथ साम तास मारे।
गये भालु सिंह दोऊं दास सुक्ख भयो है॥
गाँव वटपाड़ी माँझ संत विराजमान भए।
आयके दरश लह्यो कह्यो दुःख पयो है॥
अहो अँतर्यामी आप जानत सवै ही वात।
पूछे शिप दूसरा हू तवै भर्म गयो है॥
संत राम एकरूप भिन्न भेद नांहि कवै।
आगे अवै देखि लेहु कछू नांहिं नयो है॥ २॥

॥ इति॥

इसप्रकार आपके अनेक परचे हुए। आप एक अद्वितीय महात्मा थे। सम्वत् १८५५ आषाढ कृष्ण ७ मंगलवारको आप परम धाम पधारे। आपका इस संसारमें प्राकट्य लोगोंके कल्याणार्थ ही हुआ था। आप गुरुधर्मी भी एकही थे। आपके वचन जो श्रीगुरुदेवजीके प्रति कहे गये हैं वे कितने गुरु भक्तिसे सरावोर होरहे हैं। यथा—

"अमर लोक सूं आय सिंहथल माँहि विराजे।
तेज पुंज परकास वजे अनहद के वाजे॥"
"सता समाधि अगम जहाँ आसण सुखमण सहज समादी।
आय रामियो चरणाँ लागो सिख है आद अनादी॥"

"चरणा चाकर रामियो, सतगुरु है महाराज।
चार चक्र चवदे भवन, ताहि परे सतराज॥"
(श्रीगुरुमहिमा)

"मैं अबला हूं रामदास, आघो मत अचेत।
तुम सतगुरु हो शीशपर, हमको करो सचेत॥"
(श्रीभक्तमाल)

"सतगुरु मेरे शिर तपै, मैं चरणांकी रज्ज।
शरणे आयो रामियो, लखचौरासी तज्ज॥"
(जमफारगती)

"सतगुरु दीनदयालु कहीजे, सन्मुख करस्यूं सेवा।
पार अपपर पावे नाहीं, किस विधि लहिये मेवा॥"
(मनरुद्र)

"सतगुरु है हरिरामजी, मेरा प्राण अधार।
चौरासीका जीव था, शरणे लिया सम्हार॥"
(श्रीब्रह्मजिज्ञास)

कहांतक लिखा जाय[1] जबतक आपका पाचभौतिक शरीर इस पृथिवीतलपर विराजमान रहा तबतक तो गुरुधर्मको निभाना ही था, परंतु परमधाम पधारने के उपरात भी आपने विचारा कि मेरा सनातन गुरुशिष्यधर्म मेरेतक ही न रह जाय। जहाँतक मेरा नाम रहे तहाँतक मेरे शिष्य गुरुस्थान सिंहथलको न भूलें। इस लिये परमधाम पधारने के तीन दिन बाद असह्य विरहवेदना से पीडित श्रीदयालुदासजी महाराज की कातरता देख साक्षात् अपना स्वरूप धारण कर दर्शन दिया और मस्तकपर हस्तकमल धर तत्त्वज्ञानोपदेश दे धीरज बधाई। और फरमाया कि मैंने जो सद्गुरु गादी की टेक निभाई है वैसी ही सर्वदा तुम भी निभाते रहना। और अतसमय में जैसी मेरी साँच भावना

१—कह काइ अपधान मन तन नित अति विकलता।
लख्यो न सतगुरु साथ, यो कारज कैसे भयो॥ १॥
पूरणब्रह्म दयाल बाबाजी कीन कृपा।
यो जिव देहु सँभाउ, नहितर यो तन त्यागस्यूं॥ २॥
(श्रीराम परचौ वि० ४१)

फली है उसका भेद[1] आजसे चौथे दिन सिंहथलसे श्रीहरदेवदासजी महाराज पधारकर तुमको जतावेंगे । ऐसा फरमाकर आप अंतर्धान होगये ।

ऐसे गुरुधर्मी सत्पुरुषों को धन्य है और उनको कोटिशः दंडवत् प्रणाम है ।

धन्य है उस धाम को जिसमें आपने वास किया । साक्षात् उस धामके दर्शन करने से मुक्त हो जाय इसमें तो आश्चर्य ही क्या है । अगर स्वप्नमें भी दर्शन हो जाय तो वह प्राणी कृतकृत्य हो जाता है । उस धामका आजतक भी इतना प्रभाव है कि कोई भी प्राणी भूत प्रेत डाकिनी शाकिनी आदिसे पीड़ित हो और वह धाम की शरण में आता है तो उपरोक्त सब दुःखों से मुक्त हो परम पदवी को प्राप्त होता है ।



१—श्रीरामदासजी महाराज इस पांचभौतिक शरीर को त्याग कर दिव्य शरीरसे प्रथम सिंहथल श्रीगुरु धामके दर्शनकर फिर वैकुंठ पधारेथे । इस भेदकूं श्रीहरदेव दासजी महाराज जानते थे और आप आजसे चतुर्थदिन खेडापेहूकनेवाले थे इस लिये श्रीरामदासजी महाराज ने फरमाया कि:—

साच भावना फलै सदाई, सो देखी हरिदेव जनाई, चोथै दिवस समझ में वायक,
सिख तुम जानो साच सदाइक, शीश नमावो गुरुस्वस्थाना, मनवचक्रमलग एक विधाना,
आदि संप्रदाभेद विचारो, सतगुरु गादी टेक निभारो ।

(श्रीराम. परची वि० ४१)

(श्रीदयालुदासजी महाराज)

श्रीदयालुदासजी महाराज की अगाध महिमा का वर्णन करना अति कठिन है। आप ब्रह्मवेत्ता अनुभवी बड़े ही सच्चरित्र महात्मा हुए। श्रीपूर्णदासजी महाराज की बनाई हुई जन्मलीला नामक ग्रंथ से अनुभव कर सकते हैं कि आप कैसे प्रभावशाली गुरुभक्त अद्वितीय तेजोमयी दिव्य मूर्ति थे।

इसी जन्मलीला का यहा उल्लेख किया जाता है।

॥ अथ जन्मलीला ॥

हरिरामा रामा नमो, दयाल्याल सुखसाम।
मन वच क्रम करिये सदा, पूर्ण ताहि प्रणाम ॥ १ ॥

दोहा।

वंदन श्री परब्रह्म को, पुनि गुरु को परणाम।
सब संतों सिर नाय हू, खानाजाद गुलाम ॥ १ ॥
रामदास महाराज के, दयाल शिरोमणि शिष्य।
जन्म सुलीला वर्णि हू, निज गुन रूप प्रत्यक्ष ॥ २ ॥
दयारूप धरि प्रगटे, पूरण थे शिरताज।
जीव अनेक उधारणे, प्रगट किये यह साज ॥ ३ ॥

छप्पय।

निर्गुण निज निरकार दृष्टि कहूँ मुष्टि न आवे।
अपरमपार अलेख नेति तिहि निगमसुगावे ॥
जोगधारणा धार ध्यान कर ध्यावत कोई।
दुरलभ दुष्कर कठिन ताहि दरसन नहिं होई ॥
स्वयं ब्रह्म अवतार धर दयाल अवनि प्रगटे प्रत्यक्ष।
ऐसो न कोइ देख्यो अवर देख्यो दीनदयाल इक ॥ १ ॥
अविगत आज्ञाकरी प्रगट मम भक्ती कीजे।
कलीकालविकराल ताहिको शिक्षा दीजे ॥
कामी कुटिल कुजात अधम अधगामी सारा।
दो भक्ती उपदेश राम निज मत हमारा ॥
तव आयसु शिर पर धारिके दयाल रूप अवतार इल।
रामदास पितु पाय धिन सुंदर माता धूप मल ॥ २ ॥

वड्ढ गाँव शुभ वास जहाँ इक सदन कहीजे।
नमो धाल तहां जन्म प्रथम परचो सु लहीजे॥
सुरपति घन वरसाय गढ़ा जहां पड्या अपारा।
सदन निकट ही नांहि दूर धरनी दल गारा॥
चरणामृत गुटकी दई महाप्रसाद गुरुदेव भल।
धाल जन्म उच्छव भयो नर सुर कीरति करत कल॥ ३॥
समत अठारह जान वरप पोडश परवानो।
तामध मिगसर मास शुक्ल एकादशि जानो॥
भृगू वार परसिद्ध रेवती नखत भणीजै।
अमृत पुल सिधिजोग गुरू लगनेश गिणीजे॥
सब सोम ग्रह शुभ ठौरपर धाल लिए अवतार तब।
कहुं सुक्षम स्थूल जिव चर अचर हर्प मान हुय मुदित सब॥४॥
आनँद अगम अपार अनत जहां वाजा वाजे।
अनत उदित अंकूर सकल शुभ मंगल साजे॥
सर तरु नदी निवान वनी परवत घन धारा।
वापी कूप तड़ाग अमी अमृतरस सारा॥
उद्योतकार जीवां सकल संत प्रगट अवतार हरि।
नरदेह धर्‍यां विन हरिहुते संत भये नरदेह धरि॥ ५॥
भरतखंड परसिद्ध द्वीप जांवू सुखकंदन।
देश मुरधरा नमो गाँव खैड़ापो वंदन॥
गांमधणी पति नाम पद्मसिंह प्रोहित राजे।
विजयसिंह नरनाथ वार परताप सदा जे॥
नर नारि सकल धरधाम धिन तहां संत अवतार धर।
आनॅद अपार उच्छव अनत मंगल परम विनोद कर॥ ६॥
ज्यों दशरथ के राम सूर कश्यपके राजे।
परशुराम जमदग्नि कपिल करदमके छाजे॥
कृष्णजन्म वसुदेव व्यासके शुक मुनि त्यागी॥
उद्दालकके प्रगट नासकेत जु वडभागी॥
हंसरूप हंसा धरे भिन्नभेद नहि सार है।
परब्रह्मपूरणकला सागे अंश अवतार है॥ ७॥
उदित वंश मध सूर मिटे अज्ञान अँधारा।
कमलरूप निजदास उलम सिख चकवा सारा॥
विमुख कमोदनि जान इन्द्रि उडगन सव मुरझे।
वाद उलू भ्रम भूत चंद्रमन तामें उरझे॥

शिशुमारचक्र प्राणसु प्रगट काम क्रोध मोह चोर है।
वेद पहरवा सोय रहे सत सूर बड जोर है ॥ ८ ॥
सतजुग सतव्रत सार तप्प त्रेताजुगमाही।
द्वापर ज्ञान विशेष क्रिया कर्म सब वरताही ॥
तीन जुगनमें धर्म प्रगट सारे वरतायो।
कलीकाल विकराल नीति गति माग दुरायो ॥
अवसान कोइ पकरो नहीं कलीराज थाना थपे।
तब थाल सत करुनाअयन नीशान भक्तिनिश्चलरुपे ॥ ९ ॥

दोहा।

ठौर ठार सब ठाम पर, भक्ति प्रगट परभाव।
चक्वे राज नरेश पद, गुरुधम सुमरण चाव ॥ १ ॥

छंद पद्धरी।

नृप भए चक्रवर्ती सुजान। जिन प्रगट कर्यो गुरुधर्म ज्ञान।
उपदेश जीव दे मुक्तिदान। थिर भक्ति राज अविचल निशान ॥ १ ॥
कलि रह्यो नाहि कहु ठाँ प्रवेश। शुभ भाग माग ज्ञानोपदेश।
तर भगे चोर जाराल मार। तपतेज नीति थिर थपे वार ॥ २ ॥
मुग भ्रम भ्राल कोउ जुन्यो नाहिं। परमानँद उपज्यो आप माँहिं।
महाज्ञान घ्यान धीरज अपार। गम अगम वचन आगम उचार ॥ ३ ॥
गुरुधर्म टेक धारण सधीर। गिरिगोम व्योमगगा गँभीर।
सोभायमान गुरुगुरुमाय। सर ग्रथ अथ निरणे वताय ॥ ४ ॥
अरि मित्र सत्रे धिन धिन उचार। कर नाम सत्ता साचे प्रकार।
कहु नैना नहि देखे दयाल। सर नख चरा देखो दास थाल ॥ ५ ॥
जिन घचन थाल तन मन दयार। चयश्रवन हृदय बाहु विशाल।
सोभायमान शिर उतुग भाल। कप्पोल पूर विम्बौष्ठ लाल ॥ ६ ॥
भ्रूवक्र वक नक तीख जान। चिबुक अर कबूप्रमान।
उर यह विशाल नामी गभीर। कटि जघ जानु गुल्फाँ अमीर ॥ ७ ॥
पदकज रज्ञ अलि शिष सुचाय। रज चरन परस मिल मोक्ष माँय।
अनुभव प्रकाश उद्योतकार। अनिरल अनूप नहिं वार पार ॥ ८ ॥
घन धारा पहुमी रह न पार। यों अनुभव वाणी तरव सार।
उबक्यो पयाल गरज्यो समद। फाट्यो अकाश बरप्यो सु छद ॥ ९ ॥
घन ठिनवे क्रोडाँ मेघमाल। गिरि मेरु झर्डी अमृत रसाल।
कूद्यो अकाश हनुमत वीर। उडुयो खगेश कन चक्रधीर ॥ १० ॥
तूटो चक्रांक रूगे महेश। कीनो भ्रम खडन काम देश।
छूटो रघुपतिकर बान पानि। सोख्यो सर मोहा आदि मानि ॥ ११ ॥

उचक्यो डढाल मुचक्यो मराल। सुचक्यो सुरेश रसना चयाल।
उछल्यो क्षिरोद हाल्यो समीर। घन घटा घोर भादों गँभीर॥ १२॥
कर वेद चार निरणै विचार। दश अठ पुराण पट भाप सार।
व्याकरण अष्ट निरताय सोय। पट शास्त्र भिन भिन लिये जोय॥१३॥
रस रामायण शिर मोर सार। भागवत वचन भगवत उचार।
भारत भगवद्गीता विशेप। सो सार सार सब लिया देख॥ १४॥
करि प्रश्न दियो निर्णय बताय। अनधन नहि ऊणत रखी काय।
दत दान मान करुणादि आधि। दुखिया दे औषध मेट व्याधि॥ १५॥
जाके शिर कर धर कह्यो सोय। अजरामर आनँद तुरत होय।
दैत्यादि भूत डाकिनी नारि। मरजाद खींच नहिं पाँव धारि॥ १६॥
हिड़क्यो तन मिरगी अबुध होय। फीयो लिप बहुविधि रोग कोय।
नर नारि पशू जो शरण आय। जल पियाँ तृषा ज्यूं रोग जाय॥ १७॥
जाव्याँ नहिं ऊणत रखी कोय। लघु दीरघ भिन्न न भेद होय।
अनवी नुय लागे आन पाय। कर दरशन चरचा पोप थाय॥ १८॥
उपदेश राम निज मंत्रसार। दशहू दिशि लिपसाखा अपार।
कर रामत मालागर मँझार। नृप गूड देश दक्षिन सुढार॥ १९॥
गुर्जर धर पावन करी सोय। थलवट मुरधर धिन धन्य होय।
दिग्विजय अगंजी भक्ति साज। कहुं जगत मेख तप तेज राज॥ २०॥
निःशंक सदा आनंद सोय। औघट विन घाटी विकट होय।
सुख दुख हरप न शोक मान। शत्रूज मित्र सब एक जान॥ २१॥
निज धर्म सनातन सारसार। गहिलयो हंस ज्यूं खीर वार।
अज चींटी कुंजर एक जान। कहुं हानि वृद्धि नहिं भेद मान॥ २२॥
सब विश्व ब्रह्ममय दृष्टि देख। उर उपज महा उद्योत एक।
रत ब्रह्मवाद विद्या प्रकाश। मद मोह द्रोह कर काम नाश॥ २३॥
रह प्रसन्न सदा सम भाव दास। विज्ञान ज्ञान पूरण प्रकास।
मत अडिग सदा कूटस्थ जान। मिथ्या भ्रम ग्रंथी हृदय भान॥ २४॥
मन वाच काय पीयुप प्रवीन। त्रय भवन सबै उपकार कीन।
सब वृक्ष साधुपद गमन कीन। पापान मान मद सजा दीन॥ २५॥
मान्या न मान संत सेव कीन। अति दुखी दरिद्री सार लीन।
लूले कहुं पंगू मूक सोय। चपहीन बधिर पुनि वृद्ध होय॥ २६॥
कहुं ठीक ठौर ताके न काय। बल बिना निबल चाल्यो न जाय।
निरधाराँ आधार जान। सबहीके रक्षक ढाल मान॥ २७॥
बुधि भल क्षम मति चित उक्तसार। बानी विवेक अविरल उचार।
अनुभव रस छोलाँ जुगति जोर। नित बधे पँचालीचीर कोर॥ २८॥

दीरघ वपु दरसान दीपमान । उद्योत कार ज्यों प्रगट भान ।
सोभत समाको रूप सार । मोहत करत चरचा उचार ॥ २९ ॥
काव्य जु बँध कविता छंदसार । ततकाल कहत नहि लहत पार ।
सरस्वति गनपति गुरु वेदव्यास । शिव वाल्मीकि कवि शुक जास ॥३०॥
यह भए कवी आगे प्रत्यक्ष । देख्यो दयाल सशय न चिनख ।
नहिं हुते प्रगट पहुमी दयाल । कलि दाव देत भक्ती पयाल ॥ ३१ ॥
निज राममत्र प्रगट प्रताप । घटघट प्रति व्यापक ब्रह्म आप ।
कुन जानत निगुन सगुन जोल । कलि काल बाल सँत नाहि होत ॥३२॥
दधि मथ कर काढ्यो घृतसार । लीनो तत छोई दई डार ।
फल कतक करत करदम निछोर । निरमल जल करिहै शक्ति जोर ॥३३॥
गुनमयी ज्ञान भक्ती निरोल । या भिन भिन कीन्हा तोल तोल ।
सब जुक्ति चेताए जठर जीव । मिट गये दोष सुखिया सदीव ॥ ३४ ॥
कटि गये करम सब भरम भान । डूबत ले तारे नाम ज्याज ।
तिर आप और तारे कितान । तरणी दृष्टान्त गुरु साख म्राल ॥ ३५ ॥
कर भजन प्रथम निर्मल शरीर । रसना रस अमृत लहे सीर ।
परकार चार सुमरण विधान । अध मध उतम अति उतम जान ॥३६॥
मुखकमल पखडी चार भास । कँठ कमल पखडा पट प्रकास ।
खुल अष्ट पखडी उरमँझार । नाभी खुल षोडश पत्र सार ॥ ३७ ॥
मन पवन मिले दोनों प्रकार । हुव शुध हुय मेला कर गुँनार ।
फिर शब्द गमन आगे चलाय । भिद मूलचक्र पाताल जाय ॥ ३८ ॥
उलटा सु पलट यह अगम खेल । जीता गढ धनी मेर पेल ।
मिणिया इक्वीस् छेद जाय । निकसे गन नाके सुई माँय ॥ ३९ ॥
यहा कमल पत्र बत्तीस होय । शत्रू सब मिनी भया सोय ।
आगे चल त्रिकुटी तखत माँय । तहा जीव शिव मिल एक थाय ॥४०॥
सहस्रादि पखडी कमल भास । जहा जन्ममरणकी मिटी त्रास ।
जहा सुरत शब्द मिल करत केल । मिल हस परमहंस अगम खेल ॥४१॥
नवधाम परे अपरम अपार । सो मता समाधी सत सार ।
महामाया ज्योती प्रकृति सार । शुन आतम इच्छा मायपार ॥ ४२ ॥
पर भावे केवल ब्रह्म होय । जहा जीव शीव मिल नहीं दोय ।
आया जहा मिलिया सत जाय । कर केवल भक्ती मुक्ति माँय ॥ ४३ ॥
कर विष्णुउठ्य वैकुंठमाँहिं । मम प्राण वल्भ लीजे यथाँहि ।
लक्ष्मी ले परकर सर्व साथ । धन धन्य करत वैकुंठनाथ ॥ ४४ ॥

कर भक्ति प्रगट मम नाम सोय। वंशोधर सुत सम नही कोय।
यों उर्ध लोक उच्छव अपार। यहां घाल आप निज सुरत धार॥ ४५॥
दे सैन प्रथम सबको जनाय। इक पद फरमायो राग मॉय।
हम हैं परदेशी लोक साध। कब आन मिलेंगे मेटि व्याध॥ ४६॥
ततकाल दई पत्री लिखाय। निजगुरुद्वारेसूं महंत आय।
सब भाई बाई मिले जाय। करदरशन परसन पोप पाय॥ ४७॥

दोहा।

इह प्रकार निरधार करि, आदि अंत मध सोय।
दीन दयाल दयालु बिच, भिन्न भेद नहिं कोय॥ १॥

छंद गीतक।

थिन घाल सतगुरु प्रगट इल पर मनुज तन धर आविया।
अंकूर जीवाँ उदय कारन भूरि मोसर पाविया॥
अरु समत एके आठ ऊपर वर्ष षोडश सारही।
पुनि मास मिगसर तिथि उजाली अग्यारस भृगुवारही॥
ता दिवस धर अवतार नर तनु जगत सारो जीतिया।
महा अगंजी दिग्विजय करिके वरष गुनतर बीतिया॥
इक मास ऊपर प्रगट पुनि ता दिवस पनरे पर भए।
तब करी इच्छा मोक्ष की निज लोक की चितवन ठए॥
तहाँ माघ वद तिथि भई दशमी मध्यदिनमणि आवियो।
तब स्पर्शन[1] उर्धा खैंचिके निज सुरत शब्द मिलावियो॥
सब भये बिलखे रामजन किमु दर्श बिछुरन सहि सके।
बिन नीर मच्छी कमल बिन दिन बचन बानी सब थके॥
द्वै नैन सहजल हियो भरभर रुदन कर कर उच्चरे।
इक बेर घाल कृपालु दरशन देहु सब संकट टरे॥
पुनि सभामंडन भर्म खंडन तार ग्रंथाँ कुन करे।
ऐवास सर तरु नारि नर अरु सकल दुख दूभर भरे॥
निज जान अनुचर कृपा कर कर हाथ शिर धर दाखियो।
वरदान पूरणदास माँगे सदा चरणाँ राखियो॥ १॥

सोरठा।

रटके मनके माँहि, चित भटके दशहूँ दिशा।
किनके खटके नाँहि, घाल तणा दुख दरद की॥ १॥

१—स्पर्शन=वायु। श्वसनः स्पर्शनो वायुरित्यमर।

तटके तूटो नाँहि फटके नहि फूटो हिया।
अटके किम उरमाहि, लटके लोह लगार जड्यो ॥ २ ॥
शरणागतकी लाज, आन परी है आपकू।
ले पटियो महाराज, पतती पूरणदास कू ॥ ३ ॥

दोहा।

लीला जन्म दयालुकी, को करि सके विचार।
बुधि प्रमाण वर्णन करी, सतगुरु अगम अपार ॥ १ ॥

॥ इति ॥

इस उक्त जन्मलीलामयसे निश्चय होता है कि, आप साक्षात् भगवत अवतार ही थे। आपके अनेक परचे हुए और आपने जगद्धितार्थ बहुतसी अनुभववाणी प्रगट की।

आप की सिंहथलधाममें जो गुरुभक्ति थी वह तो गुरुप्रकण और वाणीसे स्पष्टही प्रगट हो रही है। सम्वत् १८५५ आषाढ शुक्ला ८ गुरुवार को श्रीहरदेव दासजी महाराज के आग्रहसे आप गादी विराजे।

और सबसे पहिले दर्शनार्थ गुरुधाम सिंहथल पधारकर फिर रामत वगेरह में पधारे। बीसोंहीवार खेडापे तथा अन्य मेलों म महन्त महाराज श्रीरघुनाथदासजी महाराज को पधराए। सम्वत् १८८० में मालवा व गूडवाणे की बडी रामत तथा सम्वत् १८८३ में गुजरात की बडी रामत साथ ही में करवाई।

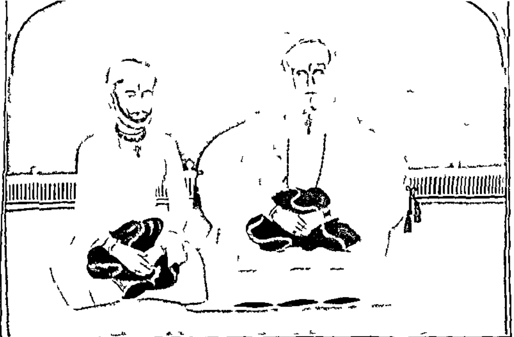
कहाँतक आपका गुरुधाम में प्रेम वर्णन किया जाय? धामपधारने के समय श्रीगुरुधाम सिंहथल पत्रिका भेज महन्त महाराज श्रीरघुनाथ दासजी महाराज को पधराय दर्शन कर फिर परलोक पधारे।

(श्रीपूर्णदासजी महाराज)

आपने मालवा प्रान्त ग्राम मेलकी में सम्वत् १८२८ चैत्र कृष्ण २ को वैश्यकुल में जन्म धारण किया। सम्वत् १८३८ के

१—देशाटन। जिस रामतसे सं० १८८३ फागण शु १३ को दोनों महन्त महाराज पीछे खेडापे पधारेथे।

२—संवत् ११ ६ में एक सिंहथल महन्त महाराज कीही मालवा और गूडवाने की रामत हुई।



Srl H·   tl I D·y   Ma'araj
(Kbed pa)

S I A jund syi M bar j
(Kled p)

श्रीमहन्त महाराजके सामिल आपने तीन चौमासे जोधपुर करवाए। राजामहाराजाओं मे कई पधरावणियें साथ मे हुई। और कई रामते सामिल करवाई। और मेलोंपर साथमे पधारनेकी तो गिनती ही क्या है।

आपने सम्वत् १९४६ में जीविन महोत्सव (मेला) करवाया जिसमें श्रीगुरुधाम सिंहथल महन्तमहाराज श्रीचेननदासजी महाराजका हाथी होदे वधावणा, मुहर मोतीयोंसे तिलक, आरती, जरी पग मडा भेट पूजा, शाल दुशाला ओढावणी आदिसे कितने सत्कार के साथ स्वागत किया उस समय के उत्सव आनन्दको वही जान सकते है जिन्होंने दर्शन कीए हैं। सम्वत् १९५० में आप धाम पधारे।

सोरठा।

यहाँ सदा सुख ऐन, प्रसिद्ध आपरे तेजही।
वहाँ सदा सुखचेन, सदाघणाभल चाहिए ॥ १ ॥
तमतो करुणानिधान, ज्योतिरूप जगदीश हो।
कागदमाँहि विधान, हमको लिखियो चाहिए ॥ २ ॥
कागद लिखत समाज, आप कृपानित राखजो।
बाह गह्योंकी लाज, विरद गवरो जानिके ॥ ३ ॥

अहो महाराज! आपरे शरीर रो जल प्रसाद सुखवास सुख पोढन सुख असवारी आनन्द रा परम जतन रखावसी। जतन तो श्रीरामगुरुदयालजी करण समर्थ छे। परन्तु दासरो योही परापरी धर्म छै सु हाथ जोड अर्ज मालूम करी चाहिजे। अहो महाराज! उठै साध थानारामजी रतनदासजी जेसारामजी भुगारामजी लछीरामजी मगनीरामजी दयारामदासजी पीतमदास निर्भेराम नेनराम हीरदास मोहनदास निश्चलदास आगाराम जैतराम जसुराम रतिराम जुगतिराम छोटियो आशाराम आदि राम परिवार में सर्वने राम राम फरमावसी। और अठै साध ब्रह्मदासजी स्वरूपदासजी तुलसीदासजी प्रह्लाददास जसारामजी जगजीवनदासजी जैतराम रामरतन आत्माराम हरलाल नगाराम दूजो आत्माराम दूजो तुलसीदास भगवानदास कोमलदास स्वरूपराम विरक्त श्यामदास चतुर्दास ज्ञानदास मुकुन्ददास आसाराम मोहनदास केशवदास सेवादास रामजीदास मगनीराम रामकृष्णादास गजाराम रामप्रताप दुर्गदास शिवरामदास नानगदास हिम्मतराम और हाली विसनों देवो चतुरो रूपाराम आदि सर्वका दण्डवत् परिक्रमासहित रामराम मालूम होसी। कृपा अनुग्रह घणी रखावसी और मेह पाणी मोकला छै। शाखा बाडी छोटकी छै और समाचार आत्माराम मालूम करसी सो जणावसी सम्वत् १९१३ भादवासुदि १ वार अदितवार

चाहते थे। और कितनी भावना व नम्रता के साथ आप गुरुधाम को विनयपत्र लिखाया करते थे।

---

१ विनयपत्र —

॥ श्रीरामजी ॥

स्वस्ति श्रीसिंहथल राम मोहल्ला शुभस्थाने ऋद्धि वृद्धि जयो मंगल रामधाम साकेत धाम परम पुनीत सप्त श्रोत गंगा अड़सठ तीर्थ आनन्दधाम सार २ स्थान रमणीक भजनानन्द विराजतम् त्रिविधताप जन्मान्तर कल्मष पाप हरता ऐसी २ अनेक ओपमा गुरु दयाल विराजे जिणदिश हमारो प्रणाम वारम्बार श्रीगुरुदयालजी वाणी निहाल कारण कृपालु धन्नी छोड़णा महरबान महाराज परउपकारी सिधकारी सच्चिदानन्द आनन्दघन श्रीगुरुसाहिब भक्तिपुन्ज अज्ञानहरणकारण करण ज्ञानमूर्ति ध्यानमूर्ति जत सत साच शील सतोष दिव्य भक्तिप्रकाशक भण्डार ज्योतिरूप महन्त भगवन्त पूर्ण कलाजीवम मुक्तिगामी निर्धारी आधार अनुर्थो शुचि अनाथों सनाथ कर्ता विघ्नहर्ता गुरु इष्ट भगवन्त गुरुप्रेम दाता दशदोषहर्ता ज्ञान वैराग्य भक्ति के दाता सर्व सिद्धिकारी आत्मशान्ति मनभावन सिद्धस्वरूपी शरणप्रतिपालक श्रीगुरुमहाराज श्रीगुरुभ्यो प्रणम्य नमस्तु ते शिष्यके साधारणसुरतके ज्योति मन उमेदताके सुथानक मीनके नीर आधार खगके पर आधार प्राणके श्वास आधार प्रजाके राज प्रतिपालक आधार राजाके तपस्या सम्पुनीत आधार सर्पके मणि आधार पण्डित विद्या आधार कृपाणके कृषि आधार कमलके सूरज आधार चकोरके शशि आधार जोगी के जोगबल आधार तर वरके जड़ आधार शिष्यके श्रीगुरुदेवजी महाराजको आधार दृढभावना आधार श्रीमद् न्तामहाराज चरणकमलयनुं पद सरोज प्रकाशन चरणारविन्द आनन्दकन्द श्रीगुरु-दयालजी जीवोंरी जहाज तरणतार मुक्तिके दाता महाराज राजनके राजा हो।

चन्द्रायणा।

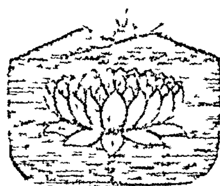
ओपम और अनेक मडमें कहत है तमकुँ सबही शोभ बडागुण महन्त है।
धीरज मेरुसमान तरणिज्यु भास हो हरिहाँ शीतलचन्द समान शीलकी रास हो॥१॥
नीर क्षीर निरताय हसमतिज्ञान है साँच झूठ करभिन्न सर्व विधि जान है।
धीरज ध्यान समाधि इन्द्रिमन जीतहो हरिहाँनिराकार निर्लेप मग्न अद्वैत हो॥२॥

अहो महाराज श्रीदयालु पूर्णब्रह्म कृपानिधान स्वयं मग्न सच्चिदानन्द श्री श्री श्री श्री श्री श्री १०८ एवि श्रीशोभिनम् देहरूप नाम महाराज श्रीमद्दन्तमहाराज श्रीचेतन दासजी महाराज के हजूर लिखितम् सेवगा राममोहल्लामें खानाजाद गुलाम पदरज ५।६ चरणोंरो धनश्र हाथाजुड़ास अर्जुनदास हण्योन्तदासका दण्डवत विनतीसहित रामराम मालूम होसी।

श्रीगुरुधाम महन्ताँ महाराज श्रीरामप्रतापजी महाराजके चरणारविंदोंमें जो आपका प्रेम था वह प्रशसनीय था। साथहीमें मेले महोत्सव जोधपुर राममहोले चातुर्मास आदि करवाए बूंदी रतलाम आदि रजवाड़ों की पधरावणीमें साथ ही पधारे।

श्रीअर्जुनदासजी महाराजके समानही आपने सम्वत् १९८१ में जीवित महोत्सव (मेला) किया जिसमें गुरुधाम सिंहथल महन्तां महाराज श्रीरामप्रतापजी महाराजकू पधराय हाथी होदेवधावणा, मुहर मोतियोंसे तिलक, जरीपगमंडा, भेट पूजा आदि उत्सव कर गुरुद्वारा सिंहथल के साधुसन्तों को अपने हाथसे चादर, ओढावणी ओढाकर मेलेमें देशी परदेशी सब साधु रामस्नेही भावस्नेही आयेथे तिन सबको दर्शन दे पाँच महीनेबाद जोधपुर विष्णुदासजीके चातुर्मासकी पधरावणीमें स० १९८२ भाद्रपद कृष्णा ४ को मध्यान्हके २ बजे श्रीसिंहथल महन्ता महाराजके चरणारविन्दोंमें मस्तक रख जिस तरह परगाम जाते हो इसतरह परलोक जानेकी आज्ञा मांग तत्क्षण परलोक पधारगये।

ज्योंही महन्त महाराज अपने हस्तकमलसे आपका मस्तक उठातेहैं तो आप सचमुचही इस लोकसे विदा होगए। धन्य है गुरुभक्त हो तो ऐसेही हो।



(श्रीहरलालदासजी महाराज)

आपभी गुरुमहाराजके समान प्रभावशाली शुद्धान्त करण सुशील महात्मा हुए। आप दयालुता वात्सल्यता औदार्यता की तो मानो मूर्ति ही थे। आपके अहङ्काराभिमान का तो नाम निशान ही नहिं था। सम्वत् १९५० में आप गादी विराजे। साधुओंपर आपका अगाध प्रेम था। देशी परदेशी दर्शनार्थ आए हुए कोई भी साधु पीछा जानेके लिए आज्ञा मागता तो आप फरमाते भाई! जाने का नाम मतलो, जानेके नामसे ही मेरा चित दुखित होताहै। मेरी आज्ञा तो यही है कि इसी धाम में मेरे पास निवास करो यों फरमाते २ ही प्रेमसे गद्गद वाणी हो जाते। जब कि आपका ऐसा माईतपणा स्मर्ण हो आता है तो हृदय थाँभने के लिए सिवाय आँखों में से पानी निकालने के दूसरा उपाय ही क्या है।

गुरधर्मी भी आप पूर्ण थे। गुरधाम सिंहथलमें आपकी पूरी गुरुभावना थी। श्रीमहन्ताँ महाराज के चरणारविंदोंमें जिसकदर आपका प्रेम था वह लेखनीसे लिखना अशक्य है।

आपका प्रेम था वैसाही श्रीमहन्ताँ महाराज का आपपर प्रेम था। प्राय आप दोनों साथ ही विराजे। साथही मेलोंपर पधारते। साथही रामत करवाते। जोधपुर चातुर्मासा करवाया तो साथ ही करवाया। यहा-तक प्रेम था परलोक पधारते समय भी सिंहथल से श्रीमहन्ताँ महाराज को पधराय दर्शनकर परलोक पधारे।

(श्रीलालदासजी महाराज)

देश ढूढाड घाडनामक ग्राममें सोल्सी सरदारके घर आपका। जन्म हुआ। सम्वत् १९६८ में गादी विराजे। आपभी बडे वैराग्यवान् भज-नानन्दी महात्मा हुए। गुरधर्म और नित्यनियमके धारण करने में तो आप जैसे आप ही थे। हर समय ईश्वरचिन्तवनमें लवलीन रहा करते थे। करुणासागरका पाठ तो आपके मनहीमनमें होताही रहताथा।

१—देशाटन।



Sri Kewal Ramji Maharaj
(Khedapa)

(श्री १०८ श्रीकेवलरामजी महाराज)

वर्तमान समयमें आप गादीपर विराजमान हैं। आपकी जितेन्द्रियता और दयालुता तो बडीही सराहनीय है। आप षट्शास्त्रनिष्णात हैं। आपके धर्मोपदेशकी कथाकी छटाकी घटाका आनदामृत वरसाना तो अपूर्वही है। आपका श्रीगुरुधाम सिंहथलमें जो प्रेम है वह अनहद है। सिंहथल पधारना, श्रीमहन्तों महाराजको पधराना परपरासे जो सनातन गुरुधर्म चला आरहा है उसको आप अछी तरहसे निभा रहे हैं और निभाते रहेंगे।

सिंहथल खैडापाके गुरुशिष्यभावका जहा इतना घनिष्ठ सबध है जहा परस्पर इतना प्रेमभाव है तो भला दो कैसे कहेजाँय "गिरा अर्थ जलवीचि सम कहियत भिन न भिन्न" "अर्थात् जैसे वाणी और अर्थ ये दोनों जल और उसकी तरगके समान कहने में जुदे हैं किंतु यथार्थमें जुदे नहीं है" इसीलिए थाँभायत रामशाही ठिकानोंके संत महात्मा मेलेमहोत्सव चातुर्मास आदिमें सिंहथल खैडापा गुरुधामके दोनों आचार्योंको जैसे पहिले पधराते थे वैसेही आजदिनपर्यंत पधराते हैं।

सिंहथलधाममें तो आप सबका यहातक प्रेम है मेलेपर सिंहथल महन्तों महाराजको पधरानेके वास्ते खुद आप तो विनयपत्र देतेही हैं परंतु अवश्य पधारनेके वास्ते खैडापा महन्त महाराजके हस्तकमलसे भी दिरवाते हैं।

फिर देखिये कैसी गुरुधाममें भावना है अधिकारीसहित हाजरीमें सात सात मूर्तियोंसे छडीसवारी श्रीमहन्तों महाराजाओंको पधरानेमें हमेशह धामकी टहल बदगी करनेवाले साथ नहीं आसकते तो वे ऐसा न समझलें कि हमको भूल गए इसलिये उन वडभागी बन्दगीदारोंको प्रसन्न रखनेके लिये धर्ममर्यादानुसार प्रत्येक मेलेकी चार चार चदरें वहीं भेज देते हैं। धन्य है साधुओंमें परस्पर प्रेम हो तो ऐसाही हो।

श्रीरामगुरुदेवजी महाराज! आप सब महात्माओंकी गुरुधाममें निरंतर ऐसी ही अटल भक्ति बनाए रखें।

दोहा ।

लिवलागी परब्रह्मसूँ, रतीनखंडे तार ।
रामानंद आनंदमें, गुरुगोविंद आधार ॥ १ ॥

इति ।

सुखमाया सूं खरो पियारो । कवहु न सुमऱ्यो सिरजन हारो ॥
जोवन मद मातो अभिमानी । पर घर भटकत शंक न आनी ॥ ३ ॥
स्वारथ माँहिं चहुँ दिशि ध्यायो । गोविंद को गुण कवहु न गायो ॥
ऐसे ऐसे करत व्यवहारा । आया साहिव का हलकारा ॥ ४ ॥
वांध्यो काल कियो चौरंगा । सुत बेटी नारि न कोइ संगा ॥
जे तैं कर्म किया है भारी । सो अब संग सु चलै तुम्हारी ॥ ५ ॥
जम आगे ले ठाढो कीनो । धर्म राय वूझणकूं लीनो ॥
कीधा कौल किया तुम कर्मा । सिरजनहार न भज्यो निशर्मा ॥ ६ ॥
जिन पाणी सूं पैदा कीयो । नर सो रूप तोहिकूं दीयो ॥
जो तूं विसऱ्यो मूरख अंधा । तो तूं आयो जम के वंधा ॥ ७ ॥
हरि की कथा सुणी नहिं काना । तो तूं नाहीं जम सूं छाना ॥
साधुसंगति में कवहु न रह्यो । मुख सूं राम कवहु नहिं कह्यो ॥ ८ ॥
हरिकी भक्ति करो नर नारी । धर्मराज यों कहै विचारी ॥
मोकूं दोष न दीजो कोई । जैसा कर्म भुगताऊ सोई ॥ ९ ॥
पाप पुण्यकूं न्यारा ठाणूं । जो तुम कर्म करो सो जाणूं ॥
तुमरा कर्म तुम्हें भुगताऊं । आदिपुरुष की आज्ञा पाऊं ॥ १० ॥
साहिव की आज्ञा है मोकूं । महा कसोटी देहूं तोकूं ॥
घड़ी घड़ी का लेखा लेऊं । कर्मादिक तेरा भरि देऊं ॥ ११ ॥
है हरि विना कौन रखवारो । चित दे सुमिरो सर्जनहारो ।
संकटतें हरि लेहि उवारी । निशिदिन सुमिरो नाम मुरारी ॥ १२ ॥
नाम निकेवल सव तें न्यारा । रटत अघट घट होय उजारा ॥
रामानंद यों कहै समझाई । हरि सुमिरे जमलोक न जाई ॥ १३ ॥

इति ।

ॐ रौं रामाय नमः ।

रामानन्दमहं वन्दे श्रीरामांशावतारकम् । आचार्य्याणां शिरोरत्नं मन्त्रराजप्रचारकम् ॥ १ ॥

अथ श्री १०८ श्रीरामानन्दजी महाराजकृत मानसी सेवा ।

शालग्राम शब्द करि सेऊ तन तुलसी कर लीजै ।
आतम चदन घसि घसि चरचूँ इम विधि सेवा कीजै ॥ १ ॥
ज्ञानजनेऊ ध्यानधोवती शुचि का अंचला कीनै ।
काया कुंभ प्रेम का पानी हरिदरिया भर लीजै ॥ २ ॥
दया आचार विवेक सुचौका उर अज्ञान करीजै ।
इच्छा पुहुप चढाऊं पूजा मनसा सेवा कीजै ॥ ३ ॥
त्रिगुणी त्रिकुटी मन करि अर्घा सपुट ध्यान धरीजै ।
पांचों वाती जोय करेनै इच्छा सेवा कीजै ॥ ४ ॥
कलह कल्पना धूप अगारी ब्रह्म अग्निकर खेऊ ।
उलटी वास गगन कू लागी इस विधि सेवा सेऊ ॥ ५ ॥
गुरु गम मंतर जाप अजप्पा हिरदा पुस्तक कीजै ।
अनुभव कथा कहूं भाइ साधो इस विधि पाठ पढीजै ॥ ६ ॥
अनहद घटा झालर बाजै अलख पुरुष की सेवा ।
पुरुष निरंतर बैठा साधो रोम रोम में देवा ॥ ७ ॥
गंगा जमुना बहै सरस्वती जहँ जाय ध्यान धरीजै ।
त्रिकुटि मँदिर मे बैठा साधो वहाँ जाय दर्शन कीजै ॥ ८ ॥
सहज सिंहासन निर्भय सेऊ चित की चवरी कीजै ।
चक्षा माहि चंग ढलनाऊं धीरज बैठारीजै ॥ ९ ॥
कोई एक साधो मिलिया आई सब सतनका मेला ।
सतगुरु मेरे शिरपर ठाढा मुँडडा आगे चेला ॥ १० ॥
या मेरि सेवा या मेरि पूजा ऐमी आरति कीजै ।
आतमा तत्त्व विचारी लीजै ध्यान निरंतर कीजै ॥ ११ ॥
जड पाषाण भरम की सेवा मूल भटक नहिं मरना ।
सतगुरु मेरे जुक्ति बताइ तब भवसागर तिरना ॥ १२ ॥
बाहिर भरम कबहु नहि जाऊ अंतर सेवा जागी ।
रामानंद गगा निर्भय आणी पारब्रह्मलिव लागी ॥ १३ ॥

संत गुणे सरधापणे वे, छिनही विसरे नांहि ।
सुरनर मुनिजन रीझिया वे, लागिमगन धुन मांहि ॥ २ ॥
घांसविहूणी वांसली वे, बोले अमृत वैण ।
नितही नैडी वाजही वे, अंतर लागा नैण ॥ ३ ॥
जैमलदास धुन ध्यानमें वे, ऊगा निर्मल सूर ।
मुरली माँहि अगोचरी वे, ऊपर अनहद तूर ॥ ४ ॥

पद ४

मेरी जिन्द कुरवाण सांईदी सूरत पर वारी हो ॥ टेर.
सांईदी सूरत मेरे दिलविच वसदी लागै मोहि पियारी हो ॥ १ ॥
दर्शन तेरो जीवन मेरो मेटो भरम अंधारी हो ॥ २ ॥
आसन तेरो सहज सिंहासन पाँचूं प्रेम पुजारी हो ॥ ३ ॥
जैमलदास करै अरदासा राखो शरण तुम्हारी हो ॥ ४ ॥

पद ५

कदे न उतरै खुमार हरि रंग यूं लागो ।
यूं लागो यूं लागो यो तो भ्रम यूं भागो ॥ टेर.
चित्तमें चेतन ठाहऱ्या वे, परम तेज प्रकास ।
वेद पुराणां गम नहीं वे, दरशन पावै दास ॥ १ ॥
दूर ध्वजा धुन में खड़ीवे, घुरै दमामा घोर ।
मुरली वाजै सोहणी वे, लागि रह्या है टोर ॥ २ ॥
मन ही में मनजानिया वे, कहवे कूं कछु नाहिं ।
मूरख भूल्या भरम में वे, वाहिर ढूंढण जॉहिं ॥ ३ ॥
गगन मंडल वादल झरेवे, वूठा नाम निरास ।
पॉवस तूटा पेमका वे, भीना जैमलदास ॥ ४ ॥

पद ६

राम भजन में मन लावे संतो अनहद तार वजावै ॥ टेर.
आतम मांही आप विचारै शब्द सुणै सुख रासी ।
निरख निरख हिरदै में हरखै आय मिले अविनासी ॥ १ ॥
साँचा ज्ञान ध्यान धरि हिरदै गगनमंडल मठ छावै ।
निर्मल नूर नैन रह लागा विन रसना गुण गावै ॥ २ ॥

---

१ तुरीका बाजा । २ छाक । ३ बाजा विशेष जिसको बजानेसे दमामी कहलाते हैं दमामा=तासा या नगारा । ४ वर्षा । ५ तेज ।

॥ श्रीगुरुभ्यो नमः ॥

अथ स्वामीजी श्री १००८ श्रीजैमलदासजी महाराज की अनुभववाणी ।

राग काफी ।

पद १

दीस रह्या दिलमाँहि दर्शन साँईंदा
साँईंदा साँईंदा झिगमिग झाँईंदा ॥ टेर
शून्यमंडलमें सुण रह्याने, वाजे अनहद वेण ।
भया उजाला गैबका वे, सहजा मिलिया सेण ॥ १ ॥
निगम खोज पावे नहीने, जपतप लहे न कोय ।
सो साँइ तनमें वसैने, निमष न न्यारा होय ॥ २ ॥
साचा साँई यूँ खडा वे सताँही सुखदैण ।
सासाँ न्यारा करदियाने, देख्या नैंणा नैंण ॥ ३ ॥
जैमल्दास अवसर मिल्याने, सन्मुख सिरजणहार ।
मरमज्ञ भागा जीवका वे, दरस्या है दीदार ॥ ४ ॥

पद २

लागिरह्या निजनेह दशवैं द्वारीदा
द्वारीदा द्वारीदा औघट वारीदा ॥ टेर
घटमें औघट यू वसै वे, जैसे तिल्में तेल ।
नैडा जबही जाणियाने, शब्दा लागा सेल ॥ १ ॥
शशिमें सूर समाइया वे, भागा है अंधकार ।
दीपक हूवा निर्मलने, निरघाती अगार ॥ २ ॥
रत्न प्रज्ञान प्रकाशिया वे, मिटिया संशय मोह ।
किंचित् लौं जिन जानियाने, तिन सहज पिछान्या सोह ॥ ३ ॥
अरसें परम है माहिसमाणा, मनसिलिया उल्टा उरसैं ।
जैमल्दास जुगे जुग तेरा, आतम राम सदा दरसैं ॥ ४ ॥

पद ३

दशवैं द्वार मझार मुरली वाजै सोहणी ।
सोहणीरे सुनमाहि मुनिवर मोहणी ॥ टेर
जघन पर कर धारिकैं वे, सम आसण चितलाय ।
निरंतधरै निज नासिकाने, सुनमें सुरत समाय ॥ १ ॥

१ दशमद्वार । २ वैसी । ३ परोक्ष । ४ संशय । ५ ओतप्रोत । ६ दृष्टि ।

.लटि धुनि है सारां निज सार ॥ २ ॥
.रि काने करगहि देगा तार ॥ ३ ॥
.ेहूणी वाजी वणी असार ॥ ४ ॥

पद १२

.री हरि सुमरै क्यों नाँहिं ॥ टेर.
.ीं अवसर वीतो जाँहि ॥ १ ॥
जाने संपति सपुनै माँहि ॥ २ ॥
घणा संग ऊठि अकेलो जाँहि ॥ ३ ॥
.ो है हरि सुख विसरै काँहि ॥ ४ ॥
तिरन कों राम नाम घट माँहि ॥ ५ ॥

पद १३

आव घटंती जाय ॥ टेर.
.री काया देखत ही घटि जाय ॥ १ ॥
नहिं लाभै पीछे ही पछिताय ॥ २ ॥
करि काने तंतही लेणा ताय ॥ ३ ॥

पद १४

.ोसे साँई नैड़ा रे ॥ टेर.
.रि सोधो भवसागर में बेड़ा रे ॥ १ ॥
.में व्यापक त्योंही है घट तेड़ा रे ॥ २ ॥
.ख पाया नित चरणों का चेड़ा रे ॥ ३ ॥

पद १५

.निया सव भूली मोह्या है हद ऊली ॥ टेर.
.हिया चेतन विसऱ्या जाय ।
.ी ताकों देखै नांहि ॥ १ ॥
. है ताहि न देखै कोय ।
. का नैड़ा ही निज होय ॥ २ ॥
.ा जे कोइ लेवै खोज ।
.ये जब लागै मनमें मोज ॥ ३ ॥
तिरणकूं आतमराम आधार ।
अनुभव हूवा पार ॥ ४ ॥

. । ४ तत्त्व । ५ तेरा । ६ चेरा । ७ स्त्रीपुत्रधनादि ।

अगम निगम गति जाय न जानी परखणहार न कोई ।
जैमलदास अतर जिन सोन्या देखै अचरज सोई ॥ ३ ॥

राग गूजरी ।

पद ७

राम रक्यो गलैतान भयो ॥ टेर
सारको सार सकल तै ऊँचो सो या तनमें साधि ल्यो ॥ १ ॥
आदि अनादि किता जन चीन्हो ताको सासो दूरि भयो ॥ २ ॥
वेद पुराण सकल में वोले भक्ति मुक्ति निधाम ल्यो ॥ ३ ॥
जैमलदास लग्यो चित निश्चै दीपक ज्यू परकास भयो ॥ ४ ॥

पद ८

मन रहै लागो मनसू ॥ टेर
अतर माहि अगम घर देखै भेद लहै परवर सू ॥ १ ॥
चेतन में चित जाय समावै विरच रहै त्रिपया घन सू ॥ २ ॥
त्रिकुटी ध्यान लगावै ताली तोडि चले तातो तन सू ॥ ३ ॥
जैमलदास साइवे शरणै ऐसो भेद लहै जन सू ॥ ४ ॥

पद ९

देखो निरजन की छविनाइ ॥ टेर
ज्यों ज्यों प्रीति लगी निदिवासर त्यों ही भइ है ज्योति सवाई ॥१॥
जोग विरोध विमोहको नातो याको छेद रही निच पाई ॥ २ ॥
अवगति परस भया जे ऐसा लागै नहीं शुभाशुभ काई ॥ ३ ॥
जैमलदास चरण चित लागा या निधिमें सतगुरु हीतैं पाई ॥४॥

पद १०

मेरो नेह लग्यो निर्मल धुन सू ॥ टेर.
तेज प्रकाश भयो या तनमें रीझरह्यो मनही मन सू ॥ १ ॥
अतर ज्योति जगी झिगामिग चित्त लग्यो उनही उन सू ॥ २ ॥
दिल माही दीया नित दर्शन क्या कहू किनही किन सू ॥ ३ ॥
जैमलदास परस पिउ प्यारा आतम भिन्न सदा तनही तनसू ॥४॥

पद ११

शुद्धे आय मिलैंगे रसना राम पुकारदी ॥ टेर
तन मन लाय लाय चित चरणै तोहि करैगा पार ॥ १ ॥

१ जिसकी गम नहो। २ वेद। ३ मम। ४ पुण्य पाप।

हरि है दाता देह का तातें भया सकाम।
गुरु है दाता ज्ञान का मनका मेटि विराम ॥ ८ ॥
जब तें उर अज्ञानता हरि सुख उपजै नाँहिं।
जन हरिया गुरु ज्ञान दे किया निदुरु मन माँहिं ॥ ९ ॥
सतगुरु जो मिल्ता नहीं हरिया होते रीछ।
आपो आप न ओल्खै औरा इछैं पलीछ ॥ १० ॥
सतगुरु जो मिलता नहीं आती नाहि सुमत्ति।
हरिया हरि सू आतरो करते काय कुमत्ति ॥ ११ ॥
सतगुरु जो मिलते नहीं होती तनकी हानि।
ज्यू पासो चोपड तणो हरिया हाथ न जानि ॥ १२ ॥
हरिया पासो हाथ को होय न अपने हाथ।
सतगुरु केरे शब्द विन मन आवै नहिं हाथ ॥ १३ ॥
जन हरिया चोपड तणा आवै दाव अनेक।
सतगुरु केरे शब्द सों औसर मिलेन एक ॥ १४ ॥
सुरति सारी निरत चौपड सतगुरु दाव दिखाय।
हरिया पासा पेम का खेलज हरि सू लाय ॥ १५ ॥
ऐसे दिनँकर मेटियाँ निशिकॅर गए नसाय।
जन हरिया गुरुमेटियाँ अघ अधारा जाय ॥ १६ ॥
जन हरिया गुरु भेटिया मेट्या अघ अधार।
ज्ञान गुरू प्रकासिया देख्या दिल दीदार ॥ १७ ॥
घर घर में दीपक जगै दुनियाँ देखै नाँहि।
सतगुरु विन भाजे नहीं पड़दा अतर माँहि ॥ १८ ॥
लखचौरासी नगर में कोडी धज कोइ साह।
रखा हजारा एक सौ जग माही बहुताह ॥ १९ ॥
सतगुरु साहूकार है शिष सौदागर जान।
जन हरिया राखै नहीं रती न अतर कान ॥ २० ॥
हरिया सौदो साह को ऐसी सिरदे मोल।
विन तोला विन ताकड़ी तत्त तराजू तोल ॥ २१ ॥
सौदा सतगुरु सू किया राम नाम धन काज।
लाभ न कोइ छेहंडो तोटा सबही भाज ॥ २२ ॥
सतगुरु विन सौदा किया जन हरिया बेकाम।
साकट ऐसे सूकरा हाँडे घर घर जाम ॥ २३ ॥

---

१ राजीकरना ल्यानोरी करना। २ दृष्टि। ३ सूर्यप्रकाश। ४ चद्र, अधेरा। पार। ६ फिरै।

सतगुरु संग सौदा किया गाहिक ज्ञान विचार।
जन हरिया जब जाणिये पूंजी पार उतार ॥ २४ ॥
राम नाम सौदागरी करि करि लीजे लाह।
जन हरिया हक साहके ना कोइ अनहक राह ॥ २५ ॥
हरिया सौदा शब्द का दूजा सौदा नांहि ।
दूजा सौदा सो करै खांड़ परै मुखमांहि ॥ २६ ॥
राम नाम सौदा किया दूजा दांण चुकाय।
जन हरिया गुरु ज्ञान का टाँडो देह लदाय ॥ २७ ॥
टाँडे नायक नाम निज गुण की गूंण भराय।
लदे पलाणे सुरति मन ज्ञान वलधिया थाय ॥ २८ ॥
आडा पड़दा दूर करि अगम दिखाई वाट।
जन हरिया गुरु महर तें लंघिया अवघट घाट ॥ २९ ॥
अवघट घाटी नीसऱ्या देख्या देव अपार।
जन हरिया शिर ऊपरै सतगुरु सिरजन हार ॥ ३० ॥
सतगुरु सिलियाँ बाहिरो होती हाँसा खेल।
कूवै गोसी कोस ज्यूं हरिया पाछो ठेल ॥ ३१ ॥
जबरो गोसी कूप जग बारो आवै जाय।
हरिया गुरु बांही गहै आत जात अटकाय ॥ ३२ ॥
सतगुरु मोकूं धीरदे एकजदाखी सीख।
जन हरिया गुरु सीख बिन भरूं न दूजी बीखं ॥ ३३ ॥
सीख सुनाई सुध भई तन आँपो विसराय।
जन हरिया मन गैंक हुय तर्क फैंक नहिं थाय ॥ ३४ ॥
सतगुरु वाह्या शब्द सर मूक्यौ हृदय मँझार।
भौंदू था सो भाजिग्या भेदी रह्या विचार ॥ ३५ ॥
सतगुरु वाह्या शब्द सर सनमुख लागा आय।
सुगुरा सोई चेतसी निगुरां गम्म न काय ॥ ३६ ॥

१ खांड व्यंग है अर्थात् धूड़। २ कर। ३ बालद, सोवत। ४ मुखिया। ५ छटिया। ६ विनाँ। ७ चवस झेलनेवाला। ८ धक्कादेना। ९ डग। १० अपनापन। ११ मग्न। १२ वादविवाद। १३ छोडा। १४ अज्ञानी।

१५ गुरु उपदेश कहाकरै दुराराध्य ससार।
वसै सदा जाके उदर जीव पचपरकार ॥ १ ॥
हूंघा प्रभु चूंघा चतुर सूंघा रोचक शुद्ध।
ऊंघा दुर्बुद्धी विकल घूंघा घोर अबुद्ध ॥ २ ॥

हरि है दाता देह का तातें भया सकाम।
गुरु है दाता ज्ञान का मनका मेटि विराम ॥ ८ ॥
जब तें उर अज्ञानता हरि सुख उपजै नाँहिं।
जन हरिया गुरु ज्ञान दे किया निदुख मन माँहिं ॥ ९ ॥
सतगुरु जो मिलता नहीं हरिया होते रीछ।
आपो आप न ओलखे औरा ईछे पलीछ ॥ १० ॥
सतगुरु जो मिलता नहीं आती नाहि सुमत्ति।
हरिया हरि सू आतरो करते काय कुमत्ति ॥ ११ ॥
सतगुरु जो मिलते नहीं होती तनकी हानि।
ज्यू पासो चोपड तणो हरिया हाथ न जानि ॥ १२ ॥
हरिया पासो हाथ को होय न अपने हाथ।
सतगुरु घेरे शब्द विन मन आवै नहिं हाथ ॥ १३ ॥
जन हरिया चोपड तणा आवै दाव अनेक।
सतगुरु केरे शब्द सों ओसर मिलेन एक ॥ १४ ॥
सुरति सारी निरत चौपड सतगुरु दाव दिखाय।
हरिया पासा पेम का खेल्ज हरि सू लाय ॥ १५ ॥
ऐसे दिनेंकर मेटियाँ निशिकेर गए नसाय।
जन हरिया गुरुमेटियाँ अघ अधारा जाय ॥ १६ ॥
जन हरिया गुरु भेटिया मेट्या अघ अघार।
ज्ञान गुरू प्रकासिया देख्या दिल दीदार ॥ १७ ॥
घर घर में दीपक जगै दुनियाँ देखै नाँहि।
सतगुरु विन भाजै नहीं पडदा अतर माँहि ॥ १८ ॥
लखचौरासी नगर में कोडी धज कोइ साह।
लखा हजारा एक सौ जग माही वहुताह ॥ १९ ॥
सतगुरु साहूकार है शिष सौदागर जान।
जन हरिया राखे नहीं रती न अतर कान ॥ २० ॥
हरिया सौदो साह को लेसी सिरदे मोल।
विन तोला विन ताकडी तत्त तराजू तोल ॥ २१ ॥
सौदा सतगुरु सू किया राम नाम धन काज।
लाभ न कोई छेहडो तोटा सबही भाज ॥ २२ ॥
सतगुरु विन सौदा किया जन हरिया बेकाम।
साफट ऐसे सूकरा हांडे घर घर जाम ॥ २३ ॥

१ राजीकरना, व्यापोरी करना। २ दृष्टि। ३ सूर्यप्रकाश। ४ चन्द्र, अंधेरा। पार। ६ फिरे।

जन हरिया सतगुरु इसा जैसा होवे भृंग।
कीट परांसे पोखदे करै आप से रंग॥ ५२॥
जिन गुरु ती हरि प्रामियाँ भरम न राख्या कोय।
जन हरिया क्या अरपियै दीजै तन मन दोय॥ ५३॥
जन हरिया भव जुगन में सतगुरु करी सहाय।
आदू अपना जानिके हाथ लिया विलमाय॥ ५४॥
लोह पलट कंचन भया पारस का परताप।
जन हरिया सतगुरु करै आप सरीपा आप॥ ५५॥
जन हरिया सतगुरु करै ऐसा है इकतार।
जैसे कूं तैसा करै ज्यों दरपन दीदार॥ ५६॥

इति।

अथ गुरु शिष्य को प्रसंग।

शिष सतगुरु पै जायके चरण नवाए शीश।
जन हरिया सतगुरु किया चेला राम वरीश॥ १॥
शिष सेती सतगुरु कहै परा परीकी रीत।
और भरम कूं छांडि दे राम नाम सूं प्रीत॥ २॥
शिष मन को नारेल करि ले गुरुचरणां चाढि।
हरिया सतगुरु देत है अपना अंतर काढि॥ ३॥
अंतर जिसकूं दीजिये हरिया अंतर देह।
आपा अंतर बाहिरो जासूं किसा सनेह॥ ४॥
हरिया भेद न दीजिये वाके अंतर खोट।
तन तैं नान्हा हुय मिले मन तैं वडिमभोट॥ ५॥
हरिया तन का क्या दिया जो मन दुविधा आनि।
तन मन भीतर एक है ताहि दिया सब जानि॥ ६॥
ताहि दिया सब जानिया वाके अंतर साच।
हरिया कबहूं मुख ते असंत न आखै वाच॥ ७॥
मुख तैं मीठा बोलणा अंदर भरिया खार।
वाकै कूड़ रु कपट का हरिया बहुत व्योहार॥ ८॥
हरिया तन हरि का दिया मन हरि कै नहिं हाथ।
मन कूं गुरु परबोधिके दई नाम सी आथ॥ ९॥

---

१ श्रेष्ठ। २ वारीश=समुद्र। ३ छोटा। ४ वडप्पन। ५ भेदभाव। ६ झूठ। ७ प्रबोधिके=सचेतकर। ८ संपत्ति।

हरिया सतगुरु शब्द की मुखभर वाहै मूठ।
आगे शिप सामा खड़ा दियाँ जगत कूँ पूठ ॥ ३७ ॥
जन हरिया गुरु सूरवा करै शब्द की चोट।
सिख सूरा तन जो लहै आनि धरै नहि ओट ॥ ३८ ॥
सतगुरु का सिख सूरवा त्यागै तन मन प्रान।
हरिया सालै रैन दिन शब्द लगाया वान ॥ ३९ ॥
भागा सूर न वजइ भागा गुरु ने गाल।
अणिया एकल मल लडै दोऊ दला विचाल ॥ ४० ॥
सतगुरु वाह्या मूठ भर शब्द सताणा एक।
जन हरिया उर वीच में करिग्या छेक अनेक ॥ ४१ ॥
पर उपकारी गुरु मिल्या भक्ति वताया भेव।
योही सुमरण हरि कथा याही सहजाँ सेव ॥ ४२ ॥
जन्म जन्म के वीसरे अब क्यू आवै ठाँय।
जन हरिया गुरु आपना पलमाही समझाँय ॥ ४३ ॥
जन हरिया गुरु आपना लेपहुँचे पर गाँव।
जिन गुरु शब्द न जानिया धका वीचमें खाँव ॥ ४४ ॥
कीड़े खाई लकडी ज्यू काया कू काल।
गुरु विन कोइ न ऊवरै मध्य स्वग पाताल ॥ ४५ ॥
ब्रह्म अग्नि तन वीच में मथकरि काढे कोय।
उलटि काल कू खात है हरिया गुर गम होय ॥ ४६ ॥
सतगुरुती सला मिल्या भया निससै जीव।
जन हरिया मुक्ति मामिया आदि अतका पीव ॥ ४७ ॥
सतगुरु जो मिलता नहीं तो लेते कुल खोज।
जन हरिया सतगुरु मिल्या हसोन आवै रोज ॥ ४८ ॥
जन हरिया सतगुरु इसा जिसा कमागर होय।
शब्द मसकला फेर करि दाग न राखै कोय ॥ ४९ ॥
जन हरिया सतगुरु इसा जैसा होय लोहार।
तन लोहा ज्यू ताव दे काट न राखण हार ॥ ५० ॥
जन हरिया सतगुरु इसा जिसा सरकरा होय।
मन तरकस का तीर ज्यों धाक न राखै कोय ॥ ५१ ॥

हूँधा सिद्ध कहै सब कोऊ सूँधा ऊँधा मूरख दोऊ।
घूँधा घोर विकट ससारी चूँधा जीव मोक्ष अधिकारी ॥ ३ ॥

१ मुट्ठीभरकर। २ जोरसे। ३ सिकलीगर। ४ शाण। ५ बाणबनानेवाला।

राम नाम कूं छांडि कै, हरिया धरै न और।
जे कोई धारै दूसरा, हरि दरगै[1] नहि ठौर ॥ ४ ॥
अविनाशी कूं याद करि, परिहरि दूजी आस।
हरिया गुरु समझाय के, दीया नाम निरास ॥ ५ ॥
पोथी पुस्तक टीपणो, जग पंडित को काम।
हरिया हिरदै संतके, रामनाम विश्राम ॥ ६ ॥
जैसा भोजन जीमिये, तैसा आवै स्वाद।
या तन का सारा नहीं, मनसा इसी मुराद[2] ॥ ७ ॥
जाके मन जैसी वसै, तैसी मन वरताय।
जन हरिया जो आदि है, अंत खड़ी है आय ॥ ८ ॥
रामनाम विन मुक्ति की, जुक्ति न ऐसी और।
जन हरिया निशिदिन भजो, तजो दूसरी ठौर ॥ ९ ॥
जन हरिया समझाय कै, गुरू वताया भेव।
रामनाम तुल दूसरा, देव न कोई सेव ॥ १० ॥
रामनाम जपता रहै, तजै न आसा आन।
जन हरिया उन जीव की, मिटै न खांचा तान ॥ ११ ॥
रामनाम ज्यों ज्यों भजै, त्यों त्यों तजै सकाम।
जन हरिया सुन सेझमें, मनवा करै मुकाम ॥ १२ ॥
जोजरै[3] वेड़े वैसतां, जल में जोखा होय।
हरिया हरि सुमिरन विना, भवजल तिरै न कोय ॥ १३ ॥
जानीतल कूं जाणि कै, मारग वूझ्या नाहिं।
जन हरिया विन वूझियाँ, आंधा ऊझड़ जाहिं ॥ १४ ॥
रामनाम कूं सुमरियै, आपो तन मन सोध।
हरिया मारग मुक्ति का, याही गुरु परवोध ॥ १५ ॥
रामनाम निज मूल है, और सकल विस्तार।
जन हरिया फल मुक्ति कूं, लीजै सार संभार ॥ १६ ॥
जन हरिया निशि दिन भजो, रसना सेती राम।
नाम विना जीतव किसो, आय जाय वेकाम ॥ १७ ॥
हरिया जव लग जीवियै, तव लग नाम उचार।
तन सूं पड़सी अंतरो, पीछै कौन विचार ॥ १८ ॥
जन हरिया पहली करो, गुरु गोविंद सूं प्रीति।
ता पीछै मन सूं तजो, लोक लाज कुल रीति ॥ १९ ॥

१ दरगाह=दरवार। २ इच्छा। ३ पुराणा।

था गुरु कू क्या दीजिये दीजे अपनो मध्र ।
मन के पूठे सब दिया हरिया तनरु वचन्न ॥ १० ॥
मन को देवो दुलभ है जो कोइ मन कू देव ।
जन हरिया मन देत है तन करि जानै रेत ॥ ११ ॥
मन मेरा सेवग भया लग्या शब्द गुरु कान ।
रोम रोम में भिद गया हरिया किधून जान ॥ १२ ॥
दास भाव सब ही किया दीया मन अरु तन्न ।
हरिया पीछे क्या रहा गुरु दरशन परसन्न ॥ १३ ॥
हरिया गुरु दरशन कियाँ कटे कोटि अपराध ।
सोई निशि दिन धिन घड़ी होय समागम साध ॥ १४ ॥
साधु समागम सफल है हरिया तन मन जानि ।
जैसा बाहै बीज कू तैसा लुणसी आनि ॥ १५ ॥
हरिया गुरु का सत शब्द साँचे मनसू धारि ।
भवसागर में डूबताँ लेसी पार उतारि ॥ १६ ॥
जन हरिया गुरु आपनै शब्द कह्या समझाय ।
दूजा भ्रम अरु कर्म कू पल में देह बहाय ॥ १७ ॥
हरिया जैमलदास गुरु राम निरंजन देव ।
काया देवल देहरो सहज हमारे सेव ॥ १८ ॥

चंद्रायणा ।

सतगुरु का शिष जानि निचारै ज्ञान कू ।
तन मन सौंपे सीस धरे उर ध्यान कू ॥
निशि दिन सुमरै राम कबू नहिं भूलरे ।
हरिहा दास कहै हरिराम तािहे नहिं तूलरे ॥ १९ ॥

इति ।

अथ उपदेश को अंग ।

तन मन का अपण करै, याचा सूर नरेश ।
जन हरिया हरिनाम का, एसा है उपदेश ॥ १ ॥
कारन कारनवत के, उर आपस में आन ।
जन हरिया यों ब्रह्म है, सही हृदय करि जान ॥ २ ॥
बेरू जल तिर नीसरै, का वेरै सिर बेठि ।
जन हरिया जग क्यू तिरै, विना ज्ञान गुरु पैठि ॥ ३ ॥

बेरा=डूबा ।

है, सो जाणै तन पीर।
विन, क्या जाणै बेपीर॥ १०॥
ना तन पीरा होय।
, पीर न बूझै कोय॥ ११॥
ा, हरिया अंतर माँहि।
ा, ऊठण की सुधि नॉहि॥ १२॥
, अंग अंग में एक।
, करिगी छेक अनेक॥ १३॥
ा, करिग्या देह दुसारँ।
का ऊ वाहण हार॥ १४॥
सूरा संत सुजाण।
ड्या तलफै प्राण॥ १५॥
रहा मेरे अंग।
ठगै न दूजा रंग॥ १६॥
रिया अंतर मॉहि।
और किसी की नॉहि॥ १७॥
सुधि वुधि विसरी सार।
ेर चीर सिणगार॥ १८॥
ानतैं जरजर होय।
ाम निजर भरि जोय॥ १९॥
काम न होय।
हरिया अंग थकोय॥ २०॥
ा, धूआं निकसै नाँहि।
जिसकै घट मॉहि॥ २१॥
ा जमुन की तीर।
नि, अव कहँ जाऊं वीर॥ २२॥
ॉ विरह का खेल।
, जाल न मच्छी झेल॥ २३॥
ेरहा कदे न जाय।
ाकूं काल न खाय॥ २४॥
र।
तार॥ २५॥

घा गुरु कू क्या दीजिये दीजे अपनो मंत्र।
मन के पूठे सब दिया हरिया तनरु वचत्र ॥ १० ॥
मन को देवो दुलभ है जो कोइ मन कू देत।
जन हरिया मन देत है तन करि जानै रेत ॥ ११ ॥
मन मेरा सेवग भया लग्या शब्द गुरु कान।
रोम रोम में भिद गया हरिया किधून जान ॥ १२ ॥
दास भाव सब ही किया दीया मन अरु तन्न।
हरिया पीछे क्या रह्या गुरु दरशन परसन्न ॥ १३ ॥
हरिया गुरु दरशन कियाँ कटै कोटि अपराध।
सोइ निशि दिन धिन घडी होय समागम साध ॥ १४ ॥
साधु समागम सफल है हरिया तन मन जानि।
जैसा वाहै बीज कू तैसा लुणसी आनि ॥ १५ ॥
हरिया गुरु का सत शबद सांचे मनसू धारि।
भवसागर में डूबतों लेसी पार उतारि ॥ १६ ॥
जन हरिया गुरु आपनै शब्द कह्या समझाय।
दूजा भ्रम अरु कम कू पल में देह वहाय ॥ १७ ॥
हरिया जैमलदास गुरु राम निरजन देव।
काया वेवल दहरो सहज हमारे सेव ॥ १८ ॥

चंद्रायणा।

सतगुरु का शिष जानि विचारै ज्ञान कू।
तन मन सौंपे सीस धरे उर ध्यान कू ॥
निशि दिन सुमरै राम क्यू नहिं भूलरे।
हरिदा दास कहै हरिराम ताहि नहिं तूलरे ॥ १९ ॥

इति।

अथ उपदेश को अंग।

तन मन का अर्पण करै, वाचा सूर नरेश।
जन हरिया हरिनाम का, एसा है उपदेश ॥ १ ॥
कारज कारनवत कै, उर आपस में आन।
जन हरिया यों ब्रह्म है, सही हृदय करि जान ॥ २ ॥
हेरू जल तिर नीसरै, का वेरै सिर वेठि।
जन हरिया जग क्यू तिरै, विना ज्ञान गुरु पैठि ॥ ३ ॥

वेरा=दूश।

राम नाम कूं छांडि कै, हरिया धरै न और।
जे कोई धारै दूसरा, हरि दरगै नहि ठौर ॥ ४ ॥
अविनाशी कूं याद करि, परिहरि दूजी आस।
हरिया गुरु समझाय के, दीया नाम निरास ॥ ५ ॥
पोथी पुस्तक टीपणो, जग पंडित को काम।
हरिया हिरदै संतके, रामनाम विश्राम ॥ ६ ॥
जैसा भोजन जीमिये, तैसा आवै स्वाद।
या तन का सारा नहीं, मनसा इसी मुराद ॥ ७ ॥
जाकै मन जैसी वसै, तैसी मन वरताय।
जन हरिया जो आदि है, अंत खड़ी है आय ॥ ८ ॥
रामनाम विन मुक्ति की, जुक्ति न ऐसी और।
जन हरिया निशिदिन भजो, तजो दूसरी ठौर ॥ ९ ॥
जन हरिया समझाय कै, गुरू वताया भेव।
रामनाम तुल दूसरा, देव न कोई सेव ॥ १० ॥
रामनाम जपता रहै, तजै न आसा आन।
जन हरिया उन जीव की, मिटै न खांचा तान ॥ ११ ॥
रामनाम ज्यों ज्यों भजै, त्यों त्यों तजै सकाम।
जन हरिया सुन सेझमें, मनवा करै मुकाम ॥ १२ ॥
जोजरै वेड़े वैसतां, जल में जोखा होय।
हरिया हरि सुमिरन विना, भवजल तिरै न कोय ॥ १३ ॥
जानीतल कूं जाणि कै, मारग वूझ्या नाहिं।
जन हरिया विन वूझियाँ, आंधा ऊझड़ जाहिं ॥ १४ ॥
रामनाम कूं सुमरियै, आपो तन मन सोध।
हरिया मारग मुक्ति का, याही गुरु परवोध ॥ १५ ॥
रामनाम निज मूल है, और सकल विस्तार।
जन हरिया फल मुक्ति कूं, लीजै सार संभार ॥ १६ ॥
जन हरिया निशि दिन भजो, रसना सेती राम।
नाम विना जीतव किसो, आय जाय वेकाम ॥ १७ ॥
हरिया जब लग जीवियै, तव लग नाम उचार।
तन सूं पड़सी अंतरो, पीछै कौन विचार ॥ १८ ॥
जन हरिया पहली करो, गुरु गोविंद सूं प्रीति।
ता पीछै मन सूं तजो, लोक लाज कुल रीति ॥ १९ ॥

१ दरगाह=दरबार। २ इच्छा। ३ पुराणा।

राम नाम निशि दिन भजो, तजो विडाणी तात।
जन हरिया नर देह सो, औसर वीतो जात ॥ २० ॥
राम भजो रे प्राणियाँ, मन परतीति लगाय।
जन हरिया परतीति विन, जन्मअकारथ जाय ॥ २१ ॥
इन औसर भजि राम कू, करि करि मन में ख्याति।
हरिया पेम पियास विन, चढै न चोखी भाति ॥ २२ ॥
वदा करिये वदगी, आतम सू आधीन।
जन हरिया दम दम घटै, यो तन होसी छीन ॥ २३ ॥
सहजा साई सुमिरिये, आल्स ऊघ न आन।
जन हरिया तन पेखणो ज्यों जलपडर जान ॥ २४ ॥
हरिया राम सभारिये, दूजी चिंत निवार।
दूजी चिंता जो करे, तो तन जासी हार ॥ २५ ॥

इति।

अथ ज्ञान सजोग विरह को अग।

दीपक पावक तेल भरि, विच याती सजोय।
जन हरिया जव प्रकटा, पडै पतगा जोय ॥ १ ॥
तन दीपक मन तेल भरि, जीव पतगा जेम।
पावक रूपी राम है, हरिये लाया पेम ॥ २ ॥
विरहा आया ज्ञान का, आपो अतर मेट।
जन हरिया जव विरहिनी, पिउ परमानद भेट ॥ ३ ॥
विरह सजोडा ज्ञानका, सुधि वुधि गुणा गँभीर।
जन हरिया अज्ञान कू, काढि निकासै तीर ॥ ४ ॥
और विरह किस काम का, विना विचाऱ्या ज्ञान।
जन हरिया विरह जाणिये, अतर उपजै ध्यान ॥ ५ ॥
विरहा मेरे सिरधणी, उँढेत छोंडू नाँहि।
जन हरिया विरह लेचले, सुखसागर के माँहि ॥ ६ ॥
इनको प्याणो दुलभ है, ज्या खाडा की धार।
हरिया सरवर नीर कू, निरही पीवन हार ॥ ७ ॥
जन हरिया वन वन फिरी, सॉइ कारण तुज्झि।
विरहा ज्ञान प्रकासिया अदर पाया मुज्झि ॥ ८ ॥
हरिया मेरे को नहीं, तमसा आतम राम।
तू घट घट में रमि रह्या, सारत हैं सव काम ॥ ९ ॥

१ वृथा। २ परनाल।

विरह स तीरा तन वहै, सो जाणै तन पीर ।
जन हरिया तन पीर विन, क्या जाणै बेपीर ॥ १० ॥
पीर पराई सो लहै, ता तन पीरा होय ।
जन हरिया बेपीर तन, पीर न बूझै कोय ॥ ११ ॥
विरह सतीरा वहिगया, हरिया अंतर माँहि ।
लागत ही सूं गिर पऱ्या, ऊठण की सुधि नाँहि ॥ १२ ॥
विरह भाल जाकै लगी, अंग अंग में एक ।
जन हरिया तन वीचमें, करिगी छेक अनेक ॥ १३ ॥
विरह भालका वहि गया, करिग्या देह दुसारै[2] ।
का लागी सो जाणसी, का ऊ वाहण हार ॥ १४ ॥
विरह भाल सूं मरिगया, सूरा संत सुजाण ।
जन हरिया सेजीवता, पड़्या तलप्फै प्राण ॥ १५ ॥
भली करी तैं आवतें, विरहा मेरे अंग ।
एक रामैयो रमि रह्यो, लगै न दूजा रंग ॥ १६ ॥
विरहा तू आयो भलाँ, हरिया अंतर माँहि ।
राम दिवानी[3] करि गयो, और किसी की नाँहि ॥ १७ ॥
विरहनि मारी विरह की, सुधि बुधि विसरी सार ।
हरिया सिर सूं डारिया, हीर चीर सिणगार ॥ १८ ॥
जन हरिया जोवन गयो, तनतैं जरजर होय ।
मारी मरूं न विरह की, राम निजर भरि जोय ॥ १९ ॥
पाँवां सेती पंगली, कर सूं काम न होय ।
वाहण वहिग्यो विरह को, हरिया अंग थकोय ॥ २० ॥
जन हरिया विरह परजल्या, धूआं निकसै नाँहि ।
का झल लाई सो लहै, का जिसकै घट माँहि ॥ २१ ॥
विरहा मोकूं ले चल्या, गंग जमुन की तीर ।
जन हरिया जल विच अगनि, अब कहँ जाऊं वीर ॥ २२ ॥
ब्रह्म अग्नि जलमें जगै, जहाँ विरह का खेल ।
जन हरिया जहां विलंबिया, जाल न मच्छी झेल ॥ २३ ॥
जहाँ झींवर का जाल है, विरहा कदे न जाय ।
हरिया घट विरहा वसै, जाकूं काल न खाय ॥ २४ ॥
मुँहरेड़ी आया भला, विरहा ज्ञान विचार ।
जन हरिया अब आवसी, सुखसागर भरतार ॥ २५ ॥

इति ।

---

१ भाला । २ आर पार छेद । ३ बावली । ४ प्रधान । ५ अच्छा ।

अथ परचै को अंग ।

प्रथम ध्यान पूरब दिसा, गगन गरजिया जाय ।
ठाम ठाम पाताल कू, पछै पछिम कू थाय ॥ १ ॥
सुरति चली आकास कू, दे जालंधर बंध ।
जन हरिया जहँ जाणिये, हद बेहद की संध ॥ २ ॥
बीच मेरु ते गिर पड्या, धरणी धरै न पाव ।
जन हरिया जब सूर कू, खरै खेतै का दाव ॥ ३ ॥
लगी चोट मन मरम की, खूला ब्रह्मकपाट ।
मेवासा सब जीत कै, बस्या नगर वैराट ॥ ४ ॥
बाट विकट वैराट की, पोहँचेगा कोई सूर ।
हरिया कायर थकि रह्या, दरगै रहिया दूर ॥ ५ ॥
दृष्टि देख सबको कहै, सुपनेऊ कह सोय ।
जन हरिया गम अगम कू, ताहि बतावै कोय ॥ ६ ॥
सुरति बतावै ब्रह्म कू, कहै अगम की बात ।
जन हरिया जहँ की कहै, तहा नहीं दिन रात ॥ ७ ॥
सुरत बसी अमरा पुरी, बरत ब्रह्म की आण ।
बिन बाणी हरियो पढे, जहँ नहि वेद पुराण ॥ ८ ॥
तीन पोलँ तर्किया सिरै, बीच मँडे मैदान ।
जन हरिया घर शून्य में, सहज घुरे नीसान ॥ ९ ॥
जीव सीव की संध में, लगे पात उचान ।
जन हरिया जहँ होत है, केती विधि का तान ॥ १० ॥
झालर ताल मृदंग डफ, घन अनहद की घोर ।
हरिया एक अखंड है, ररकार की टोर ॥ ११ ॥
शब्द एक ररकार की, महिमा कही न जाय ।
जन हरिया बिन देखिया, और न को पति आय ॥ १२ ॥
शब्द एक ररकार की, महिमा कोटि अनंत ।
कहि कहि थाके मुनि जना, हरिया आदि न अंत ॥ १३ ॥
अखंड एक ररकार की, रोम रोम धुनि होय ।
जन हरिया जा बिच लगी, ता तन जानै सोय ॥ १४ ॥

---

१ पश्चिमतान । २ त्रिकुटी । ३ युद्ध । ४ सुषुम्णाद्वार । ५ गढ । ६ लंबा चौडा, विस्तृत । ७ मुख हृदय वक्रनाड । ८ आश्रयलेनेका स्थान । ९ योगसाधन की एक ।। १० उनचास तानोंसे ८३ ० कूटतान निकलेहैं ।

देखत ही दिल परचिया, मिट्या अपरचा मन्न।
जन हरिया बिन देखियाँ, ताहि न परचै तन्न ॥ १५ ॥
बिन पाँवाँ जहाँ नाचिबो, बिन कर ताल बजाय।
बिना राग रीझायबो, बिना कंठ सुर गाय ॥ १६ ॥
बिना ज्ञान गुण बूझिबो, बिना सीख समझाय।
बिना दृष्टि जहां देखिबो, हरिया ध्यान लगाय ॥ १७ ॥
बिना नीव जहाँ देहरो[1], बिना पूज जहँ देव।
बिन बाती दीपक जगै, बिन मूरति जहँ सेव ॥ १८ ॥
बिना पेड जहां वृक्ष है, बिना फूल फल लाय।
बिना पंख जहां भँवर है, अधर बिलंबे आय ॥ १९ ॥
बिना नीर जहां कमल है, बिन बरषा बरसाल।
बिना मास बिन रुत्त[2] है, मात पिता बिन बाल ॥ २० ॥
बिना जात बिन बरण है, बिना भ्रात बिन बैन।
हरिया ऐसा ब्रह्म है, सुन्या न देख्या नैन ॥ २१ ॥
हरिया बाल न वृद्ध ऊ, ना तरणा ऊ तन्न।
निरालंब सुन में रमै, निराकार निरँजन्न ॥ २२ ॥
बिन तीरथ जहँ न्हाइबो, बिना बाट बिन घाट।
जहँ कोइ शहर न सोवती, हरिया बिणज न हाट ॥ २३ ॥
वहँ कोइ भर्म न कर्म है, वहँ कोइ लिपै न लेस।
जन हरिया जहँ की कहै, तहँ नहि देस न वेस ॥ २४ ॥
जहँ कोइ जोग न जुगति है, जहँ नहि देग न तेग।
हरिया दवा न वेदवा, जहँ नहि पौन न वेग ॥ २५ ॥
वहँ नहिं राग न दोष है, वहँ नहिं राज न तेज।
वहँ नहिं नारि न पुरुष है, हरिया लेज न देज ॥ २६ ॥
वहँ कोइ रिद्धि न सिद्धि है, वहँ नहिं पुण्य न पाप।
हरिया विषय न वासना, वहँ उत्थप नहि थाप ॥ २७ ॥
वहाँ न हद बेहद है, वहाँ नाद नहि बिंद।
जन हरिया वहां ब्रह्म है, जरा न व्यापै जिंद ॥ २८ ॥
वहँ कोइ चंद न सूर है, वहँ नहि धर आकास।
हरिया एको अधर है, ब्रह्मानंद बिलास ॥ २९ ॥
तीन लोक चवदै भवन, उत्पति परलै होय।
हरिया एको अमर है, मरै न जीवै कोय ॥ ३० ॥

---

1 देवालय। 2 ऋतु।

वहँ कोइ ऊच न नीच है, वहँ नहि नाम न ठाम।
हरिया आपो आप है, सतन का विश्राम ॥ ३१ ॥
वधन ते निर्वंध भया, मिल्या सून्य घर जाय।
हरिया सुरति रु शब्द का, निभय ध्यान लगाय ॥ ३२ ॥
लगी सुरति सत शब्द सू, कबहू खडे नाहि।
जन हरिया मन मिल रह्या, आर पार पद माहि ॥ ३३ ॥
अध ऊरध के बीच मे, हरिया झिलमिल जोत।
सुरति शब्द परचा भया, मिले ओत अरु पोत ॥ ३४ ॥
सुरति समाणी ब्रह्म में, ब्रह्म निरतर वास।
जन हरिया जहँ काल का, जोर जवर नहिं जास ॥ ३५ ॥
जन हरिया दिल भीतरै, दोसत अपना राम।
करू न दूजा दोसती, या जग जाया जाम ॥ ३६ ॥
आतम का सुख जाणिया, भया परम सतोष।
जन हरिया जब जाणिये, याही जीवतमोष ॥ ३७ ॥
पारब्रह्म के देस का, दो राहा बिच राह।
जन हरिया मन सचरे, भेटण दिल दरगाह ॥ ३८ ॥
पारब्रह्म के देसडे, अदल नको फदलाह।
हरिया जामण मरणका, मेट्या दुइ बदलाह ॥ ३९ ॥
जन हरिया उन देसडै, बारह मास बसत।
सदा फलैगी वनस्पति, विलॅव्या जीव न चित ॥ ४० ॥
जन हरिया उन देसडै, बारै मास सुकाल।
भूख तृषा नहिं व्यापई, दुभख पडे न काल ॥ ४१ ॥
जन हरिया उन देसडै, मास दिवस नहिं रित्त।
है जहँ गाज न बीजरी, सरवर भरिया निच्च ॥ ४२ ॥
जन हरिया उन देसडै, अविनासी की आन।
और किसी का डर नहीं, हिंदु न मुस्सल्मान ॥ ४३ ॥
जन हरिया उन देसडै, आतम एको यार।
दानव कोइ न देवता, निरदावै ससार ॥ ४४ ॥
लख चौरासी नगर का, हरिया ब्रह्म नरेश।
है जहँ चूरु न चाकरी, पटा न पल्टै देश ॥ ४५ ॥
हरिया पाटन पुर नगर, राव रक नहिं भूप।
अलख अभगी आप है नारि न पुरुषारूप ॥ ४६ ॥

१ इसक। २ गैर इखार। ३ प्राचीन बडा शहर। पुर, पुरी नगर, न[illegible]
पत्तन पटनेदन, निगम, कटक, स्थानीय, पट, इनमें कुछकुछ भेद है।

हरिया हरिजन एक है जीव सीव नहिं दोय।
नीर मिलाना नीर में, फिर न्यारा नहिं होय ॥ ४७ ॥
जन हरिया मन मेरु करि, चढ्या त्रिवेणी गंग।
गंगा जमुना गोमती, नाहृत है अण भंग ॥ ४८ ॥
उलटा चढ़ असमान कूं, मिले त्रिवेणीतट्ट।
जन हरिया जहँ मंड़िया, सुरति शब्द का मट्ठ ॥ ४९ ॥
सुरति शब्द के मट्ठ की, है अजरायल वाट।
जन हरिये जहँ घर किया, लोक वेद सूं फाट ॥ ५० ॥
सुरति शब्द मिल एकठा, ता विच रही न काण।
जन हरिया सुन सेझ का, सहजांई सुख माण ॥ ५१ ॥
तट तिरवेणी नीर की, चलै सीर चहुँ ओर।
जन हरियै सो चख्खिया, चिख्ख न रख्खी कोर ॥ ५२ ॥
पड़ै पुंड़ंग तहँ पेम की, एक अखंडी धार।
हरिया हरिजन पीवसी, दुनिया सुधी न सार ॥ ५३ ॥
बादल वूठा पेम का, नख सिख भीना रोम।
हरिया सो सुख जाणसी, जिन पाई पर भोम ॥ ५४ ॥
अरध कमल में वैस करि, भँवरो रह्यो लिपट्ट।
जन हरिया जब जीवको, सांसो गयो सिमट्ट ॥ ५५ ॥
भँवरो वास विलंबियो, फूल न आयो गट्ठि।
हरिया आशा छांड़िके, रह्यो निराशा मट्ठि ॥ ५६ ॥

इति।

अथ चेतावनी को अंग।

भेर नगारा आरवी, केते गये वजाय।
जन हरिया किन वहुरि के, वात न बूझी आय ॥ १ ॥
वात वटाऊ देसकी, कहै सुनै सव कोय।
जन हरिया उन देसकी, कहै सुनै नहिं कोय ॥ २ ॥
नैणा नेह निहारती, न्यारी निमिष न होय।
जन हरिया तन भीतरै, पड़्या दिनंतर जोय ॥ ३ ॥
पान तंवोली चावते, मसी कवाड़े दंत।
जन हरिया दिन एक में, मुख धूड़ी वूकंत ॥ ४ ॥
जन हरिया कर कंपिया, डोलण लागा शीश।
तोइ न अंधा चेतही, आपनपौ जगदीश ॥ ५ ॥

---

१ अमिट। २ थोथी। ३ बोछाड़। ४ लगाना। ५ डालना, लफ।

निसि दिन दोड़ै धन करै, सहै घाम सिर सीत ।
जन हरिया नर छोंडिग्यो, खांट खटाऊ मीत ॥ ६ ॥
खाटी दौटी रहगइ, छुछी न चाली साथ ।
जन हरिया जग दीन विन, हाल्यो रीते हाथ ॥ ७ ॥
थोछे पाणी मच्छली, किसी निदकी आस ।
हरिया सास सरीर मे, वसै किता दिन वास ॥ ८ ॥
ऊचा नीची सकल में, एक किसी मं नाहिं ।
जन हरिया जामण मरण, लख चौरासी माहिं ॥ ९ ॥
लख चौरासी जीवडा, सवै काल की चारि ।
जन हरिया अव ऊवरै, सत का शब्द सँभारि ॥ १० ॥
सव जग वध्या जेवडी, निर्वंधन नहिं कोय ।
हरिया सो निर्वंध है, राम सनेही होय ॥ ११ ॥
जग माही केता धका, टाल्या केम टरत ।
जन हरिया गहु राम कू, पडि पडि भी ऊवरत ॥ १२ ॥
पाच सात पचीस में, वरप एकसो वीस ।
घरटी ऊन्या अन्न ज्यों, के पीस्या कइ पीस ॥ १३ ॥
पछितावैगो प्राणिया, हरिसू पडि से दूर ।
जन हरिया मन चेतले, है तन सास हजूर ॥ १४ ॥
कुल के मारग जग चले, ज्यों कीडी कुल नाल ।
हरिया टलै त ऊवरै, नहि तो लूटै काल ॥ १५ ॥
पान पड़ते यू कहो, सुण तरवर की डाल ।
मेरो तो दिन पूजिग्यो तेरो आयो काल ॥ १६ ॥
डाल पुकारै डाळ कू, सुणो हमारी वात ।
मेरी ऊमर खूटिगी, तेरी आई घात ॥ १७ ॥
डाळ पुकारै मूल कू, वारी आइ तुज्झि ।
जन हरिया अव चेतले, जगम मरणो मुज्झि ॥ १८ ॥
वारो वारी ऊठिगे, कली काल के लोग ।
हरिया पूठै पुगड़ा, उनका आया जोग ॥ १९ ॥
हरिया राम न रीझियो वेद न विद्या पाठ ।
काया जासी एकली, साथै कष्फण काठ ॥ २० ॥

१ खाट खटोला=अपना बोरिया, गृहस्थीका सामान । २ कीहुइ कमाइ । ३ रही हुइ । ४ खाली । ५ रस्सी । ६ चक्की । ७ छोगी टहनी । ८ आयु खूट गइ । ९ पीछे । १० बचा बची ।

पलंग पथरणे पौढ़ते, लेले सीरख सौड़।
सोवे सीढ़ी साथरे, दौड़ि सके तो दौड़ ॥ २१ ॥
मीठा मेवा जीमते, बहु भोजन बहु भांत।
तासूं तन छेती पड़े, जन हरिया कर ख्यांत ॥ २२ ॥
अमल कटोरा गालते, मावा भरि भरि लेह।
जन हरिया दिन दस्सके, का कोइ वरस करेह ॥ २३ ॥
प्याला भरि भरि पद्‌मणी, पिवै पिलावै पीव।
जन हरिया जब क्या करै, जम लेजासी जीव ॥ २४ ॥
पैड़ी पैड़ी पाँव दे, सूते मन्दिर माहिं।
जन हरिया तोइ जीवकी, घात टरैगी नाहिं ॥ २५ ॥
कनक महल ता बीच में, ढोले अंगन काच।
हरिया एकै नाम बिन, नाच गये बहु नाच ॥ २६ ॥
खासा कपड़ा पहरते, सोंधा अंग लगाय।
जन हरिया वे मानवी, मिले खाक दरें जाय ॥ २७ ॥
आडे तेढे चालते, खांगी पाघ झुकाय।
हरिया छाया निरखते, सेभी गये विलाय ॥ २८ ॥
ऊंचा मंदिर बीच घर, जहँ करते घरवास।
होसी घोरां बीच घर, लेण नदै इक सास ॥ २९ ॥
सुंदरि विना न सारते, निशि दिन करते नेह।
से जंगल में पोढ़िया, हरिया एकल देह ॥ ३० ॥
कुल मरजाद न लोपते, मरते लोका लाज।
नागा करि करि काढ़सी, हरिया कालक आज ॥ ३१ ॥
माटीका देवल किया, काची कली लगाय।
नहीं भरोसा रहनका, हरिया वार न लाय ॥ ३२ ॥
मांड्या सो ढ़ह जायगा, माटी तणा मँड़ाण।
जन हरिया जमरायका, आवैगा फरमाँण ॥ ३३ ॥
पाटण मंडप पुर नगर, ढहि ढहि होसी ढेर।
जन हरिया जग जावसी, जे कोइ लावै घेर ॥ ३४ ॥
देवल ढहता देखिया, देख न भया उदास।
जन हरिया उन मूढ़को, हदो न खूले जास ॥ ३५ ॥
नहीं गरीबी दीनता, साहिब को डर नाहिं।
जन हरिया तन लूटसी, गाम गली के माहिं ॥ ३६ ॥

---

१ बारीक। २ सुगधित मसाला। ३ राख। ४ गड्ढा। ५ फरमान=परवाना=राजकीय आज्ञापत्र। ६ छत, दूसरी मंजिल। ७ बारह दरी।

निसि दिन दौडे धन करै, सहै घाम सिर सीत।
जन हरिया नर छोंडिग्यो, खाट खटाऊ मीत ॥ ६ ॥
खाटी दौटी[३] रहगइ, कुछी न चाली साथ।
जन हरिया जग दीन विन, हाल्यो रीते[४] हाथ ॥ ७ ॥
ओछे पाणी मच्छली, किसी जिंदकी आस।
हरिया सास सरीर में, वसै किता दिन वास ॥ ८ ॥
ऊचा नीची सकल में, एक किसी मे नाहिं।
जन हरिया जामण मरण, लख चौरासी माहिं ॥ ९ ॥
लख चौरासी जीवड़ा, सबै काल की चारि।
जन हरिया जब ऊबरै, सत का शब्द सँभारि ॥ १० ॥
सब जग वध्या जेवँडी, निवधन नहिं कोय।
हरिया सो निर्वंध है, राम सनेही होय ॥ ११ ॥
जग माही केता धका, टान्या केम टरत।
जन हरिया गहु राम कू, पडि पडि भी ऊठत ॥ १२ ॥
पाच सात पचीस मे, वरप एकसो वीस।
घरँटी ऊन्या अन ज्यों, के पीस्या कइ पीस ॥ १३ ॥
पछितावैगो प्राणिया, हरिसू पड़ि से दूर।
जन हरिया मन चेतलै, है तन सास हजूर ॥ १४ ॥
कुल के मारग जग चलै, ज्यों कीडी कुल नाल।
हरिया टले त ऊबरै, नहि तो लूटै काल ॥ १५ ॥
पान पड़ते यू कह्यो, सुण तरवर की टाल।
मेरो तो दिन पूजिग्यो तेरो आयो काल ॥ १६ ॥
टाल पुकारै डाल कू, सुणो हमारी वात।
मेरी ऊमर खूटिगी, तेरी आई घात ॥ १७ ॥
डाल पुकारै मूल कू, वारी आई तुज्झ।
जन हरिया अब चेतले, जगम मरणो मुज्झ ॥ १८ ॥
वारो वारी ऊठिगे, कली काल के लोग।
हरिया पूठे पुगड़ा, उनका आया जोग ॥ १९ ॥
हरिया राग न रीझिवो वेद न विद्या पाठ।
काया जासी एकली, साथै कफ्फण काठ ॥ २० ॥

---

१ खाट खटोला=बचना भारिया गृहस्थीका सामान। २ कौडुइ कमाइ। ३ दटी हुई। ४ खाली। ५ रस्सी। ६ चक्की। ७ छोटी टहनी। ८ आयु खूट गइ। ९ पीछे। १० बचा बची।

पलंग पथरणे पौढ़ते, लेले सीरख सौड़।
सोवे सीढ़ी साथरे, दौड़ि सके तो दौड़ ॥ २१ ॥
मीठा मेवा जीमते, वहु भोजन वहु भांत।
तासूं तन छेती पड़े, जन हरिया कर ख्यांत ॥ २२ ॥
अमल कटोरा गालते, मावा भरि भरि लेह।
जन हरिया दिन दससके, का कोइ वरस करेह ॥ २३ ॥
प्याला भरि भरि पद्मणी, पिवै पिलावै पीव।
जन हरिया जव क्या करै, जम लेजासी जीव ॥ २४ ॥
पैड़ी पैड़ी पॉव दे, सूते मन्दिर माहिं।
जन हरिया तोइ जीवकी, घात टरैगी नाहिं ॥ २५ ॥
कनक महल ता वीच मे, ढोले अंगन काच।
हरिया एकै नाम विन, नाच गये वहु नाच ॥ २६ ॥
खासा कपड़ा पहरते, सोंधा अंग लगाय।
जन हरिया वे मानवी, मिले खाक दर जाय ॥ २७ ॥
आडे तेढे चालते, खांगी पाघ झुकाय।
हरिया छाया निरखते, सेभी गये विलाय ॥ २८ ॥
ऊंचा मंदिर वीच घर, जहॅ करते घरवास।
होसी धोरां वीच घर, लेण नदै इक सास ॥ २९ ॥
सुंदरि विना न सारते, निशि दिन करते नेह।
से जंगल में पोढ़िया, हरिया एकल देह ॥ ३० ॥
कुल मरजाद न लोपते, मरते लोका लाज।
नागा करि करि काढ़सी, हरिया कालक आज ॥ ३१ ॥
माटीका देवल किया, काची कली लगाय।
नहीं भरोसा रहनका, हरिया वार न लाय ॥ ३२ ॥
मांड़या सो ढ़ह जायगा, माटी तणा मॅड़ाण।
जन हरिया जमरायका, आवैगा फरमॉण ॥ ३३ ॥
पाटण मंडँप पुर नगर, ढहि ढहि होसी ढेर।
जन हरिया जग जावसी, जे कोइ लावे घेर ॥ ३४ ॥
देवल ढहता देखिया, देख न भया उदास।
जन हरिया उन मूढ़को, हदो न खूलै जास ॥ ३५ ॥
नहीं गरीवी दीनता, साहिव को डर नाहिं।
जन हरिया तन लूटसी, गाम गली के माहिं ॥ ३६ ॥

१ बारीक। २ सुगधित मसाला। ३ राख। ४ गड्ढा। ५ फरमान=परवाना=राजकीय आज्ञापत्र। ६ छत, दूसरी मजिल। ७ वारह दरी।

हरिया साँई सुमरिये, परहरिये पर निंद ।
साचे सॉइ बाहिरो, झूठी तेरी जिंद ॥ ३७ ॥
जब लग सॉई याद कर, तब लग पिंजर सास ।
हरिया पाणी ओस का, ऐसी तन की आस ॥ ३८ ॥
बाल पणे नहीं चेतियो, तन तरुणापो थाय ।
जन हरिया वृद्धहि भयो, तोइ न चेत्यो जाय ॥ ३९ ॥
हाथ पॉव सिर कपिया, आख्या भयो अंधार ।
कालाँ ती पडर भया, हरिया चेत गिंवार ॥ ४० ॥
मात न तात न भ्रात सुत, सगा न सुदरि साथ ।
हरिया जासी एकलो, करि बोलाऊ हाथ ॥ ४१ ॥
वाट बटाऊ सब चले, बिल्मे वासो होय ।
जन हरिया सॉइ बिना, यार न तेरा कोय ॥ ४२ ॥
जन हरिया ससारमें, देख पंख मत भूल ।
तेरा सज्जन को नहीं, नारायणसे तूंल ॥ ४३ ॥
घाट बिडोणी लोक निड, बिडही बिडमे बास ।
हरिया हरि बिन दूसरा, ताहि किसो बिश्वास ॥ ४४ ॥
हरिया सगी राम बिन, या कलि मॉहि न कोय ।
काल पकड़ि ले जावसी, ऊभा देखै लोय ॥ ४५ ॥
हरिया सगी राम है, का सतगुरु की सीख ।
जिन पंडे दुनियॉ चलै, भरू न काई बीख ॥ ४६ ॥
चगों थका न चेतिया, मदा क्या पछिताय ।
हरिया लागी लाय ज्यूं, भार न काढ्या जाय ॥ ४७ ॥
राव रक घड़ भूपती, वासो बसै सराय ।
आये ज्यूं सब ऊठिगे, हरिया थिर नहि थाय ॥ ४८ ॥
खड खड हुय जाहिंगे, नाना नव परकार ।
जन हरिया निरकार थिर, और अथिर आकार ॥ ४९ ॥
रामनाम चेत्यो नहीं, गाफिलपणै गँवार ।
हरिया रहिसी पारके, हीली घर घर बार ॥ ५० ॥
रामनाम नहिं चेतियो, करि करि मनकी ढील ।
जन हरिया सर जल भर्यो, प्यासा मरै पिपील ॥ ५१ ॥

१ साथी । २ पराया । ३ पड़ । ४ तुल्य । ५ विराना । ६ कदम । ७ विशेष बदसूरत । ८ शुन्य, मूर्ख । ९ नव प्रकारके खड । १० नौकर । ११ चिउँटी ।

रामनाम नहिं चेतियो, करी विड़ाणी आस ।
हरिया से घर गोरवें, सरँक्यां सेती वास ॥ ५२ ॥
रामनाम चेत्यो नहीं, आलस करि करि अंग ।
हरिया से रीता रह्या, शूरां कूकर संग ॥ ५३ ॥
रामनाम नहिं जाणियो, कीया और कलौप ।
हरिया जा घर संपदा, होसी साँडा साप ॥ ५४ ॥
रामनाम नहिं जाणियो, हाल्यो अवसर हारि ।
वंध्यो वार नरेश के, गज सिर धूरी ड़ारि ॥ ५५ ॥
गज पाँवाँ सिर चंपियो, करि अंकुसकी मार ।
हरि अंकुस मान्यो नहीं, हरिया सहसी भार ॥ ५६ ॥
रामनाम विन जाणिया, वासो वसै वंवूल ।
जे पागोथे पग धरूं, हरिया भाजै सूल ॥ ५७ ॥
रामनाम विन जाणिया, वात विंणंठी मूल ।
हरिया जव होसी कहा, अंत भयो अस्थूल ॥ ५८ ॥
या जगमाँही जीवणो, ज्यूँ तरवर का फूल ।
जन हरिया इन जीव का, तन कर पहिली सूंल ॥ ५९ ॥
रूप रंग ज्यों फूलड़ा, तन तरवर ज्यों पान ।
हरिया झोलो काल को, झड़ि झड़ि हुवै झॅफाँन ॥ ६० ॥
हरिया झोंलो कालको, सवही निकसै मांहि ।
कोइक हरि जन ऊवरै, जाकै दिशा न जांहि ॥ ६१ ॥
हरिया कलिमें आयकै, कहा करत है कूर ।
आसी विर्रियाँ अंतकी, मुखाँ परैगी धूर ॥ ६२ ॥
धकाधकीमें दिन गया, सूतां रैन विहाय ।
हरिया हरि की भक्ति विन, कहा कियो नर आय ॥ ६३ ॥
सूती सपने रैन के, पाय विलंवी सैनं ।
हरिया जाणूं उठि मिलूं, ऊघरि आये नैन ॥ ६४ ॥
सूती सपनै ओझंकी, वोली अटपट वैन ।
जन हरिया घर आंगनै, सही पधारे सैन ॥ ६५ ॥
जेतूं सपना साँच है, साँचा सैन मिलाय ।
जव नहिं देखूं नैन भरि, तव कैसे पति आय ॥ ६६ ॥

---

१ गाँवका किनारा । २–सरकनेकी छपरी । ३ क्रियाकलाप, समूह । ४ नाश । ५ भला । ६ डोली । ७ वनस्पतिको नाश करनेवाली हवा । ८ समय । ९ विलमना । १० सज्जन । ११ चौंकना ।

सपने ही सॉई मिले, सो सॉई का मित ।
जन हरिया सो चितवै, सोई आय मिल्त ॥ ६७ ॥
जा दिन राम न जाणियो, ता दिन भयो अकाज ।
जन हरिया ससारमें, आय मुवा नहिं लाज ॥ ६८ ॥
जन हरिया कायम किया, मानव तेरा मुख्ख ।
मुख्ख करता ना भजे, कैसे होय निदु ख ॥ ६९ ॥
साँचा मुख मानव तणा, जा मुख निकसे राम ।
जन हरिया मुख राम विन, सोई मुख वेकाम ॥ ७० ॥
सोई मुख पसुवे दिया, सोइ मुख नरदेह ।
गुरुमुख सुमरे रामकू, पसवा खाय मरेह ॥ ७१ ॥
चरन पिवनकू मुख दिया, उदर भरनके काज ।
हरिया राम न सचरै, सो मुख जाणि अकाज ॥ ७२ ॥
अधम उधारण याद करि, नर तेरा निस्तार ।
हरिया अधम उधार विन, और किसो आधार ॥ ७३ ॥
अधम उधारण याद करि, तन मन राखि निचिंत ।
जन हरिया कुण मेटसी, साँई विना सचिंत ॥ ७४ ॥
अधम उधारण एक है, दूजा उथप थाप[५] ।
हरिया थापी थापना, जाका जपिये जाप ॥ ७५ ॥
एक रामकू सुमरिये, दूजा धरो न चित्त ।
जन हरिया नहिं राम विन, तो रखवाला नित्त ॥ ७६ ॥
राम विना कुण राखसी, ज्यू खेती किरसान ।
नहि तो चिडै विगाडसी, हरिया चेत अजान ॥ ७७ ॥
हरिया निज मन चेतले, जो परखै ठौर ।
एकै साँई याहिरो, धणी न दूजा ओर ॥ ७८ ॥
धणी विहूँणा घयलँहर, ढहि ढहि ढेर थियाह ।
हरिया पाछा आयक, वास न को वसियाह ॥ ७९ ॥
हरिया तन को गीरँबो, कहा करै नर देख ।
घेहमाता दाणो दलै, जीव लिखती लेख ॥ ८० ॥
इन कायाको गीरबो, मूढ करो मति कोय ।
हरिया रावणके यथ, हुई जिका नर जोय ॥ ८१ ॥

१ मुकरर । २ उचरी हुइ । ३ स्थिति । ४ मीनार यादगार । ५ गर्व ।
६ विधातृ=सृष्टि रचनेवाला ।

हकाँ वेली हक है, वे हकां वे हक।
हरिया एकै हक विन, सव दिन जाहि अनहक ॥ ८२ ॥
एता सुख संसार का, जेता सुक्ख न जानि।
जन हरिया सोइ सुक्ख है, जो कोइ विरला जानि ॥ ८३ ॥
सव कोइ चाहै सुक्ख कूं, दुःख न कोई चाहि।
हरिया दुख सुख सिरजिया, सोई ले निरवाहि ॥ ८४ ॥
दुनिया रोवै रोवणा, देखि विड़ाणी खोल।
हरिया नाम सनेह विन, यो तन होय विहाल ॥ ८५ ॥
हरिया रोयज रोवणा, किसके आगे जाय।
मात पिता सुत वंधवा, सवही जॉहि विलाय ॥ ८६ ॥
दुनिया रोवै रोवणा, रोय रोय करै पुकार।
हरिया ऊ भांजै घड़ै, ज्यूं भांडा कुंभार ॥ ८७ ॥
आवण जावण आदि का, आज काल का नाहिं।
हरिया क्या पछिताइये, मौत सकल के माहिं ॥ ८८ ॥
घर घर लागो लायणो, घर घर धाह पुकार।
जन हरिया घर आपणो, राखै सो हुशियार ॥ ८९ ॥
यो मिनखा तन पाइकै, भज्यो नहीं भगवान।
जन हरिया तन मानखो, मिलै नहीं आँसान ॥ ९० ॥
यो तन जोवन देख नर, क्या परफूलत होय।
जन हरिया जलवाहला, वहतां वार न कोय ॥ ९१ ॥
तू क्यों सूतो नींद भरि, कहा निचिंतो होय।
हरिया जगमें जीवका, साथी सैण न कोय ॥ ९२ ॥
कुण वेली संसारमें, जीव एकलो जाय।
हरिया हरि विन दूसरा, स्वारथ केरा थाय ॥ ९३ ॥
रामनाम विन दूसरा, संग न कोई वंग।
हरिया तन जोवन थकै, करो जीवका ढ़ंग ॥ ९४ ॥
सवही स्याणा हुय रह्या, नहीं अयाणो कोय।
स्याणो सोई जाणिये, अलख ओळखै सोय ॥ ९५ ॥
राज पाट सुत वित सवै, सुंदरि महल विलास।
जन हरिया हरि सुख विना, ज्यों जंगल का घास ॥ ९६ ॥

---

१ सचाँ। २ साथी। ३ सत्य। ४ व्यर्थ। ५ शरीर। ६ जोरसे चिल्लाकर रोना। ७ सुगम। ८ किसका। ९ मूर्ख, उद्दंड। १० आनंद।

हरिया जगल घासकूँ, हरया देख मति भूल ।
दिष्टि[1] गहै दिन च्यार का, जाय जडा सू खूल ॥ ९७ ॥
जन हरिया जग जात है, रहता कोऊ नाहि ।
रहता एको राम है, न्यारा सब घटमाहिं ॥ ९८ ॥
हरि थोडो करि जाणियो, इन ओसर नर आय ।
हरिया घणो चितारसी, पर हथ पडसी जाय ॥ ९९ ॥
हाथ पड़ै जब और के, वीचैगी[2] तन मॉहि ।
हरिया दोळी पालि जल, पहल्या बधी नॉहि ॥ १०० ॥
हरिया पाल तलाव की, फाटी जब क्या होय ।
पहल किया सो खूब है, पीछै दॉव न कोय ॥ १०१ ॥
हरिया तन जोबन थकै, किया दिया जो जाय ।
कीजै सुमरण रामको, दीजै हाथ उठाय ॥ १०२ ॥
हरिया दीया हाथ का, आडा आसी तोय ।
राम नाम कू सुमरता, पार उतारै सोय ॥ १०३ ॥
हरिया राम सभारियै, ढील करो मति कोय ।
साझा वीच सवेरमें, क्या जानू क्या होय ॥ १०४ ॥
हरिया राम सभारियै, जब लग पिंजर सास ।
सास सदा नहिं पाहुणा, ज्यू सावण का घास ॥ १०५ ॥
जन हरिया खड़ै[3] सावणू, सदा न हरियो होय ।
ऐसे सास सरीरमें, थिर नहिं दीसै कोय ॥ १०६ ॥
हरिया हरिसो को नही, सज्जन तेरे और ।
मेटै जामण मरण कू, दे अमरापुर ठौर ॥ १०७ ॥
हरिया जहँ अमरापुरी, तहँ हरि भक्ति सुहाय ।
से नर हरि की भक्ति विन, दौड्या जमपुर जाय ॥ १०८ ॥
हरिया हरि सुमरत रहो, हालो अपने हक्क ।
पहिली तन का बल थकै, पीछै रसना थक्क ॥ १०९ ॥
हरिया थाके जीभड़ी, जासी सुमरण छूटि ।
किया जाय सो कीजिये, लेसी तन धन लूटि ॥ ११० ॥
तन कू जमरो लूटसी, लूटै धनकू लोरु ।
नान्दो करि करि चालसी, हरिया हाड ठंठोक[4] ॥ १११ ॥
खावण पीवण छोडिया, छोड्या घर घर वास ।
हरिया यसती छाडिके, करसी जगळ वास ॥ ११२ ॥

---

1 दृष्टि । 2 बीतगी । 3 घास । 4 ठठोर ।

हरिया सास सरीरमें, वास किता दिन होय।
सासो सासा घटत है, कहा निचिंतो सोय ॥ ११३ ॥

हरिया दोली कीजिये, राम नाम की वाड़।
नहि तो जैमरो आइके, वाड़ी जाय बिगाड़ ॥ ११४ ॥

हरिया वाड़ी वीगड़े, सिरपर धणी न होय।
चिड़ियां खाया खेतड़ा, हौंकल करै न कोय ॥ ११५ ॥

जन हरिया सिर पर धणी, खड़ा खेतके माहिं।
करि टोहाली नामकी, विगड़न कूं कुछ नाहिं ॥ ११६ ॥

इति।

अथ ज्ञानविचारको अंग।

तिमिर गया रवि तेज तें, तेज गया निशिं पास।
हरिया ज्ञान विचार तें, होय कर्म का नास ॥ १ ॥

नाम लिया गुण ना मिट्या, तिमिर न भागा तेज।
हरिया ज्ञान विचार विन, रही जेज की जेज ॥ २ ॥

गुरु पै ज्ञान न बूंझिया, वूझ न किया विचार।
हरिया कर दीपक दिया, अंधे के अंधार ॥ ३ ॥

उर अंधारो जहँ नराँ, सतगुरु कूं नहि मेट।
आये थे हरि मिलन कूं, लगी ओर ही फेट ॥ ४ ॥

कहियाँ माया संपजै, मनसूं जाण्या ब्रह्म।
हरिया होवे मुक्खतें, उदक्यां सेती धर्म ॥ ५ ॥

कह्याँ न माया संपजै, जाण्याँ ब्रह्म न होय।
हरिया मुख तें उदकियां, धर्म न हुवा कोय ॥ ६ ॥

माया दत्तवतें भई, राम भज्या सूं ब्रह्म।
जन हरिया कुछि होत है, कर सूं दीया धर्म ॥ ७ ॥

कह्या सुण्या तो क्या भया, विना सुद्धबुध सार।
हरिया आपो उलटि के, आतमज्ञान विचार ॥ ८ ॥

इति।

---

१ निश्चित। २ घेरा। ३ मृत्यु, काल। ४ हॉक मारना। ५ किल्कारी। ६ अंधेरा। ७ रात्रि। ८ पूछा। ९ ज्ञपद। १० दान। ११ सुधबुध=होश हवास।

अथ शून्य सरोवरको अंग।

साँसा सोग सताप तज, आया होय अंबीह।
शून्य सेजमें पाइया, हरिया अविनाशीह ॥ १ ॥
हरिया मन सॉसे पड्यो, कहि समझावे कोन।
हसतो रमतो बोलतो, ऊ कहँ करिग्यो गौन ॥ २ ॥
हरिया सब सॉसा मिट्या, गुन मिलग्या निर्गुन्न।
आवन जावन रहित हुय, सुरति समाणी सुन्न ॥ ३ ॥
सुन सरवर चहु फेरमें, सुख सीतलता सीर।
हरिया एक अखडमें, ध्यान धरू ता तीर ॥ ४ ॥
दिल दरिया मन मच्छली, नीर निरञ्जन द्वार।
हरिया सबसू ढूंकडै, विरला जाणै सार ॥ ५ ॥
जन हरिया मन जहँ किया, सुन सरवरमें वास।
भेले न जामण मरण की, धरे न दूसो आस ॥ ६ ॥
जन हरिया सरवर सबै, ठाम ठाम भरपूर।
जहँ पायो तहँ परम सुख, दुखी रह्या से दूर ॥ ७ ॥
अपणे घरकी गम नहीं, परघर थॉगै कॉय।
हस हस की गम चले, काग काग की पाय ॥ ८ ॥
हस गयो उडि आप घर, करि सायर की सुद्धि।
हरिया सरवर सुद्धि विन, बूडो काग कुबुद्धि ॥ ९ ॥
जन हरिया जल पठियै, पीयो चचु भराय।
ऐसा कोइ न देखिया, सब सरवर पी जाय ॥ १० ॥

इति।

अथ माया ब्रह्म निर्णयको अंग।

ज्यों माया सू ब्रह्म है, त्यों काया से जीव।
जन हरिया जब अतरै, पाया जीव र सीव ॥ १ ॥
माया ओलै ब्रह्म है, आकारे निरकार।
हरियै देख्या जुगति सू, न्यारा दिल दीदार ॥ २ ॥
माया जब काया खड़ी, काया जब लग जीव।
हरिया जीव र सीव का, मेला कैसे थीव ॥ ३ ॥

। १ निर्भय। २ शय्या। ३ गमन। ४ पानीका सोता। ५ नजदीक ६ फिर। ७ खोजता है। ८ राह। ९ ब्रह्म। १० आदर। ११ दर्शन १२ होवे।

काया माया कारंवी, जैसे करंवा जान।
जन हरिया भागाँ पछे, चाक न चढ़सी आन॥ ४॥
जिन जलती भांडा किया, करत न लाई वार।
हरिया वाकूं सुमरिये, सव का सिरजनहार॥ ५॥
काया छाया एकठी, ज्यों माया से ब्रह्म।
हरिया न्यारा जाणसी, जिन पाई गुरु गम्म॥ ६॥
जन हरिया चाल्यां चलै, थिर सेती थिर होय।
काया वंधी कर्म सूं, छाया लिपे न कोय॥ ७॥
माया जोड़ो ब्रह्म सूं, छाया जोड़ो देह।
काया माया जावसी, हरिया देखंतेह॥ ८॥
शस्तर सूं नहिं छेदिये, पावक लगे न शीत।
हरिया कहिये ब्रह्म की, ऐसी अद्भुत रीत॥ ९॥
रहता नारि न को पुरुष, रहै न तेऊँ लोयं।
रहता एको ब्रह्म है, हरिया सव घट सोय॥ १०॥
रहता सोई जाणिये, रहता सूं मिल जाय।
हरिया रहता राम विन, काल गिरासै आय॥ ११॥

इति।

अथ वेहदको अंग।

हरिया हद आसामुखी, ताहि न करिये हेत।
वेहद वास निरास घर, ताकूं अंतर देत॥ १॥
केइ वावाँ केइ दाहणा, हद वहु मारग होय।
जन हरिया इन वीचमें, भटक मुवा तिहुँ लोय॥ २॥
हरिया हद का जीव कूं, वेहद की गम नाहिं।
कीड़ी केर नाल ज्यूं, कइ आवै कइ जाहिं॥ ३॥
हरिया हद कूँ छाँडि के, वेहद पहुँता जाय।
दिल दरगा दीवान में, धका न धूमी काय॥ ४॥
हद छाँडी वेहद भया, हरिया राम हुँजूर।
अखंड उजाला गैवं का, निसा न ऊगे सूर॥ ५॥
हद का रत्ता हद में, वेहद का वेहद।
हरिया वेहद पाइके, हद भई सव रद्द॥ ६॥

---

१ वनावटी, झूठी काररवाई। २ मट्टीका वनाहुआ टूंटीदार लोटा, आफ तावा। ३ कुलालचक्र। ४ वासण। ५ तीन। ६ लोक। ७ आसगीर। ८ तीन। ९ दरवार, राजसभा। १० समक्षता। ११ परोक्ष।

अथ शून्य सरोवरको अंग।

सॉसा सोग सताप तज, आपा होय अबीह।
शून्य सेजमें पाइया, हरिया अविनाशीह॥ १॥
हरिया मन सॉसे पड्यो, कहि समझावे कौन।
हसतो रमतो बोल्तो, ऊ कहँ करिग्यो गौन॥ २॥
हरिया सब सासा मिट्या, गुन मिलग्या निर्गुन्न।
आवन जावन रहित हुय, सुरति समाणी सुन्न॥ ३॥
सुन सरवर बहु फेरमें, सुख सीतलता सीर।
हरिया एक अखडमें, ध्यान धरू ता तीर॥ ४॥
दिल दरिया मन मच्छली, नीर सिरञ्जन हार।
हरिया सबस् ढूँकडै, विरला जाणै सार॥ ५॥
जन हरिया मन जहँ किया, सुन सरवरमें वास।
भेले न जामण मरण की, धरे न हंसो आस॥ ६॥
जन हरिया सरवर सबै, ठाम ठाम भरपूर।
जहँ पायो तहँ परम सुख, दुखी रह्या से दूर॥ ७॥
अपणे घरकी गम नहीं, परधर धॉगै कॉय।
हस हस की गर्म चले, काग काग की पाय॥ ८॥
हस गयो उडि आप घर, करि सायर की सुद्धि।
हरिया सरवर सुद्धि विन, बूडो काग कुबुद्धि॥ ९॥
जन हरिया जल पठियै, पीयो चञ्चु भराय।
ऐसा कोइ न देखिया, सब सरवर पी जाय॥ १०॥

इति।

अथ माया ब्रह्म निर्णयको अंग।

ज्यों माया सू ब्रह्म है, त्यों काया से जीव।
जन हरिया जब अतरै, पाया जीव रु सीव॥ १॥
माया ओलै ब्रह्म है, आकारे निरकार।
हरिये देख्या जुगति सू, न्यारा दिल दीदार॥ २॥
माया जब काया खडी, काया जब लग जीव।
हरिया जीव रु सीव का, मेला कैसे थीव॥ ३॥

---

१ १ निर्भय। २ शय्या। ३ गमन। ४ पानीका सोता। ५ नजदीक। ६ फिर। ७ खोजता है। ८ राह। ९ ब्रह्म। १० ओट। ११ दर्शन। १२ होवै।

बेहद कूँ पहुँचे नहीं, हरिया हद के लोग।
तन तो माटीमें मिल्यो, मन गयो सांसे सोग ॥ २२ ॥

इति।

अथ भ्रमनिश्चयको प्रसंग।

हरिया घट में घड़त है, केताई नर घाट।
आडा पड़दा भर्म का, ब्रह्म न दरसे वाट ॥ १ ॥
हरिया आतम एक है, दूजा कोऊ नाहिं।
मनकी मैं तैं मेटि करि, पद पाया घट माहिं ॥ २ ॥
घट में तारा चन्द रवि, घट माहीं ब्रह्मंड।
हरिया घट में राम है, जाकी ज्योति अखंड ॥ ३ ॥
हरिया आवे देखमें, ए तो माया रूप।
आतम दृष्टि न मुष्टि है, अनुभव अकल अरूप ॥ ४ ॥
हरिया घट में अघट है, वाकी ठोड़ विकट्ट।
बिन गुरुगम खूलहै नहीं, भर्म कर्म का पट्ट ॥ ५ ॥
भर्म भूत भागा विनां, कर्म कटै नहिं काहि।
हरिया पड़ल आँपि में, ताका तिमर न जाहि ॥ ६ ॥
दत्तव ते धन पाइये, धर्म दया तें होइ।
हरिया हरिजन औरका, भर्म गमावे सोइ ॥ ७ ॥
हरिया तन मन वचन ते, आतम निश्चय जानि।
वाकों नित्य आनन्द है, शोक न संशय आनि ॥ ८ ॥
जन हरिया निश्चय भया, भर्म दूसरा नाहिं।
आस पास की मिट गई, आतम आपा माहिं ॥ ९ ॥
जल खाने वहि नीसरै, हरिया तेरू होइ।
वहिग्यो खाने भर्मके, हाथ पड़े नहिं कोइ ॥ १० ॥
हरिया भाँजै भर्मकूं, सतगुरु मिलै सधीर।
भवसागर में डूबतां, पार उतारै तीर ॥ ११ ॥

इति।

अथ निर्गुणगुणको प्रसंग।

निर्गुण तें गुण ऊपजै, गुण तें निर्गुण नाहिं।
जन हरिया फल वेल तें, फल विन वेली नाहिं ॥ १ ॥
हरिया निर्गुण मूल है, सगुणजु साखा पान।
भक्ति बीज फल मुक्ति है, और धर्म सब आन ॥ २ ॥

हद सू हरि दूरै वसै, बेहद ठांवो ठीक।
हद बेहद की पार सुधि, हरिया राम नजीक ॥ ७ ॥
हरिया बेहद के घरा, नही हद की आस।
ससा सोग न ताप तन, नाम निरासा वास ॥ ८ ॥
जन हरिया बेहद घरा, घन अनहद की घोर।
बाजा राग अखड धुनि, एक अखडी डोरे ॥ ९ ॥
जन हरिया हदमें घणा, सुख दुख भरम सनेह।
बेहद काम न कल्पना, अति आनद अछेह ॥ १० ॥
बेहद कोठै घर किया, निज सुख पाया नाम।
हरिया भागी भरमना, भया सकल सिध काम ॥ ११ ॥
चित चचल निश्चल भया, पूरी मनकी आस।
हरिया हद कू छाडिके, बेहद की हा वास ॥ १२ ॥
हद बैठा हद की कहै, वेद पुराना बॉचि।
हरिया बेहद चावरा, रह्या राम सू राचि ॥ १३ ॥
जन हरिया बेहद कथा, किन सू कहियै बोल।
महँरम आगै दाखियै, दिल का पुस्तक खोल ॥ १४ ॥
वचन सुन्या बेहद का, हद न आवै दाय।
हरिया सुनमें सॉइया, तासू ध्यान लगाय ॥ १५ ॥
सुरत बसी बेहद में, हरिया एक अभग।
पड़े पुकगा पेम की, भीना नख सिख अग ॥ १६ ॥
हरिया अनहद शब्द की, तार कवू नहिं तूटि।
घोर सुनत है गगनमें, सुर वाहिर नहिं फूटि ॥ १७ ॥
हरिया हद का जीवडा, ताकू धका अनत।
जहँ गुरु पाया बेहदी, ले निरवाणे चढत ॥ १८ ॥
जन हरिया हमकू कह्या, सतगुरु ऐसा दाव।
हद का पासा छाडि दे, बेहद साम्हा आव ॥ १९ ॥
हरिया हद सागर वणो, थँग थौड़ो वहरेह।
जग सारो तिसियो फिरै, जळ वूठो धारेह ॥ २० ॥
बेहद सुख सागर भखो, पथ न पग पारेह।
हरिया हरिजन पीवसी, हद सू हुय न्यारेह ॥ २१ ॥

---

१ स्थान, ठिकाना। २ चाल। ३ किनारे। ४ भेदी मरमी। ५ मोक्ष। ६ थाह। ७ कम। ८ थाहरा=जोगहरा न हो। ९ परेवा=तेज उडनेवाला पक्षी।

बेहद कूँ पहुँचे नहीं, हरिया हद के लोग।
तन तो माटीमें मिल्यो, मन गयो सांसे सोग ॥ २२ ॥

इति।

अथ भ्रमनिश्चयको प्रसंग।

हरिया घट में घउत है, केताई नर घाट।
आडा पड्दा भर्म का, ब्रह्म न दरसै वाट ॥ १ ॥
हरिया आतम एक है, दूजा कोऊ नाहिं।
मनकी मैं तैं मेटि करि, पद पाया घट माहिं ॥ २ ॥
घट में तारा चन्द रवि, घट माहीं ब्रह्मंड।
हरिया घट में राम है, जाकी ज्योति अखंड ॥ ३ ॥
हरिया आवै देखमें, ए तो माया रूप।
आतम दृष्टि न मुष्टि है, अनुभव अकल अरूप ॥ ४ ॥
हरिया घट में अवट है, वाकी ठोड़ विकट्ट।
बिन गुरुगम खूलै नहीं, भर्म कर्म का पट्ट ॥ ५ ॥
भर्म भूत भागा विनां, कर्म कटै नहिं काहि।
हरिया पड्ल आँखि में, ताका तिमर न जाहि ॥ ६ ॥
दत्तव ते धन पाइये, धर्म दया ते होइ।
हरिया हरिजन औरका, भर्म गमावै सोइ ॥ ७ ॥
हरिया तन मन वचन तें, आतम निश्चय जानि।
वाकों नित्य आनन्द है, शोक न संशय आनि ॥ ८ ॥
जन हरिया निश्चय भया, भर्म दूसरा नाहिं।
आस पास की मिट गई, आतम आपा माहिं ॥ ९ ॥
जल खाने बहि नीसरे, हरिया तेरू होइ।
बहिग्यो खाने भर्मके, हाथ पड़े नहिं कोइ ॥ १० ॥
हरिया भाँजै भर्मकूं, सतगुरु मिलै सधीर।
भवसागर में डूबतां, पार उतारै तीर ॥ ११ ॥

इति।

अथ निर्गुणगुणको प्रसंग।

निर्गुण तें गुण ऊपजै, गुण तें निर्गुण नाहिं।
जन हरिया फल वेल तें, फल विन वेली नाहिं ॥ १ ॥
हरिया निर्गुण मूल है, सगुणजु साखा पान।
भक्ति बीज फल मुक्ति है, और धर्म सब आन ॥ २ ॥

सोरठा ।

फूल डाल तजि पान, एक पकड़ रहु पेड कूँ ।
ऊचा चढ़ असमान, हरिया निज फल चाहिये ॥ ३ ॥

साखी ।

केइक पाना फूलडाँ, केई विलॅब्या डाल ।
हरिया मूल बिलंबिया, फल पाया असराल ॥ ४ ॥
चढि ऊचा फल चाखिया, हाथ पाय बिन मूँह ।
हरिया निगुण रूखडो, कह गुण माँहि किसूँह ॥ ५ ॥
सगुणा मे सगुणो सिरै, रूखा माहि न रूँख ।
जन हरिया फल चाखिया, फेर न आवे कूख ॥ ६ ॥
गुण मे ओगुण अनंत है, आपा भुगतै आय ।
जन हरिया निगुण वसै, जग म जाय न जाय ॥ ७ ॥

इति ।

अथ ब्रह्मसमाधिको प्रसग ।

चित मन पवना थिर करै, उलटि पचें कूँ साधि ।
जन हरिया जब जाणिये, याही ब्रह्म समाधि ॥ १ ॥
मन पवना मिल एकठा, शब्दे सुरति मिलाय ।
हरिया ब्रह्म समाधि का, जब सहजा घर पाय ॥ २ ॥
हरिया ब्रह्म समाधि को, है सुख सहज अनत ।
काम न ऊठै कल्पना, तन की सुधि निसरत ॥ ३ ॥
जन हरिया मुख द्वार तै चली शब्द की सीर ।
जाय मिली सुख सहन में, गग जमुन की तीर ॥ ४ ॥
गग जमुना सरस्वती, तिनको न्हावन होय ।
जन हरिया जहँ न्हाइया, घाट बाट नहिं कोय ॥ ५ ॥
सीप छूटी चहु दिसाँ, अत न कोइ पार ।
जन हरिया पी मगन हुय, तन की सुधी न सार ॥ ६ ॥
रसना नख सिख बीच मे, रोम रोम रँकार ।
जन हरिया सुख ब्रह्म का, होत नही मॅमकार ॥ ७ ॥
इडा पिंगला बीचमें, सुषमण हदा घाट ।
हरिया ब्रह्म समाधि की, सहजा पाई वाट ॥ ८ ॥

---

१ निरंतर । २ पचप्राण । ३ वे ।

चंद विना जहां चाँदणा, सूर विना अहंवास[1]।
जन हरिया घर ब्रह्म का, तेजपुंज परकास ॥ ९ ॥
पवन न पाणी चंद रवि, जहँ नहिँ धरा अकास[2]।
जन हरिया घर ब्रह्म का, आस न पास निरास ॥ १० ॥
सुरति चढ़ी असमान कूं, जाय मिली निरकार।
जन हरिया घर ब्रह्म का, ओथि[3] नहीं आकार ॥ ११ ॥
हरिया धुं[4] धुं धुनि उठे, तेनक[5] थेइततकार[6]।
बाजै पिंड ब्रह्मंड में, एक अखंडी तार ॥ १२ ॥
इला दुहारी[7] पिंगला, पोड़श[8] द्वादश[9] गाय।
जन हरिया मति मट्ट की, लिया तत्त्वकूं ताय ॥ १३ ॥
संतन की गति संत कूं, दुनियन की दुनियाँह।
जन हरिया अविगत्त[10] की, गत्त[11] न को सुनियाँह ॥ १४ ॥
पाँव विना जहँ चालिवो, राह विना जहँ राह।
जन हरिया घर ब्रह्म का, सुर नर सके न जाह ॥ १५ ॥

इति ।



१ अवास=घर । २ आकाश । ३ वहाँ । ४ नगारेका शब्द । ५ मेघ-रागकी रागिनी । ६ ततकारसहित थेई अर्थात् तततायेई=नृत्यका शब्द, नाचका बोल । ७ दोहनेवाली ८ चन्द्रकला । ९ सूर्यकला । १० अविगत=त्रिकालाऽबाध्य । ११ गत्त=नाश ।

निसाणी का भूमा।

यह निसाणी नामक ग्रन्थ योग के विषय का है। योग शब्द सँस्कृत के युज धातु से बना है (युजिर् योगे) जिसका अर्थ जोडना है। अपने मनको एक ध्येयसे जोडना अर्थात् मनको स्थिर करना ही योग है। भगवान् पतजलि ने ऐसा कहा है "योगश्चित्तवृत्तिनिरोध"। एकाग्रता योग का शरीर है, जिसमें केवल एकाग्रता ही हो वह व्यावहारिक योग, और जिसमें अहता ममता का नाम लेश भी न हो वह पारमार्थिक योग है। गीताके साम्यगर्भित कर्मयोग में यही कथन है। ज्ञानयोग ही श्रेष्ठ है, बिनाज्ञानका योग निष्फल है। योग के पहले का ज्ञान अस्पष्ट होता है इसलिये गीता में ज्ञानी से योगी को ही अधिक कहा, वास्तव में सच्चा ज्ञानी वही है जो योगी है इसी का गीता में वर्णन है। ब्रह्मविद्योपनिषद्, क्षुरिकोपनिषद्, चूलिकोपनिषद्, नादबिन्दु, ब्रह्मबिन्दु, अमृतबिन्दु, ध्यानबिन्दु, तेजोबिन्दु, योगशिखा, योगतत्त्व, हस आदि उपनिषद् भी इसी का वर्णन करती हैं। अतएव ज्ञानकी एक मात्र कुजी योगही है। योगवाशिष्ठ में लिखा है कि योग बिनाका ज्ञानी ज्ञानबन्धु है अर्थात् ज्ञानियों

---

१ योगस्थ कुरु कर्माणि सङ्ग त्यक्त्वा धनञ्जय।
सिद्ध्यसिद्ध्यो समो भूत्वा समत्व योग उच्यते॥
(गीता अ० २-४८)

२ तपस्विभ्योऽधिको योगी ज्ञानिभ्योऽपि मतोऽधिक।
कर्मिभ्यश्चाधिको योगी तस्माद् योगी भवार्जुन॥
(गीता अ० ६-४६)

३ यत्सांख्यै प्राप्यते स्थान तद्योगैरपि गम्यते।
एक सांख्य च योग च य पश्यति स पश्यति॥
(गीता अ० ५-५)

४ व्याचष्टे यः पठति च शास्त्र भोगाय शिल्पिवत्।
यतते न त्वनुष्ठाने ज्ञानबन्धुः स उच्यते॥ १॥
आत्मज्ञनमनासाद्य ज्ञानान्तरलवेन ये।
सन्तुष्टा कष्टचेष्टास्ते ते स्मृता ज्ञानबन्धवः॥ २॥
(योगवाशिष्ठ निर्वाणप्रकरण उत्तरार्ध सर्ग २१–)

में अधम है। ज्ञान और योग का बहुत अधिक सम्बन्ध है इसीलिये "ज्ञान-क्रियाभ्यां मोक्षः" ज्ञान और क्रियासेही मोक्ष होना कहा गया है। इसी योग का वर्णन भिन्न भिन्न शास्त्रकारोंने भिन्न भिन्न प्रकार से किया है। भगवान् पतंजलिविरचित "पातंजलयोगदर्शन" तो खास योगकाही ग्रन्थ ठहरा अतएव इसमें तो सांगोपांग वर्णन होना ही चाहिये। और दूसरे शास्त्रकारोंने भी योग के विषय में विशेष जानने के लिये योगदर्शन

---

१ ज्ञान क्रिया करि ऊमरे हरिया हरिजन पार।
ऐसे अन्धे कन्ध करि, पंगो आन उतार ॥ १ ॥
पंगा सोई ज्ञान है, किरिया अंधी जान।
जन हरिया मिल एकठा, मुक्ति भई आसान ॥ २ ॥
ज्ञान बिना किरिया न कुछ, किरिया बिना न ज्ञान।
हरिया किरिया ज्ञान बिन, यो ही आतमध्यान ॥ ३ ॥
ज्ञान ब्रह्म की दृष्टि है, किरिया ध्यान स्वरूप।
जन हरिया मिल एकठा, आतम तत्त्व अनूप ॥ ४ ॥
ज्ञान सहित किरिया भई, मोक्ष माँहि पद जान।
हरिया किरिया ज्ञान बिन, भक्ति भई आसान ॥ ५ ॥

(श्री हरि० वाक्यम्)

जो बिन ज्ञान क्रिया अवगाहै, जो बिन क्रिया मोक्षपद चाहै।
जो बिन मोक्ष कहै मैं सुखिया, सो अज्ञान मूढन में मुखिया ॥ १ ॥

२ न्यायदर्शनः—
समाधिविशेषाभ्यासात् ४-२-३८। अरण्यगुहापुलिनादिषु योगाभ्यासोपदेशः ४-२-४२। तदर्थं यमनियमाभ्यामात्मसंस्कारो योगाच्चाध्यात्मविध्युपायैः ४-२-४६ ॥

वैशेषिकदर्शनः—
अभिषेचनोपवास-ब्रह्मचर्यगुरुकुलवास-वानप्रस्थ-यज्ञदान-प्रोक्षण-दिङ्नक्षत्र-मंत्र-काल-नियमाश्चादृष्टाय ६-२-२ अयतस्य शुचिभोजनादभ्युदयो न विद्यते नियमाभावाद्, विद्यते वाऽर्थान्तरत्वाद्-यमस्य ६-२-८

साङ्ख्यसूत्र—
रागोपहतिर्ध्यानम् ३-३०। वृत्तिनिरोधात् तत्सिद्धिः ३-३१। धारणासनस्वकर्मणा तत्सिद्धिः ३-३२। निरोधश्छर्दिविधारणाभ्याम् ३-३३ स्थिरसुखमासनम् ३-३४।

ब्रह्मसूत्रः—
आसीनः सम्भवात् ४-१-७। ध्यानाच्च ४-१-८। अचलत्वं चापेक्ष्य। ४-१-९ स्मरन्ति च ४-१-१०। यत्रैकाग्रता तत्राविशेषात् ४-१-११

देखने की आज्ञा दीहै । जिस योग का वर्णन उपनिषदों में व सूत्रोंमें भलीप्रकार किया गयाहै उसीको श्रीमद्भगवद्गीता के तीनों षट्कों में कर्म, भक्ति और ज्ञान के साथ श्रीभगवानने समावेश कर दिया है, समावेश क्या करदिया है, गीता के छठे और तेरहवें अध्याय में तो योग के सारे मौलिक सिद्धान्त और प्रक्रियायें ही वर्णन करदी हैं ।

योगवाशिष्ठ तो बस "*यथा नाम तथा गुण*" खास योग का ग्रन्थराज ही है । श्रीमद्भागवत के स्कन्ध ३ अध्याय २८ । स्कन्ध ११ अध्याय १५–१९–२० में योग का ही वर्णन है । इतना ही नहीं इसके उपरात योगवृक्ष इतना फैला कि उसकी कई शाखायें बन गई और उनके अलग ही ग्रन्थ बनगये जैसे तत्रशास्त्रमें "महानिर्माणतत्र" और "षट्चक्रनिरूपणतत्र" बहुत ही उत्तम योग के तात्रिक ग्रन्थ हैं । इनके सिवाय और भी कितने ही योग के ग्रन्थ बनगये हैं, हठयोगप्रदीपिका, शिवसहिता, घेरण्डसहिता, गोरक्षपद्धति, गोरक्षशतक, योगतारावली, बिन्दुयोग, योगबीज, योगकल्पद्रुम, योगनिबन्ध आदि अनेक योग के ग्रन्थ हैं ।

योग यहाँतक नही बढ़ा किन्तु देशी और विदेशी महात्माओंने अपने अपने अनुभव के अनुसार लोगोंको ज्ञान कराने के लिये महाराष्ट्री, गुजराती, बगला, तैलगी, तामिली, औत्कली, द्राविडी और इँग्लिश आदि अलग अलग भाषाओंमें योगका वर्णन किया । कबीर साहब, नानकसाहब, दादूजी, हरिदासजी, सुन्दरदासजी, जनतुरसीजी, चरणदासजी, सेवादासजी, सन्तदासजी, दरियासाजी आदि महात्माओंने हिन्दी साहित्यमें उसी योगवाणी का वर्णन किया कि जिनसे मुमुक्षुओं को बडा ही लाभ पहुँचा और पहुँच रहाहै ।

जिस योग की मुक्तकंठ से प्रशसा की गई और जिस योग की प्राप्ति महापुरुष परब्रह्मराम के उपदेश द्वारा श्रीजैमल्दासजी महाराज को हुई

---

१ योगशास्त्राध्यात्मविधि प्रतिपत्तव्य (न्यायद० ४–२–४६ भाष्य)

२ सुमरे बालक बात हमारी, तोकू दास् गुरु हमारी ।
गेहे में गुरु ज्ञान सुणाया, जोग सहित निजनाम बताया ॥
(श्रीराम० भक्तमाल)

आपने पूर्ण कृपा करके श्रीहरिरामदासजी महाराज को उसीका तारकमंत्र[1] सहित उपदेश देकर रामस्नेह सम्प्रदाय प्रवृत्त करने की नींव लगाई। उसी योग का वर्णन लोकोद्धार के अर्थ पूज्यपाद श्रीहरिरामदासजी महाराजने इस ग्रन्थके निशानी नामक छन्दों में किया है। अतएव इस ग्रन्थ को अत्यन्त ही उपयोगी समझकर इस की टीका बनाकर सर्व साधारणके लाभार्थ प्रगट कीगई।

श्रीमान् माननीय ज्योतिषी पं० श्रीनिवासजी पाठक महोदय रतलाम-निवासी का मैं विशेष आभारी हूं जिन्होंने बहुत कष्ट उठाकर इसकी टीका करने में परिश्रम किया है।

जिन पुस्तकों से या जिन महात्माओंसे सहायता ली गई है उनके प्रणेताओं तथा उन महात्माओं का भी विशेष आभारी हूं।

भवदीय

चौकस राम वैद्य.

---

1 तारकमंत्रः—ॐनमः सत्यरामाय चिदानन्दैकमूर्तये।
प्रत्यक्षतत्त्वबोधाय गुरुवेदोकलब्धये ॥ १ ॥

॥ श्री ॥

ध्यानमूलं गुरोर्मूर्तिः पूजामूलं गुरोः पदम्।
मन्त्रमूलं गुरोर्वाक्यं मोक्षमूलं गुरोः कृपा ॥ १ ॥

घघरं निसाणी प्रारभः ॥



पॆ्मापूनितपादपद्मयुगल राम दधत हृदि
रागद्वेषकरालजालमखिल वृंद रिपूणा हरम्।
याता ये शरण विशुद्धमनसस्तेषा प्रबोधादिद
वंदे श्रीहरिरामदासमनिश राम‍ाॅय सन्मन्त्रदम् ॥ १ ॥

हरिराम गुरु नत्वा कृत्वा चारुप्रदक्षिणाम्।
निसानीनामग्रन्थस्य भाषाटीका करोम्यहम् ॥ १ ॥

साखी।

हरिया सम्वत् सत्रहसे वष सईको जान।
तिथि तेरस आषाढ वदि सतगुरु पडी पिछान ॥ १ ॥

---

१ घटघट। २ चिह्न। ३ प० दिगंबरेण रचितमिद पद्यम्। ४ रामदासाय।
५ सद्गुरुलक्षण —

श्रीगुरु परमेशानि शुद्धवेषो मनोहर।
सर्वलक्षणसयुक्त सर्वावयवशोभित ॥ १ ॥
सर्वागमार्थतत्त्वज्ञ सर्वमन्त्रप्रधानवित्।
लोकसमोहनकरो देववत्प्रियदर्शन ॥ २ ॥
सुमुखः सुलभ स्वच्छ शुद्धातिच्छिन्नसशय।
इगिताकारतत्त्वज्ञो दूरत कृतदुर्जन ॥ ३ ॥
अतर्मुखो बहिर्दृष्टि सर्वज्ञो देशकालवित्।
आज्ञासिद्धिस्त्रिकालज्ञो निग्रहानुग्रहक्षम ॥ ॥ ४ ॥
वेदवेदांतविद्धांत सर्वजीवदयापर।
स्वाधीनेंद्रियसंचार षड्वर्गविजयक्षम ॥ ५ ॥
अग्रगण्योऽतिगम्भीर पात्रापात्रविशेषवित्।
निर्मलो नित्यसंतुष्टो निर्द्वंद्वो नित्यशक्तिमान् ॥ ६ ॥
भक्तवत्सलो धीर- कृपालु स्मितपूर्ववाक्।

श्रीहरिरामदासजी महाराज स्वयं अपने मुखारविंद से अपने को ही संबोधित कर वर्णन करते हैं कि, संवत् सत्रह सौ का सईका वर्ष अर्थात् अठारहवीं शताब्दी के आषाढ कृष्णा त्रयोदशी के दिन मेरे को सद्गुरु की पहिचान पड़ी ॥ १ ॥

छंद निसानी ।

सतगुरु पहिचानी परचे भानी सब सिध काम सरंदा है ॥ १ ॥

(सद्गुरु की पहिचान होने से सर्व कार्य सिद्ध होगये ऐसा परचा (प्रत्यक्षबोध) जीवको होगया अर्थात् अनुभव प्राप्त होगया ॥ १ ॥

सतगुरु से मिलिया अंतरभिलिया सारशब्द ओलखंदा है ।

भक्तिप्रियः सर्वसमो दयालुः शिष्यशासिता ॥ ७ ॥
स्वेष्टदेवगुरुः प्राज्ञो विनयी पूजनोत्सुकः ।
नित्ये नैमित्तिके काम्ये रतः कर्मण्यनिंदिते ॥ ८ ॥
रागद्वेषभयक्रोधदंभाहंकारवर्जितः ।
सद्विद्यानुष्ठानरतो विद्याना च प्रकाशकः ॥ ९ ॥
यदृच्छालाभसंतुष्टो गुणदोषविभेदकः ।
स्त्रीद्रविणेष्वनासक्तो दु.सगव्यसनोज्झितः ॥ १० ॥
अलोलुपोऽहिंसकश्चापक्षपाती विचक्षणः ।
वित्तविद्यादिभिर्मंत्रयंत्रतंत्राद्यविक्रयी ॥ ११ ॥
निःसंकल्पो निर्विकल्पो निर्णीतात्माऽतिधार्मिकः ।
तुल्यनिंदास्तुतिर्मौनी निष्पक्षोऽतिनियामकः ॥ १२ ॥
इत्यादिलक्षणोपेतः श्रीगुरुः कथितः प्रिये । (कुलार्णव)

सारशब्द—

एक शब्द में कहि समझाऊं, सुनहो सब संसारा ।
रामनाम सो सारशब्द है, और कथन है छारा ॥ १ ॥
(श्रीहरि० वाक्यम्)

कहै कबीर सुनो हो साधो, परगट कहूं बजाई ।
रामनाम सो सारशब्द है, और कथन सब वाई ॥ १ ॥
(कबीर)

स्वप्रकाशः स्वयंज्योतिः स्वानुभूत्यैकचिन्मयः ।
तदेव मंत्रराजस्य मनुराड् व्यक्षरः स्मृतः ॥ १ ॥
अखंडैकरसानंदस्तारको ब्रह्मवाचकः । (रामोपनिषद्)

सुप्रकेतैर्द्युभिरग्निर्वितिष्ठन् रुशद्भिर्वर्णैरभिराममस्थात् ।

अर्थः—राम कृष्णवर्ण शर्वरं तम अभ्यस्थात् स्थाय होमकाले अभिभूय तिष्ठति इति तद्भाष्ये सायणाचार्य्या (जिनका उत्तराश्रममें विद्यारण्यस्वामी नाम है)।

(ऋग्वेद १० अ ३ व ३)

गाणपत्येषु शैवेषु शाक्तसौरेष्वभीष्टदः ।
वैष्णवेष्वपि मन्त्रेषु राममन्त्रः फलाधिकः ॥ १ ॥ (श्रीहयग्रीवपञ्चरात्र)

शतकोट्यो महामन्त्रा उपमन्त्राश्चयोदश ।
एक एव महामन्त्रो रामनाम परात्परम् ॥ १ ॥ (शिवतन्त्र)

गाणपत्यादिसौराश्च हरिः शेषः शिवः शिवा ।
तेषां प्राणो महामन्त्रो रामेति चाक्षरद्वयम् ॥ १ ॥
गणेशे भास्करे चैव शिवे शक्तौ हरावपि ।
राममन्त्रप्रभावेण सामर्थ्यं जायते ध्रुवम् ॥ २ ॥ (भारद्वाजसंहिता)

विना शक्तिं कथं कार्य्यं किं कलत्रेण वा बलम् ।
तदाधाराङ्गवेदाणी रामनाम हृदं कुरु ॥ १ ॥
तदासंसरति विघ्नं लयं याति मुमुक्षुभिः ।
तस्माद्राम महामन्त्र आदिमन्त्र उदाहृतः ॥ २ ॥ (जैमिनि)

श्रीरामेति परं मन्त्रं तदेव परमं पदम् ।
तदेव तारकं विद्धि जन्ममृत्युभयापहम् ॥ १ ॥ (हिरण्यगर्भसंहिता)

श्रीरामेति परं जाप्यं तारकं ब्रह्मसंज्ञकम् ।
ब्रह्महत्यादिपापघ्नमिति वेदविदो विदुः ॥ १ ॥ (सनत्कुमारसंहिता)

यथा घटश्च कलशः पदार्थस्याभिधायकः ।
तथैव ब्रह्मरामश्च नूनमेकार्थतत्परः ॥ १ ॥ (अगस्त्यसंहिता)

रमन्ते योगिनो यत्र नित्यानन्दे चिदात्मनि ।
इति रामपदेनासौ परं ब्रह्माभिधीयते ॥ १ ॥ (रामतापिनी)

राम एव परं ब्रह्म राम एव परं तपः ।
राम एव परं तत्त्वं श्रीरामो ब्रह्म तारकः ॥ १ ॥ (हनुमदुपनिषद्)

श्रीराममन्त्रराजस्य माहात्म्यं गिरिजापतिः ।
जानाति भगवाञ्छम्भुर्ज्वलत्पावकलोचनः ॥ १ ॥ (वृद्धब्रह्मसंहिता)

मन्त्रराजं प्रवक्ष्यामि शृणु नारद तत्परः ।
रेफारादिर्मकारान्तो मन्त्रः षड्वर्णसंयुतः ॥ १ ॥

अकारः प्रथमाक्षरो भवति उकारो द्वितीयाक्षरो भवति मकारस्तृतीयाक्षरो भवति अर्धमात्राश्चतुर्थाक्षरो भवति बिंदुः पंचमाक्षरो भवति नादः षष्ठाक्षरो भवति तारकत्वात्तारको भवति [illegible] तारकं ब्रह्म त्वं विद्धि ।

प्रणवं केवलमकारोकारोर्धमात्रासहितं तस्मात्प्रणवस्याकारस्योकारस्य च रकारः मकारश्चार्धमात्रस्य इति । (रामोपनिषद्)

अंशांशै रामनाम्नश्च त्रयः सिद्धा भवन्ति हि ।
बीजमोंकारः सोहं च सूत्रसूक्तमिति श्रुतिः ॥ १ ॥
रामनाम्नः समुत्पन्नः प्रणवो मोक्षदायकः ।
रूपं तत्त्वमसेश्चासौ वेदतत्त्वाधिकारिणः ॥ २ ॥ (महाप्रभुसंहिता)
रकारश्च परब्रह्म नादमोंकारसंयुतम् ।
ॐविंदुश्च मकारोयं जातं रामाक्षरद्वयम् ॥ १ ॥
रकारस्तत्पदं ज्ञेयं त्वंपदाकार उच्यते ।
मकारोसिपदं ज्ञेयं तत्त्वमसि सुलोचने ॥ १ ॥
चिद्वाचको रकारः स्यात्सद्वाच्याकार उच्यते ।
मकारानन्दवाच्यं स्यात्सच्चिदानंदमव्ययम् ॥ २ ॥ (श्रीमहारामायण)
प्रणवं केचिदाहुर्वै बीजश्रेष्ठं तथापरे ।
तत्त्वतो रामवर्णाभ्यां सिद्धिमाप्नोति मे मतम् ॥ १ ॥ (महाशंभुसंहिता)

ॐ भृगुर्वै वारुणिः । वरुणं पितरमुपससार । अधीहि भगवो ब्रह्मेति । सोऽब्रवीद्राम एव परं ब्रह्म रामादन्यन्न किंचन यत एते रामाद्वा उत्पद्यंते राम एव विलीयंते राम एव स्थितिं वसंति तस्माद्राम एव विभुरिति तैत्तिरीयश्रुतिः (रामतापनी)

यथैव वटबीजस्थः प्राकृतोऽस्ति महाद्रुमः ।
तथैव रामबीजस्थं जगदेतच्चराचरम् ॥ १ ॥ (याज्ञवल्क्य)
रकाराज्जायते ब्रह्मा रकाराज्जायते हरिः ।
रकाराज्जायते शंभू रकारात्सर्वशक्तयः ॥ १ ॥ (रुद्रयामलक)
ब्रह्मविष्णुमहेशाद्या यस्यांशा लोकसाधकाः ।
तं रामं सच्चिदानंदं नित्यं रामेश्वर भजेत् ॥ १ ॥ (हनुमत्संहिता)
रामनाम परं जाप्यं ज्ञेयं ध्येयं निरंतरम् ।
कीर्तनीयं च बहुधा मुमुक्षुभिरहर्निशम् ॥ १ ॥ (जाबालिसंहिता)
अद्यापि रुद्रः काश्यां वै सर्वेषां त्यक्तजीविनाम् ।
दिशत्येतन्महामंत्रं तारकं ब्रह्मनामकम् ॥ १ ॥
विनैव दीक्षां विप्रेंद्र पुरश्चर्यां विनैव हि ।
विनैव न्यासविधिना जपमात्रेण सिद्धिदम् ॥ २ ॥
तस्मात् सर्वात्मना रामनामरूपं परं प्रियम् ।
मंत्रं जपेत्सदा धीमान् संविहायान्यसाधनान् ॥ ३ ॥ (हारीतस्मृति)
जपतः सर्ववेदांश्च सर्वमंत्रांश्च पार्वति ।
तस्मात्कोटिगुणं पुण्यं रामनाम्नैव लभ्यते ॥ १ ॥

देव देव धरन्तुके रामनामाभिराम
ध्येयं ध्येयं भवति सततं तारकं मङ्गलम् ।
अस्य अर्त्तं ...तिविह्वलो प्राणिनां कर्णमूले
दीप्यो दीप्यं मटति जटिल छोऽपि काशनिरघी ॥ १ ॥ (काशीखण्ड)
रामनाम परं ब्रह्म सर्वदेवप्रपूजितम् ।
महेश एव जानाति नान्यो जानाति वै मुने ॥ १ ॥
(जैमिनि॰ व्यासवाक्यम्)

रामेति द्व्यक्षरं नाम यत्र सन्निहितं मुखे ।
... भगवान् सर्वं च विनाशयेत् ॥ १ ॥ (लोमशसंहिता)
... नामभावेन सर्वज्ञोऽहं वरानने ।
रामनाम्नः परं तत्त्वं नास्ति किंचिज्जगत्त्रये ॥ १ ॥ (शिवा॰)
रामेति वर्णद्वयमादरेण सदा स्मरन्मुक्तिमुपैति जन्तुः ।
कलौ युगे कल्मषमानसानामन्यत्र धर्मे खलु नाधिकारः ॥ १ ॥
कणे कणे कुर्वन् रामनामानुकीर्तनम् ।
... सोऽपराधैर्न लिप्यते ॥ २ ॥
दिवसे दिवसे लभेन्मर्त्यो महायज्ञादिकं फलम् ।
... मन्त्रराजमनुत्तमम् ॥ ३ ॥ (वैष्णवस्मृतौ)
... निहतो म्लेच्छो जराजर्जरो
हा रामेति हतोऽसि भूमिपतितो जल्पंस्तनुं त्यक्तवान् ।
... गोष्पदवदपारसंसारार्णवमहो नाम्नः प्रभावः पुनः
... ॥ १ ॥ (वराहपुराण)
किं चित्रं यदि रामनामरसिकास्ते यान्ति रामास्पदम् ।
द्विजो वा राक्षसो वापि पापी वा धार्मिकोऽपि वा ।
... राम स्मृत्वा याति परं पदम् ॥ १ ॥ (अध्यात्मरामायण)
... श्रीराममन्त्रस्य माहात्म्यं नो ब्रूहि
ॐ ... यज्ञस्य सहोवाच ... तदेव तारकं ब्रह्म त्वं विद्धि तदेवोपास्य
... तारकस्तारको भवति तदेव तारकं ब्रह्म त्वं विद्धि तदेवोपास्यं
... पाप्मानं तरति स मृत्युं तरति स ब्रह्महत्यां तरति
... विमुक्तो
... तरति स वीरहत्यां तरति स सर्वहत्यां तरति स संसारं तरति स सर्वं
... भवति सोऽमृतत्वं च गच्छतीति (सामवेदपिप्पलायनशाखा)
... कथं भगवन् गां पर्यटन् कलिं संतरेयम्
... ब्रह्माणं जगाम
... श्रुतिरहस्यं गोप्यं तच्छृणु । येन
... नामोच्चारणमात्रेण निर्धूतकलिर्भवति ।
... । ... हिरण्यगर्भः—
... ।
हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे ।

सुप्रकेतैर्द्युभिरग्निर्वितिष्ठन् रुशद्भिर्वर्णैरभिराममस्थात् ।

अर्थः—राम कृष्णवर्ण शर्वरं तम अभ्यस्थात् साय होमकाले अभिभूय तिष्ठति इति तद्भाष्ये सायणाचार्या (जिनका उत्तराश्रममें विद्यारण्यस्वामी नाम है)।

(ऋग्वेद १० म ३ व ३)

गाणपत्येषु शैवेषु शाक्तसौरेष्वभीष्टद ।
वैष्णवेष्वपि मंत्रेषु राममन्त्र फलाधिक ॥ १ ॥ (श्रीहयशीर्षपंचरात्र)

शतकोट्यो महामन्त्रा उपमन्त्रास्त्रयोदश ।
एक एव महामन्त्रो रामनाम परात्परम् ॥ १ ॥ (शिवतन्त्र)

गाणपत्यादिसौराश्च हरि शेष शिव शिवा ।
तेषा प्राणो महामन्त्रो रामेति चाक्षरद्वयम् ॥ १ ॥
गणेशे भास्करे चैव शिवे शक्तौ हरावपि ।
राममन्त्रप्रभावेण सामर्थ्यं जायते ध्रुवम् ॥ २ ॥ (भारद्वाजसहिता)

विना शक्ति कथ कार्यं किं कर्तव्येन वा बलम् ।
तदाकाशाद्भवेद्वाणी रामनाम हृद कुरु ॥ १ ॥
तदासंसरति विश्व लय याति मुमुक्षुभि ।
तस्माद्राम महामन्त्र आदिमन्त्र उदाहृत ॥ २ ॥ (जैमिनि)

श्रीरामेति परं मन्त्र तदेव परम पदम् ।
तदेव तारक विद्धि जन्ममृत्युभयापहम् ॥ १ ॥ (हिरण्यगर्भसंहिता)

श्रीरामेति परं जाप्य तारक ब्रह्मसञ्ज्ञकम् ।
ब्रह्महत्यादिपापघ्नमिति वेदविदो विदु ॥ १ ॥ (सनत्कुमारसंहिता)

यथा घटश्च कलश पदार्थस्याभिधायक ।
तथैव मन्त्ररामश्च नूनमेकार्थतत्पर ॥ १ ॥ (अगस्त्यसहिता)

रमन्ते योगिनो यत्र नित्यानंदे चिदात्मनि ।
इति रामपदेनासौ परं ब्रह्माभिधीयते ॥ १ ॥ (रामतापिनी)

राम एव परं ब्रह्म राम एव परं तप ।
राम एव परं तत्त्व श्रीरामो ब्रह्म तारक ॥ १ ॥ (हनुमदुपनिषद्)

श्रीराममन्त्रराजस्य माहात्म्य गिरिजापति ।
जानाति भगवाञ्छम्भुर्ज्वलत्पावकलोचन ॥ १ ॥ (बृहद्ब्रह्मसहिता)

मन्त्रराज प्रवक्ष्यामि शृणु नारद तत्पर ।
रेफारूढमकारान्तो मन्त्र षड्वर्णसंयुत ॥ १ ॥

अकार प्रथमाक्षरो भवति उकारो द्वितीयाक्षरो भवति मकारस्तृतीयाक्षरो भवति अर्धमात्राश्चतुर्थाक्षरो भवति बिंदु पंचमाक्षरो भवति नाद षष्ठाक्षरो भवति तारकत्वात्तारको भवति तदेव रामेति तारक ब्रह्म त्व विद्धि ।

प्रणवं केवलमकारोकारोर्धमात्रासहितं तस्मात्प्रणवस्याकारस्योकारस्य च रकारः मकारश्चार्धमात्रस्य इति । (रामोपनिषद्)

अंशांशी रामनाम्नश्च त्रयः सिद्धा भवन्ति हि ।
बीजमोंकारः सोहं च सूत्रसूक्तमिति श्रुतिः ॥ १ ॥
रामनाम्नः समुत्पन्नः प्रणवो मोक्षदायकः ।
रूपं तत्त्वमसेश्चासौ वेदतत्त्वाधिकारिणः ॥ २ ॥ (महाप्रभुसंहिता)
रकारश्च परब्रह्म नादमोंकारसंयुतम् ।
ॐबिंदुश्च मकारोयं जातं रामाक्षरद्वयम् ॥ १ ॥
रकारस्तत्पदं ज्ञेयं त्वंपदाकार उच्यते ।
मकारोसिपदं ज्ञेयं तत्त्वमसि सुलोचने ॥ १ ॥
चिद्वाचको रकारः स्यात्सद्वाच्याकार उच्यते ।
मकारानन्दवाच्यं स्यात्सचिदानंदमव्ययम् ॥ २ ॥ (श्रीमहारामायण)
प्रणवं केचिदाहुर्वै बीजश्रेष्ठं तथापरे ।

योगिनो ज्ञानिनो भक्ता सुकर्मीनरश्च ये ।
रामनाम्नि रता सर्वे रसुकाडा त एव च ॥ २ ॥ (पद्मपुराण)
रामेत्यक्षरयुग्म हि सर्वमन्त्राधिक द्विज ।
यदुच्चारणमात्रेण पापी याति परा गतिम् ॥ १ ॥ (क्रियायोगसार)
श्रद्धया हेलया नाम वदति मनुजा भुवि ।
तेषा नास्ति भय पार्थ रामनामप्रसादत ॥ १ ॥
प्रमादादपि सस्पृष्टो यथानलकणो दहेत् ।
तथाष्टपुटसस्पृष्ट रामनाम दहेदघम् ॥ २ ॥ (आदिपुराण)
रकारोऽनलबीज स्यात् सर्वे वडवादय ।
कृत्वा मनोमत सव भस्म कर्म शुभाशुभम् ॥ १ ॥
आकारो भानुबीज स्यात् वेदशास्त्रप्रकाशक ।
नाशयत्येव सो दीप्त्या ह्यस्थमज्ञानज तम ॥ २ ॥
मकारश्चन्द्रबीज स्याद्दपा परिपूरणम् ।
त्रिताप हरते नित्य शीतल करोति च ॥ ३ ॥
वैराग्यहेतु परमो रकार कथ्यते बुधै ।
अकारो ज्ञानहेतुश्च मकारो भक्तिहेतुक ॥ ४ ॥
आकृष्टि कृतचेतसां सुमहतामुच्चाटन चाहसा
मात्वाडाग्ममूकलोकसुलभो वश्यश्च मोक्षश्रिय ।
नो दीक्षां न च दक्षिणा न च पुरश्चर्यामनागीक्षते
मन्त्रोय रसनास्पृगेव फलति श्रीरामनामात्मक ॥ ५ ॥
(श्रीमद्वाल्मीकीयरामायण)
छत्ररूपो रकारोऽस्ति अनुस्वार शिरोमणि ।
राजराजाधिराजति तस्माद्राम शिरोमणि ॥ १ ॥ (पद्मपुराण)
त्रिवर्ण राम नामेद केवल च स्वराधिकम् ।
सर्वेषा मुकुट छत्र मकारो रेफव्यञ्जनम् ॥ १ ॥
यन्नामसंसगवशाद्विवश
नश्वरी मूर्ध्निगती स्वराणाम् ।
तन्नामपादौ हृदये निधाय
देही कथ नोध्वगति प्रयाति ॥ २ ॥
रेफोच्चारणमात्रेण बहिर्निर्याति पातकम् ।
पुन प्रवेशसदेहात् मकारश्च कपाटवत् ॥ १ ॥ (नारदपञ्चरात्र)
तुलसी राके कहत हौ, निकसत पाप बहार ।
फिर आवन पावत नहीं देत मकार किंवार ॥ १ ॥

पेय पेय श्रवणपुटके रामनामाभिराम
ध्येय ध्येय मनसि सतत तारक ब्रह्मरूपम् ।
जल्प जल्प प्रकृतिविकृतौ प्राणिना कर्णमूले
वीथ्यां वीथ्यामटति जटिल कोऽपि काशीनिवासी ॥१॥ (काशीखड)
रामनाम परं ब्रह्म सर्वदेवप्रपूजितम् ।
महेश एव जानाति नान्यो जानाति वै मुने ॥ १ ॥
(जैमिनि॰ व्यासवाक्यम्)
रामेति द्व्यक्षरं नाम यत्र सकीर्त्यते बुधै ।
तत्राविर्भूय भगवान् सर्वदु ख विनाशयेत् ॥ १ ॥ (लोमशसहिता)
यस्य नामप्रभावेण सर्वज्ञोऽहं वरानने ।
रामनाम्न परं तत्त्व नास्ति किंचिज्जगत्त्रये ॥ १ ॥ (शिववा॰)
रामेति वर्णद्वयमादरेण सदा स्मर मुक्तिमुपैति जन्तु ।
कलौ युगे कल्मषमानसानामन्यत्र धर्मे खलु नाधिकार ॥ १ ॥
कवले कवले कुर्वन् रामनामानुकीर्तनम् ।
य कश्चित्पुरुषोऽश्नाति सोऽन्नदोषैर्न लिप्यते ॥ २ ॥
दिवसे दिवसे लभेन्मर्त्यो महायज्ञादिक फलम् ।
य स्मरेद्रामनामाख्य मत्रराजमनुत्तमम् ॥ ३ ॥ (वैष्णवस्मृतौ)
दैवाच्छूकरशावकेन निहतो म्लेच्छो जराजर्जरो
हा रामेति हतोस्मि भूमिपतितो जल्पस्तनु त्यक्तवान् ।
तीर्णो गोष्पदवद्भवार्णवमहो नाम्न प्रभावात्पुन
किं चित्र यदि रामनामरसिकास्ते यान्ति रामास्पदम् ॥ १ ॥ (वराहपुराण)
द्विजो वा राक्षसो वापि पापी वा धार्मिकोऽपि वा ।
त्यजन्कलेवरं राम स्मृत्वा याति परं पदम् ॥ १ ॥ (अध्यात्मरामायण)

ॐ अथाह भारद्वाजो याज्ञवल्क्य सहोवाच श्रीराममन्त्रस्य माहात्म्य मे ब्रूहि भगवन् सह उवाच याज्ञवल्क्य तारकतात्तारको भवति तदेव तारक ब्रह्म त्व विद्धि तदेवोपास्य य एतत्तारक ब्रह्मणो नित्यमधीते स पाप्मान तरति स मृत्यु तरति स ब्रह्महत्या तरति स भ्रूणहत्या तरति स वीरहत्यां तरति स सर्वहत्यां तरति स संसारं तरति स विमुक्तात्मा भवति स महान् भवति सोऽमृतत्व च गच्छतीति (सामवेदपिप्पलायनशाखा)

हरिः ॐ द्वापरान्ते नारदो ब्रह्माण जगाम कथ भगवन् गां पर्यटन् कलिसंतरेय मिति । सहोवाच ब्रह्मा साधु पृष्टोसि सर्व श्रुतिरहस्य गोप्य तच्छृणु । येन कलिसंसारं तरिष्यसि भगवत आदिपुरुषस्य नारायणस्य नामोच्चारणमात्रेण निर्धूतकलिर्भवति । नारद पुन पप्रच्छ । तन्नाम किमिति । स होवाच हिरण्यगर्भ —

हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे ।
हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे ॥

इति षोडशकं नाम्नां कलिकल्मषनाशनम् । नातः परतरं प्रायः सर्ववेदेषु दृश्यत इति षोडशकलावृतस्य पुरुषस्यावरणविनाशनं । ततः प्रकाशते परं ब्रह्म मेघापाये रविरश्मि-मंडलीवेति । पुनर्नारदः पप्रच्छ भगवन्कोऽस्य विधिरिति । तं होवाच नास्य विधिरिति । सर्वदा शुचिरशुचिर्वा पठन् ब्राह्मणः सलोकतां समीपतां सरूपतां सायुज्यतामेति । यदास्य षोडशकस्य सार्धत्रिकोटिर्जपति । तदा ब्रह्महत्यायास्तरति । स्वर्णस्तेयात् पूतो भवति । वृषलीगमनात्पूतो भवति । सर्वधर्मपरित्यागपापात्सद्यः शुचितामाप्नुयात् । सद्यो मुच्यते सद्यो मुच्यत इत्युपनिषत् । हरिः ॐ सहनाववत्विति शांतिः शांतिः शांतिः । हरिः ॐ (कलिसंतारणोपनिषद्)

राम एव परं ब्रह्म परमात्माभिधीयते ।
रामात्परतरं नास्ति यत्किंचित्स्थूलसूक्ष्मकम् ॥ १ ॥ (पराशरस्मृति)
रामान्नास्ति परो देवो रामान्नास्ति परं व्रतम् ।
नहि रामात्परो योगो नहि रामात्परो मखः ॥ १ ॥
राशब्दो विश्ववचनो मश्चापीश्वरवाचकः ।

(.........)

रकारार्थो रामः सगुणपरमैश्वर्यजलधिः
मकारार्थो जीवः सकलविधकैंकर्यनिपुणः ॥
तयोर्मध्याकारो युगलमथ सर्वधप्रमुख
अनन्यार्हो ब्रूते त्रिनिगमसरूपोऽयमतुलः ॥ १ ॥ (आचार्यवाक्यम्)
श्रीराम ये च हित्वा खलमतिनिरता ब्रह्मजीवं वदंति
ते मूढा नास्तिकास्ते शुभगुणरहिताः सर्वबुद्ध्यातिरिक्ताः ॥
पापिष्ठा धर्महीना गुरुजनविमुखा वेदशास्त्रैर्विरुद्धा-
स्ते हित्वा गांगमंभो रविकिरणजलं पातुमिच्छंति भ्रस्ताः ॥ १ ॥
(शिववाक्यम्)
श्रीमद्भानुसुतातटे प्रविलसद्दिव्यं महत्पत्तनं
तत्कंसस्य जगत्त्रयेऽपि विदितं वर्णैं शुभैर्वैहिभिः ।
अन्त्याद्यौ विबुधाः स्मरंति भुवि ये धन्याः कुलं पावितं
तौ तेषां न भजंति स्वाच्च वदने मध्यस्थितं चाक्षरम् ॥ १ ॥
पठति सकलशास्त्रं वेदपारं गतोपि
यमनियमपरो वा धर्मशास्त्रार्थवेत्ता ।
अटति सकलतीर्थं राजिता वा हुताग्निः
र्यदि भजति न रामं सर्वमेतद्वृथा स्यात् ॥ २ ॥

कबीर कसौटी रामकी झूठा टिकै न कोय ।
राम कसौटी सो सहै जो मरजीवा होय ॥ १ ॥
कबीर कहताहूँ कहजातहूँ सुणता है सब कोय ।
राम कह्यां भल होयगा नहिंतर भला न होय ॥ २ ॥ (कबीर)
मूरख तन धर कहा कमायो ।
राम भजन बिन जन्म गुमायो ॥ (श्रीरामानन्दजीम)
रसना राम उचार रे तुझे थायमिलेंगे ।
अधनाम उद्धार करेगा, नहिं तो फिरिफिरि जन्म धरेगो ॥
(श्रीजमलदासजी म०)
रामनाम निजमूल है और सकल विस्तार ।
जन हरिया फल मुक्ति कू लीजे सार सभार ॥ १ ॥
(श्रीहरि वाक्यम्)
राम कथा सबही सज्ञा सबहि राम के माहिं ।
रामदास इक राम बिन दूजा कोऊ नाहिं ॥ १ ॥
बिन साधू संसार में सुमरावे निजनाम ।
रामदास संत शब्द दे पहुचावे सुख धाम ॥ २ ॥
बड़ा बडेरा मच्छा ब्रह्मा विष्णु महेश ।
रामदास उन सी कह्यो, राम सर्व उपदेश ॥ ३ ॥ (श्रीराम० वाक्यम्)
एक राम के नाम बिन निवडी जरनि न जाय ।
दादू केत पचि मरे करि कार बहुत उपाय ॥ १ ॥
रामनाम गुरु शब्द सू, रे मन पेठ भरम्म ।
निहकरमी सू मन मिल्या दादू काट करम्म ॥ २ ॥ (दादू दयाल)
राम नाम जपिबो श्रवनन सुनिबो सलिलमोहमें बहि नहिं जइबो ।
(नामदेव)
रे मन राम नाम समार माया के भ्रम कहा भूलो चलेगो कर प्यार ।
(रैदासजी)
दया बोधमाँहीं कही करि करि ऊंची बाँह ॥
दयावत जिनके बसे राम राम उरमाँह ॥ १ ॥ (गोरखनाथजी)
सुन्दर कहत एक दियो जिन राम नाम ।
गुरुसो उदार कोउ देख्यो नाँहि सुन्यो है । (सुन्दरदासजी)
रज्जब मिनखा देह धृग् आतमराम न जानियो । (रज्जबजी)
हरदा बाजींद रामभजन में देह गले तो गालिये । (बाजीदजी)
रसना रटे न रामकूँ अन कथा मुख चोल ।
जन हरिदास वे मानवी किण गिणाइ कोल ॥ १ ॥ (हरिदासजी)

सद्गुरु के मिलने से (साक्षात्कार हो जाने से) जीवात्मा में जो भेदभाव का अन्तर था वह सब मिटगया और अभेद (अद्वैत) भाव होकर सारशब्द जो ब्रह्मवाचक राम नाम है जिसकी श्रुति, स्मृति, उपनिषद्, इतिहास, पुराण, आप्तवाक्य (महापुरुषवाक्य) संस्कृत प्राकृत सर्व ग्रंथों में मुक्तकंठ से प्रशंसा की है उस रामनाम की ओलखान हो गई।

तन मन कर हेती रसना सेती रामहि राम रटदा है ॥ २ ॥

तब तन मन उसी में तल्लीन होगया और अनन्य प्रेमपूर्वक रसना (जिह्वा) से राम ही राम शब्द की रटना अहर्निश (दिनरात) होने लग गई ॥ २ ॥

---

१ रसना से राम नाम रटन—

राम नाम को कीजिये, आठों पहर उचार।
हरिया बंदीवान ज्यों करिये कूक पुकार ॥ १ ॥ (श्रीहरि॰ वाक्यम्)
रसना सों रटिबो करै आठों पहर अभंग।
रामदास उण संत को राम न छाडै संग ॥ १ ॥ (श्रीराम वाक्यम्)
कबीर राम राम कहि कूकिये ना छोड़िये असरार।
रात दिवस के कूकने कबहुक लगे पुकार ॥ १ ॥
राम नाम जपते रहो जब लग घटमें प्रान।
कबहुक दीन दयालके भनक परेगी कान ॥ १ ॥
रामनामको नित भजो रसना होट समेत।
हरिया जोग रु जुगति विन सहज न को सिवरेत ॥ १ ॥
राम नाम रसना रटै, सोइ जग में साध।
हरिया सुमिरन सहज का, वाका मता अगाध ॥ २ ॥

स्मरण के स्थान—१ रसना २ कंठ ३ हृदय ४ नाभी।

स्मरण के भेद—१ अधम २ मध्यम ३ उत्तम ४ अत्युत्तम।

प्रथम राम रसना सुमरि द्वितिये कंठ ल्गाय।
तृतिये हिरदै ध्यान धरि चौथे नाभि मिलाय ॥ १ ॥
प्रथम सो प्रथम अध नाम रसना लिया दूसरे नाम मध कंठ धारा।
तीसरे उत्तम सो नाम हिरदै कह्या चतुरथे नाभि अतिउत्तमयारा ॥
(श्रीहरि॰ वाक्यम्)

तुलसी अध सुमरिण यों एह रसना राम राम जपिलेह।
यह आलंबन सोन्यों करै, मध सुमिरण की सोझी परै ॥ १ ॥

तदनतर हृदयस्थान (अनाहत चक्र) में श्वास और उच्छ्वास की गति का ठहरना हुवा और मन ही मनमें स्मरण का ध्यान धरने लगा, हृदय में स्मरण होने के पश्चात् नाभिस्थान (मणिपुरचक्र) में स्मरण करता हुवा प्राणवायु समानवायु में आकर मिला (प्राणवायु समानवायु के घर में अर्थात् नाभिस्थान में जब आया) तब अनेक प्रकार के नाच नचाने लगा और सहज में ही आपसे आप मुखसे रामनाम का स्मरण होने लग गया ॥४॥

रग रग आरभा भया अचभा छुच्छम भेद भणदा है।

और व्यानवायु जो सर्व शरीर में व्यापक हो रहा है उससे प्राण और समानवायु का योग होनेसे रग रग में (नस नसमें) आश्चर्यजनक एक क्रिया का आरभ हुवा जिसका भेद वर्णन करना बडा सूक्ष्म है।

ओऊँ अरु सोऊँ देख्या दोऊँ पारब्रह्म परसदा है ॥ ५ ॥

ऐसी स्थिति होने के पश्चात् ओऊँ=हस और सोऊ=सोह इन दोनों

सर्वशरीरग इति अर्थात् कठ में उदानवायु और सब शरीरमें व्यानवायु निवास करता है।

६ नाभि स्थान में जब स्मरण होने लगता है तब सहज स्मरण होता है।

ररंकार सुमरण सहज नाभि कमल अस्थान।
हरिया पच्छिमदेशकों पहुँचन का परमान ॥ १ ॥
ज्यू जल सेझै सिंधुका वाका थाह न कोय।
हरिया सुमिरन सहजका निशिदिन घटमें होय ॥ २ ॥

सोरठा।

हरिया मुख ममकार, जब सहजाँ सुमिरण नहीं।
मरे धरे आकार, मेला जीव रु शीव विन ॥ १ ॥

अर्थात् सहज सुमिरण नाभिस्थान में जब रकारका स्मरण होने लग जाय तो पश्चिम देश को पहुचने का प्रमाण समझना। सहज सुमरण में मकार का स्मरण बद होकर केवल ररंकार शब्द की रात दिन रटना होने लग जाती है तभी जीव और शिव एक हो जाते हैं।

१ छुछम भेद—यह महात्माओंका सांकेतिक शब्द है जिसमें सूक्ष्म भेद (वार्ताओं) का वर्णन है अथवा सत्त्वेद गुण को भी कहते हैं अथवा भगवानके श्वासोच्छ्वास रूप वेदको भी कहते हैं अथवा छदांसि यस्य पर्णानि यस्त वेद स वेदवित् इसको भी कहते हैं।

मात होने से परब्रह्म परमात्मा के दर्शनको प्राप्त होताहै वह हुई ॥ ५ ॥

१ अजपा के जप से परब्रह्म परसता है—

ओऊं सोऊं जाप अजप्पा, घटमें कीया सप असपा । (श्रीहरि० वाक्यम्)

ओऊं सोऊं अर्थात् हंसः सोहं अजपा जप है इसने घट में असप (जीव ब्रह्मका भेद) का सप (अभेद) करदिया ठीक वाच्यार्थ सफल कर दिया ।

उलटा अजपा जाप जपाया । हद को जीत वेहदमें आया ॥

(श्रीराम० वाक्यम्)

नासापथसमाकृष्टः पवनः फुप्फुसं गतः ।
शोधयेच्छोणितं दुष्टं तेन जीवंति जंतवः ॥ १ ॥
सोहंशब्देन जीवानां श्वासोच्छ्वासौ निरंतरम् ।
स्यातां वा हंसशब्देनोच्छ्वासश्वासौ विपर्य्ययात् ॥ २ ॥
इत्ययं द्यक्षरो मंत्रो जीवजप्योऽजपा मता ।
जपारंभो हि जननं मरणं तत्समापनम् ॥ ३ ॥

इसी अजपा मंत्र को अजपा गायत्री कहते हे ।

एकविंशतिसाहस्रं षट्शताधिकमीश्वरि ।
जपते प्रत्यहं प्राणी सान्द्रानन्दमयीं पराम् ॥ ४ ॥
विना जपेन देवेशि जपो भवति मन्त्रिणः ।
अजपेयं ततः प्रोक्ता भवपाशनिकृंतनी ॥ ५ ॥ (दक्षिणामूर्तिसंहिता)
अजपा नाम गायत्रीं जीवो जपति सर्वदा ।
षट् शतानि दिवारात्रौ सहस्राण्येकविंशतिः ॥ १ ॥
एतत्सङ्ख्यान्वितं मंत्रं हंसः सोहं क्रमेण वै । (कुलार्णव)
जातः स इति वैशब्दमुच्चार्यारभते जपम् ।
महाप्रयाणसमये हमुच्चार्य समापयेत् ॥ १ ॥ (दक्षिणामूर्तिसंहिता)

यह अजपा जप तो स्वाभाविक रीत्या अहर्निश होता ही रहता है, परंतु यही अजपा जप राममंत्र के सहित जपने से फलदायक होता है ।

ओऊं सोऊं ऊंवरा, दोऊ खाली ओड़ ।
नाम विना ऊगै नहीं, पच पच मरो करोड़ ॥ (रज्जवजी)
ओऊं सोऊं देह लग, निशि दिन आवे जाय ।
एक अखंडी शब्द में, हरिया सुरति समाय ॥ १ ॥

अर्थात् हंसः सोहं यह श्वासोच्छ्वास शब्द, शरीर है तबतक रात दिन आता जाता रहता है, इसी के द्वारा एक अखंडी शब्द जो ररंकार आत्मा से वाचक शब्द है उसमें सुरति समाय दो यानी समावेश करदो—

मम्मा हुय पासै कमल विकासै अध नाम आखदा है।
ऊ नामज केवल बडे महारल रोम रोम उचरदा है ॥ ६ ॥

जिससे राम राम शब्द जो मैं जपताथा उसमें से मकार बोल्ना बंद होगया अर्थात् माया से रहित अद्वैतरूप अर्धनाम जो केवल रकार है उसी रकार का (रॉं रॉं रॉं रॉं रॉं रॉं) स्मरण होने लग गया नाभिकमल का विकास होगया जिससे शुद्ध निर्गुण (मायारहित) पार परब्रह्म का दर्शन हुवा तब महानल्शाली अर्धनाम रकार जो अद्वैतरूप है केवल उसी का उच्चारण रोम रोम में होरहा है ऐसा मालुम होने लगा ॥ ६ ॥

रहता से रत्ता है निज तत्ता न्यारा हुय निरखदा है।
ऐसा अविनासी थाय न जासी भाग वंडे मेटदा है ॥ ७ ॥

यह रकार का स्मरण इस शरीर में रहनेवाले आत्मामें रत (लवलीन) होने से निज तत्व रूप होजाने के कारण न्यारा होकर देखने लग गया अर्थात् द्रष्टा होकर अपने आपको देखने लगा, जिस परब्रह्मको अलग होकर देखने लगा वह परब्रह्म ऐसा अविनाशी है जो न तो कहीं से आता है न कहीं जाता है अपने में ही सदा सर्वदा विराजमान रहता है उस परब्रह्म की भेट बडे महाभाग्य होते हैं तब ही होती है ॥ ७ ॥

ओऊ सोऊ शब्द की सहजाँ सुणी अवाज।
जन हरिया इन ऊपरै ररंकार का राज ॥ १ ॥
ओऊ सोऊ शब्द की, तीन लोक लग सोय।
जन हरिया ररंकारका, आर पार नहिं कोय ॥ २ ॥ (श्रीहरि वाक्यम्)

अजपाजपनिष्कृष्ट लक्षण—

मन पवना अरु सुरति से, आतम पकडे आप।
रज्जब लावे सुरति सो, एढे अजपाजाप ॥ १ ॥ (रज्जबजी)
अजराजाप लगावे हेत नीरक्षीर न्यारा करिदेत।
विष छाडे अमृत कू पीवे समझ पिछाणे सुमरिण साच।
अन्तर एक राम सुख राखे, और सकल सुख माने काच ॥
(श्रीजमल्दासजी महाराज)

१ मनुष्याणां सहस्रेषु कश्चिद्यतति सिद्धये।
यततामपि सिद्धानां कश्चिन्मां वेत्ति तत्त्वतः ॥ १ ॥
बहूनां जन्मनामन्ते ज्ञानवान्मां प्रपद्यते।
वासुदेवः सर्वमिति स महात्मा सुदुर्लभः ॥ २ ॥ (गीता)

रेचक अरु पूरक कर विन कुंभक आप उलटि पलटंदा है।
विना हाथ की सहायता के जब आपसे आप स्वयं बॉये से दहिना और दहिने से बाँई तरफ उलट पुलट रेचक पूरक होकर कुंभक होने लगता है, अथवा रेचक और पूरक के करे विना "केवल कुंभक" ही होने लगे।

प्राणायामः—

प्राणायामस्त्रिधा प्रोक्तो रेचपूरककुंभकैः।
सहितः केवलश्चेति कुंभको द्विविधो मत.॥ १॥
यावत्केवलसिद्धिः स्यात्सहितं तावदभ्यसेत्।
रेचकं पूरकं मुक्त्वा सुखं यद्वायुधारणम्॥ २॥
न रेचको नैव च पूरकोऽत्र नासापुटे संस्थितमेव वायुम्।
सुनिश्चलं धारयते क्रमेण कुंभाख्यमेतत्प्रवदंति तज्ज्ञाः॥ ३॥

(हठयोगप्रदीपिका)

अर्थात् जबतक "केवल कुंभक" सिद्ध न हो तबतक रेचक पूरकादि क्रिया करके कुंभक का अभ्यास करता रहै, जब रेचक और पूरक के विना ही स्वय वायु नासापुट में ही सुनिश्चल स्थिर होकर कुंभक होजावे उसको केवल कुंभक कहते हैं, यह जिसके सिद्ध हो जाता है उसको—

कुंभके केवले सिद्धे रेचपूरकवर्जिते।
न तस्य दुर्लभं किंचित्त्रिषु लोकेषु विद्यते।
शक्तः केवलकुंभेन यथेष्टं[1] वायुधारणात्॥
राजयोगपदं चापि लभते नात्र संशयः।
कुंभकात् कुंडलीबोधः कुंडलीबोधतो भवेत्॥
अनर्गला सुषुम्ना च हठसिद्धिश्च जायते।
हठं विना राजयोगो राजयोगं विना हठ.॥
न सिध्यति ततो युग्ममानिष्पत्तेः समभ्यसेत्।

पान लोक में कुछ भी दुर्लभ नहीं होता है। जो केवल कुंभक करने को समर्थ हो जाता है और जो यथेष्ट वायु धारण कर सकता है वह राजयोग के पदको प्राप्त होता है इसमें किसी प्रकार का संदेह नहीं। कुंभक से कुंडली का प्रबोध होता है और कुंडली के प्रबोध होनेसे सुषुम्ना सरल हो जाती है जिसमें हठयोग की सिद्धि हो जाती है।

---

1 स्पर्शान्कृत्वा बहिर्बाह्यांश्चक्षुश्चैवांतरे भ्रुवोः।
प्राणापानौ समौ कृत्वा नासाभ्यंतरचारिणौ॥
यतेंद्रियमनोबुद्धिर्मुनिर्मोक्षपरायणः।
विगतेच्छाभयक्रोधो यः सदा मुक्त एव स.॥ (श्रीमद्भगवद्गीता)

त्राटक हुय ध्यानू वात विज्ञानू आपा पट खूलदा है ॥ ८ ॥

त्राटक (विना पलक झपकाये एक सरीखे नेत्र किसी सूक्ष्म लक्ष्य की ओर जमाकर एकाग्र अनन्य भाव का चित्त हो) ध्यान करने से विज्ञान (भूतभविष्यवर्तमानज्ञान) प्राप्त होता है तब अपने आपका पडदा खुल जाता है और अपने आपको पहिचानने लग जाता है। अर्थात् "अहं ब्रह्मास्मि" ज्ञान होजाता है।

सुखमण की घाटी चढियावाटी अरसघरा ठहरदा है।

उपरोक्त प्रकार से प्राण वायु का कुंभक एकाग्रता से रकार रटण पूर्वक होता हुवा सुषुम्णा की महाघाटी के पथ में जब प्राणवायु अपानवायु के

१ त्रांटक —

निरीक्षेन्निश्चलदृशा सूक्ष्मलक्ष्यं समाहितः ।
अश्रुसंपातपर्यन्तमाचार्यैस्त्राटकं स्मृतम् ॥ १ ॥
मोचनं नेत्ररोगाणां तन्द्रादीनां कपाटकम् ।
यत्नतस्त्राटकं गोप्यं यथा हाटकपेटकम् ॥ २ ॥ (हठयोगप्रदीपिका)

अर्थात् इधर उधर नहीं देखते हुए विना पलक झपकाये निश्चल दृष्टि से किसी लक्ष्य को एकाग्र चित्त होकर जब तक नेत्रों में से पानी टपकने न लगजाय तब तक देखते रहने को आचार्यों ने त्राटक कहा है। यह त्राटक नेत्र के सब रोग को और तंद्रा आदि को मिटाने वाला यत्नपूर्वक गुप्त रखनेयोग्य है।

शुचौ देशे प्रतिष्ठाप्य स्थिरमासनमात्मनः ।
नात्युच्छ्रितं नातिनीचं चैलाजिनकुशोत्तरम् ॥ ११ ॥
तत्रैकाग्रं मनः कृत्वा यतचित्तेन्द्रियक्रियः ।
उपविश्यासने युञ्ज्याद्योगमात्मविशुद्धये ॥ १२ ॥
समं कायशिरोग्रीवं धारयन्नचलं स्थिरः ।
संप्रेक्ष्य नासिकाग्रं स्वं दिशश्चानवलोकयन् ॥ १३ ॥
प्रशान्तात्मा विगतभीर्ब्रह्मचारिव्रते स्थितः ।
मनः संयम्य मच्चित्तो युक्त आसीत मत्परः ॥ १४ ॥
युञ्जन्नेवं सदात्मानं योगी नियतमानसः ।
शान्तिं निर्वाणपरमां मत्संस्थामधिगच्छति ॥ १५ ॥

(भगवद्गीता अध्याय ६)

२ सुषुम्णा —इडा और पिंगला नाडी के मध्य में सुषुम्णा है।

1 कितनेक ललाट देशमें प्राण निरोध करने को भी त्राटक कहते हैं।

दोहा।

इला चंद रवि पिंगला, मध सुखमण का घाट।
हरिया गुरु परसाद ते, खुला सहज कपाट ॥ १ ॥ (श्रीहरि० वाक्यम्)

इडा भगवती गगा, पिंगला यमुना नदी।
तयोर्मध्ये प्रयागस्तु यस्तं वेद स वेदवित् ॥ १ ॥ (बृहत्सामब्राह्मण)

सुषु इत्यव्यक्त शब्दं म्नायति म्ना-कः मेरुदंड वाह्ये इडा पिंगला नाड़ी मध्यस्थ नाड़ीविशेषः।

मेरोर्बाह्यप्रदेशे शशिमिहिरशिरे सव्यदक्षे निषण्णे।
मध्ये नाड़ी सुषुम्ना त्रितयगुणमयी चंद्रसूर्याग्निरूपा ॥ १ ॥
(शब्दकल्पद्रुम)

मेरुबाह्ये इडा नाड़ी पिंगला या समन्विता।
सुषुम्ना भानुमार्गेण ब्रह्मद्वारावधिस्थिता ॥ १ ॥ (योगस्वरोदय)

नाडीर्दश विदुस्तासु मुख्यास्तिस्रः प्रकीर्तिताः।
इडा वामे तनोर्मध्ये सुषुम्णा पिंगला परे ॥
मध्या तास्वपि नाड़ी स्यादग्निसोमस्वरूपिणी ॥ १ ॥

अत्रेडा वामवृक्काधःस्था धनुर्वक्रा वामनासापर्यंतगता, एवं पिंगला दक्षिणांडाधःस्था धनुर्वक्रा दक्षिणनासांतं गता, पृष्ठवंशांतर्गता सुषुम्णा इत्यर्थः। (शारदातिलक)

तात्पर्य यह है कि, मेरुदंड के वाहर के वॉये भागमें इडा नाम की नाड़ी बाये अंड के मूलसे निकलकर धनुष के समान टेढी होकर वामनासा के अंतपर्यंत गई है, एवं दक्षिण अंडके मूलसे निकलकर धनुषके समान टेढी होकर मेरुदडके दक्षिणभागमें रहकर पिंगलानामकी नाड़ी दक्षिणनासिका के अतपर्यंत गई है, और इन दोनों (चंद्र-सूर्यस्वरूपिणी) इडा पिंगला नाड़ी के मध्यमें (मेरुदड के बीचमें अर्थात् मेरुदंड के भीतर के मध्यभागमें अग्निरूपिणी सुषुम्नानाडी मूलाधार से निकलकर ब्रह्मद्वारपर्यंत गई हुई है, यह नाड़ी त्रिगुणात्मिका चद्रसूर्याग्निरूपा है। मेरुदंड को ही पृष्ठवंश कहते है। इसी पृष्ठवंश के भीतर के भागमें सुषुम्णा नाड़ी रहती है और वाहर के भागमें वॉई थोर इड़ा दहिनी और पिंगला नाम की नाडिये आजु वाजु मिली हुई रहती हैं। इन्हीं तीनों नाड़ियों को गंगा यमुना और प्रयाग भी कहते हैं।

सुषुम्णा को पश्चिमद्वार अथवा वंकनाल अग्निरूपिणी भी कहते हैं। इसके और भी कई नाम शास्त्रों में इस प्रकार कहे हैं—

सुषुम्ना शून्यपदवी ब्रह्मरंध्र महापथः।
श्मशानं शांभवी मध्यमार्गश्चेत्येकवाचकाः ॥ १ ॥

इस सुषुम्णा नाड़ी के विषय में विशेष विवेचन इस प्रकार है—

मस्तिष्क का रूप कछुए की खोपड़ी के समान है इस में श्वेत रङ्ग के समान चरबी की गिल्लियां बारीक झिल्लियों में लिपटी हुई भरी हैं जिनको मेजा कहते हैं। इसके चौड़ाई में दो भाग नारंगी की फाकों की समान हैं और लम्बाई में भी दो भाग हैं। सामने का भाग पेशानी की तरफवाला डाक्टरीमें (CERBRUM) सेरीबर्म कहलाता है और पिछला भाग (CEPEBLLUM) सेरीब्लम कहलाता है। यह पिछला भाग पतला होता हुआ बारीक सूतकी तरह रीढ की हड्डी में फला हुआ है। जिसको हराम मगज कहते हैं। इस रीढ की हड्डीमें शरीर की सम्पूर्ण शक्तियों और प्रत्येक प्रकार के स्नायुओं के केंद्र हैं। सम्पूर्ण केंद्रों में गाठ लगी हुई है जिससे मनुष्य अपनी शक्ति को प्रयोग में नहीं ला सकता। कुंडलिनी नाम केंद्र यदि जगाया जावे तो यह जोर में भरकर इन गाठों को तोड़ सकता है क्योंकि जीवात्मा इसी में लिपटा हुआ अचेत रहता है जो इच्छाओं की व कर्मोंकी जञ्जीर में बंधकर शरीर के अंदर कैद है। शरीर में ऐसे आत्मिक केंद्र तो बहुत हैं परन्तु इनमें से छः अधिक विख्यात हैं जो षट्चक्र कहलाते हैं। डाक्टरों की सम्मति में ये वे स्थान हैं जहां किसी प्रकार के स्नायु के गुच्छे आकर इकट्ठे होते हैं और जहां अत्यन्त अधिक बल दूसरे अंगों की अपेक्षा इकट्ठा रहता है और इनमें प्रतिसमय शक्ति भरी और बहती रहती है।

रीढ की मेरुदंड (SPINAL CORD) स्पाइनल कोड में जो हराम मगज भरा है उसके बीचों बीच बाल के बराबर बारीक नाली मस्तिष्क से लेकर नीचे गुदातक चली गई है जिसको अंग्रेजीमें (CANAL OF SPINE) केनाल आफ स्पिन और संस्कृत में सुषुम्ना कहते हैं यह रस तेजी से भरी हुई है और यही स्थान शक्ति व जिंदगी का घर है। और जिस प्रकार बंत में गांठ होती है इसी तरह इस में षट्चक्रों का स्नायु केंद्र है और इनके स्थान की ठीक पहिचान यह है कि इस स्थान के सामने शरीर में जरासा गड्ढा व खाली स्थान अवश्य होता है। (षट्चक्रों का विशेषवर्णन षट्चक्रवर्णन के प्रसंग में आगे लिखने में आयगा)। इड़ा नाम की नाड़ी सुषुम्ना के बाई तरफ होती हुई आज्ञाचक्र तक आती है फिर वहां से मुड़कर सीधे नथने में पहुंचती है। और पिंगला सुषुम्ना के सीधी तरफ लिपटी हुई आती है फिर वहां से मुड़कर बांये नथने में जाती है। सुषुम्ना रीढ के भीतर होकर जाती है। इसके मध्यमें खाली स्थान है जिसको चित्रा कहते हैं इसी में आत्मा रहता है। इस नाड़ीके छ दरजे हैं जिनमें केवल पांच साधारणतया प्रगट किये जा सकते हैं। डाक्टरी मत में तो नाड़ियों रुधिर ले जानेका काम करती हैं परंतु योगशास्त्र में ऐसा माना है कि वे वायु और शक्ति भी ले जाती हैं। यह गिनती में सब चौदह हैं परंतु इनमें से उपरोक्त (इड़ा पिंगला सुषुम्ना) तीन अधिक विख्यात और आवश्यकीय हैं। यह नाड़ियाँ बारीक सूतके समान स्नायु हैं जो कि हड्डियों से निकलती हैं। योगी का अभीष्ट यह होता है कि रीढ की नाड़ी अर्थात् सुषुम्ना को स्वच्छ रक्खे जिससे तेजी की लहर बराबर जारी रहे और सम्पूर्ण केंद्र स्वतंत्र और दृढ रहें जिससे इच्छानुसार काम दे सकें।

साथ मिलकर सुषुम्णा नाड़ी के मार्ग में चढा तव अरसघर (शून्यस्थान) में जाकर ठहरा।

फिरिया मन पूरव चले अपूरव ठाम ठाम ठमकंदा है॥ ९॥

तत्पश्चात् पूर्व से मन फिरकर कंठ हृदय नाभि में क्रमसे ऊपर से नीचे स्थान २ पर श्वास ठहरता हुवा (स्थिर होता हुवा) पश्चिम के तरफ यानें सुषुम्णा मार्ग के द्वार की ओर चलने लगा॥ ९॥

जालंधेर वंधा उरधे कंधा मन अरु पवन मिलंदा है।
उलट्या है आसण पलट्या वासण सुरत शब्द परसंदा है॥१०॥

कंधे के ऊपर का जालंधर वंध करने से प्राणवायु की ऊर्ध्वगति रुक जाती है और पश्चिमतानसे ब्रह्मनाड़ी में जाने लगता है। तथा मूलवंध करने से अपानवायु उलटकर ऊर्ध्व गामी होता है एवं जालंधरवंध और मूलवंध करने पर प्राण अपान वायु के आसन उलट पुलट होने के कारण दोनों मिलजाने से सुरत शब्द का स्पर्श हुवा।

इस प्रकार सुषुम्ना के स्वरूप का वर्णन योगशास्त्र में किया हुआ है। इस परसे सुषुम्ना का मार्ग कितना अधिक कठिन है यह सहज ही ध्यान में नहीं आसकता है। इसी अति कठिन मार्ग की घाटी को अर्थात् गांठे बीच बीचमें जो आडमारनेवाली हैं उन को लांघ के छेदन करके प्राण की गति जव सुषुम्ना मे होती है तव शनैः शनैः ठहरता हुवा ब्रह्मद्वार पर त्रिकुटी में पहुंचता है।

प्रथम ध्यान पूरब दिशा, गगन गर्जिया जाय।
ठाम ठाम पाताल कूं, पछे पिछम कूं थाय॥ १॥

१ वंध तीन प्रकार के होते हैं जालंधर, मूल, और उड्डियान।

१ जालंधर वंधः-

कंठको सिकोड़ कर मजबूती से चिवुक अर्थात् ठोडीको हृदय में जमा के सीधा बैठने को जालंधर वंध कहते हैं।

कंठमाकुंच्य हृदये स्थापयेच्चिवुकं दृढम्।
वंधो जालंधराख्योऽयं जरामृत्युविनाशक॥ १॥
है जालधर वंध में, मन पवना की गांठ।
हरिया मिल्या उतान में, सुरत शब्द की सांठ॥ १॥
सुरत चली आकाश कूं, दे जालंधर वंध।
जन हरिया जहां जाणिये, हद वेहद की संध॥ २॥

वहती वंकनाडी खुली किवाडी भँवरगुफा भणकदा है।
उलट्या मेरा गुरुमिलचेरा चहुँ चकडोल फिरदा है ॥ ११ ॥

चलती हुई वक नाडी (सुषुम्ना) की किवाडी खुलगई (सुषुम्ना नाडी का द्वार खुलगया) जिससे भँवर गुफा (ब्रह्मरन्ध्रस्थान) में पहुचने का

हरिया शब्द पयाल को चल्या गगनतें होय।
नव जालधर बध को, विरला जाने कोय ॥ ३ ॥
(श्रीहरि० वाक्यम्)

२ मूलबध –
एडी से योनिस्थान को दवाकर गुदाको संकोचकरे और नीचे जाने वाले अपान वायु को बलपूर्वक ऊपर खींचके चलाते रहने को मूलबध कहते हैं।

पार्ष्णिभागेन सपीड्य योनिमाकुचयेद्गुदम्।
अपानमूर्ध्वमाकृष्य मूलबधोऽभिधीयते ॥ १ ॥
अधोगतिमपान वा ऊर्ध्वंग कुरुते बलात्।
आकुचनेन त प्राहुमूलबध हि योगिन ॥ २ ॥

३ उड्डियानबध –
नाभी के ऊपर के भागको पीठ की ओर खींचके चिपका रखने को उड्डियानबध कहते हैं।

उदरे पश्चिम तान नाभेरूर्ध्वं च कारयेत्।
उड्डियानो ह्यसौ बधो मृत्युमातगकेसरी ॥ १ ॥
मूलस्थान समाकुच्य उड्डियान तु कारयेत्।
इडा च पिगला बध्वा वाहयेत्पश्चिमे पथि ॥ २ ॥
बधत्रयमिद श्रेष्ठ महासिद्धैश्च सेवितम् ॥ ३ ॥

इन तीनो बधों के करने से सुषुम्णामार्ग में दोनों वायु का गमन होजाता है।

मूलबधादपानस्य गतिरूर्ध्व प्रजायते।
जालधरात्तथा प्राणस्त्वधोगामी भवेत्पुन ॥ १ ॥
प्राणापानौ मिलित्वाऽथ सुषुम्नावदनांतरे।
उड्डियानेन बधेन विशतो नात्र सशय ॥ २ ॥
एवमभ्यासतो नित्य कुभकस्य निरंतरम्।
ब्रह्मरंध्र प्रविश्याथ प्राणो भवति निश्चल ॥ ३ ॥ (मोक्षगीता)

मूलबधसे अपान वायु की ऊर्ध्वगति होती है और जालधरबधसे प्राणकी अधोगति होती है एव दोनों प्राण अपान मिलके सुषुम्ना के मुखके भीतर उड्डियान बध के करने स नि संशय प्रवेश होते हैं। इस प्रकार नित्य कुभक करने का अभ्यास निरंतर करते रहने से प्राण ब्रह्मरंध्र में प्रवेशकर निश्चल होजाता है।

ज्ञान होगया । तत्पश्चात् जालंधर बंध और मूलबंध के करने से प्राणवायु अपानवायु से मिलके उड्डियान बंधद्वारा सुषुम्ना नाडी के खुले हुए द्वार में प्रवेश करगया । उड्डियानबंध के अभ्यास से प्राण को कहीं जाने का मारग नहीं मिला अतः वह पीठ की तरफ से मेरुदंड मध्यस्थित सुषुम्ना के मेरु को उलंघ कर गुरु चेला दोनों (प्राण अपान वा प्राण मन) मिलके च्यारों तरफ चकडोल (नीचेसे ऊपर ऊपरसे नीचे) चक्र के समान फिरने लगे । अर्थात् तीनों प्रकार के बंधनों के साधनद्वारा कुंडलिनी जागृत हो जो अपने मुखसे सुषुम्ना के मार्ग को रोक रखा है उस को खुला करदेती है और प्राण अपान दोनों मिलके उस सुषुम्ना के विवर में प्रवेश कर नीचे से ऊपर और ऊपरसे नीचे फिरने लगते हैं ।

पट्चकर भेद्या भवदुख छेद्या साँसा शोक नसंदा है ॥
गरजत है गेणूं वरजतवेणूं सरवर शून्य वसंदा है ॥ १२ ॥

---

१ षट्चक्रः—

१ मूलाधार २ उपस्थ ३ नाभिमूल ४ हृदय ५ तालुमूल ६ ललाट इन छः स्थानों में एकत्रित हुए स्नायुसमूह मूल के केंद्रों को षट्चक्र कहते हैं ।

आधारे लिंगनाभौ प्रकटितहृदये तालुमूले ललाटे
द्वे पत्रे षोडशारे द्विदशदशदले द्वादशार्धे चतुष्के ।
वासांते बालमध्ये डफकठसहिते कंठदेशे स्वराणां
हंक्षंतत्त्वार्थयुक्तं सकलदलगतं वर्णरूपं नमामि ॥ १ ॥

षट्चक्रों का कोष्ठक ।

संख्या	नामचक्र	स्थान	पद्मपत्र-संख्या	वर्ण	शक्ति	मतांतर
१	मूलाधार	मूलाधार	४	व से स पर्यंत.	उत्पत्तिशक्ति.	अधःशक्ति.
२	स्वाधिष्ठान	लिंग	६	ब से ल ,,	ब्रह्मा	शिव
३	मणिपुर	नाभि	१०	ड से फ ,,	विष्णु	
४	अनहद	हृदय	१२	क से ठ ,,	महादेव	ब्रह्मा
५	विशुद्ध	तालुमूल	१६	स्वर सोलह	दुर्गा	सुषुम्णा
६	आज्ञा	ललाट	२	ह क्ष	शून्यस्थान	

सहस्रारचक्र (सहस्रदल) यह सातवां चक्र है इसका ब्रह्मरंध्र स्थान है इसके सहस्र १००० दल हैं और परमपद इसकी शक्ति है । इनके उपरात किसी किसी ने सूर्यचक्र और मनश्चक्र नामक २ चक्र और माने हैं ।

शरीरस्थ पद्माकार षट्प्रकारचक्रम्।

सप्त पद्मानि तत्रैव सन्ति गेहा इव प्रभो ।
१ गुदे पृथ्वीसम चक्र हरिद्वर्ण चतुर्दलम् ॥ १ ॥
२ लिंगे तु षट्दल चक्र स्वाधिष्ठानमिति स्मृतम् ।
त्रिकोणवह्निनिलय तप्तचामीकरप्रभम् ॥ २ ॥
३ नाभौ दशदल चक्र कुण्डलिन्या समन्वितम् ।
नीलाञ्जननिभ ब्रह्मस्थानपूर्वकमन्दिरम् ॥ ३ ॥
मणिपूराभिध स्वच्छ जलस्थान प्रकीर्तितम् ।
४ उदयादित्यसकाश हृदिचक्रमनाहतम ॥ ४ ॥
धुम्रकाख्य द्वादशारं वष्णव वायुमन्दिरम् ।
५ कंठे विशुद्धिशरण षोडशारं पुरोदयम् ॥ ५ ॥
शाम्भवी वरचक्राख्य चन्द्रबिंदुविभूषितम् ।
६ षष्ठमाज्ञाख्य चक्र द्विदल श्वेतमुत्तमम् ॥ ६ ॥
षट्चक्राणीह भेदानि नैतद्वेद्य कथचन ।
राधाचक्रमिति ख्यात मन स्थान प्रकीर्तितम् ॥ ७ ॥
७ सहस्रदलमेकाग्र परमात्मप्रकाशकम् ।
नित्यज्ञानमय सत्य सहस्रादित्यसन्निभम् ॥ ८ ॥

पहिला—मूलाधार चक्र=यह रीढ की हड्डी के आखीर या सबसे नीचेवाला स्थान है जो गुदा का कमल भी कहलाता है इसको अंग्रेजी में SACRAL PLEXUS सेक्रे प्लेक्सस कहते हैं। योगी लोग इसको सूरज का स्थान कहते हैं। इसमें सत-रज-तम तीनों का भंडार समझते हैं। इसीपर सपूर्ण जीवन निर्भर मानते हैं। इस स्थान पर कुंडलिनी देवी साढे तीन आंटे देके लिपटी है जो उत्पत्ति की शक्ति रखती है। इसका चक्र पृथ्वी के समान हरे रंग का है इसमें चतुर्दल कमल है उनमें व, श, ष, स ये चार वर्ण हैं इसको ब्रह्मचक्र भी कहते हैं।

दूसरा—स्वाधिष्ठान नाम का चक्र है=यह उपस्थ इंद्री के ऊपर दबाने से जो खाली स्थान ज्ञात होता है इसके ठीक सामने रीढ की हड्डी में है यह कमल छ दल का है, इसमें ब भ, म य र ल ये छ व्यञ्जनाक्षर हैं इसको ब्रह्मा का स्थान बतलाते हैं। कोई कोई शिव का स्थान भी कहते हैं। यह संपूर्ण ससार का उत्पन्न कर नेवाला है और यही त्रिलोक में अग्नि का स्थान है और तपाये हुए सुवर्ण के समान रंगवाला है।

तीसरा—मणिपुर नाम का चक्र है=यह नाभि के मुकाबले में है, इसको अंग्रेजी में SOLAR PLEXUS सोलर प्लेक्सस कहते हैं। इसमें दशदल का कमल चक्र है। जिनमें ड, ढ, ण, त थ, द, ध न, प, फ, ये दश अक्षर क्रम से विराजमान हैं

यह विष्णु का स्थान है और नील कमल के समान घनश्याम वर्ण का है इस को स्वच्छ जल का स्थान और ब्रह्मस्थान भी कहते हैं।

चौथाः—अनाहत नाम का चक्र है=इसको अंग्रेजी में OARDIAE PLEXUO कार-डिये प्लेक्सेस कहते हैं। यह छाती के मध्यमें जो गड्डा कौडी कहलाता है उसके मुकाबिले में है और महादेव का स्थान है, इस में द्वादश १२ दल का कमल है, बारहों दलों में क्रमसे क, ख, ग, घ, ङ, च, छ, ज, झ, ञ, ट, ठ, ये बारह वर्ण हैं, इसका रंग उदय होते हुए सूर्य के समान है. और इसको कुंभक स्थान वायु का स्थान तथा विष्णु का स्थान भी कहते हैं। कितनेक इसको ब्रह्मा का भी स्थान कहते हैं।

पाँचवाँः—विशुद्धि नाम का चक्र है यह गले में हँसली की हड्डी के ऊपर जो गड्ढासा है इसके मुकाबिले में है । इसमें सोलह १६ दल का कमल है जिनमें क्रमसे सोलह ही स्वर अनुस्वारयुक्त विराजमान हैं (अं, आं, इं, ईं, उं, ऊं, ऋं, ॠं, लृं, लॄं, एं, ऐं, ओं, औं, अं, अः,)इसको दुर्गाका स्थान कई पार्वतीपति का स्थान तथा सुषुम्नाका स्थान भी कहते हैं। यह महत्प्रभ धूम्रवर्ण का है, कितनेक शुक्ल वर्ण का भी कहते हैं। यह जीव की विशुद्धि करने वाला है। कंठ में सुषुम्ना, इडा, पिंगला इन तीनों नाडियों का वेष्टन, मनुष्यों के रहता है। यह षट्कोण आकृतिका और छः अंगुल प्रमाण का है।

छठाः—आज्ञा नाम का चक्र है=यह दोनों भ्रुवों के मध्यमें नाक की जड के स्थान पर है। यहा इडा, पिंगला, सुषुम्ना इन तीनों नाडियों का प्रांत आकर मिला है इस कारण इस को त्रिपथ स्थान कहते हैं। यह षट्कोणाकृति चार अंगुल का रक्तवर्ण है। इसमें दो दल का उत्तम श्वेतवर्ण का कमल है इसमें ह और क्ष इन दो अक्षरों का निवास है। इसको राधाचक्र तथा मनका स्थान व शून्य स्थान अथवा शून्य सरोवरभी कहते हैं। इसका ध्यान करने से वायु, जल, अग्नि पर अधिकार होता है, भय जाता रहता है और कर्म के बंधन से छूट जाता है।

सातवाँ.—सहस्रदल कमल चक्र का स्थान वह है=जो ईश्वरी ज्ञान से संबंध रखता है जिसका वर्णन करना जिह्वा और लेखनी से बाहर है, परंतु कुछ योगीजन ऐसा कहते हैं। कि तालू के ऊपर एक सहस्रदल का कमल है जिसमें चन्द्रमा का स्थान है और जो सुषुम्ना की जड है, इसीके ऊपर ब्रह्मरंध्र है इस चंद्रमा से प्रतिसमय अमृत वर्षा होती रहती है, जिसकी दो धार होकर नीचे सूरज के स्थान तक जाती है, एक रीढ की बाँई ओर को जो इडा कहलाती है. दूसरी रीढके अंदर होकर जो सुषुम्ना कहलाती है। रीढ के नीचे का केंद्र जो सूर्यस्थान कहलाता है, इसमें से एक आतशी किरण निकलती है जो सीधी होकर ऊपर चढती है मानों स्नायु शक्ति की लहर बाईं ओर से सीधी ओर को प्रतिसमय जाती और चक्कर लगाती रहती है। मूलाधार कमल से एक प्रकार का विष निकलता है। जो सीधे नथने में आता है और नाशकारी है, परंतु उसको चंद्र का अमृत प्रभावित करता रहता है,इसीसे उसका

असर ज्यादा रहता है। सहस्रदल पद्म एक महासागर के समान है इसमें परमात्म तत्व का प्रकाश हो रहा है जो नित्य ज्ञानमय सत्यस्वरूप एक हजार सूर्य के प्रकाश से तुल्य प्रकाशवाला है यही ब्रह्मस्थान है इसी को परमपद स्थान कहते हैं, इसमें जो योगी अपनी योगसाधन क्रियाद्वारा पहुंचजाता है वह परमपद को प्राप्त होजाता है और जन्म मरण से रहित होजाता है। यद्गत्वा न निवर्तते तद्धाम परमं मम"।

इस प्रकार के ये षट्चक्र हैं इनको भेदकर जो सातवें ब्रह्मरंध्र चक्र में पहुँच जाता है उसको कुछभी कष्टसाध्य नहीं रहता है।

मूलाधार चक्र की विवेचना—पीछे कह आये हैं कि छ स्थानों में एकत्रित हुए वायुसमूह मूलके केन्द्रों को षट्चक्र कहते हैं।

वायु (नाड़ी) समूह ७२००० बहत्तर हजार हैं इनमें से २४ मुख्य हैं। इनमें से भी १० मुख्य हैं।

> नाडीनां संवहो देवि कन्दयोनि समाश्रयः।
> तत्र नाड्यः समुत्पन्नाः सहस्राणां द्विसप्तति ॥ १ ॥
> प्रधाना दशवाहिन्या भूयस्तत्र दश स्मृता।
> ईडा च पिंगला चैव सुषुम्ना च तृतीयका ॥ २ ॥
> गांधारी हस्तिजिह्वा च पूषा चैव यशस्विनी।
> अलम्बुषा कुहूश्चैव शंखिनी च दश स्मृता ॥ ३ ॥
> एवं नाडीमयं चक्रं विज्ञेयं शक्तिचक्रके।
> इडाया पिंगलायाश्च मध्ये या सा सुषुम्निका ॥ ४ ॥
> इयं च त्रिगुणा ज्ञेया ब्रह्मविष्णुशिवात्मिका।
> रजोगुणा च वज्राख्या चित्रिणी सत्वसंयुता ॥ ५ ॥
> तमोगुणा ब्रह्मनाडी कथ्यतेऽवरोध च ॥

(निरुत्तरतंत्र)

तात्पर्य यह है कि बहत्तर हजार नाड़ियों में इडा १ पिंगला २ सुषुम्ना ३ गांधारी ४ हस्तिजिह्वा ५ पूषा ६ यशस्विनी ७ अलम्बुषा ८ कुहू ९ शंखिनी १० ये दश नाड़ी और इनके अतिरिक्त वज्रा ११ चित्रिणी १२ और ब्रह्मनाडी १३ कुण्डली मुख्य नाड़ियें हैं, इनमें इडा पिंगला के मध्य में त्रिगुणात्मिका सुषुम्ना रहती है, यह ब्रह्म विष्णु शिवात्मिका है। सुषुम्ना के मार्ग को रोके हुए कुण्डलिनी नाड़ी स्थित है। वज्रा इसी के मध्य में और चित्रिणी (चित्रा) सुषुम्ना के मध्यमें खाली स्थान में रहती है। इन नाड़ीसमूहों में जब तक कुण्डलिनी नाड़ी जाग्रत न हो तब तक सब योगसाधन वृथा के समान ही होता है। जब यह कुण्डलिनी नाड़ी जाग्रत होकर सुषुम्ना के द्वार को खोल कर सरल हो सुषुम्ना में प्रवेश करती है तब योगसाधन होता है। इसलिये प्रथम

का प्रथम चक्र है इसमें कुण्डलिनी का निवास रहता है वह

प्रकार है—

कुंडली को कुंडलिनी, कुंडली, कुटिलांगी, भुजंगी, नागन, बालरंडा, शक्ति, ईश्वरी, और अरुंधती नाम से भी पुकारते हैं।

गुह्यलिंगयोर्मध्ये अंगुलिद्वयमितस्थानं। तत्तु शरीरस्थसकलनाडीनां मूलस्थानं। अत्र व-श-ष-साक्षरयुक्तं स्वर्णवर्णं चतुर्दलपद्ममस्ति। तन्मध्ये इच्छा-ज्ञान-क्रिया-स्वरूपं त्रिकोणं वर्तते। तन्मध्ये कोटिसूर्यसमप्रभस्वयंभूलिंगमस्ति। अत्र पृथिवी वर्तते। तत्रैव मृणालसूत्रवत् सूक्ष्म-सार्धत्रिवलयाकार-स्वयंभूलिंगवेष्टितविद्युत्तुल्यप्रभ-कुल-कुंडलिनी वर्तते। यथा—

मूलाधारे त्रिकोणाख्ये इच्छाज्ञानक्रियात्मके।
मध्ये स्वयंभूलिंगं तु कोटिसूर्यसमप्रभम्॥
तद्बाह्ये हेमवर्णाभं वसवर्णं चतुर्दलम्॥ १॥ (इति तंत्रसारः)

अथाधारपद्मं सुषुम्नाख्यलग्नं ध्वजाधो गुदोर्ध्वं चतुःशोणपत्रम्।
अधोवक्त्रमुद्यत्सुवर्णाभवर्णैर्वकारादिसान्तैर्युतं वेदवर्णैः॥ १॥
अमुष्मिन्धरायाश्चतुष्कोणचक्रं समुद्भासि शूलाष्टकैरावृतं तत्।
लसत्पीतवर्णं तडित्कोमलांगं तदंतः समास्ते धरायाः स्वबीजम्॥ २॥

वज्राख्या वक्त्रदेशे विलसति सततं कर्णिकामध्यसंस्थम्
कोणं तत्त्रैपुराख्यं तडिदिव विलसत्कोमलं कामरूपम्।
कन्दर्पो नाम वायुर्निवसति सतत तस्य मध्ये समंतात्
जीवेशो बंधुजीवप्रकरमभिहसन् कोटिसूर्यप्रकाशः॥ ३॥

तन्मध्ये लिंगरूपिद्रुतकनककलाकोमलः पश्चिमास्यो
ज्ञानध्यानप्रकाशः प्रथमकिसलयाकाररूपः स्वयंभूः।
विद्युत्पूर्णेंदुबिंबप्रकरकरचयस्निग्धसतानहासी
काशीवासी विलासी विलसति सदिवावर्तरूप- प्रकारः॥ ४॥

अस्योर्ध्वे विषतंतुसोदरलसत् सूक्ष्मा जगन्मोहिनी
ब्रह्मद्वारमुखं मुखेन मधुरं साच्छादयंती स्वयम्।
शंखावर्तनिभा नवीनचपला माला विलासास्पदा
सुप्ता सर्पसमा शिरोपरिलसत् सार्धत्रिवृत्ताकृतिः॥ ५॥

(तत्त्वचिंतामणिः)

इत्यादि वचनों के भावार्थ पर से कुंडली मूलाधारस्थान में अर्थात् गुदा और लिंगके मध्यमें दो अंगुल प्रमाण का भगस्थान है, वह शरीरस्थ सकल नाडियों का मूलस्थान एक बालिस्त लम्बा और चार अंगुल चौडा शुभ्र और कोमल वेष्टनांबर (लपेटनेके वस्त्र) के समान (कंद) है। यहां चतुर्दल की आकृति का एक पद्म है उसमें चार दल हैं, उनमें व, श, ष, स, ये चार वर्ण स्वर्ण के तुल्य देदीप्यमान हैं। उस चतुर्दल पद्म में इच्छा ज्ञान क्रिया स्वरूप एक त्रिकोण है और यह पश्चिममुखी है अर्थात् पीछे

झरता रहता है। सहस्रदल पद्म एक महासागर के समान है इसमें अनन्त तत्त्व का प्रकाश हो रहा है जो शिव शक्तिमय सत्यस्वरूप एक हजार दल के प्रकट व मुख्य प्रकाशवाला है यही ब्रह्मद्वार है, इसी को परमपद स्थान कहते हैं, इसमें जो प्राणी अपनी योगसाधन क्रियाद्वारा पहुँचजाता है वह परमपद को प्राप्त होजाता है और आगमन से रहित होजाता है। 'यद्गत्वा न निवर्तन्ते तद्धाम परमं मम'।

इस प्रकार ये ही षट्चक्र हैं इनको भेदकर जो साधक ब्रह्मरंध्र चक्र में पहुँच जाता है उसको पुनर्जन्म नहीं रहता है।

मूलाधार चक्र की विशेषता—पीछे कह आये हैं कि छ स्थानों में वर्णित हुए मनुष्य शरीर के केन्द्रों को षट्चक्र कहते हैं।

नाड़ी (नाडी) समूह ७२००० बहत्तर हजार हैं उनमें से २४ मुख्य हैं। उनमें से भी १० मुख्य हैं।

नाडीनां प्रवहो यदि कन्दयोनिः खगाण्डवत्।
तत्र नाड्यः समुत्पन्नाः सहस्राणि द्विसप्ततिः ॥ १ ॥
प्रधाना दशनाड्यो भुजङ्गस्य दश स्मृता।
इडा च पिंगला चैव सुषुम्ना च तृतीयका ॥ २ ॥
गान्धारी हस्तिजिह्वा च पूषा चैव यशस्विनी।
अलम्बुषा कुहूश्चैव शंखिनी च दश स्मृताः ॥ ३ ॥
एवं नाडीमयं चक्रं विज्ञेयं शशिचक्रके।
इडायाः पिंगलायाश्च मध्ये या सा सुषुम्निका ॥ ४ ॥
इयं च त्रिगुणा ज्ञेया ब्रह्मविष्णुशिवात्मिका।
रजोगुणा च वज्राख्या चित्रिणी सत्त्वसंयुता ॥ ५ ॥
तमोगुणा ब्रह्मनाडी कार्यकारणरूपेण च ॥ (निरुत्तरतंत्र)

तात्पर्य यह है कि बहत्तर हजार नाड़ियों में इडा १ पिंगला २ सुषुम्ना ३ गांधारी ४ हस्तिजिह्वा ५ पूषा ६ यशस्विनी ७ अलंबुषा ८ कुहू ९ शंखिनी १० ये दश नाड़ी और इनके अतिरिक्त वज्रा ११ चित्रिणी १२ और ब्रह्मनाडी १३ इतनी मुख्य नाड़ियें हैं, इनमें इडा पिंगला के मध्य में त्रिगुणात्मिका सुषुम्ना रहती है, यह ब्रह्मा विष्णु शिवात्मिका है। सुषुम्ना के मार्ग को रोक के कुण्डलिनी नाडी स्थित है। वज्रा इसी के पास में और चित्रिणी (चित्रा) सुषुम्ना के मध्यवर्ती खाली स्थान में रहती है। इन नाड़ीसमूहों में जब तक कुण्डलिनी नाड़ी जागृत न हो तब तक सब योगसाधन वृथा के परिश्रम ही होता है। अब यह —

कुंडली को कुंडलिनी, कुंडली, कुटिलांगी, भुजंगी, नागन, बालरंडा, शक्ति, ईश्वरी, और अरुंधती नाम से भी पुकारते हैं।

गुह्यलिंगयोर्मध्ये अंगुलिद्वयमितस्थानं। तत्तु शरीरस्थसकलनाडीनां मूलस्थानं। अत्र व-श-ष-साक्षरयुक्तं स्वर्णवर्णं चतुर्दलपद्ममस्ति। तन्मध्ये इच्छा-ज्ञान-क्रिया-स्वरूपं त्रिकोणं वर्तते। तन्मध्ये कोटिसूर्यसमप्रभस्वयंभूलिंगमस्ति। अत्र पृथिवी वर्तते। तत्रैव मृणालसूत्रवत् सूक्ष्म-सार्धत्रिवलयाकार-स्वयंभूलिंगवेष्टितविद्युत्तुल्यप्रभ-कुल-कुंडलिनी वर्तते। यथा—

मूलाधारे त्रिकोणाख्ये इच्छाज्ञानक्रियात्मके।
मध्ये स्वयंभूलिंगं तु कोटिसूर्यसमप्रभम्॥
तद्बाह्ये हेमवर्णाभं वसवर्णं चतुर्दलम्॥ १॥ (इति तंत्रसारः)

अथाधारपद्मं सुषुम्नाख्यलग्नं ध्वजाधो गुदोर्ध्वं चतुःशोणपत्रम्।
अधोवक्त्रमुद्यत्सुवर्णाभवर्णैर्वकरादिसांतैर्युतं वेदवर्णैः॥ १॥
अमुष्मिन्धरायाश्चतुष्कोणचक्रं समुद्भासि शूलाष्टकैरावृतं तत्।
लसत्पीतवर्णं तडित्कोमलांगं तदंतः समास्ते धरायाः स्वबीजम्॥ २॥

वज्राख्या वक्त्रदेशे विलसति सततं कर्णिकामध्यसंस्थम्
कोणं तत्रैपुराख्यं तडिदिव विलसत्कोमलं कामरूपम्।
कन्दर्पो नाम वायुर्निवसति सततं तस्य मध्ये समंतात्
जीवेशो बंधुजीवप्रकरमभिहसन् कोटिसूर्यप्रकाशः॥ ३॥

तन्मध्ये लिंगरूपिद्रुतकनककलाकोमलः पश्चिमास्यो
ज्ञानध्यानप्रकाशः प्रथमकिसलयाकाररूपः स्वयंभूः।
विद्युत्पूर्णेंदुबिंबप्रकरकरचयस्निग्धसंतानहासी
काशीवासी विलासी विलसति सरिदावर्तरूपः प्रकारः॥ ४॥

अस्योर्ध्वे विषतंतुसोदरलसत् सूक्ष्मा जगन्मोहिनी
ब्रह्मद्वारमुखं मुखेन मधुरं सांच्छादयंती स्वयम्।
शंखावर्तनिभा नवीनचपला माला विलासास्पदा
सुप्ता सर्पसमा शिरोपरिलसत् सार्धत्रिवृत्ताकृतिः॥ ५॥

(तत्त्वचिंतामणिः)

इत्यादि वचनों के भावार्थ पर से कुंडली मूलाधारस्थान में अर्थात् गुदा और लिंगके मध्यमें दो अंगुल प्रमाण का भगस्थान है, वह शरीरस्थ सकल नाडियों का मूलस्थान् एक वालिस्त लम्बा और चार अंगुल चौड़ा शुभ्र और कोमल वेष्टनावर (लपेटनेके वस्त्र) के [illegible] (कंद) है। यहां चतुर्दल की आकृति का एक पद्म है उसमें चार [illegible] ष, स, ये चार वर्ण स्वर्ण के तुल्य देदीप्यमान हैं। उस चतुर्दल [illegible] स्वरूप एक त्रिकोण है और यह पश्चिममुखी है अर्थात् पीछे

को मुख है ऐसे बङ्कनाल में ही से ऊर्ध्वगमन होता है। इसकी कर्णिका में वज्रा नाम नाड़ी रहती है और त्रिकोणमें कोटिसूर्यसमप्रभ स्वयभू लिंग है यहाँ पृथ्वी है इसी पर कमल के तंतु के समान सूक्ष्म विद्युत्तुल्यप्रभावाली कुण्डलिनी स्वयभू लिंग को और सब नाड़ियों को घेरकर साढ़े तीन आंटे देकर कुटिल आकृति से अपने मुख में पूछ को दबाकर ब्रह्मद्वार (सुषुम्ना का द्वार) को आच्छादित करके बैठी हुई है। इसके जाग्रत करने पर जब यह सुषुम्ना के मार्ग से अपना मुँह हटाती है तब ब्रह्मद्वार का कपाट खुलजाता है इसी कारण योगियों को इसके जानने और जगाने का प्रयत्न करते रहना चाहिये।

अथवा यह कुंडलिनी नाड़ी सब नाडियों के ऊपर स्थित होकर मणिपूरक चक्र कर्णिका को आवृत करके ब्रह्मरंध्र के द्वारको सवदा रोके रहती है और सुषुम्ना के द्वार को बन्द किए रखती है। इसलिये प्राणवायु और अपानवायु को धोंकनेवाला अर्थात् उत्तेजित करनेवाला जो पुरुष है वह उस प्राण और अपानवायु की एकता से उत्तेजित हुई अग्नि से जाग्रत होकर मन और प्राण वायुसहित सुषुम्ना को सूचितन्तुन्याय से ऊपर लेजाता है इनके ऊपर जाने से वह अपने इच्छित परमानद को प्राप्त होजाता है।

अथवा कुंडलिनी नाड़ी सोते हुए सर्प के समान है उसको जाग्रत करने के लिये पहिले अपानवायु और प्राणवायु से विधिपूर्वक खीचकी अग्नियों के स्वरूप को तेज करे उनकी तेजी से उसे जगाकर वह पुरुष ज्योतिर्मय स्वरूप होकर सुषुम्ना मार्ग से आत्मा में लय होजाता है।

अथवा वज्रासन (सिद्धासन) लगाकर हाथों से पावों की एड़ी पकड़ कर कन्दस्थान को दृढ़तासे दबावे और वज्रासन से ही धोंकनी को कुम्भक वायु से प्रचलित करे उसके प्रचलित होने से अग्नि प्रज्वलित होता है। उसकी गरमी से वह बालरंडा मुख फैला देती है उस समय में सुषुम्नाद्वारा ही योगीश्वर अपने स्वरूप के आनद को पाते हैं।

अथवा नाभिदेशमें सूर्य रहता है। उस का आकुंचन कर चार घड़ीपर्यंत नित्य निर्भय होकर शक्ति (कुण्डली) का चालन करे तो कुण्डली कुछ ऊपर को खिंचती है जिससे प्राणवायु स्वय (आपही) सुषुम्ना में प्रवेश कर जाता है।

सुप्ता गुरुप्रसादेन यदा जागर्ति कुंडली।
तदा सर्वाणि पद्मानि भिद्यंते ग्रंथयोपि च ॥ १ ॥

(हठयोगप्रदीपिका)

इस प्रकार क्रिया करने से गुरु की कृपासे जब सोती हुई कुण्डली जाग्रत हो जाती है तब सब पद्म (संपूर्ण षट्चक्र) भेदित होकर ब्रह्मग्रंथि, विष्णुग्रंथि, रुद्रग्रंथि, ये तीनों ग्रन्थियें भी भेदित होजाती हैं।

---

1 जैसे सुई में डोरा पिरोया हुआ हो तो वह सुई कपड़े के अनेक सूतों में से तन्तु सहित ऊपर को निकल आती है उसको सूचितन्तुन्याय कहते हैं।

उपरोक्त प्रकार से सुपुन्ना मार्ग में प्राण अपान दोनों मिलके प्रवेश करने के वाद मेरुदंड के मध्य जो पट्चक्र के स्थान की गॉठें सुपुन्ना में पहिले वता आये हैं उन ही पट्चक्र की गॉठों को शनैः शनैः क्रमसे भेदते (छेदते) हुए (प्राण अपान मिलके) जव ब्रह्मरंध्रमें पहुँच गये तव सर्व भवसागर का दुःख छेदन (नाश) होगया और संशय तथा शोक नष्ट होगया और जिस शून्य सरोवर में अकथनीय गगन गर्जना का अलौकिक गंभीर नाद होरहाहै उसमें वास (निश्चल निवास) प्राप्त होगया ।

हंसा सुन होती मंझे मोती मुख विन च्यूण चुगंदा है ॥
आतम ब्रह्मंडा एक अखंडा विन रसना गावंदा है ॥ १३ ॥
अंवर घर आये ब्रह्म वधाये अनहद नाद घुरंदा है ॥
नोवत नीसाणा दिल दीवाणा वाजा भेरि वजंदा है ॥ १४ ॥

---

१ नादकी चार अवस्था—
आरंभश्च घटश्चैव तथा परिचयोऽपि च ।
निष्पत्तिः सर्वयोगेषु स्यादवस्थाचतुष्टयम् ॥ १ ॥

१ आरंभावस्था—
ब्रह्मग्रन्थेर्भवेद्भेदो ह्यानंदः शून्यसंभवः ।
विचित्रः क्वणको देहेऽनाहतः श्रूयते ध्वनिः ॥ १ ॥

हृदय स्थान के द्वादशदल अनाहत चक्र में ब्रह्मग्रंथि है । जव प्राणायाम के अभ्यास से सुपुन्ना मार्गद्वारा इस ग्रंथी को प्राण भेदन करता है तव शून्य हृदयाकाश में आनंद हो जाता है और उस हृदाकाशोत्पन्न आनंद में विचित्र (नानाविध) प्रकार का आभूषण का नाद अर्थात् स्त्रियों के पाँव में पहनने के आभूषणों की मधुरध्वनि श्रवण होने लगती है इस को आरंभावस्था कहते हैं । जव आरंभावस्था प्राप्त हो जाती है तव वह पुरुष दिव्य देहवाला, तेजस्वी (प्रतापवान्) उत्तम सुगंधिवाला और रोग-रहितदेहवाला होजाता है । और जव हृदाकाश में नाद का आरंभ होजाता है उस समय हृदाकाश, विशुद्धाकाश, और भ्रूमध्याकाश को योगीजन शून्य, अतिशून्य और महाशून्य पद के नाम से मानते हैं और उनके नाद का श्रवण क्रमसे करते जाते हैं ।

२ घटावस्था—जव प्राणवायु हृदाकाशस्थ ब्रह्मग्रंथि को भेदन कर प्राण, अपान और नादबिंदु से मिलकर कंठस्थान के पोडशदल विशुद्धिनामक चक्र को जिसको मध्यचक्रमी कहते हैं और जो विष्णुग्रंथि का स्थान है इसको भेदन करता है तव परमानंद (ब्रह्मानंद) सूचक अतिशून्य नामक आकाश में अनेक प्रकार के नादों की

ध्वनि को समदन करनेवाली भेरीसीसी ध्वनि सुनाइ देने लगती है और वह योगी दृढासन और पूर्व की अपे रा विशेष ज्ञानी देव के समान दिव्यदेहवाला हो जाता है। यह मध्यचक्र षोडशाधार का वधक है

मध्यचक्रमिद ज्ञेय षोडशाधारबधनम् ॥

जो षट्चक्र, षोडशाधार, द्विलक्ष्य और पचाकाशको नहीं जानता उसको योगसिद्धि कैसे हो सकती है—

षट्चक्र षोडशाधारं द्विलक्ष्य व्योमपचकम्।
स्वदेहे यो न जानाति कथ योगी स सिध्यति ॥ १ ॥

इतनी बातें योगी को अवश्य जान लेना चाहिये—

षट्चक्र—१ मूलाधार, २ स्वाधिष्ठान, ३ मणिपुर ४ अनाहत, ५ विशुद्ध ६ आज्ञाचक्र।

सोलह आधार—१ पग का अगुष्ठ २ मूलाधार ३ गुह्याधार, ४ वज्रोली, ५ उड्डियानबध, ६ नाभिमडलाधार ७ हृदयाधार ८ कठाधार, ९ क्षुद्रकठाधार १० जिह्वा मूलाधार, ११ जिह्वा का अधोभागाधार १२ अधदत मूलाधार १३ नासिकाग्राधार १४ नासिकामूलाधार, १५ भ्रूमध्याधार, और १६ नेत्राधार।

मतातर से सोलह आधार—१ मूलाधार, २ स्वाधिष्ठान ३ मणिपुर, ४ अनाहत, ५ विशुद्ध, ६ आज्ञाचक्र, ७ बिंदु ८ अर्धेन्दु, ९ रोधिनी, १० नाद ११ नादात, १२ शक्ति, १३ व्यापिका १४ शमनी १५ रोधिनी, १६ ध्रुवमडल।

द्विलक्ष्य—१ बाह्यलक्ष्य (भ्रूमध्य तथा नासिकाग्र) २ आभ्यतरीयलक्ष्य (मूलाधारादिषट्चक्रों को अतर्दृष्टि से देखना)

पाच प्रकार के आकाश—

पहिला—श्वेतवर्ण ज्योतीरूप आकाश।

दूसरा—पहिले के भीतर धूम्रवर्ण ज्योतीरूप महाकाश।

तीसरा—दूसरेके भीतर नीलवर्ण ज्योतीरूप महत्तत्त्वाकाश।

चौथा—तीसरेके भीतर पीतवर्ण ज्योतीरूप महाशून्याकाश।

पाचवाँ—चौथे में विजलीके वर्ण ज्योतीरूप सूर्याकाश।

उपरोक्त प्रकार से शरीरमें ६ चक्र १६ आधार २ लक्ष्य और ५ आकाश हैं इनको जो योगी नहीं पहिचानता उसको योगकी सिद्धि नहीं होती है।

३ परिचयावस्था—जब प्राण ब्रह्मग्रंथि और विष्णुग्रंथि को भेदन कर भ्रूमध्यमें द्विदल आज्ञाचक्र को जो सर्वेश्वर का पीठस्थान है जिसमें रुद्रग्रंथि है इस रुद्रग्रंथि को प्राण भेदन करता है तब भ्रूमध्याकाश (महाशून्याकाश) में प्राण पहुचता है इसको परिचयावस्था कहते हैं। इसमें एक विशेष जानने योग्य मर्दल (एक प्रकार का बाजा) की ध्वनि सुनाई पडती है, इस अवस्था में सहजानद और सर्व सिद्धियों की

प्राप्ति, दोष, दुःख, जरा, व्याधि, भूख, प्यास और निद्रा का नाश हो जाता है और अहर्निश स्वाभाविक आत्मसुख मे योगी मग्न हो जाता है।

४ निष्पत्तिअवस्था—जब प्राणवायु ब्रह्म, विष्णु और रुद्र ग्रंथि के भेदने पर ब्रह्मरंध्र में प्रवेश करता है तब चतुर्थावस्था प्राप्त होती है। उस समय वंशी के समान मधुर शब्द मानों वही सुंदर मनमोहक वंशी का शब्द होरहा हो (परब्रह्म श्रीकृष्ण प्रमात्मा की वंशी की अनुपम ध्वनि के समान जिसको सुनकर गोपियों ने मुग्ध होकर सांसारिक सर्व सुखों को भुला दिया) वैसी वंशी की ध्वनि होने लगती है तब अंतःकरण एक तल्लीन हो जाता है। चित्तकी एकाग्रता को ही राजयोग कहते हैं। इस अवस्था में जो योगी प्राप्त हो जाता है वह सृष्टिकर्ता तथा सहारकर्ता अर्थात् "कर्तुमकर्तुमन्यथाकर्तुं" ईश्वर के समान समर्थ हो जाता है तथा अखड सुख को पाजाता है।

इस अवस्था मे अनेक प्रकार के वाजों की ध्वनि सुनाई पड़ने लगती है सुंदरदासजी ने इसका वर्णन इसभाँति किया है।

प्रथम भँवर गुजार शंख ध्वनि दुतिय कहीजे।
तृतिये वजई मृदंग चतुरथे ताल सुनीजे॥
पंचम घंटानाद षष्ठ वीणाधुन होई।
सप्तम वजई भेरि अष्टमे दुंदुभि दोई॥
नवमे गर्ज समुद्र की दशम मेघ घोषइ गुनै।
कह सुंदर अनहदनाद को दशप्रकार योगी सुनै॥ १॥

३६ प्रकार के कुल बाजे होते हैं—

मंडल वीन रवाव अनोप तंबूर उपंगह।
घख सुसुरह पिनाक कुमायच पुंग सुरंगह॥
वंशी परगह वांश कानूटक ताल सुपिंगी।
तूर भेरि सहनाइ पाव रणसंग दर सिंगी॥
करनाट पणव आनक मुरज डफ सुडाक डमरू छजै।
जलतरँग झाँझ मजीर मिल खटहात्रिंशबाजा बजै॥ १॥

कोई कहते हैं कि कुल वाजाओं का भेद साढ़े तीन प्रकारकाही है।

ताल फूँक अरु तार के अर्ध नकीरी लीन।
सब ही या संसार मे बाजे साढ़े तीन॥ १॥

चाहे जितने बाजे क्यों न हो अनहद नाद के आगे तो सर्व संसारभर के बाजे तुच्छ हैं, उसकी उपमा तो हद के बाहर ही है इसीसे उसका नाम अनहद है। अथवा स्वयमेव बजने से अनाहत है इसलिये उसका वर्णन अवर्णनीय है। इस अनहद नाद की प्राप्ती होने के पश्चात् तो परमपद को प्राप्त हो ही जाता है।

जब षट्चक्रों को भेदन करता हुआ प्राणरूपी हंस शून्य सरोवर पर (त्रिकुटी में) पहुंच जाता है, तब वह सुन (निश्चल तथा शून्य स्थिति का) होजाता है और उस शून्य सरोवर में ब्रह्मानंदरूपी मोती का चूण मुख के विना ही हंसरूपी प्राण चुगने लगता है (आनंदास्वादन करने लगता है) जिस से आत्मा और अखिल ब्रह्मांड एकही मालूम होने लगता है, इसलिये "सर्वं खल्विदं ब्रह्म" "एकमेवाद्वितीयं ब्रह्म" इत्यादि महावाक्यों का जो अर्थ है उसका ज्ञान प्राप्त होजाता है और विना जिह्वा के ("यतो वाचो निवर्तंते अप्राप्य मनसा सह") "प्रज्ञानमानंदं ब्रह्म" इस प्रकार आनंददायक पद के गुण गाने लग जाता है ॥ १३ ॥

ऐसी स्थिति होने के पश्चात् जब प्राणरूपी हंस अगर घर (ब्रह्मरंध्र रूपी महा आकाश) में प्रवेश करता है और ब्रह्मसे साक्षात्कार होने में तत्पर होता है तब मानों उसको परब्रह्म की ओर से तदाकार वृत्ति करने को बधाने के लिये अनहदनाद बजने लगता है। जिसमें नोबत, निसाण, दिल, दिवाण, भेरी, मृदंग आदि अनेक बाजों का नाद सुनाई पडने लगता है ॥ १४ ॥

मन शिक्खर मिलिया त्रयगढ मिलिया पद चोथा पावदा है ॥
अघ मिल उधा पवन निरुध्धा ध्यान समाधि लगदा है ॥ १५ ॥

अनाहतस्य शब्दस्य ध्वनिर्य उपलभ्यते ।
ध्वनेरंतर्गतं ज्ञेयं ज्ञेयस्यांतर्गतं मन ॥ १ ॥
मनस्तत्र लयं याति तद्विष्णो परमं पदम् ॥
(हठयोगप्रदीपिका प्र० उप० ४)

१ ध्यान और समाधि के लक्षण —

ध्यान—

१ तत्र प्रत्ययैकतानता ध्यानम् ।
नाभि आदि देशों में ध्येय का जो ज्ञान होता है वह ध्यान है।

२ ध्यातृ ध्येय ध्यान-कलना वद् ध्यानम् ।
ध्यान करनेवाला और जिसका ध्यान किया जाय तथा ध्यान इन तीनों का अभेद जिसमें प्रतीत हो वह ध्यान कहलाता है।

३ धारणयोग्यदेशे अखंडतैलधारावत् प्रवाहो ध्यानम् ।

३ ध्येय की और अखंड मनोवृत्ति तैलधारा के समान लगी रहे उसको ध्यान कहते हैं। तद्रहित समाधि कहाती है।

१ ध्यान के भेद दो प्रकार के होते हैं—

१ एक पूर्व ध्यान।

२ दूसरा पश्चिम ध्यान।

पूर्वध्यान·—नाभिदेश से तथा पादांगुष्ठ से हठ क्रियाद्वारा प्राण को ऊपर चढाने को कहते हैं। इसमें ॐकार का जप करना होता है और इस ध्यान में अनेक विघ्न उपस्थित होते हैं। पूर्व ध्यानी पुनर्जन्म पाता है।

पश्चिमध्यानः—राममन्त्र का स्मरणपूर्वक पश्चिमतान से प्राण को ऊपर चढाने को कहते हैं इस से मोक्ष की प्राप्ति होती है।

द्वावेव शोभनौ मुक्तिपन्थानौ योगसंमतौ।
एकस्तु पश्चिमश्चैव द्वितीय पूर्व उच्यते ॥ १ ॥
राममंत्रं चाधिकृत्य पन्थास्तिष्ठति पश्चिमः ॥
ओमित्यधिकृत्यास्ते पन्थास्तु पूर्वसंज्ञित· ॥ २ ॥
पूर्वस्मात् पुनरावृत्तिः पश्चिमान्मोक्षमश्नुते ॥ (गुह्योद्घाटनतंत्र)

पश्चिममार्ग का सविस्तर वर्णन देखना चाहें वह "योगशिखोपनिषत्" देखलेवे।

पश्चिममार्ग के ध्यान की रीति कुछ वर्णन की जाती है—

योगशास्त्र में नाना प्रकार के आसन कहे हैं, जितने प्रकार के जीव हैं उतने ही प्रकार के आसन हैं। जीव चौरासी लाख बतलाये गये हैं अत· आसन भी उतने ही हैं, इन सब में से ८४ आसन मुख्य हैं। इनमें भी सिंहासन, भद्रासन, मयूरासन, कुक्कुटासनादि १६ आसन उत्तम माने हैं। इन सोलह मे भी १ पद्मासन २ सिद्धासन सर्वोत्तम माना है। इन दो आसनों में भी सिद्धासन उत्तमोत्तम माना है। इस लिये पश्चिमध्यान साधन समय में सिद्धासन लगाकर बैठना चाहिये।

सिद्धासन के लक्षण हठयोगप्रदीपिका नें इस प्रकार लिखे हैं—

योनिस्थानकमंघ्रिमूलघटितं कृत्वा दृढं विन्यसेत्
मेढ्रे पादमथैकमेव हृदये कृत्वा हनुं सुस्थिरम्।
स्थाणु· संयमितेंद्रियोऽचलदृशा पश्येद्भ्रुवोरन्तरम्
ह्येतन्मोक्षकपाटभेदजनकं सिद्धासन प्रोच्यते ॥ १ ॥

तात्पर्य—बायें पाँव की एडी को योनिस्थान के मध्य में लगाके (गुदा और उपस्थेंद्रिय के मध्य भाग का नाम भग किंवा योनि है जिसको सीवन भी कहते हैं) उस स्थान को बाँये पाँव की एडी से जोर से दबावे और दहिने पाँव को उठाकर इंद्री की जड में एडी को लगाकर नीचे को दबावे (मूलबंध करे) इस रीति से सीधा बैठकर फिर ठोडी को हृदय से ४ अंगुल ऊपर मजबूती से जमावे (जालंधरबंध करे)

और सूखे काष्ठके समान करड़ा होकर सब इन्द्रियों को अपने काबू (वश) में करके नेत्रों को अचल दृष्टि से भृकुटी के मध्य में लगाकर बैठने को सिद्धासन कहते हैं। यह सिद्धासन मोक्षद्वार के कपाट को भेदन करनेवाला (मुक्ति को देनेवाला) कहा है।

योगशास्त्र में इस आसन का नाम सिद्धासन कहा है और इसको ही वज्रासन, मुक्तासन, गुप्तासन आदि कई नामों से पुकारते हैं। और फलस्तुति में भी 'मोक्षकपाटभेदजनकम्' यह वाक्य कहकर 'नासनं सिद्धसदृशम्" परमावधि लिखा है इससे प्रमाणित होता है कि इस के समान कोइ अन्य आसन नहीं है, परंतु इसकी जितनी महिमा वर्णन की है उतना उसका कारण नहीं बताया गया। यदि कारण बताया जाता तो इसकी महत्ता हृदयगम होने से सिद्धासन की सिद्धियों का पता चल जाता। इसको परमोत्तम बताने का कारण जानने योग्य है इसका सविस्तर वर्णन कहीं नहीं मिलता है अत एव यहा उस का वर्णन करना आवश्यक जानकर किया जाता है।

"योनिस्थानकमग्रिमूलघटित' इस पूर्वोक्त श्लोक में सिद्धासनसाधन की ५ बातें मुख्य मानी गइ हैं—

१—योनिस्थान को दृढता से एडी से दबाना।
२—ठोडीको हृदयसे ४ अगुल ऊपरवाले स्थानमें सुस्थिर (दृढ) जमाना।
३—स्थाणु (काष्ठ) के समान सीधा कड़ा होकर बैठना।
४—संयमितेंद्रिय अर्थात् इंद्रियों को दमन करना।
५—नेत्रों को अचलदृष्टि से भ्रुकुटि के मध्यमें जमाना।

इन पाच बातों के करने से सिद्धासन होता है। इनका क्रमानुसार वर्णन इस तरह है।

पहिली—योनिस्थान को एडी से दबाने का प्रयोजन सुषुम्ना को जाग्रत करने का है। योनिस्थान (सीवन) में सुषुम्ना का ठीक विवरस्थान है। सुषुम्नाको सिद्ध करना ही योग का पर्यवसान है। इस ग्रथ मे श्रीहरिरामदासजी महाराजने फरमाया है-' सुख मण की घाटी चढिया वाटी अरस घरॉं ठहरंदा है तथा "सुषुम्ना शून्यपदवी ब्रह्मरंध्र महापथ ' इत्यादि वाक्यों से सुषुम्ना ही मोक्षपदवी है इसी सुषुम्ना के द्वारा पश्चिम योग ध्यानसाधक योगी का बकनाल से ऊर्ध्वगमन होता है। सुषुम्ना के विवर में कुडलिनी नाडी साढे तीन आटे लगाकर कुटिलाकृति से सर्पिणी के समान अपने मुख में पूँछको दबाकर सुषुम्नामार्ग के द्वार (छिद्र) को रोके बैठी है जो योगीको सुषुम्नातक जाने देती नहीं है इसीलिये बॉंये पॉंव की एडी से योनिस्थान को दृढ दबाने से मूल बध होगा और अपान वायु की ऊर्ध्वगति होगी जिससे एक प्रकार की प्रबल ऊष्मा उत्पन्न होती है उसी के कारण यह योनिस्थानस्थ कुण्डलिनी जाग्रत होकर सुषुम्नामार्ग को अपना मुख हटाकर रास्ता दे देती है। जिससे योगीलोग सुषुम्नामार्ग में प्राण अपान को प्रवेशकर अपने स्वरूप के आनंद को प्राप्त होवे हैं।

दूसरी—हृदय में चिबुक को दृढता से जमाने की है=उससे जालधरबध होता है। जालधरबध होने से प्राण वायु की गति अधोगामिनी होती है और प्राण अपान

वायु से मिलकर सुषुम्ना के द्वार मे प्रवेश करने योग्य हो जाता है इस कारण हृदयमें चिबुक (ठोडी) को दृढता से जमा के बैठने के लिये लिखा है ।

तीसरी—स्थाणु के समान सीधा बैठना=उसका प्रयोजन है, कि सीधा अकड़ कर बैठने से श्वासोच्छ्वास की गति बराबर सीधी आने जाने से सुषुम्ना में प्रवेश होने में कठिनाई नहीं पडती, तथा अन्य किसी नाडी में प्राण अपान प्रवेश नहीं कर सकते अगर (ऋजुकाय नहीं बैठने से) अन्य नाडी में वायु प्रवेश हो जावे तो मृत्यु तथा महाव्याधियों का उत्पन्न होना संभव है ।

समं कायशिरोग्रीवं धारयन्नचलं स्थिरः ।
संप्रेक्ष्य नासिकाग्रं स्वं दिशश्चानवलोकयन् ॥ १ ॥
प्रशांतात्मा विगतभीर्ब्रह्मचारिव्रते स्थितः ।
मनः सयम्य मच्चित्तो युक्त आसीत मत्पर' ॥ २ ॥

श्रीमद्भगवद्गीता के उक्त श्लोको मे भी ऋजुकाय (सीधा अकडकर) बैठकर योगाभ्यास करने के लिये लिखा है जिससे कुंभकादि साधन अच्छी तरह से हो जाय ।

और प्राण अपान वायु दूसरी नाडियों में प्रवेश न करे इसी कारण स्थाणु पद देकर भी सिद्धासन में बैठना लिखाहै । सच पूछो तो एक सिद्धासन ही सर्व योगसाधन की कुँजी है । इसीलिये सिद्धासन मोक्षद्वार के किवाड़ तोड़ने का वडा वज्रासन है ।

चौथी—इद्रियों को काबू में रखकर बैठने की है । अगर इनको स्वाधीन न की जाय तो मन स्थिर नहीं होगा और इसके स्थिर न होने से योग की सिद्धि प्राप्त करना भी असभव है । अतः इद्रियों का दमन करना ही पहिला काम है।

यततो ह्यपि कौंतेय पुरुषस्य विपश्चितः ।
इद्रियाणि प्रमाथीनि हरति प्रसभं मन ॥ १ ॥
तानि सर्वाणि सयम्य युक्त आसीत मत्पर. ।
वशे हि यस्येंद्रियाणि तस्य प्रज्ञा प्रतिष्ठिता ॥ २ ॥ (श्रीमद्भगवद्गीता)

इंद्रियों के दमन करने के लिये प्रयत्न करनेवाले विद्वान् के भी मन को हे कुंतीपुत्र ! ये प्रबल इंद्रियां बलात्कार से मनमानी ओर खींच ले जाती है । अतएव इन सब इद्रियों का सयमन कर युक्त अर्थात् योगयुक्त और मत्परायण होकर रहना चाहिये । इस प्रकार जिसकी इद्रिया अपने स्वाधीन हो जाँय (कहना चाहिये) उस की बुद्धि स्थिर होगई ।

ऐसा स्थिर बुद्धि होकर बैठने के लिये ही "सयमितेंद्रिय" यह पद सिद्धासन में दिया है ।

इतना तो मालूम हो ही गया है कि इंद्रियों का वेग वडा ही बलवान् होता है परन्तु इनमें भी शिश्न और रसना दो इन्द्रियाँ वडी प्रबल हैं प्रायः इन्ही से सैतानी

और चपलता होती है। इन नाड़ियों का स्थान पाँव के पीछे बाहर की तरफ टखने और तडे के बीच में है। जो यहा से ये नाड़ियाँ पिंडली और जघा में से ऊपर को जाती हैं। और इन्हीं से इन्द्रियों को प्रबलता प्राप्त होती है। (डाक्टर लोग भी सैतान आदमियों की इन नाड़ियों को काट देते हैं जिससे उनकी ये इन्द्रिया निकम्मी हो जाती हैं) योगमें इसके लिए बहुत ही सरल उपाय बताया गया है। जिससे किसी प्रकार की तकलीफ न हो और वे प्रबल इन्द्रियें स्वाधीन हो जाती हैं। योगिराज श्रीजैमलदासजी महाराज ने सिद्धासन में भी एक नया लक्षण दिखाया है जिससे ये प्रबल इन्द्रिया स्वय बिना कठिनाई के स्वाधीन हो जाती है—

"जघनपर कर धारि के वे सम आसण चितलाय'

अर्थात् हठयोगप्रदीपिका के अनुसार ही सिद्धासन कर के बैठो परंतु दोनों हथेलियों के तलवों को जाँघोंपर धारणा करो। तात्पय यह है कि हथेली तलके दबाव से एक प्रकार की विद्युत् शक्ति उत्पन्न होती है वह सब शरीर में अपने प्रभाव का प्रसार कर उन प्रबल इन्द्रियों के वेग को दमन कर अपने स्वाधीन कर लेती है। अत एव सिद्धासन से बैठकर सर्व इन्द्रियों का दमन और मन को समाहित करने के लिये दोनों हाथों की हथेलियों को जोर से जाघों पर जमा कर बैठना चाहिये।

पांचवीं—नेत्रों को अचलदृष्टि से भृकुटी के मध्य जमाकर बैठने की है। ऐसा करने का मुख्य प्रयोजन मन की चचल वृत्ति को स्थिर करना और ध्येय में तल्लीनता प्राप्त कर समाधि अवस्था प्राप्त करना है।

भ्रूमध्यस्थान में नेत्रों को अचल दृष्टि से जमा कर बैठने से खेचरी नामकी मुद्रा होती है।

> सूर्याचन्द्रमसोर्मध्ये निरालम्बान्तरे पुन ।
> सस्थिता व्योमचक्रे या सा मुद्रा नाम खेचरी ॥ १ ॥

(हठयोगप्रदीपिका)

अर्थात् इडा पिंगला नाड़ी के बीच में निरालब भ्रूप्रदेश (आकाशस्थान) में मनो वृत्ति स्थित हो जाने को खेचरी मुद्रा कहते हैं।

इस खेचरी मुद्रा के अभ्यास से उन्मनी अवस्था स्वयसिद्ध हो जाती है।

'अभ्यस्ता खेचरी मुद्राप्युन्मनी सप्रजायते

इसलिये खेचरी का एक भेद उन्मनी है ऐसा कहसकते हैं।

> शखदुदुभिनाद च न शृणोति कदाचन ।
> काष्ठवज्जायते देह उन्मन्यवस्थया ध्रुवम् ॥ १ ॥

उन्मनी अवस्थामें असप्रज्ञात निर्विकल्प समाधि के लक्षण हो जाते हैं इससे चतुर्थपद की प्राप्ति होती है।

चतुर्थ पद के लक्षण—

भ्रुवोर्मध्ये शिवस्थानं मनस्तत्र विलीयते ।
ज्ञातव्यं तत्पदं तुर्यं तत्र कालो न विद्यते ॥ १ ॥

भ्रूमध्यस्थान में शिव का स्थान है उसमें जब मन विलीन हो जाता है तब तुर्य पद (चतुर्थपद) प्राप्त हो जाता है ऐसा जानो । इसमें कोई कालकी (समयकी) अवधि नहीं है । क्योंकि भ्रूमध्यस्थानमें अचलदृष्टि जमाके मनको उसमें विलीन करनेसे ही चतुर्थपद की प्राप्ति होती है । इसीलिये सिद्धासन में अचल दृष्टिसे भ्रूमध्यको देखना बतलाया है ।

रामस्नेहिसंप्रदायके आदि योगिराज श्रीजैमलदासजी महाराज ने भी चाचरी अगोचरी मुद्रा को इंगितकर यही बात कही है—

"निरत धरे निजनासिका वे सुनमें सुरत समाय"

अर्थात् निज नासाग्रभाग पर दृष्टि जमा के स्थिर होने को चाचरी मुद्रा कहते हैं । गीताजी में भी इसीको जमानेका लिखाहै—

"संप्रेक्ष्य नासिकाग्रं स्वं दिशश्चानवलोकयन्"

तथा "सुनमें सुरत समाय" इस पदसे चौथी अगोचरी मुद्रा बताई है ।

मुद्रा पांच होती हैं:—

चाचरि, भूचरि, खेचरी, और अगोचरि नाम ।
उन्मनि मिल यह मुद्रिका, पंच लखहु सुखधाम ॥ १ ॥
अब सुन मुद्रा पंचविध, प्रथम खेचरी होय ।
मुखमें तास निवास है, बढवे जीभ विलोय ॥ २ ॥
दूसरि मुद्रा भूचरी, नासा जासु निवास ।
प्राणापान जुदी जुदी, कर देवे इक पास ॥ ३ ॥
तीजी मुद्रा चाचरी, बसे दृगन बिच सोपि ।
नासा आगे दृष्टि धरि, देखे अचरज कोपि ॥ ४ ॥
चोथी मुद्राऽगोचरी, करत श्रवणमें वास ।
ज्ञान सुरत इक होत है, अनहद शब्द प्रकाश ॥ ५ ॥

पांचवी उन्मनी मुद्रा है जिसका स्थान दशमद्वार है, इसकी सिद्धिके लिये ही तो सब कुछ करना पड़ता है । समाधि की सिद्धि इसी से ही होती है । यह स्वयं समाधिरूप है । इस प्रकार पाचों मुद्राओं का साधन सिद्धासन से सिद्ध होता है । ये पाचों मुद्रा निश्चल दृष्टि से नासांत (भ्रूमध्यभाग) वा नासाग्रभाग मे दृष्टि जमाने से सिद्ध होती है । अतएव भ्रूमध्यमें निश्चल दृष्टि जमा के सिद्धासन में बैठने से सर्व मुद्रा सिद्ध होना बतलाया है । उपरोक्त पॉचों वातों को लक्ष्य में रखकर देखा जाय तो सिद्धासन कोई साधारण नहीं है, क्योंकि योगशास्त्रमें सारभूत और मोक्षद्वार के कपाट का भेदन कर सिद्धिका दाता यही कहा है, इसलिये ऐसा विश्वास है कि जिसको

केवल यह सिद्ध हो जाता है, वह परमपदका भागी होता है। इस प्रकार सिंहासन लगाकर पश्चिमध्यानाभ्यासी योगी बैठे और मुखसे राममंत्र का जप करता हुवा रसना १ कंठ २ हृदय ३ नाभि ४ इन चार स्थान में क्रम से प्राणों का निरोध करे। प्रथम पूर्व ध्यान जो नाभि से सीधा हृदयादि स्थान में होकर भ्रुकुटीदेश में जाता है वहीं त्राटक ध्यान होता है।

पूरब ध्यान भया जब त्राटक।
खुला सहज गगन का फाटक॥

भ्रूमध्य में प्राण के रुकने को त्राटक कहते हैं यह होने के पश्चात् क्रम से जिन जिन स्थानों में होता हुआ ऊपर गयाथा उन्हीं स्थानों में से होता हुआ नीचे नाभी में आकर पाताल में (आधार चक्र से नीचे के अंगों की पातालसंज्ञा मानी है, जैसे कटिप्रदेश को अतल लिंगप्रदेश को वितल, गुह्यप्रदेश को सुतल, जंघाप्रदेश को तलातल, गुल्फप्रदेशको रसातल पादप्रदेश को महातल, पादतल को पाताल माना है) जाकर फिर बंकनाल में पृष्ठ वंशान्तरगत सुषुम्ना में प्रवेश होकर मेरुदंड में जो २१ ग्रन्थियाँ हैं उनको छेदन करता हुआ पृष्ठ त्रिकुटी में पहुँच कर सुषुम्ना नाड़ी के द्वारा दशमद्वार (ब्रह्मरंध्र) में प्रवेश करता है। तब योगी जीवन्मुक्त हो जाता है। त्रिकुटी तक तो माया तथा मृत्यु है।

त्रिकुटी ताँइ रामदास, पड़े काल की घात।
त्रिकुटी पहुँता सुन गया, जाकी पूरण बात॥ १॥
मन मनसा का रामदास त्रिकुटी ताँइ सूत।
आगे केवल ब्रह्म है जहाँ माया नहिं भूत॥ २॥
रामदास बीसोतरप (१८२०) तामें काती मास।
ता दिन छूँटी त्रिकुटी किया ब्रह्म में वास॥ ३॥

(श्रीरामवाक्यम्)

इस प्रकार ध्यान करने को पश्चिमध्यान कहते हैं इस ध्यान को करनेवाले मुक्त हो जाते हैं। एवं ध्येय का ध्यान करते करते जब ध्याता की वृत्ति अभेदात्मक स्थिर हो जाती है तभी समाधि अवस्था प्राप्त होती है।

२ समाधि—

१ तदेवार्थमात्रनिर्भासं स्वरूपशून्यमिव समाधि।
२ धातृ-ध्येय-ध्यान-कल्पनवद् ध्यान तद्रहितं समाधि।

ध्यान अर्थ मात्र रहजाय और स्वरूप शून्यता प्रतीत हो उसे समाधि कहते हैं। ध्येय में एकाग्रचित्तवृत्ति की स्थिति को समाधि कहते हैं। इस स्थिति में ध्याता (योगी) ध्यान (चिंतन) ध्येय (वस्तु) इन त्रिपुटी की कल्पना जिसमें हो वह सविकल्प तथा संप्रज्ञात समाधि कहाती है। और जिसमें ध्यातृ आदि त्रिपुटी का

स्फुरण तक नहीं हो यह निर्विकल्प समाधि तथा असंप्रज्ञात समाधि कहाती है। उसके लक्षण योगशास्त्र में ये हैं।

सलिले सैंधवं यद्वत् सात्म्यं भजति योगतः।
तथात्ममनसोरैक्यं समाधिरभिधीयते ॥ १ ॥

अर्थात् जिस प्रकार जलमें सैंधव (नमक का टुकड़ा) एकरूप हो जाता है इसी प्रकार योगी समाधि अवस्थामें आत्मा और मनकी एकता को प्राप्त हो ब्रह्ममें लीन हो जाता है। और उसको देहसंबंधी कुछ भी ध्यान नहीं रहता उसी को समाधि अवस्था कहते हैं।

यह समाधि दो प्रकार की होती है।

एक जड़समाधि. दूसरी चेतनसमाधि.

चेतनसमाधि के दो भेद हैं.

एक पिपीलिकामार्ग. दूसरा विहंगममार्ग.

विहंगममार्ग के भी दो भेद हैं—

एक युंजानयोगी. दूसरा युक्तयोगी.

परंतु ये सब भेद संप्रज्ञात तथा असंप्रज्ञात समाधिके अंतर्गत आचुके हैं। अतएव मुख्य समाधि दो प्रकार की ही हैं

समाधि के पर्यायवाचक शब्द १५ हैं—१ राजयोग २ समाधि ३ उन्मनी ४ मनउन्मनी ५ अमरत्व ६ लय ७ शून्याशून्य ८ परंपद ९ अमनस्क १० अद्वैत ११ निरालंब १२ निरंजन १३ जीवन्मुक्ति १४ सहजावस्था १५ तुर्या।

समाधि का दूसरा क्रम स्कंदपुराण में इस प्रकार लिखा है।

एकश्वासमयी मात्रा प्राणायामे निगद्यते।
प्राणायामद्विषट्केन प्रत्याहार उदाहृतः ॥ १ ॥
प्रत्याहारद्विषट्केन धारणा परिकीर्तिता।
भवेदीश्वरसंगत्यै ध्यानं द्वादशधारणम् ॥ २ ॥
ध्यानद्वादशकेनैव समाधिरभिधीयते।
यत् समाधौ परं ज्योतिरनंतं स्वप्रकाशकम् ॥ ३ ॥

प्राणायाम में एक श्वास की मात्रा।

बारह प्राणायाम का एक प्रत्याहार।

बारह प्रत्याहार करने से एक धारणा।

बारह धारणा का साधन करने से एक ईश्वर से संगति प्राप्त करनेवाला ध्यान प्राप्त होता है।

इस प्रकार के ध्यान वारंवार करने से एक समाधि होती है। इस समाधि अवस्थामें परमज्योति अनंत स्वप्रकाशमय परब्रह्म परमात्मामें तन्मयता प्राप्त हो जाती है।

धारणा पञ्चनाडीभिर्ध्यानं षष्टिकनाडिकम् ।
दिनद्वादशकेन स्यात्समाधि प्राणसंयमात् ॥ १ ॥ (गोरक्षपद्धति)
निर्गुणो ध्यानसंपन्न समाधिं च ततोऽभ्यसेत् ।
दिनद्वादशकेनैव समाधिं समवाप्नुयात् ॥ १ ॥ (मार्कंडेयपुराण)
पट् श्वासा की एक पल इसा सास सो खाय ।
छठे महीने खेतसी सुरति मेरु चढ जाय ॥ १ ॥ (खेतसीयोगीराज)

ऐसी दशा प्राप्त होने का मुख्य साधन योग है । इस विषय के संबंध में पहिले बहुत कुछ लिखा जा चुका है उससे जो कुछ अवशिष्ट रहगया है उसीका दिग्दर्शन संक्षेप से यहा कराया जाता है ।

योग का सब खेल यथावत् मन और वायु के ऐक्य होनेसे ही सिद्ध होता है । क्योंकि जब इनकी एकता होगी तब चित्त एकाग्र होकर जिस काम में लगेगा तो वह कार्य अवश्य ही सफल होगा । भगवान् पतंजलि ने भी योगदर्शन में लिखा है ।

१ योगश्चित्तवृत्तिनिरोध ।
२ युज्यतेऽसौ योग ।
चित्त की वृत्ति के निरोध को योग कहते हैं । १ ।
जो युक्त किया जाय उसको योग कहते हैं । २ ।
योग दो प्रकार का होता है—
एक हठयोग और दूसरा राजयोग ।

हठयोग में आसनाभ्यास की तथा आग्रहयुक्त और हठयुक्त नियमों की प्रधानता होती है ।

राजयोग में ध्यानधारणाद्वारा मन सामर्थ्य बढानेका महत्त्व विशेष है तथा आत्मशक्ति का अनुभव लेना मुख्यतया होता है इन दोनों में से राजयोगकी प्रशंसा अधिक की है । राजयोग को ही सहजयोग, सहजावस्था और समाधि कहते हैं । सर्व हठयोग के उपाय राजयोगकी सिद्धि के लिये ही किये जाते हैं जब राजयोगसिद्ध हो जाता है तो पुरुष मृत्यु को भी जीत लेनेवाला हो जाता है ।

सर्वे हठलयोपाया राजयोगस्य सिद्धये ।
राजयोगसमारूढ पुरुष कालवंचक ॥ १ ॥

अतएव राजयोग ही योगों में प्रधान माना गया है ।

योग के अष्टांग

१ यम, २ नियम, ३ आसन ४ प्राणायाम, ५ प्रत्याहार ६ धारणा, ७ ध्यान, ८ समाधि ।

यम—१ अहिंसा २ सत्य ३ अस्तेय ४ ब्रह्मचर्य ५ अपरिग्रह ।
नियम—१ शौच २ संतोष ३ तप ४ स्वाध्याय ५ ईश्वरप्रणिधान ।

आसन—चौरासी लक्ष हैं उनमें से जो मुख्य हैं उन का वर्णन पश्चिमध्यान साधन में देखिये।

प्राणायाम—तस्मिन् सति श्वासप्रश्वासयोर्गतिविच्छेदः प्राणायामः। पद्मासन सिद्धासन में से कोई भी आसन लगाके श्वास प्रश्वास की गति को रोक कर बैठने को प्राणायाम कहते हैं। इसके तीन प्रकार हैं १ पूरक २ कुंभक और ३ रेचक।

लक्षण—

इडया पवनं पिब षोडशभिश्चतुरुत्तरषष्टिकमौदरकम्।
त्यज पिंगलया शनकैः शनकैर्दशभिर्दशभिर्दशभिर्घधिकैः॥ १॥

अर्थात्—वाम नासापुट से सोलहवार प्रणवस्मरण करता हुवा वायु को ऊपर खींचकर पान करे (इसी को पूरक कहते हैं) तत्पश्चात् उस वायु को ६४ चौसठ वार ॐकार का स्मरण करने पर्यंत उदर के भीतर धारण कर रखे (इसको कुंभक कहते हैं) तत्पश्चात् दाहिने नासापुट से उस वायु को धीरे धीरे वतीस वार ॐकार स्मरण की मात्रा के प्रमाण से बाहर निकाले फिर कुछ देर बाहर श्वास को रखे फिर दहिने नासापुट से १६ सोलह वार वायु खीचे। इस भाँति ६४ वार में कुंभक (धारण करना) ३२ वार मे रेचक और १६ वार मे पूरक करे ऐसा तीन वार करने से एक प्राणायाम होता है।

इस प्राणायाम के दो भेद हैं सगर्भ और अगर्भ। जिस में ॐकार तथा राममंत्र का जप और ध्यान हो वह सगर्भ है। और जिसमे प्राणायाम के सिवाय जप ध्यान वगैरह कुछ भी नहीं किया जाता है वह अगर्भ है। अगर्भ से सगर्भ प्राणायाम १०० गुणा अधिक फलदायक है।

जपध्यानं विनाऽगर्भं सगर्भस्तत्समन्वयात्।
अगर्भात् गर्भसयुक्त प्राणायाम शताधिकः॥ १॥ (महाभारत)
जाप्येन तु जपं कुर्यादविलंवितमद्रुतम्।
मनसैव प्रसख्यात प्राणायामविधौ सदा॥ २॥ (नंदिपुराण)

अर्थात् सगर्भ प्राणायाम मे जप करना वह न तो अधिक धीरे से न अधिक जल्दी से करना समानवृत्ति से मन ही मन में गिनती लगाके जप करना चाहिये। इस रीति के साधन को प्राणायाम कहते है। इसके और भी कई भेद हैं यथा १ जघन्य, २ मध्यम, ३ उत्कृष्ट। और कुंभक ८ प्रकार का है १ सूर्यभेदन, २ उज्जई, ३ सीत्कारी, ४ शीतली, ५ भस्त्रिका, ६ भ्रामरी, ७ मूर्छा, ८ प्लावनी, इनके करने से कुंडलिनी जाग्रत होती है।

प्रत्याहार—जो पाचों इंद्रियों के शब्दादि विषयों से मनको हटाने से होता है। इसके भी पांच भेद है कई कई इसके अठारह भेद भी कहते हैं।

ऐसे अनहद नाद को श्रवण करता हुवा मन जब ब्रह्मरंध्र में प्रवेश कर परब्रह्म से मिल्जाता है तब त्रिगढ अर्थात् हृदय, कंठ, भ्रूमध्य, स्थानस्थ तीनों प्रबल ग्रंथिरूप गढ (किले) को भेदकर ब्रह्मपद, विष्णुपद और रुद्रपदरूपी तीनों पदसे भी पर परब्रह्मरूपी चौथे परमानंद पद को प्राप्त हो जाता है। इस प्रकार से जब अपानवायु प्राणवायु से मिलकर कुंभकद्वारा निरुद्ध होता है तब चित्तका ध्यान उस परब्रह्म परमात्मा की ओर लगने और ध्येयाकार वृत्ति प्राप्त होने से समाधि लगाने की अवस्था प्राप्त हो जाती है।

अष्टादशसु यद्वायोर्मर्मस्थानेषु धारणम्।
स्थानात् स्थानात् समाकृष्य प्रत्याहारो निगद्यते ॥ १ ॥

धारणा—एक लक्ष्य पर वा ध्येय पर चित्तवृत्ति स्थिर करने को कहते हैं। यह धारणा ५ प्रकार की है–१ स्तमनी २ द्राविणी ३ दाहिनी ४ शोषणी ५ भ्रामणी। ये पृथिव्यादि पंचभूतों की है। शरीर में इनके ये स्थान हैं

१ पादादिजानुपर्यंतं पृथिवीस्थानमुच्यते।
२ आजानो पायुपर्यंतमपांस्थान प्रकीर्तितम् ॥ १ ॥
३ आपायोर्हृदयान्तं यद्वह्निस्थानं तदुच्यते।
४ हृन्मध्यात्तु भ्रुवोर्मध्ये यावद्वायुकुलं भवेद् ॥ २ ॥
५ आभ्रूमध्यात्तु मूर्धान्तमाकाशस्थानमुच्यते ॥

इन पांचों स्थानों में पांच पांच घटिकापर्यंत प्राण रोक कर महादि देवता का ध्यान करने से भूमि आदि पांच तत्वों का जय हो जाता है।

ध्यान –तत्र प्रत्ययैकतानता ध्यानम्।

समाधि —तदेवार्थमात्रनिर्भासं स्वरूपशून्यमिव समाधि। इनके सिवाय नेती, धोती, ब्रह्मदाँतन गजकर्म, नौली वस्ती गणेशक्रिया, वागीशकर्म शंखपखाली, त्राटक आदि साधन तथा १ महामुद्रा २ बंधमुद्रा ३ महावेधमुद्रा ४ खेचरीमुद्रा ५ उड्डियानमुद्रा ६ मूलबंधमुद्रा ७ जाल्धरमुद्रा ८ विपरीतकरणीमुद्रा ९ वज्रोलीमुद्रा १० शांभवीमुद्रा ये दश महामुद्रा हैं। इनका साधन करने से चित्तको शांति प्राप्त होती है। और लयावस्था भी शीघ्र प्राप्त होती है इनका विस्तारपूर्वक वर्णन 'गोरक्षपद्धति' 'हठयोगप्रदीपिका' 'शिखोपनिषद्' आदि योग के ग्रंथों में देखिये। इन पूर्वोक्त साधनोंके क्रमाभ्याससे लयावस्था प्राप्त होती है।

आज कल के धूर्त योगी पाखंडी शरीरशुद्धिपूर्वक आत्मानुभव के लिये नहीं किंतु लोकमान्यता के लिये केवल नेती, धोती ब्रह्मदातुन उड्डियानबंध त्राटकादि क्रिया

धरिया नहिं धारूं अधर आधारूं सहजाँ सेवकरंदा है ।
दशमें मिल द्वारी लाई तारी अम्मर वींद वरंदा है ॥ १६ ॥
मनवा थिर पवना पांचूं दमना प्याला अजर पिवंदा है ।
निरमल जहां नूरा उदय अंकूरा परमानंद परसंदा है ॥ १७ ॥
तिरवेणी छाजै ब्रह्म विराजै निरभै राज करंदा है ।
झिलमिल्ला जोती ओत रु पोती जीव रु शीव मिलंदा है ॥ १८ ॥

जब समाधि अवस्था प्राप्त होती है उस समय नाम रूप धारण करने-वाले सगुण ब्रह्म की ध्यान धारणा मिटजाती है । और नाम रूप रहित निरंजन निराकार परब्रह्म परमात्मा का आश्रय (अवलंबन) प्राप्त कर स्वतः स्वाभाविक रीति से ही (आपसे आप) सेवा करने लगता है । एवं दशम द्वार (ब्रह्मरंध्र) में मन और प्राण मिलकर अमर वींद (परम पुरुष

दिखाकर योगकी बडी बडी डींगें मारते हैं । उन फरो वाजोंको योगी मत समझो, ये तो पेटभराई का रस्ता इन्होंने निकाल लिया है । इन धूर्तचालाक योगियों के फन्दे में आगये तो जर और जान दोनों से ही हाथ धो बैठोगे, सिवाय लोकमान्यताके खाली इन दिखाने की क्रियाओं में क्या पडा है—

मनकी मिटी न वासना नवतत कियो न नाश ।
तुलसी केते पचिमरे देदे तनकों त्रास ॥ १ ॥
पाणीमांही परगटी पावक एक प्रचंड ।
सात द्वीप साबत रह्या दग्धभया नवखंड ॥ २ ॥

यदि आपको इसकी चाट लगगई है अभ्यास करना चाहते हैं तो चेटकचेटक बातें बनानेवाले चुट्पुट्यियों के कथन को छोडकर अच्छे भजनानंदी योगिराज सद्गुरु की तलास करो कि जिस गुरु के पास अभ्यास करने से अपना जन्म सफल कर आप कृतकृत्य होजाँय ।

(टिप्पणीकार)

१ जाप न अजपा जहँ नहीं, तहँ नहिं सास उसास ।
हरिया जीव रु शीव का, एक अखंडी वास ॥ १ ॥

(हरि० वाक्यम्)

सी अवस्था को निर्विकल्प समाधि कहते हैं ।

---

1 अंत.करण । 2 ब्रह्मज्ञान । 3 सात धातु । 4 नव तत्व ।

परमात्मा) का करमेलन करता है। मानों मन प्राणरूपी स्त्री ने परब्रह्म रूपी वरसे कर मेलन (हथ लेवा जोड) कर विवाह किया है॥ १६॥

मन की गति स्थिर होजाती है तब पाचों ही पवन (प्राण, अपान, समान, उदान, व्यान नाम के वायु) दमन (वशीभूत अथवा काबूमें) होजाते हैं। और अजर प्याला (ब्रह्मानद रूपी प्याला) पीने लगजाते हैं। जहाँ निर्मल निर्विकार शुद्ध सच्चिदानद सरूपी नूर (ज्योति) के दर्शन का अकुर उदय होता है तहाँ परमानद परब्रह्म की प्राप्ति होती है॥ १७॥

जहां त्रिवेणी (त्रिकुटी स्थान) पर परब्रह्म विराजमान होकर निर्भय राज्य करता है उसी की झिलमिल्ज्योति (प्रकाशमानज्योति) में जीव और शिव (ब्रह्म) तिलमें तैल के समान ओतपोत होकर मिल जाते हैं॥ १८॥

हरि हीरा पाया विणज कराया तोल न मोल लहदा है।
हरि हीरा होती पारख कोती खोट न चोट चढदा है॥ १९॥
मन पचे रहता मुजा न कहता अतर लिव लगदा है।
सुध बुध को विसरी सुरत न निसरी पूरण ब्रह्म अनदा है॥ २०॥
जीवत जहाँ मुर्त्ती शिवमिल शक्ती जन्म न फेर मरदा है।
अम्मी रस पीया जुगजुग जीया खालिक मिल खेल्दा है॥ २१॥

हरिरामदासजी महाराज ने फरमाया कि मैंने ध्याता ध्यान ध्येय इस त्रिपुटी के ऐक्यतारूपी अनमोल हीरे को पाया फिर उसका विणज (व्यापार) शुरू किया तो न तो तोल ही ज्ञात हुआ और न मोल ही ज्ञात हुआ (अचिंत्य अतुल अमूल्य है) इस हीरे की परीक्षा कठिन है। यह हीरा ऐसा प्राप्त हुआ कि जो न तो कभी खोटा होवे न कभी चोट ही चढने का प्रसंग आवे॥ १९॥

पच=पचायत में बैठकर निर्णय करनेवाला विचार करता जैसे मध्यस्थ पुरुष होता है वैसे ही इस शरीर में अत करण का अगुआ मन-

रूपी पंच है उस हीरे की परीक्षा करनेवाला रहते हुए भी वह (मन) अपने मुखसे कुछभी वर्णन नहीं कर सका और भीतर ही भीतर लो लगादी और सब सुध बुध भूलगया, परंतु जो सुरत पूरण ब्रह्म आनंदरूप में बस गई थी वह नहीं निकली ॥ २० ॥

शिव और जीव का योग (मेल) सुषुम्ना में जहाँ हुआ बस यही जीवन्मुक्ति है और इसीसे जन्म मरण का फेरा मिट जाता है और अमृत-रस का पान कर युगोयुग जीवित रह अखिल ब्रह्मांड के स्वामी सच्चिदानंद आनंदकंद पूरण परब्रह्म परमात्मा से मिलकर खेलता रहता है ॥ २१ ॥

हंसा परहंसा एको अंसा सुन पर सुन सोहंदा है।
उड्डे विन पंखा मिले असंखा पार न को पावंदा है ॥ २२ ॥
जाहर जुग जोगी है अणभोगी ओघट घाट रमंदा है।
नाथन के नाथू मस्तक हाथू शिव ब्रह्मा सेवंदा है ॥ २३ ॥
हरिजन हरि जाणी वेद वखाणी शेष विष्णु ध्यावंदा है।
धरिया अवतारू अनँत न पारू रहता एक रहंदा है ॥ २४ ॥

जब आत्मा और परमात्मा दोनों एकरूप होकर परम शून्य स्थानमें विराजमान (सुशोभित) होते हैं अर्थात् आत्मा परमात्मा में तदाकार हो जाता है तब उसको विना पंख के उडनेकी सामर्थ्य प्राप्त हो जाती है। ऐसे अनगिनत आत्मा इस प्रकार लय होजाते हैं जिनका कोई पार नहीं है ॥ २२ ॥

जाहिरात में (प्रकटरूपमें) योगाभ्यासी योगी जान पडता है, परंतु अभोक्ता होकर वह औघट घाट में रमता रहता है। जिस के मस्तक पर ईश्वर के भी ईश्वर परमेश्वर का हाथ होजाता है। (परब्रह्म परमात्मा की जिसपर पूर्ण कृपा होजाती है) उसकी शिव ब्रह्मादि सर्व देवता सेवा करने लगजाते हैं ॥ २३ ॥

वेद कहते हैं जिनका शेष और विष्णु ध्यान करते हैं उन भगवान् को हरि के जनों ही ने जाना है। जिसने अनेक अवतार धारण किए जिसका न आदि है और न अंत है और जो सर्वदा एकही रहता है ॥ २४ ॥

अत नहि करण् बाल न तरण् वृद्ध न को वरपदा है ।
पाषाण न पाती छाप न ताती थान न आन थपदा है ॥ २५ ॥
अणघड अज्ञात् मात न तात् निराकार निर्द्वंदा है ।
हाट न कोइ शहरू विणज न वोहोरू खरच न को खूटदा है ॥२६॥
सूरा नहि सत्ती जोग न जत्ती जरा न जम पूजदा है ।
तीरथ नहि वरत् आभ न धरत् अकल कला आपदा है ॥ २७ ॥
नारि न को पुरुषा चतुर न मुरखा वेद न चार वचदा है ।
अनुभव पद बोल्या अतर खोल्या विधि विरला बूझदा है ॥२८॥

जिसके अत करण (मन, बुद्धि, चित्त, अहकार) नहीं हैं । और जो न बालक, न तरुण, (जवान) न वृद्ध है न आयुवाला है । और जो न पाषाण न पत्ता है और तप्तमुद्रा भी जिसके नहीं है और न जिसके कोई स्थान है न आन है ॥ २५ ॥

वह अनघड (आकाररहित) अजात (अजन्मा) माता पिता-रहित है । जो निराकार निर्द्वंद्वस्वरूप है । उसका न कोई शहर है न कोई दुकान है । न वाणिज्य करनेवाला है न लेन देन करनेवाला वोहरा है । न उसके खरच है न कमी उसके खूट ही आती है ॥ २६ ॥

न वह शूर है न सती (दानादि देनेवाला) है, न वह जोगी है न जती है, और जिसके पास न कभी जरा (बुढापा) और जम (मृत्यु) पहुच सकते हैं । न वह तीर्थ है न कोई व्रत है । न आकाश है और न धरती (पृथ्वी) है अर्थात् निरजन निराकार निर्विकल्प निर्गुण आदि मध्यातरहित वह अजन्मा और अकल है और कला का देनेवाला है ॥ २७ ॥

न स्त्री है न पुरुष है न चतुर है न मूरख है और चारों वेद भी जिसकी महिमा नहीं बाच सकते हैं और नेति २ कहते हैं । यह अनु भव की वार्ता जो गुप्त थी उस को पदों में और छदों में प्रकट की है जिसकी विधि कोई विरला ही समझ सकता है ॥ २८ ॥

मिलिया गुरु आदू पाय अनादू पूरबले लेखदा है ।
जाण्या हम जैसा कहिये कैसा कछु इक मन सरमदा है ॥ २९ ॥

कायम कुरबाणी कर आसाणी तुहि तुहि काम कमंदा है।
तूही है रामा तु ही रहीमा जन हरिराम जपंदा है ॥ ३० ॥

पूर्व जन्म के लेख से आदिगुरु मिलगये और उनकी कृपा से अनादि रूप को पाया (जाना) जैसा हमने जाना है उसको कैसे वर्णन किया जाय? क्योंकि वह अवर्ण्य है इसलिये मन बतलाने में कुछ संकोच करता है ॥ २९ ॥

यदि उपरोक्त विधि से स्थिर होकर अपने को इस पर कुर्बान करदोगे तभी आसानी से सफलता प्राप्त करोगे। ग्रंथ की समाप्ति में श्रीहरिरामदासजी महाराज ईश्वरके प्रति प्रार्थना करते हैं कि हे भगवन्! आपही राम हो आपही रहीम हो और जो कुछ हो सो आप ही आप हो ॥ ३० ॥

॥ इति श्रीहरिरामदासजी महाराजकृतनिसानी संपूर्णा ॥

पद.

भाई नाम समझीने बेसी रहिये आतमा चीन्हीने मनमा मगन थईये। टेक
रामने रहिमान तमे एक कर जानज्यो कृष्ण ने करीम एक कहिये।
विष्णु विसिल्ला में भेद नथि भाई अल्लाह अलख एक लहिये ॥ १ ॥ भाई० ॥
गफूर गोविंद तमे एक कर जाणज्यो मोलाने माधव गुण गहिये।
हरि हक ताला नो भेद तमे जाण्यो हवे चोरासी मार नव सहिये ॥ २ ॥ भाई०।
परवरदिगार प्रभु एक कर जानिये नब्बी नारायण चोंव्यो हइये।
चांवल ने चोखा पण डांगर छे एक एवु समझे तेना थई रहिये ॥ ३ ॥ भाई०।
साहेब नाम पाकछे प्रभु नो बीजो नापाक सव कहिये।
जे जे साधन कीधा तेमा पडे छे सांसो एथी ब्रह्मज्ञान नित न्हइये ॥ ४ ॥ भाई०।

अथ ग्रंथ नाम परचा प्रारभ[1] ।

सत गुर के सत शब्द तें, उपज्यो मन विश्वास ।
राम नाम छोड़ू नहीं, धरू न दूजा पास ॥ १ ॥
प्रथम राम रसना सुमर, द्वितिये कंठ लगाय ।
तृतिये हिरदै ध्यान धरि, चौथे नाभि मिलाय ॥ २ ॥

चौपाई ।

अध मध उत्तम त्रय धर ठानू । चौथे अति उत्तम अस्थानू ॥
यह चहुँ बिन देखे आसरमा । रामभक्ति को पावै मरमा ॥ १ ॥
अध सुमरन जू ऐसे कहिये । रसना राम राम कू गहिये ॥
निशिदिन रसना राम उचारा । ज्यों दुर बदीवान पुकारा ॥ २ ॥
ज्यों रसना तन यो तृण वेली । तन तृण संग ततु या मेली ॥
वेली पान फूल फल लागा । रसना राम सुमिरि भज भागा ॥३॥
अध सुमरन रसना से करिया । करतांई मुक्ति पार उतरिया ॥
रसना राम सुमर अध तालू । मध सुमरन की आया नालू ॥४॥
मध सुमरन जू ऐसा भाइ । मुख सुमरन छाल्त रह जाई ॥
गदगद कंठहि कमल विकासा । पाया प्रम भया परकासा ॥ ५ ॥
ज्यों घायल उर साल पीरा । त्यों त्यों व्यापे राम सरीरा ॥
घायल की घायल सो जानै । राम भजै सोई मन मानै ॥ ६ ॥
निश्चय रामनाम लिव लागी । भ्रमना कंठ कमल की भागी ॥
मध सुमरन की ये परतीति । अब उत्तम सुमरन की रीति ॥ ७ ।
उत्तम सुमरन हृदय स्थानू । माँहो माँहि भया धरि ध्यानू ॥
रसना लेत राम का नामा । उर भीतर पाया विश्रामा ॥ ८ ॥
सहजाँ सासा शब्द पिछानी । रसना सहत नाम निशानी ॥
उत्तम सुख सुमरन हिरदामें । यूं नारी पुरुष मन कामें ॥ ९ ॥
उत्तम सुमरन की सुधि आइ । इनि इक ध्यान रहा ठहराई ॥
अध मध उत्तम सुमर सुजाना । अति उत्तम के माँहि मिलाना ॥१०॥
अति उत्तम सुमरन जू एसा । या उपमा बरनू मैं कैसा ॥
अति उत्तम सुमरन परकारा । रोम रोम लागा रंकारा ॥ ११ ॥
अति उत्तम नाभी अस्थानू । मन सकल्प विकल्प न ठानू ॥
अति उत्तम सुमरन सरभंगा । अक्षर एक भया अणभंगा ॥ १२ ॥

---

१ दरवाजा ।

साखी ।

सुमरन मारग संतका, तातें भरम नसाय ।
हरिरामा हरि वंदगी, करिहौं चित्त लगाय ॥ १ ॥

छंद प्रयात भुजंगी ।

नाम चेतन्न कूं चेत भाई । नाम तें चित्त चौथे मिलाई ॥ १ ॥
नाम तें केवला होय भजना । नाम तें सहज सुमिरन्न रसना ॥ २ ॥
नाम तें अज्जपा जाप ओऊं । नाम तें सास उस्सास सोऊं ॥ ३ ॥
नाम तें हक्क है एक अल्ला । नाम महमान की आखि गल्ला ॥ ४ ॥
नाम तें चंद सूरा समेला । नाम तें करत मन सुक्ख केला ॥ ५ ॥
नाम तें खोलि कप्पाट गैणूं । नाम तें ध्यान ताटक्क नैणुं ॥ ६ ॥

साखी ।

नामी परचा नामका, गुरु तें पाया ज्ञान ।
हरिया पूरव एक पल, धऱ्या गगनमें ध्यान ॥ १ ॥

छंद प्रयात भुजंगी ।

पलटि पूर्व अपुरव्व प्याणा । करि वंकनाली लिये मेरु थाणा ॥ ७ ॥
ध्यान आकास धरि अधर छाजै । सुरति अरु शब्दका एक राजै ॥ ८ ॥
मन बुद्धि चित अरु अहंकारा । पाँच पच्चीस मिल एक यारा ॥ ९ ॥
नाद अनहद्द जहाँ तूर वाजै । विन वादलाँ वीज विन अंबु गाजै ॥ १० ॥
विन गंग जमुना वहै नीर पारा । चलै सुषमणा सीर अमृत्त धारा ॥११॥
झिलमिला होत जहाँ अखंड ज्योती । निर्मला नूर तहाँ ओत पोती ॥१२॥
अगम अप्पार अवगत्त यारा । मिला मुज्झमें मुज्झ पीतम्म प्यारा ॥१३॥
फदल कूँ जीत पति अदल साँई । सुन्य का सहर निरभै वसाँई ॥ १४ ॥

साखी ।

हंसा सुन सरवर मिल्या, सरवर हंस मिलाय ।
हरिया पैर सर खेलताँ, सहजाँ रहे समाय ॥ १ ॥

छंद प्रयात भुजंगी ।

सहज तन मन्न करि सहज पूजा । सहज सा देव नहिं और दूजा ॥१५॥
सहज का जोग साझन्न पवना । सहज थिर नाद अरु विंद गगना ॥१६॥
सहज तीर्थ जप तप्प ध्यानू । सहज पट्कर्म सेवा सनानू ॥ १७ ॥
सहज कछ काछ कीर्तन्न काजा । सहज का शब्द सुर वाय वाजा ॥१८॥

---

१ गहन । २ मेघ, जल । ३ परसर, सबके ऊपर का सर ।

सहज में नाच दे नृत्य ताली। सहज आकाश पर भोम माली॥ १९॥
वंदना सहज करि शीस धरिया। सहज हरिनाम बक्सीस करिया॥२०॥
सहज का भेद सोइ भेद भेदे। सहज बिन और दूजा न खेदै॥ २१॥
सहज का भेद सोइ सत जाणै। हद कू जीत बेहद माणे॥ २२॥
सहज आसण किया सहज वासा। सहज में खेल अजीत पासा॥२३॥
सहज का खेलणा खूब भाइ। सहज सम्माधि सहजा मिलाई॥ २४॥

साखी।

सहजाँ मारग सहज का, सहज किया विश्राम।
हरिया जीव रु सीव का, एक नाम अरु ठाम॥ १॥

छंद प्रयात भुजंगी।

जीव अरु सीव मिल एक राई। पूरणा ब्रह्म जहाँ सुरत दाई॥ २५॥
आदि अरु अंत ना मध्य कोई। जीव जहाँ शिव मिल एक होई॥ २६॥
जीव अरु सीव का ओधि वासा। ना आभ धरती न होने निरासा॥२७॥
जीव अरु सीव करि एक जाणी। मिले सिंधु सिधाँ जिमि बूंद पाणी॥२८॥
ब्रह्म निरपाय गुण गवं गलिया। जरा नाहिं चप भय कप टलिया॥२९॥
ब्रह्म भवतार भव रहत होई। ब्रह्म अवगत्त आनंद सोई॥ ३०॥
ब्रह्म निर्बंध निवाण निसु। ब्रह्म पी अपी परमा निरत्तु॥ ३१॥
ब्रह्म अनहद्द अनबी नबीसा। ब्रह्म अन्नाथ के नाथ ईसा॥ ३२॥
ब्रह्म विदेह देवन देवा। ब्रह्म निरपाप निरपुण्य लेवा॥ ३३॥
ब्रह्म अडोल भय नाहिं डोलै। ब्रह्म अबोल ता नाम बोलै॥ ३४॥
ब्रह्म अत्तोल नहि मोल माया। ब्रह्म अप्पार किन पार पाया॥ ३५॥
ब्रह्म निरँजन निगुण न्यारा। ब्रह्म परमातमा आतम्म प्यारा॥ ३६॥
ब्रह्म अगाध कोइ साधु जाणी। ओर गुर दीन सिर नाक ताणी॥३७॥

साखी।

जीव सीव मिल एकठा, रहे निरंतर छाय।
हरिया ब्रह्मानंद में, ना कोइ ओर समाय॥ १॥

छंद भुजंगी।

न को रस भोगी। न को रहत न्यारा॥
न को आप हरता। न कर्तु व्यवहारा॥ १॥

---

१ नाशरहित। २ शान्त। ३ एलक कातिब नमनेवालोंके इश है। ४ जिसकी उत्पत्ति मातापितासे न हो।

न को विष्णु ब्रह्मा । न कोई नरेशं ॥
न को आदि शक्ती । न कोई महेशं ॥ २ ॥
न को नाद विंदु । न को जीव जिंदा ॥
न को आभ धरती । न कोई गिरिंदा ॥ ३ ॥
न को मोह माया । न को काम क्रोधं ॥
न को वृद्ध तरुणा । न को बाल बोधं ॥ ४ ॥
न को खाणि च्यारे । न को च्यार वाणी ॥
न को चंद सूरा । न को पौन पाणी ॥ ५ ॥
न को मास पक्षं । न को तिथ्थि वारा ॥
न को राति दिवं । न को अंधियारा ॥ ६ ॥
न को सात द्वीपं । न को नव्व खंडा ॥
न को तेज तारा । न को ब्रह्म अंडा ॥ ७ ॥
न को सिंधु सरिता । न को ढारं भारूं ॥
न को तीन लोका । न को जुग्ग च्यारूं ॥ ८ ॥
न को ऋद्धि सिद्धं । न को मान धाता ॥
न को आय जावै । न को नेह नाता ॥ ९ ॥
न को नारि पुरुषा । न को जाति पाँती ॥
न को ऊंच नीचा । न को छोति भ्राँती ॥ १० ॥
न को लोक लज्जा । न को कुटुंब धर्मा ॥
न को पित्त मातं । न को भर्म कर्मा ॥ ११ ॥
न को थान मानं । न को पान पाती ॥
न को देव दोसं । न को जग्ग जाँती ॥ १२ ॥
न को शुद्धि किरिया । न को वेद पाठं ॥
न को मुख वाणी । न को मौनं काठं ॥ १३ ॥
न को तन्न त्यागी । न को गृह चारा ॥
न को नव्व नाथूं । न को पंथ बारा ॥ १४ ॥
न को जोग जुगता । न को जत्तजोखा ॥
न को सांत सुरखं । न को दृश्श दोखा ॥ १५ ॥

---

१ सुमेरु आदि । २ अठारह भार वनस्पति । ३ एक चक्रवर्ती राजा । ४ जात देनेवाला । ५ काष्ठवत् मौन न बोले न चेष्टा करै । ६ नवनाथ=आदिनाथ, परमानन्दनाथ, प्रकाशानन्दनाथ, काकुलेश्वरानन्दनाथ, कोलेश्वरानन्दनाथ, भुगानन्दनाथ, सहजानन्दनाथ, गगनानन्दनाथ, विमलानन्दनाथ । ७ नाथोंके तथा वाममार्गमें १२ पन्थ हैं. बारहवाट अठारह पेडा । ८ जतजोखा=इद्रियदमनका हिसाब=नववाड यथा—

न को मन्न वाचा। न को खाल शान्दी॥
न को हद्द माही। न को वेह हद्दी॥ १६॥
न को राग दोप। न को वध मोपा॥
न को घाटि वाध। न को आध ओपा॥ १७॥
न को राज तेज। न को देश पत्ती॥
न को महल छाना। न को रूप रत्ती॥ १८॥
न को खवास दासी। न को आसपास॥
न को साथ सगी। न को साल वास॥ १९॥
न को राग वाग। न को पट्ट भाषा॥
न को हाले मारी। न को लक्ग पाषा॥ २०॥
न को सूर सत्ती। न रो राग वारा॥
न को आगि लागे। न को जूझ मारा॥ २१॥
न को शौगन सोइ। न को दूज दाखे॥
न को जाति जूइ। न को पक्स राखे॥ २२॥

तियथन्वास प्रेमरुचि निरखन द परिच्छ भाखन मधु वैन
पूर्वभोग केलिरस चिंतन गुदअ ज्हार लेत चित चैन।
करि शुचि तन शृगार बनावत तिय परपक म यमुखसन
मन्मथरथा उदर भरि भोजन ये नववाड़ ज्ञानमत जैन॥ १॥

अथवा यतिजोका दशनामका हिसाब नहीं है। दशनाम=तीर्थ आश्रम वन अरण्य गिरि पर्वत सागर सरस्वती भारती पुरी ये दशनाम शकराचार्य स्वामीके चार प्रधान शिष्योंसे चले है जिन चारोंके नाम=पद्मपादाचार्य हस्तामलकाचार्य मण्डनाचार्य तोटकाचार्य।

स्वामी पद्मपादके २ शिष्य तीर्थ आश्रम।
हस्तामलकके २ शिष्य वन अरण्य।
मण्डनके ३ शिष्य गिरि पर्वत सागर।
तोटकके ३ शिष्य सरस्वती भारती पुरी।

स्वामी शकराचार्य के स्थापन किये हुए चार मठोंमें इन दस प्रशिष्योंकी शिष्य-परंपरा चली जाती है।

मठ ४—शृगेरीमठ शारदामठ गोवर्द्धनमठ जोशीमठ पर्याय (बद्रिकाश्रम करवीर पीठ द्वारकापीठ शारदापीठ)

पुरी	तीर्थ	वन	गिरि
भारती	आश्रम	अरण्य	पर्वत
सरस्वती			सागर

५ प्रथमसुख निरोगी काया शान्ति। १ कायिक वाचिक मानसशान्ति।

१ संपूर्ण। २ संस्कृत प्राकृत शौरसेनी मागधी पाचैनी अपभ्रंश। ३ परिस्थिति। ४ मालदार अर्थात् मालकी हालत। ५ युद्ध। ६ गना भाग। ७ सम्बन्ध, बही। ८ जुदी।

न को ध्वज नेजा । न को तूरवाजै ॥
न को मेघ वरषा । न को वीज गाजै ॥ २३ ॥
न को दैत्य देवा । न को दसावतारा ॥
न को खेल जूवा । न को जीत हारा ॥ २४ ॥
न को भक्ति नवधा । न को पट्ट वरनूं ॥
न को कान्ह गोपी । न को कीरतनूं ॥ २५ ॥
न को मूर्ति सेवा । न को देव द्वारा ॥
न को भोग चाढ़ै । न को खाण हारा ॥ २६ ॥
न को तीर्थ व्रत्त । न को असनाना ॥
न को होम जापू । न को तप्प दाना ॥ २७ ॥
न को पिंड पोहरा । न को चोर लागै ॥
न को रैण सूता । न को दिन जागै ॥ २८ ॥
न को च्यार वेदं । न को है पुराना ॥
न को है कतेबा । न को है कुराना ॥ २९ ॥
न को अवल हिंदु । न को कोलं मुल्ला ॥
न को दाय पालं । न को मेंह रसुल्ला ॥ ३० ॥
न को राह पीरां । न को तेग मरदां ॥
न को हक्क मूवां । न को हक्क करदां ॥ ३१ ॥
न को सुनत काजी । न को वंग न्वाजा ॥
न को ईद रोजा । मक्का नाहिं ख्वाजा ॥ ३२ ॥
न को राव रंकू । न को सुल्तताना ॥
न को खाक पाकं । न को मस्सताना ॥ ३३ ॥
न को भूत प्रेतं । न को जक्षजूणा ॥
न को काल जालं । न को तत्त तूणा ॥ ३४ ॥
न को स्वप्न जागै । न को सुक्ख पत्ती ॥
न को पद्द तुरिया । न को मोक्ष मुक्ती ॥ ३५ ॥

साखी ।

ज्यों देख्या त्यों मैं कह्या काणं न राखी काय ।
हरिया परचा नाम का तन मन भीतर पाय ॥ १ ॥

---

१ निशान । २ तुरी, नगारा । ३ जोगी जगमं सेवड़ा सन्यासी दरवेष । छट्यें दर्शन विप्रैंका जामे मीन न मेष ॥ १ ॥ ४ म्लेच्छजाति । ५ मुहम्मद । ६ रसूल=पैगवर । ७ छुरी । ८ बादशाह, सम्राट् । ९ मर्यादा ।

दारंकर्म पावक वसै यू आतम घट माहिं।
हरिया पयमे घृत्त है विन मथियाँ कछु नाहिं॥ २॥

इति नाम परचा।

अथ पदवत्तीसी।

चरण।

एक शब्द में कहि समझाऊँ, सुनिहो सव ससारा।
रामनाम सो सारशब्द है, और कथन है छारा॥ १॥
आपा भेद विना सोइ सुरता, कहै सुणै सो झूठा।
जबलग अनुभव तत्व न दरसै, मरि मरि आवै पूठा॥ २॥
मनको उलटि गहै जो गाढा, पकडे पाँचू थाना।
तीन गुणा की माया त्यागै, पद पावै निरवाना॥ ३॥
माया मोह विषय ससारा, दुस्तर मारग दूरा।
कायर ताहि बीचम गडिया, टाकि परे सो सूरा॥ ४॥
सूर महातम सझि सग्रामा, स्वामि काम इक धारा।
राग त्यागि दोऊँ दल झाडे, मोहै खल दल मारा॥ ५॥
जोग जग जपतप अज्ञाना, ये सब आशा वधी।
पूरण ब्रह्म सकल से न्यारा, दुनी न जानै अधी॥ ६॥
निगुण पद का भेद नियारा, कह्या सुण्या नहिं पावै।
आपा उलटि आपमे देखै, जब ते मन पतियावै॥ ७॥
भाव हीण करि पृथिवी होसी, पूजा दामिक चाडा।
नानाविधि का मारग होसी, रामनाम वटवाडा॥ ८॥
मै नहिं कहत कहत परवाना, सुनिहो सवै सयाना।
म तैं रागद्वेष जग वधे, ये कलि के अहनाना॥ ९॥
दुनियाँ दुष्ट वुद्धिना होसी, मनमुख ज्ञान समथा।
घता की कता करि जानै, अर्था करै अनर्था॥ १०॥
वक्ता वेद यकै वहुतेरा, महजाँ सुद्धि न आवै।
नाटक चेटक करिकरि ऊला, पैला पार न पावै॥ ११॥
वावू पलटि नाम धरि वावा, वहुरँग भसी लाया।
देहदशा करि भया दिगवर, मन वैराग्य न पाया॥ १२॥
वाहिर प्रेम रामका वाना भीतर भरा भँगारू।
या तनको कारी नहि लागै, मनवा भरा विकारू॥ १३॥

काष्ठ। २ विषय।

शुन्य सुभर में बालक आया, त्वचा हाड नहिं माँस।
जाति पाँति बरण नहिं वाके नाम ज धरिये काँस॥ ३०॥
अगम निगम बिच खेल हमारा, जहँ एको निरवासा।
रूप रेख नख शिख नहिं जाके, देह न गेह न सासा॥ ३१॥
जैमलदास गुरू परतापे, तोड्या भ्रम किवारू।
जन हरिराम कहत हैं सन्तो, पदबत्तीस विचारू॥ ३२॥

साखी।

पदबत्तीस विचारिके, उपज्यो आतम ज्ञान।
आपा ले उन्मन रहै, लहै परम निज ध्यान॥ १॥

इति।

अथ प्रश्नोत्तरी।

चौपाई।

प्रश्न।

कहो कौन घर प्रेम निवासा। कहो कौन घर ध्यान प्रकासा॥
कहो कौन घर मन मिल पवना। कहो कोन घर सहज सुमरना॥ १॥
कहो कौन घर भ्रमरा भरि है। कहो कोन घर नीझर झरि है॥
कहो कौन घर अनहद तूरा। कहो कौन घर परसत नूरा॥ २॥
कहो कौन घर उन्मनि लाइ। कहो कोन घर सुरति समाई॥
कहो कोन घर पीव मिलावे। कहो कौन घर आय न जावे॥ ३॥

उत्तर।

कंठ कमल घर प्रेम निवासा। हृदय कमल घर ध्यान प्रकासा॥
नाभि कमल घर मन मिल पवना। रोम रोम घर सहज सुमरना॥४॥
बंक नाल घर भ्रमरा भरि है। अध ऊर्ध्व घर नीझर झरि है॥
सून्य शिखर घर अनहद तूरा। दशम द्वार घर परसत नूरा॥ ५॥
त्रिकुटी घर उन्मनि लाई। सुरत निरत घर माँहिं समाई॥
तिरवेणी घर पीव मिलावे। शिवसत्ता घर आय न जावे॥ ६॥
जन हरिराम जहाँ घर पाया। जन्म मरण सन्देह मिटाया॥
निज गुरुगम देखे नर दूरा। ब्रह्म बताया आप हजूरा॥ ७॥

साखी।

गुप्त हमारी जो करै, सोई हमारा यार।
हरिरामा दूजी दुनी, जाकों ऊभ जुहार॥ ८॥

इति।

अथ रेखता ।

(१)

जिंदरी भीतरे अजब जोगी वसै । जुक्ति बिन जाणिया नाहिं जाई ।
प्रथम गुरुदेवकी आय सस्तूति करि । मन्त्र अरु तन्त्रकूं देत भाई ॥
रस्सना राम कूं सुमरि नहिं ढीलकरि । एक बिन दूसरी आस नाहीं ।
पाट हिरदा खुले कमल नाभी फुले । बोलता पुरुष कूं देख माहीं ॥
आप गुरु देवका दस्तं राखे नहीं । और कूं ज्ञान उपदेश देवै ।
आठही पहर हरिनाम जो उच्चरै । साच नहिं जानि गुरुविमुख सेवै ॥
आवता एक अरु एक ही जात है । अंध अज्ञान बहु करत मोहा ।
दास हरिराम निज भेद पायाँ बिना । हाथ कंचन गह्या होत लोहा ॥

(२)

प्रथम गुरु ज्ञान अरदास तन बंदगी । शील संतोष लघु दीन यारा ।
राग अरु द्वेष तिहुं ताप मनतें तजै । झूठ अरु कपटसूं रहत न्यारा ॥
एक अभ्यास दिल आस नहिं दूसरी । ब्रह्मका ध्यान मन सुरत सेती ।
जोग जिग दान तप नेम व्रत तीरथा । तुल्य तिहुँ लोक नहि नाम जेती ॥
भर्म कूं भांजि कछु कर्म कूं काटिकरि । साहि शमशेर सत शब्द सूरा ।
दास हरिराम कहै दिल दीवानमें । राज सोइ करत है संत पूरा ॥

(३)

आपकूं खोज पर ज्ञान की खबर करि । अलख आराध मन साधि प्यारा ।
जीव अरु जिंदकी झूठ यारी तजो । भेप भगवान करि देख न्यारा ॥
अणक्षरी वेद कूं निरख निरतायले । अगम अरु निगमका भेद बाचै ।
तन मन वचन तें दोप निर्दोप रहि । साम सूं सरपरु संत साचै ॥
साँझ सब्बेर क्या करत नर बावरे । वेग भजि वेग अब दाव आई ।
दास हरिराम तन खाक़ मिल जाहिंगे । चूक मत जानि जग चतुराई ॥

(४)

भरम अज्ञान की भींत कूं ढाहि के । ज्ञान चोगान में खेल सूरा ।
कूड़ अरु कपट की झपट कूँ छाँडिदे । त्रिगँढ सिर बाय अनहद तूरा ॥
पांच पच्चीस [6]गनीमकूं साझिले । मन्न कूं जीत महरँम्म होई ।
आदि जुग्गादि ले नाम निरभै भया । भरै सब संत वा साख सोई ॥

---

१ हाथ । २ तलवार । ३ सन्मुख । ४ हृदय, कंठ, भ्रूमध्य । ५ बजाना ।
६ दुश्मन । ७ महरम=भेदी ।

ब्रह्म कू भेद कछु कर्म कूँ छेद करि। वेद कत्तेव से निरख न्यारा।
दास हरिराम कहै उलटि आपा चिये। परख लै परम दीदार प्यारा॥

(५)

मन की मूँछ पहलूण गाढ़ी गहो। तत्त का तीर करि हाथ साहो।
ज्ञान कवाण कर ध्यान धोरा धरो। आन अज्ञान का द्रिग्ग ढाहो॥
अरसै का अश्व पर नृप्प नीका चढ़ो। नाम नीसाण सिर डक लागो।
एक असवार अरु पच प्यादा पुठै। लारि लस्कार हरि वेग ध्यावो॥
तन की नालि करि चित्त दारू भरो। सुरति की जामकी शब्द गोला।
भूमिया भरम कूँ मारि मुजरा करो। पाच परधान कू पालि पोला॥
सत्त का सेल करि खाग क्षम्मा तणी। दोय दल मोडि गढ़ तीन तोड़ो।
दास हरिराम सब राज एकै भया। साम सम्मूह मिल हाथ जोड़ो॥

(६)

तम का तखत पर मन राजा भया। मान गुमान के महल माहीं।
पाँच परधान पचीस चीरांगरी। करत है काम किल्लोल वाहीं॥
जाणिये जाणि जग माहिं जन सूरमा। दोय दल बीच में रोल घालै।
निरति असवार अरु सुरति घोड़ा लिया। काम अरु क्रोध कूँ दबँटि पालै॥
ज्ञानकी गुरज ले पाणि आयाधसे। तत्त तरवार करि हाथ साहै।
पाच परधान मन मारि राजान कूं। मान गुम्मान का महल ढाहै॥
नाम नृप कोट सिर चाढि तावै किया। नक्ख अरु सिक्ख बिच एक राई।
दास हरिराम सब राज अविचल भया। दशम द्वार नौबत्त घाई॥

(७)

समझि रे समझि मन मूढ़ मेरा कह्या। कुटुंब परिवार कहु कौन केरा।
सकल ससार सराय की सोवती। एक पल माहिं हुय कूच डेरा॥
एक मन चित्त नित नाम निरभै भजो। तुल्हि सिरकाल नहिं करन जोरा।
वेद कत्तेव सब जानि काची कथा। देखि भूलै मतै भ्रम भोरा॥
तप्प तीर्थ ब्रत साहि एकादशी। सातही द्वीप नव खड डोलै।
जोग जिग जाप षट्कर्म खाली रहा। आपकू उलटि आपा न खोलै॥
आदि अरु अंत सतशब्द कू ध्यायले। पायले दशम द्वार सोई।
दास हरिराम तहाँ मुक्ति ससा नहीं। जीव अरु सीव मिल एक होई॥

(८)

खबर करि गबर गाफिल तुमसे कहूँ। बहुरि नहिं पाय नरदेह धारी।
एक इक्तार सिर धारि दूना नहीं। मानि मेरा कह्या पुरुष नारी॥

१ प्रत्यचा। २ निगा। ३ अरसनाम है महल का जहाँ राजा बैठे। ४ बत्ती। ५ ग्रामदेवता वा भूमि का असल मालिक। ६ मशालचन। ७ दाट।

लोभ लालच्य मद मोह लागा रहै। आपदा पासि पडपंच ठाणे।
आन उप्पाधि बहु ताप हिरदै उठै। राग अरु द्वेष मनमान ताणे॥
काम अरु क्रोध भय जोध जोरावरी। जहर अरु कहर जग माहिं जाडा।
काल कव्वाण कसी सिर ऊपरै। मारसी जोय नहिं कोय आडा॥
मात अरु तात सुत भ्रात भ्रत भामिनी। कुटुंब परिवार की प्रीति झूठी।
दास हरिराम कहै खेल बीतां पछै। मेल सौद ऊठिग्यो झाड़ि मूठी॥

(९)

सत्तगुरु देव की गम्म कैसे लहै। कान गुरु फूंकिया मान लीया।
भाव निज भक्तिकी गम्म कैसे लहै। सेव कृत्रिम्म कुल काज कीया॥
साधु सतसंग की गम्म कैसे लहै। जगत जंजालमें फिरत फूला।
ज्ञान विज्ञान की गम्म कैसे लहै। आन अज्ञानमें जात भूला॥
अजपा जाप की गम्म कैसे लहै। जुगति से जाप नहिं करत जाणी।
आतमा देवकी गम्म कैसे लहै। वेद कत्तेव की देखै पुराणी॥
रोम ररंकार की गम्म कैसे लहै। शब्दके संग ममकार होई।
दास निर आस की गम्म कैसे लहै। आस दुनियानकी करत सोई॥
नाम निर्गुण्ण की गम्म कैसे लहै। ताप तिर्गुण्ण के पंथ पुँलिया।
उन्मनी ध्यान की गम्म कैसे लहै। नाम कूं लेत है कान सुणिया॥
सुरति अरु निरत की गम्म कैसे लहै। विषय मन वासना रहत माहीं।
अधः अरु ऊर्ध्व की गम्म कैसे लहै। कंठ रसना हृदै ध्यान नाहीं॥
पिंड ब्रह्मंड की गम्म कैसे लहै। खंड फिर मंडका देख देखै।
नाम निर्वाण की गम्म कैसे लहै। वाद बकवाद के राग घेखै॥
वात विदेह की गम्म कैसे लहै। हद्द में रातदिन रहत राता।
ब्रह्म आनंद की गम्म कैसे लहै। मोह माया तणे मद्द माता॥
जाण विज्जाण की गम्म कैसे लहै। शुद्ध बुधि आपणी सार चूका।
दास हरिराम सिर भार कैसे मिटै। भर्म अरु कर्म के ढ़िग्ग ढूका॥

(१०)

गुरु परचै विना ज्ञान कैसे गहै। नाम परचै विना ठाम नाहीं।
जीव परचै विना पीव कैसे मिलै। आप परचै विना क्यूं न काहीं॥
मन परचै विना ध्यान कैसे धरै। त्याग परचै विना शान्ति नावै।
अधः परचै विना ऊर्ध्व कैसे चरै। नाद परचै विना विंद जावै॥
अखंड परचै विना अनहद कैसे घुरै। अगम परचै विना निगम बोलै।
साँच परचै विना झूठ कैसे मिटै। दास हरिराम कहै दिल खोलै॥

---

१ विपत्ति, आफत, गजब। २ कृत्रिम=नकली। ३ खुशी, आनंद। ४ चलताहै।

(११)

सत्त का शब्द विन सहज दरसै नहीं। तत्त दरस्याँ विना भव डोलै।
सुरति उल्टी विना ब्रह्म भेदै नहीं। दिल दरस्याँ विना सालं फोलै॥
पेम वरपा विना नाम निपजे नहीं। आतमा देव विन सेव दूजै।
भाव उपज्याँ विना भक्ति भावे नहीं। साधु दरस्याँ विना सिद्ध पूजै॥
जुक्ति जाणी विना जोग दरसै नहीं। एक दरस्याँ विना अनत धारै।
धीर दरस्या विना पार कैसे लहै। दास हरिराम सत रैंच सारै॥

छप्पय।

राम वखानै वेद राम कू दास पुरानै।
राम शास्त्र स्मृति राम शास्त्र सुजानै॥
राम गीता भागवत राम रामायन गावै।
राम विष्णु शिव शेष राम ब्रह्मा मन भावै॥
राम नाम तिहुँलोक्में ऐसा और न कोय।
जन हरिया गुर गम विना कह्या सुण्याँ क्या होय॥ १॥
प्रथम गुरू शिव जानि नाम पार्वती दीया।
तासेती नारद नाम तन मन करि लीया॥
दे नारद उपदेस भाम सनकादिक जान्यो।
गुरुतें जनक निदेह पीव उर माहिं पिछान्यो॥
सतगुरुतें शुकदेव मुनि क्रिया भ्रम सब दूर।
जन हरिया गुरुगम अगम ताहि लहै कोई सूर॥ २॥

छंद इदव।

अग सुक्षेम[1] पेम सरोवर चूप सनै चित रग चितारो।
साधु सती जति राग रसायन सूरक्षमा कवि दास दतारो॥
ज्ञान विज्ञान ये जानि सबै निधि रूप तपो मन मोह धुतारो।
दास कहै हरिराम विना हरि होय नहीं नर को निस्तारो॥ १॥
राग न द्वेष न कोप कहूँ पुनि संशय शोर न पिंड प्रकासै।
मैं तैं मान अमान न को उर कूड कपट्ट कों दूरि निकासै॥
आपा पासि न और [illegible] लगी सतशब्द धकासै।
दास कहै हरिराम [illegible] दियो [illegible] सैंकासै॥ २॥

१ खाल [illegible]नियम। ३ [illegible]

शील संतोष सदा तन शीतल आनंदरूप रहै जहँ ताहीं।
प्रेम प्रवाह भये उर अंतर और विकार लिपै नहिं काहीं॥
द्वंद्व न को सुख दुःख न हिंसा कूट कपट्ट दिशा नहि जाहीं।
दास कहै हरिराम बसो वन भावे बेसि रहो घर माहीं॥ ३॥
तूं कहा चिंत करे नर तेरी हि तो करता सोइ चिंत करैगो।
जो मुख जानि दियो तुझि मानव सो सबहनको पेट भरैगो॥
कूकर एक ही टूकके कारन नित्य घरोघर थार फिरैगो।
दास कहै हरिराम विना हरि कोई न तेरो काज सरैगो॥ ४॥

मनहर छंद।

राजी राव रंक भूप नारी ही पुरुष राजी
झूठी सी बनाई वाजी खुसी सब खाल में।
संन्यासी दुहाई दत्त[2] जोगी आदिनाथ जाने
जतीही बखानै जैन रता मता हाल में॥
भोपना शक्ति सेवे वैष्णव अवतार ध्यावे
बंभना के वेद पाठ चतुराई चाल में।
पखाई पखी में लोक निरापखी जन कोई
हरिया के राम एक नहीं लाल पाल में॥ १॥

राग विलावल।

पद १

एके माहिं अनंत है अनंता में एको।
मन महरम कूं पायके हूवा एक मेको॥ टेर॥
अछती माहीं छति है छति माहीं अछती।
वसती माहीं शून्य है शून्य माहीं वसती॥ १॥
या जल सेती लूण हुय लूंणा फिर नीरा।
सतगुरु सेती सिख भया सिखसूं गुरु पीरा॥ २॥
पाणी तें पाळा हुवा पाळा फिर पाणी।
यूं सीव हुतां जीव हुवा जीव सीव समाणी॥ ३॥
सासामाहिं उसास है उसास में सासा।
हरिरामां हरि मुझि में हरि में हरि दासा॥ ४॥

---

१ भक्ति कल्पतरु पात गुण, कथा फूल बहु रंग।
नारायण हरि प्रेमफल, चाखत सन्तविहंग॥ १॥

२ दत्तात्रेय।

पद २

ता घर सतांसमाधि है हम सो घर लहिया ।
एक अखड घट भीतरे अग्गा जु कहिया ॥ टेर ॥
रहता से रहता रहै ज्ञाता नहिं जाणी ।
रोम रोम ररकार हुय ताही सुखमाणी ॥ १ ॥
उलघ मेरु आकाश में वाप अनहद्दा ।
निदावे निर्द्वंद्व हुय वसिया वेहद्दा ॥ २ ॥
पद परमानद परसिके जीवत ही मूवा ।
अपना आपा पलटिके निजमनवा हूवा ॥ ३ ॥
दृष्टि न आवे मुष्टि में नहिं रूप न रेखा ।
हरिरामा पर शून्य में मुझि मिल्या अलेखा ॥ ४ ॥

राग आसा ।

पद ३

सतो दोनू राह हरामी खून करै विन खामी ॥ टेर ॥
हिंदू घात करै अजका हरि सू वेफरमाणी ।
मुख सू स्वाद करै मनसेती जीव दया नहिं जाणी ॥ १ ॥
पहली तरपण करै गऊको पुण्य दे पाप नसाई ।
पीछे धन धाडो करि लावै दुष्ट दया नहिं आई ॥ २ ॥
सहजे जीव निंद षु छॉटे ताकू कहत हरॉमा ।
काजी कॅरद गऊ सिर सारै विना दोस विसरामा ॥ ३ ॥
मुई हराम कहै हक मारी पसुवो करत पुकारा ।
काजी जाव कौनसा देसी साई के दरबारा ॥ ४ ॥
मुहम्मद पीर जहॅं गउ कीन्ही वा फिर मारि जिवाई ।
होनहार मिटै नहिं जिव की तू सिर लै क्यों भाई ॥ ५ ॥
मूई मटिया मुरदार कहत है मारै हक्क निवाला ।
देख देख दुनिया कर भूली काजी कौन हवाला ॥ ६ ॥
हिंदू के पण जाणि गऊ को सो सूअर तुरकाणै ।
दोऊ मारि भखै मुख मॉसा घट वधि कोन वखाणै ॥ ७ ॥
विपय कर्म कू सव कोउ आघा हरि धर्म सेती पाछा ।
जन हरिराम राम रस पीजे छाडि सुअर गउ वाछा ॥ ८ ॥

१ असंप्रज्ञातसमाधि । २ बकरे का । ३ विनॉ हुक्म । ४ विधिविरुद्ध । ५ बड़ा
६ कुरबानी, हलाल । ७ मास हुकमा ।

राग गोड़ी।

पद ४

संतो ऐसे लोक निपूती।
अपनो साँई याद न आनै औराँ जानि सपूती ॥ टेर ॥
घर घर देवस्थान थापना नरनारी मिल पूजै।
आप स्वार्थ करै ईछना[1] परमारथ सूं दूजै ॥ १ ॥
गहली दुनिया ज्ञान विहूणी गोगा पाबू गावै।
पंचपीर[2] पाखंड से राती राम भक्ति नहिं भावै ॥ २ ॥
चॉवड आगे भैंसा चाढै भलो आपणो भावै।
झूठे तन का जतन करत है जीव दया नहिं आवै ॥ ३ ॥
आन देव कूँ करै ईछना पिता पूत के ताँई।
जिन ऐ जीव सकल कूँ सिरज्या सो सूझै नहिं साँई ॥ ४ ॥
मुवे मड़े को धौसो राखे चेतन सेती चोरी।
खालिक[3] छोडि खलक सूं लागा धोकै गोरां होरी ॥ ५ ॥
आनदेव का गाखा देखे आप न देखै माहीं।
आदम[4] और नहीं कोई आडो जब जम पकड़े बांही ॥ ६ ॥
लाडो लाडी जाय लडावण रात्यूं ओजक सारै।
जन हरिराम फिरै मन फोटी ध्यान न हरि का धारै ॥ ७ ॥

पद ५

संतो यूंतो भक्ति न होई।
इंद्री हठ निग्रह करि मूवा पारन पहुँता सोई ॥ टेर ॥
नाड़ी निरख भया वैदंगर[5] अनंत औषधी कीन्हा।
सारी धात रसायण करि करि आतम एक न चीन्हा ॥ १ ॥
गावण वावण[6] ताना तूनी करि करि लोक रिझावै।
मुख तें राग छतीस अलापै धुनि अधिकेरी लावै ॥ २ ॥
वेद पाठ बहु करत विचारा ज्ञान ग्रंथ भरपूरा।
उडत गडत राखत थिर देहा साधु सती सिध सूरा ॥ ३ ॥
ज्योतिष सीख ज्योतिषी हूवा अगम अगोचर आखै।
औरॉ कूं ग्रह गोचर लाँवै आप लैण की राखै ॥ ४ ॥

---

१ इच्छा करना। २ गोगा चोहाण, रामदेव तँवर, हड्बू साँखला, मेहाँ माँगलिया, पाबू मल्लीनाथ। ३ सिरजनहार। ४ इबरानी और अरबी लेखकों के अनुसार मनुष्यों का आदि प्रजापति। ५ वैद्यराज। ६ बजाना। ७ लगावे।

तप तीरथ व्रत करत कलोपा करि व्रत भरमो भाई।
जन हरिराम राम भज निश्चै नहिं तो परलै जाई॥ ५॥

राग सोरठ।

पद ६

है जाए जिंदरी तें जोगियो, न जान्यो भूडी भेव।
जोगी आदि जुगादिरो, तू करि मुई कुसेव॥ टेर॥
जोगी एक न जाणियो, बहु मन बैठी लाय।
जोगण जोगी बाहिरो, पलमें गई विलाय॥ १॥
चेतन थकी न चेतियो, पीछे भई अचेत।
जो न गहेसी मौन मुख, रसना राम न लेत॥ २॥
सैणाँ सेती रोपणो, असैणाँ सू गुँझि।
साम सनेही ना किया, औराँ रही अलुँझि॥ ३॥
निरजन देख्या जोगिया, रही निहार निहार।
सारा तन फिर जोइया, नहीं जोगीरी उनिहार॥ ४॥
जोगी राख्या ना रहै, जोगी रमता राम।
सुरति निरति कर देखिया, जोगी तणा मुकाम॥ ५॥
जननी जन्यो न जोगियो, पिता न इन के कोय।
हरिरामा आतम जोगी, जिंद भीतर जोय॥ ६॥

पद ७

हंसा सुन सरवर रच करे।
चच विना चुग चुग निजमोती ध्यान न दूजा धरे॥ टेर॥
पाँव रु पंख विना इक हंसो वास निज्या सुन धरे।
अधर महल जहाँ अनघ झरोखा है हरि रास अटर रे॥ १॥
तहाँ नहिं धर अवर नहिं तारा चद न सूर सचर रे।
वेद पुराण कथा नहिं कीतन यहाँ अण अच्छर उचर रे॥ २॥
नर सुर असुर लोक नहिं नागा दिवस रैन नहिं पर रे।
जन हरिराम मिल्या परहंसे जरा न जम का डर रे॥ ३॥

पद ८

मनवा रामभजन करि वल रे।
तज सकल्प विकल्प का तरही वापा हुय निजल रे॥ टेर॥

---

१ समूह।

देखि कुसंग पाँव नहिं दीजे जहाँ न हरि की गल रे।
जो नर मोक्ष मुक्ति कूं चाहे संतां बैसि सिसैल रे ॥ १ ॥
संशय शोक परे करि सबही छंद दूर करि दिल रे।
काम क्रोध भर्म करि कानै राम सुमर हक हल रे ॥ २ ॥
मनवा उलटि मिल्या निजमनसूं पाया प्रेम अटल रे।
पांच पचीस एक रस कीना सहज भई सब सल रे ॥ ३ ॥
नख सिख रोम रोम रग रग में ताली एक अटल रे।
जन हरिराम भये परमानंद सुरति शब्द सूं मिल रे ॥ ४ ॥

राग मल्हार।

पद ९

रे नर सतगुरु सौदा कीजे।
इन सौदा में नफा बहुत है एक मना होय लीजे ॥ टेर ॥
मात पिता सुत भ्रात सनेही चौरासी लख हीजे ॥ १ ॥
जे कोइ चाहै रामभक्ति कूं गुरु की शरण गहीजे ॥ २ ॥
गुरुबिन भरम न भाजै भवका कर्म न काल कटीजै ॥ ३ ॥
गुरु गोविंद बिन मुक्ति न जिव की कहियो वेद सुनीजे ॥ ४ ॥
जन हरिराम और सब कूकस राम शब्द सत बीजे ॥ ५ ॥

पद १०

रे नर राम नाम सुमरीजे।
यासूं आगे संत उधरिया वेदों साखि भरीजे ॥ टेर ॥
यासूं ध्रू प्रह्लाद उधरिया करणी साँच करीजे ॥ १ ॥
यासूं दत्त मछंदर उधरे गोरख ज्ञान गहीजे ॥ २ ॥
यासूं गोपीचंद भरथरी पैलै पार लंघीजे ॥ ३ ॥
यासूं रंका बंका उधरे आपा अजर जरीजे ॥ ४ ॥
यासूं रामानंद उधरिये पीपा जुग जुग जीजे ॥ ५ ॥
यासूं दास कबीर नामदे जम का जाल कटीजे ॥ ६ ॥
यासूं जन रिवदास उधरिये मीरां बात बनीजे ॥ ७ ॥
यासूं काल्हू कीता उधरे वास अमरपुर कीजे ॥ ८ ॥
यासूं जन हरिदास उधरिये दादू दीन भनीजे ॥ ९ ॥
जन हरिराम कहै सबही कूं जपतां ढील न कीजै ॥ १० ॥

---

१ समूह।

राग विभाव।

पद ११

प्रभुजी प्राण सकल के दाता।
दूजा देव किया दुनिया का तेरे तात न माता ॥ टेर ॥
जोतिस्वरूप सकल घट जोती रमता राम कहायो।
दृष्टि न मुष्टि सुन्यो नहिं देख्यो आप ऊपनो आयो ॥ १ ॥
सांख्य योग भक्ति सब जान्या एकते एक सवायो।
रामभजन बिन कोइ न सीधा वेद पुराना गायो ॥ २ ॥
तीन लोक में नाम न तुमसा हमसा सत अनेकू।
मुख भरि बोल करू क्या महिमा रोम रोम रटि एकू ॥ ३ ॥
तुम निर्मल दातार दयानिधि मे मगन मल धारी।
जन हरिराम शरण तेरी आयो दोष दुख मेटि मुरारी ॥ ४ ॥

पद १२

प्रेम भक्ति मोहि आपो।
माग माग दाता हरि आगै जपू तुमारा जापो ॥ टेर ॥
आठ नवे निधि रिधि भंडारा क्या मागूँ थिर नाहीं।
दे मोकू हरिनाम खजाना खूट कबहु नहिं जाहीं ॥ १ ॥
इन्द्र अपसरा सुख विलासा क्या मागूँ छिन भंगा।
दीजें मोहिं परम सुख दाता सेवत ही रहु संगा ॥ २ ॥
तीन लोक राज तप तेजू क्या मागूँ जम त्रासा।
दीजें राज अभै गुरु देवा अटल अमरपुर वासा ॥ ३ ॥
आठ पहर औलंग[१] अणघड की ता सेती निस्तारू।
जन हरिराम स्वामि अरु सेवक एकमेक दीदारू ॥ ४ ॥

राग बहहंस।

पद १३

प्राणी करले राम सनेही।
बिनस जायगी एक पलकमे या गनी नरदेही ॥ टेर ॥
रातो मातो विषय स्वाद में परफुलित[२] मनमाहीं।
जीवतणा आया जमकिंकर पकड़ि लेगया याहीं ॥ १ ॥
मूरख मगन भयो माया में मेरी करि करि मानै।
अंतकाल में भई बिड़ाणी चलो जाय मसानै ॥ २ ॥

१ औलग=फरियाद। २ प्रफुल्लित।

राग रंग रूप नर नारी सब हुय जाहिंगे खाका ।
जन हरिराम रहैगा अम्मर एको नाम अल्लाह का ॥ ३ ॥

पद १४

रे नर या घर में क्या तेरा ।
जीव जंतु न्यारा घर माहीं सोई कहै घर मेरा ॥ टेक ॥
चीटी चिड़ी कमेड़ी उंदर घर माहीं घर केता ।
आया ज्यों सबही उठि जासी वासो दिन दस लेता ॥ १ ॥
मैड़ी मंदिर महल चिणावै मारै ऊंडी नीवां ।
दिन पूगे नर छांडि चलैगो ज्यूं हाली हल सीवां ॥ २ ॥
नव रंग रूप सोलह सिणगारा माया विषै विलासा ।
जन हरिराम राम विन दुनिया होसी खासर[1] फासा ॥ ३ ॥

राग धनाश्री ।

पद १५

मँगन कूँ दान देवो राम राय ॥ टेक ॥
मैं मंगन जन द्वार तुह्मारे राखो हरि शरणाय ॥ १ ॥
मैं भिखियारी भया वापुरा तुम दातार सदाय ॥ २ ॥
दीजै दान अभय पद दाता ऊणत रहै न काय ॥ ३ ॥
आठ पहर औलंग हरि आगै करिहों चित्त लगाय ॥ ४ ॥
रीझैगा जब अमर गुसाँई देगा पटा लिखाय ॥ ५ ॥
खातां कबू न खूटै रोजी दिन दिन अधिकी थाय ॥ ६ ॥
जन हरिराम भक्ति बगसीजै मुक्ति न मांगूँ काय ॥ ७ ॥

पद १६

ऐसे हैं राम गरीब निवाज ॥ टेक ॥
भीर परी प्रह्लाद उबारे हिरण्यकशिपु हण ताज ॥ १ ॥
मा उपदेस दियो ध्रुव सेती अटल वसायो राज ॥ २ ॥
टेर सुनत वेग हरि आये तार लियो गजराज ॥ ३ ॥
जन द्रौपां को चीर वधाऱ्यो भई पंच भरताज ॥ ४ ॥
देवल फेर कियो जन साम्हो भक्तनामदे काज ॥ ५ ॥
दास कबीर घरे लदि वालद आन उतारे नाज ॥ ६ ॥
मीरां जहर कियो चरणोदक राखि भरोसो राज ॥ ७ ॥
सब संतन के कारज सारे भक्त विरद की लाज ॥ ८ ॥

---

१ खसर फसर । २ फरियाद ।

जन हरिराम सदा सिध कामा राम सुमर महाराज ॥ ९ ॥

पद १७

परम सनेही प्यारो प्रीतमो देख्यो दिल्डा के माहिं ॥ टेक ॥
बादल बादल बीजली वसे घट घट राम ।
मूरख मर्म न जाणियो पायो नाम न ठाम ॥ १ ॥
सतगुरु तो बोहरा भया सिष सौदागर होय ।
हरि सौदो चित चोहटो तोल न मोल न कोय ॥ २ ॥
सतगुरु बोहरा होय के वस्तु अमोलक देह ।
सिष साचा गाहक भया मन अरु तन करि लेह ॥ ३ ॥
विषम सरोवर नीर की अति ऊंडी बहु धार ।
एक मना तिर जाहिंगा दूजा डूबणहार ॥ ४ ॥
अगम देस अमरा पुरी जहाँ हरिजन का वास ।
तहाँ हरिरामें घर किया जन्म मरण तजि आस ॥ ५ ॥

राग गोड़वाड़ी धनाश्री ।

पद १८

ब्रह्म विदेही बालिमा जीव नियारो नाहिं ।
एक अखंडी रमिरह्यो सून्य सेझड़ियाँमाहिं ॥ टेक ॥
सुरति सुहागिन सुंदरी लाटो शब्द सुजाण ।
सदा सनेही ऊपरे वारू मन अरु प्राण ॥ १ ॥
धरिया धूँ नहिं धारती धुनि अधरों सू धारि ।
गगन मंडल में घर किया संशय शोक निवारि ॥ २ ॥
जन हरिरामा सुंदरी घर अजरामर पाय ।
अरस परस हुय मिलरही आवण जाण मिटाय ॥ ३ ॥

राग आसा ।

पद १९

अब नर चेतो रे कहूँ भाई तोकू वार वार समुझाई ॥ टेक ॥
यो संसार भयो भवसागर ऊंडो अथग अपारा ।
बीच बहै विषयन की ल्हरा के बहग्या के पारा ॥ १ ॥
यो मन जानि भयो बाजीगर बाजी बहु विस्तारा ।
सुरति निरति की राँमति मंडी के जीता के हारा ॥ २ ॥
मोह माया की धाँधरि मंडी भरम करम का फंदा ।

जाया जीव सव काल अहेरै[1] के छूटा के वंधा ॥ ३ ॥
तूं नर कोन पसाय[2] नचीतो जम सारीपा जोधा।
जन हरिराम राम भजि लीजे तजियै काम रु क्रोधा ॥ ४ ॥

पद २०

पांडे देख पाखि मति भूलो आयो ओसर दूलो[3] ॥ टेक ॥
एको पिंड एक है पाणी एक जोणि में आया।
यामें ऊंच कौन है नीचा सव अवगत की माया ॥ १ ॥
कुल आचार करी कठिणाई ग्यान विचार न पाया।
वेद पुराण पढ़े पढ़ि पंडित आपा जग भरमाया ॥ २ ॥
चारों वरण चार आसरमा यामें आतम एक।
जन हरिराम राम सुमरीजे या संतन की टेक ॥ ३ ॥

राग गवडी।

पद २१

संतो देख पाख पग धरियै अंध कूप नहिं परियै ॥ टेक ॥
यो संसार भयो अँध कूपा पाँच विषय पनिहारी।
तृष्णा वरत काम का चड़सा सीचत है मन सारी ॥ १ ॥
माया मोह वण्या कूसेटा कूड़ कपट की क्यारी।
नेपै दुख सुख भया अनेका भुगतै नर अरु नारी ॥ २ ॥
तीन लोक अरु भवन चतुर्दश जनम जनम मरि जासी।
जन हरिराम रहैगा सोई राम भजो अविनासी ॥ ३ ॥

पद २२

संतो है इक मरणा सवकूं।
जो कुछ किया जाय अव करणा वेग सुमरणा रवकूं ॥ टेक ॥
धंधे माहिं भयो नर अंधो मनवो माया सेती।
एक राम नाम विन तेरे मुखां पड़ेगी रेती ॥ १ ॥
घुंघा गोली ज्यूं धन गहला खिण खिण ऊंडा घाले।
जव ते जीव पकड़ि ले जावे तव धन साथ न हाले ॥ २ ॥
वेद पुरान पढे पढि पंडित खंडित करै न कोई।
अच्छर एक अखंडित ही विन जावे दोझख सोई ॥ ३ ॥
वालापण तरुणा भयो वूढो तोइ न आपो चेती।
जन हरिराम वीज विन वाह्यॉ कहा निपावे खेती ॥ ४ ॥

---

१ शिकार। २ प्रसाद। ३ दुलह=दुर्लभ। ४ मुरवामन्दी।

पद २३

सतो माया सबकू लूटे ।
है जगमें ऐसा जन कोई राम नाम कहि छूटे ॥ टेक ॥
काया कोट दसुदरवाजा ताक भरम का भारी ।
काम करम की भोगल मारी खसि खसि गया ससारी ॥ १ ॥
बल्वत मोह मारको सबमें मन मेवासी राजा ।
दोर्डे माहिं थर्नी गढ बाहिर पक न रासे साजा ॥ २ ॥
आस पास माया को घेरो बिच है जीवका वासा ।
पाच पचीस मोरचा लागा बॅचेगा कोइ दासा ॥ ३ ॥
जमरे आय जीव बस कीया देस दुहाई फेरी ।
जन हरिराम पक पल माहीं कोट भया ढिग ढेरी ॥ ४ ॥

पद २४

सतो ऐसा रे कोई सूरे काया गढ कू चूरे ॥ टेक ॥
छूटा सारशब्दका गोला मुँहीं मोरचा भागा ।
ज्ञान ध्यान का हाथ खड्ग ले मनसू लडवा लागा ॥ १ ॥
साथी सबल मारि सहाय कू मन मोहादिक पाडया ।
मान गुमान घालि मुँह आगे काम क्रोध कू ताड्या ॥ २ ॥
नाम किया गढ के बिच डेरा अनहद नाद बजाया ।
पने घरमें राग छतीसू आनद मगल गाया ॥ ३ ॥
जन हरिराम बैसि छवि छाजे अटल अमर पद पाया ।
नाम नृपति की फेर दुहाई चहुँ दिस राज जमाया ॥ ४ ॥

राग मारू ।

पद २५

सयाने साच गहीजे हो ।
झूठी माया मोह में काँइ राच रहीजे हो ॥ टेक ॥
मात पिता सुत बाधवा को आगे को पूठ ।
म्हारो थारो करतडाँ आय गये सब ऊठ ॥ १ ॥
राम नाम कू सुमरिये और निवारो फध ।
पके साँई बाहिरो जान सकल जग अध ॥ २ ॥
वाद विरोध विकार कू देवे नाहिं निवार ।
अध धुध में बहि गयो बिन गुरु ज्ञान विचार ॥ ३ ॥

---

१ किलेमें रहनवाला ।

सुमति सुमारग सोध के चालैगा कोइ सूर।
हरिरामा दरगाह में भेटेगा निज नूर ॥ ४ ॥

पद २६

इन मन कूँ जान न दीजे हो।
मनसा साजन को नही तन भीतर लीजे हो ॥ टेक ॥
मन राख्याँ सव रस रहै मन ग्याँ सव रस जाय।
मन ही प्याला प्रेम का मन पीव प्यारा पाय ॥ १ ॥
सेझड़ियां सुख सुंदरी रमैं राम दिन रैन।
उर परमानंद ऊपजै अव और न को दुख दैन ॥ २ ॥
काम न काई कल्पना संसा गया नसाय।
नेह लग्यो रहमान सूं दिल दूज न आवे दाय ॥ ३ ॥
मैं मनसूं करि जानती सो मुझि सिलिया आय।
हरिरामा निज मन विचै कुछ अंतर रही न काय ॥ ४ ॥

पद २७

पाऊं मुझ पीतम प्यारा हो।
तन मन सोपूं तुझिसूं मिल यार हमारा हो ॥ टेक ॥
जो दम अहला जात है सुमरन विन सारा हो।
आपा उलटि विचारियै ब्रह्म वारंवारा हो ॥ १ ॥
तन जोवन हुय जावसी छिनमाहीं छारा हो।
सासोसास सँभारिये आतम आधारा हो ॥ २ ॥
सुख दुख सव संसार का अंकूर अंकारा हो।
अधर विना धर को नहीं भर दूभँर भारा हो॥ ३ ॥
जन हरिराम प्रकासिया अंतर उजियारा हो।
दर्शन हरि दीदार का दसवैं हुय द्वारा हो ॥

पद २८

साजन सुख दीजै न्यारा हो।
रोम रोम में रसि रहे पीरन के प्यारा हो ॥ टेर ॥
अवला अति आतुर भई आपनपो दीजै हो।
साँइयां तुझ विन नाँ सरै मुझ वेग मिलीजै हो ॥ १ ॥

---

१ बड़ा दयालु। २ गड़बड़ में। ३ कोमल। ४ बेकार, व्यर्थ। ५ दुःसाध्य, मुश्किल।

तन मन तेरा तू धणी मेरा नहिं सारा हो।
भली बुरी सब जीव की तुही जाननहारा हो ॥ २ ॥
मैं मध्यम तन हीनता तुम उत्तम यारा हो।
प्रीति पूरवली जान के होवत नहिं न्यारा हो ॥ ३ ॥
आपा अंतर मेटिके अपनी करलीन्हीं हो।
जन हरिरामें दोस्ती आतम से कीन्हीं हो ॥ ४ ॥

राग विहागडो।

पद २९

देख्या राम निरंजन राया।
शोभा अनँत कही नहिं जावै बाजा अनहद बाया ॥ टेक ॥
काया कोट बन्यो बिन टाँची चूनो कली न लाया।
करता पुरुष भया कारीगर छाजा खूब बनाया ॥ १ ॥
यामें एक विदेही पुरुषा इला पिंगला राणी।
सुषुमन सदा सुहागनि सुंदरि मोक्ष मुक्ति जहाँ जाणी ॥ २ ॥
अणभै राज करत अविनाशी जहाँ चित चाकर लाया।
जन हरिराम छाँड़ि हदवासा बेहद वास बसाया ॥ ३ ॥

पद ३०

संतो सतगुरु करण सिहाई।
अंतर माहिं निरंतर देख्या सहजाँ भेद बताई ॥ टेक ॥
सहजाँ पुस्तक बेद पुराना सहजाँ अक्षर बाचै।
सहजाँ तार तबल घन तूरा सहज नचइया नाचै ॥ १ ॥
सहजाँ गंग जमुन का मेला सहजाँ करत स्नाना।
सहजाँ देव सेव घट भीतर सहजाँ ब्रह्म ज्ञाना ॥ २ ॥
सहजाँ जोग जुगति भी सहजाँ सहजाँ ऋधि सिधि दासी।
सहजाँ गगन ध्यान धुनि लागी सहज मिल्या अविनाशी ॥३॥
सहजाँ सहजाँ एक भया सब रामनाम कू जाण्या।
मोक्ष मुक्ति का ना कोई संसा सहजाँ शब्द पिछाण्या ॥ ४ ॥
सहजाँ सुरति निरत भी सहजाँ सहज मंदिर में वासा।
सहज पिया सु सेझ रमता सहज किया घर वासा ॥ ५ ॥
सहजाँ इला पिंगला सहजाँ सहजाँ सुषुमणि नारी।
जन हरिराम सहज घटभीतर पाया देव मुरारी ॥ ६ ॥

हल चल सास सरीर में मन छाँड्यो अहंकार।
पूत पिता परिवार में सग न चालणहार ॥ ३ ॥
पिंड धरती पोढावियो कह तेरा नर कोन।
राम भजन विन दूसरा सब ही आवागौन ॥ ४ ॥
हरिरामा सतगुरु मिल्या सतका शब्द सुनाय।
राम नाम कू सुमरतॉ जीव न परले जाय ॥ ५ ॥

पद ३४

गगरिया ज्ञान की जानिच अधरा ध्यान ॥ टेक ॥
काया काची वेलडी निच पाका फल जानि।
चाखत ही चेतन भया अधा रह्या अजानि ॥ १ ॥
नर मूरख निश्चै विना दूर दिसतर डोल।
सोसाहिव घट भीतरै ताहि न देखै खोल ॥ २ ॥
जग सागर निप ल्हरियाँ के आवै के जाय।
हरि वेमुख से वहिगया हरिजन पार कराय ॥ ३ ॥
पीव मिलन के कारणै लघिया अवघट घाट।
अगम अगोचर धामकी सहजाँ पाई वाट ॥ ४ ॥
हरिरामा हद छाँडिके वेहद मे ल्वलीन।
अलख अजोनी आतमा सोई दोसत कीन ॥ ५ ॥

राग सोरठ।

पद ३५

कोई मन मृगे कू मारे रे।
तन खेती मे चरि चरि जावै है नहिं मेरे सारै रे ॥ टेक ॥
मृग पर पाँच है हिरणै लारि पचीस लवारे रे।
भर्म कर्म इनका है सगी जे कोई दूरि विडारै रे ॥ १ ॥
निशि दिन नाम करत रखवाली ज्ञान ध्यान शर धारै रे।
उल्टी दृष्टि मुष्टि विन सधै सुरति निरति नहिं टारै रे ॥ २ ॥
शील की वाड़ सँवार चहुँ दिशि प्रेम की पाली डारै रे।
जन हरिराम मारि मन मिरगा सव ही काम सुधारै रे ॥ ३ ॥

पद ३६

माधव का चाकर मैं हू हो।
आदि अत मध्य नाम तुम्हारो पार उतारण तें हू हो ॥ टेक ॥
मैं दुखिया काहे दारिद्री तेरै कमी न काई।
दीनवधु दाता सबही का भाग परापति पाई ॥ १ ॥

तीन लोक का ठाकुर तुम हो और किसी को जाचूँ।
तुम हरता तुमही करता नाच नचावो नाचूँ ॥ २ ॥
का तो देश दिशंतर डोलूं का वैठूं घर माहीं।
डिग सिग मिटै नहीं जव जीवकी कारज सरै न काहीं ॥ ३ ॥
जो मैं वास करूं वन वनमें मनवो रहण न पावै।
घरमें धका धूम वहुतेरी कहु कैसे वनिआवै ॥ ४ ॥
मुझि औगुणका छेह न कोई तुझि गुणवंता साँई।
जन हरिराम कहै जहां राखो हरि तरवर की छाँई ॥ ५ ॥

पद ३७

संतो करक कलेजा माहीं हरि विन भाजै नाहीं ॥ टेक ॥
सूती ही स्वप्ने में जानूँ सही पधारे सैन।
आघी हुय हुय मिलवा लागी ऊघरि आये नैन ॥ २ ॥
तुम तो अंतरजामी कहियो मुझ माहिंलैरी जानो।
मुश्किल होय हमारे मन में तुम करता आसानो ॥ ३ ॥
राज पाट सुंदरि सुत वित ही दूजा सुख संसारा।
एता परंत न मॉगूं कवहू रामनाम विन खारा ॥ ४ ॥
जन हरिराम कहै सो कीजै दीजै दरशन तेरा।
अरस परस मिल मोहि मिटावो आवन जावन फेरा ॥ ५ ॥

पद ३८

जीव रे जुगति सों कर जीण।
पांच पायक पेल पैतल[२] मान का गढ़ लीण ॥ टेक ॥
सुरति घोड़ा निरति साखति[३] क्षमा करि खोगीर[४]।
पागड़े पग देत सासा डाक पैले तीर ॥ १ ॥
चौकैडै चित धारि चौकस लगाम लिवकीलाय।
प्रेम की सिर पहर पाखर अगम दिशि कूँ ध्याय ॥ २ ॥
तन तँरकस वांधि गाढा ज्ञान गह कव्वाण।
ध्यान मूठी धारि उन्मनि शब्द लावो वाण ॥ ३ ॥
सांच की वंदूक साहो वचन गोली वाहि।
जामकी सिलगाय जतना ढिग्गं ढूंदर ढाहि ॥ ४ ॥

। २ पेरोंके नीचे। ३ साटका, ताजना। ४ घोड़ेकी काठी के थड़े। कुदान। ६ वख्तर। ७ भाथाण। ८ कब्जा, काबू। ९ ढिग=दिसा या

सेल सुमरण सांटि सहजाँ तत्त कर तरवार।
हरिरामा जन यह औसर जीत भावै हार॥५॥

पद ३९

मन रे गुरू का उपकार।
विना कूची खोल ताला मुक्ति का भंडार॥ टेक॥
वेद विन इक भेद मेवा कह्या सुणिया नाहिं।
सहज ब्रह्म पढै पोथी एक अक्षर माहिं॥ १॥
उलट हद कू चढ्या वेहद वंकनाली पूर।
इला पिंगला वीच सुषुमण निरख आतम नूर॥ २॥
विना वाती ज्योति झिलमिल अखंड दीया लोय।
देह विन निदेह पुरुषा लहै महरम सोय॥ ३॥
पख विन इक जान भँवरा विना वाडी वीच।
हरिरामा रहु ऐसे न्यारा कमल कदम न कीच॥ ४॥

पद ४०

भरम कोई सतगुरु भाजेरे। साचो नाम सुनाय॥ टेक
सतगुरु मेरे सिरधणी मैं सतगुरु का दास।
वाकै पास निरन्तिये काटे जम के पास॥ १॥
योग यज्ञ जप तप करै अठ सठ तीरथ न्हाहिं।
उर आतम इक तार विन जग के गेलै जाहिं॥ २॥
वेद कथा सुन सीख के वाचै देवै विचार।
नाम नियारो रहिगयो करि करि लोकाचार॥ ३॥
विन गुरु गम निश्चय विना कहै कहावै कूर।
हरिरामा उन जीव सू देख रहीजै दूर॥ ४॥

राग जैतश्री।

पद ४१

सोई अभागिया रे हरि सू नाहिं सनेह।
माया मोह मगन भयो मनमें विषया सेती नेह॥ टेक।
रामनाम चेत्यो नहीं बालक तरुणा माहिं।
पीछै पाव थकै सिर कंपै अँखिया सूझै नाहिं॥ १॥
औसर मिनखा देह को मोंदूपणै न भूल।
आयो हीरो गाठि सू जाहि जतन विन खूल॥ २॥

१ ग्राहनीभ्योज। २ चरण।

कूड़ कपट फिर फिर किया जहँ तहँ आघा होय।
आवै विरियां अंतकी कारज सरै न कोय ॥ ३ ॥
विणज वटा धन वहु किया अपने स्वारथ जानि।
निज परमारथ वाहिरो आखिर ह्वैगी हानि ॥ ४ ॥
वार वार मैं क्या कहूं कह्यो न मानै कोय।
ऐसे कीड़ो आक को अंव कहां रे होय ॥ ५ ॥
या जग माहीं आयके केता काम कमाय।
जन हरिराम भजन विनएकै न्याय रीता नर जाय ॥ ६ ॥

पद ४२

सोई वडभागिया रे खालिक से मिल खेल।
द्वंद वाद से रहत है पाँच पचीसूं पेल ॥ टेक ॥
उलटा मन गगन किया आसन हट पचि मरना नाहिं।
पिंड ब्रह्मंड अखंड भया परचा सुरति शब्द के माहिं ॥ १ ॥
अष्ट प्रहर आनँद रहै मनमें रोम रोम जस गाय।
जाति न पाँति वरण नहिं वाकै तासे ध्यान लगाय ॥ २ ॥
चोथे चित चेतन किया मेला वोलै अनहद वैन।
आतम एक सकल करि देखै दुर्जन ना कोई सैन ॥ ३ ॥
भर्म कर्म संशय नहिं सोगा आसा छांडि निरास।
जन हरिराम शब्द किया सुनमें एक निरंतर वास ॥ ४ ॥

पद ४३

सुणो नर नारिया रे अपनो पीव पुकार।
नहिं तो परलै जावसी लख चौरासी धार ॥ टेक ॥
सतगुरु शब्दांसों कहै मनवा ताहि न भूल।
ऐसो जुगमें को नहीं रामनाम से तूल ॥ १ ॥
साधु विना कुन सीखवै रामभजन की रीति।
वूडा से नर वापड़ा करि करि जग सूं प्रीति ॥ २ ॥
यारी हरि सूं कीजिये दूजा दाव निवारि।
पासो पिउसों खेलतां कदे न आवै हारि ॥ ३ ॥
साधु सिल्या सुख संपज्या उपज्या परम आनंद।
जन हरिराम कहै वलि जाऊं जिन मेट्या दुखद्वंद ॥ ४ ॥

इत्यपूर्णम्[1]।

---

१ समस्त बाणी श्लोक मेधा ४३६८।

अथ श्रीविहारीदासजी महाराज का झरझरा ।

वदत सत ररकार लगत रग धमक मृदग तत शब्द नचक्ता ।
अध मध उतम उतमजति सुमरण कीतन करण कल्याण गनकता ॥
कमडलु जल स्नान खल्ल जल निर्मल चरचत अग तिलक्ता ।
अध कमल पर अमृत वर्षत छकत अकथ छक अनचक चकता ॥
ऊर्ध्वं घरर घर अयर घणणण भणण भृग मध सिंधु खलकता ।
विधिविधि वाज अनँत गम उरमध घटघट प्रगट अघट ध्वनि गुनता ॥
सव तनु थरर रोम रग ररर फरर पचसखि रग रुचकता ।
फिगटि फिरत पग गूघर घणणण चणणण मधुरिसि टेर वजक्ता ॥
करग्रह ताल स्तरर जर झरझर घरघर झणणण झींझ झणकता ।
त्रिकुटि अघट ध्वनि मुनिवर तणणण तार तवल ततकार तनकता ॥
शिवपद अचल अमल घट हल्लल वदन भळल वपु चन्द झलक्ता ।
नमस्कार पद परम चरित्र नित्य करत विहारी वारी तुमारि पलकता ॥१॥

॥ इत्यलम् ॥

श्रीसिंहथल धाम की जितनी पाठ-वाणी की पुस्तकें हैं उन सब का क्रम इस भांति है। श्रीरामानन्दजी महाराज, श्रीजैमलदासजी महाराज, श्रीहरिरामदासजी महाराज, श्रीनारायणदासजी महाराज, श्रीहरदेवदासजी महाराज, श्रीरामदासजी महाराज, श्रीदयालुदासजी महाराज की वाणी तदनन्तर श्रीकबीर साहब, नामदेवजी, और रैदासजी की वाणी लिखी हुई हैं जिनका नित्य प्रति पाठ होता है। तथा श्रीखेड़ापा[1] धाममें श्रीहरिरामदासजी महाराज, श्रीरामदासजी महाराज, श्रीदयालुदासजी महाराज, श्रीपूरणदासजी महाराज, और श्रीअर्जुनदासजी महाराजकी वाणी का पाठ होता है बाकी पाठ पूर्वोक्त ही है। परन्तु अब कई महानुभावों के हृदय में शंका होने लगी है कि श्रीनारायणदासजी महाराज थाभायत थे अत. श्रीसिंहथल पाटगादी पर विराजमान आचार्यों की वाणी से पहिले श्रीनारायणदासजी महाराज की वाणी का यह विपरीतक्रम किस कारण से हुवा। श्रीरामदासजी महाराजनें भक्तमाल में थाँभायतों से पहले पाटगादी ही का क्रम वर्णन किया है। यथाः—श्रीहरिरामदासजी महाराज के वर्णन के बाद—

"रोम रोम सहजाँ लिव लागी। ब्यारीदास मिल्या वडभागी" ॥

पाटगादी के अधिकारीजी का वर्णन कर फिर थाभायतों के लिये फरमाया—

"दास नारायण अमी धियाया। धादूराम रामगुण गाया" ॥

इन क्रम वाक्यों से यह निश्चय हुवा कि पहिले पाटगादी का और फिर थांभायतों का वर्णन है।

आगे चलकर श्री दयालदासजी महाराज की वाणी देखते हैं तो पहिला ही क्रम दिखाई देता है। श्रीहरिरामदासजी महाराज के बाद ही

"ब्यारीदास अपार बुधि राम सत जस उच्चर्यो"।

फिर हरदेवदासजी महाराज का वर्णन किया—

"हरदेव भेव सतगुरु कृपा भक्त अंश परगट भए"।

इस प्रकार क्रमश· पाटगादी का लेख देकर पश्चात् संवत् १८०६ में सबसे पहिले दीक्षा धारण करने की वजह से थाँभायतों में बडे जो श्रीनारायणदासजी महाराज हैं उनको स्थान दिया

"निर्मल दशा निर्दोपता नारायणदास विचार बुधि"।

ऐसा नारायणदासजी महाराज के वास्ते लिखकर फिर श्रीरामदासजी महाराज के लिये वर्णन करते हैं।

"भक्त समय भूमंडमें वलि वलि वारंवार नित।
समत अठार प्रसिद्ध वर्ष नवको भल आयक।
शुक्ल पक्ष वैशाख तिथी एकादशि लायक ॥

---

१ श्रीखेड़ापा थाँभायतों के ठिकानो में भी इसी प्रकार पाठ है। केवल थाँभायत महात्माओं की वाणी अधिक हैं जिसका कई ठिकानों मे अनुक्रम से श्रीदयालुदासजी महाराजकी वाणीका पाठ न करके अपने महात्माओं की वाणीकाही पाठ करलेते हैं।

अथ श्रीविहारीदासजी महाराज का झरझरा ।

वदत सत ररन्नार लगत रग धमक मृदग तत शब्द नचक्ता ।
अध मध उतम उतमअति सुमरण कीर्तन करण कल्याण गवकता ॥
कमडलु जल स्नान सल्ल जल निर्मल चरचत अग तिलक्ता ।
अध कमल पर अमृत वपत छन्त अकथ छक अक्वन वकता ॥
ऊर्ध्वं घरर घर अवर घणणण भणण भृग मध सिंधु सल्कता ।
निधिनिधि वाज अनँत गम उरमध घटघट प्रगट अघट ध्वनि सुनता ॥
सन तनु थरर रोम रग ररर फरर पचसखि रग रचकता ।
फिगदि फिरत पग गूघर घणणण चणणण मधुरिसि टेर वजकता ॥
करग्रह ताल स्तरक जन झरझर घरघर झणणण जींझ झणकता ।
त्रिकुटि अघट ध्वनि मुनिजर तणणण तार तरल ततसार तनकता ॥
शिवपद अचल अमल घट हल्लल वदन भल्ल वपु चन्द झल्कता ।
नमस्कार पद परम चरित्र नित्य करत विहारी वारी तुमारि पलन्ता ॥१॥

॥ इत्यलम् ॥

श्रीसिंहथल धाम की जितनी पाठ-वाणी की पुस्तकें हैं उन सब का क्रम इस भाति है। श्रीरामानन्दजी महाराज, श्रीजैमलदासजी महाराज, श्रीहरिरामदासजी महाराज, श्रीनारायणदासजी महाराज, श्रीहरदेवदासजी महाराज, श्रीरामदासजी महाराज, श्रीदयालुदासजी महाराज की वाणी तदनन्तर श्रीकबीर साहब, नामदेवजी, और रैदासजी की वाणी लिखी हुई हैं जिनका नित्य प्रति पाठ होता है। तथा श्रीखैड़ापा[1] धाममें श्रीहरिरामदासजी महाराज, श्रीरामदासजी महाराज, श्रीदयालुदासजी महाराज, श्रीपूरणदासजी महाराज, और श्रीअर्जुनदासजी महाराजकी वाणी का पाठ होता है बाकी पाठ पूर्वोक्त ही है। परन्तु अब कई महानुभावों के हृदय मे शका होने लगी है कि श्रीनारायणदासजी महाराज थाभायत थे अतः श्रीसिंहथल पाटगादी पर विराजमान आचार्यों की वाणी से पहिले श्रीनारायणदासजी महाराज की वाणी का यह विपरीतक्रम किस कारण से हुवा। श्रीरामदासजी महाराजनें भक्तमाल में थॉभायतों से पहले पाटगादी ही का क्रम वर्णन किया है। यथाः—श्रीहरिरामदासजी महाराज के वर्णन के बाद—

"रोम रोम सहजाँ लिव लागी। ब्यारीदास मिल्या वडभागी"॥

पाटगादी के अधिकारीजी का वर्णन कर फिर थाभायतों के लिये फरमाया—

"दास नारायण अमी धियाया। आदूराम रामगुण गाया"॥

इन क्रम वाक्यों से यह निश्चय हुवा कि पहिले पाटगादी का और फिर थांभायतों का वर्णन है।

आगे चलकर श्री दयालदासजी महाराज की वाणी देखते हैं तो पहिला ही क्रम दिखाई देता है। श्रीहरिरामदासजी महाराज के बाद ही

"ब्यारीदास अपार बुधि राम सत जस उच्चर्यो"।

फिर हरदेवदासजी महाराज का वर्णन किया—

"हरदेव मेव सतगुरु कृपा भक्त अश परगट भए"।

इस प्रकार क्रमशः पाटगादी का लेख देकर पश्चात् संवत् १८०६ में सबसे पहिले दीक्षा धारण करने की वजह से थॉभायतों मे वडे जो श्रीनारायणदासजी महाराज है उनको स्थान दिया

"निर्मल दशा निर्दोषता नारायणदास विचार बुधि"।

ऐसा नारायणदासजी महाराज के वास्ते लिखकर फिर श्रीरामदासजी महाराज के लिये वर्णन करते हैं।

"भक्त समय भूमंडमें चलि वलि वारंवार नित।
समत अठार प्रसिद्ध वर्ष नवको भल आयक।
शुक्ल पक्ष वैशाख तिथी एकादशि लायक॥

---

१ श्रीखैड़ापा थॉभायतों के ठिकानो में भी इसी प्रकार पाठ है। केवल थॉभायत महात्माओं की वाणी अधिक हैं जिसका कई ठिकानों मे अनुक्रम से श्रीदयालुदासजी महाराजकी वाणीका पाठ न करके अपने महात्माओं की वाणीकाही पाठ करलेते हैं।

तादिन उदय उद्योत परस सतगुरु पद पूरा ।
आप आप मिल आप राम भज उदय अंकूरा ॥
सद्गुरु मिल सद्गुरु भया याल बाल घर ध्यान चित ।
भक्त समय भूमडमें बलि बलि वारंवार नित ॥ १ ॥'

यह याल महाराज विरचित भक्तमालका लेख है। आगे चलकर श्रीपूरणदासजी महाराज की वाणी को देखते हैं तो आपने भी यही क्रम दर्शाया है, श्रीहरिरामदासजी महाराजका वर्णन कर फिर

'दास विहारी विमल वाणी जासु सिख हरदेव ।
तासु मोतीराम धिन रघुनाथ सतगुरु सेव ।
तो निजमेवजी निजमेव पायो भक्ति को नितमेव ॥ १ ॥"

इस प्रकार पाटगादी का वर्णन कर फिर श्रीरामदासजी महाराजके लिये वर्णन करते हैं

'हरिराम सिख धिन रामदासजु और नहिं कोइ आज ।
निरख सब निरताय निर्णय करण जीवा काज ।
तो महाराज जी महाराज मर्म अवतरे महाराज ॥ १ ॥"

इस प्रकार श्रीरामदासजी महाराज श्रीदयाउदासजी महाराज और श्रीपूरणदासजी महाराज के फरमाने के अनुसार पाटगादी के क्रमसे उन उन आचार्यों की वाणीका यथाक्रम पाठ बराबर होता चलाआता है सिरफ श्रीनारायणदासजी महाराज की वाणीके पाठ में पूर्वोक्त आशंका होती है परंतु यह शंका तो श्रीदयालुदासजी महाराजने अपने गुरुप्रकरणके प्रकरण ७ में पहिलेही निवारण करदीहै ।

स १८३४ के चैत्रकृष्णा ७ को श्रीहरिरामदासजी महाराजके शिष्योंने श्रीगुरुदेवजी श्रीहरिरामदासजी महाराजका जीवित महोत्सव (मेला) मनाया जिसमें श्रीजी महाराजके सब शिष्य प्रशिष्योंको कुङ्कुमपत्रिका दीगई सैंकडो कोसों से हजारों यात्री दर्शनार्थ आये जिसके बारे में श्रीरामदासजी महाराजने अपनी वाणी में फरमाया है—

मेलो कर गुरुदेवजी सब कों लिए बुलाय ।
दर्शण दे पावन किए मिले ब्रह्म में जाय" ॥ १ ॥

श्रीहरिरामदासजी महाराजकी परची का वर्णन—

"धाये जबै महोत्सव माथे जहँ जहँ पूगे समचार ।
भाइ धाइ रामसनेही सब आये स्वामी के द्वार ॥
रामप्रताप कमी नहिं काई इहाँ धन ईंदातणा भडार ।
मावै नहीं लोक पुर माहीं ऐसो थटियो थाट अपार ॥ १ ॥

दोहा ।

अष्टसिद्धि नवनिधिजु पुनि हाजर हुइ सो आन ।
श्रीस्वामी के भजनमध्य सब विधि भए समान ॥ १ ॥'

इस प्रकार बड़े धूम धाम के साथ पांच दिन तक मेलेका उच्छवसमाज होता रहा, इसका आनंद तो वेही जानते हैं जिन्होंने उसका अनुभव किया।

"वह शोभाजु समाज सुरा, कहत न बनै खगेश।
मरणै शारद शेप पुनि, सो रस जान महेश ॥ १ ॥ (रामायण)

महादेव के समान इस आनंदको पाकर लोक कृतकृत्य हो आज्ञा मॉग मॉग सब चलेगए। तत्पश्चात् श्रीरामदासजी महाराजभी श्रीजीमहाराज श्रीहरियानंदजी महाराजसे आज्ञा लेकर दिव्य अलौकिक गुरुमूर्तिका ध्यान करते हुए पीछे खैड़ापे पधार गये।

जीवित महोत्सव से पंद्रहवे दिन अर्थात् सवत् १८३५ के चैत्र शुक्ल ७ शुक्रवारके दिन श्रीहरिरामदासजी महाराज ने परम धाम पधारनेका दृढ निश्चयकर विरहदुःख से दुःखित श्रीनारायणदासजी महाराज को जिसप्रकार अतिम शिक्षा, आज्ञा और जो महत्त्व प्रदान किया उनका वर्णन श्रीदयालुदासजी महाराज गुरुप्रकरणमें श्रीकृष्ण उद्धव रूपसे इस तरह करते है:—

निजपुर हरिजातॉह प्रसन्न हुइ उद्धव कह्यो।
शब्द ब्रह्म सार्थाह कलेवर हित कीज्यो मती ॥ १ ॥ (गुरुप्रकरण)

अर्थात् परमधाम पधारते हुए कृष्णस्वरूप गुरुमहाराज श्रीहरियानंदजी महाराज उद्धवरूप नारायणदासजी महाराजको निज विछोहके कारण अत्यंत दुःखित देखकर आपने उपदेश किया कि शब्दब्रह्म तो अपने साथ है और कलेवर (शरीर) के लिए सोच करना मत। क्योंकि यह तो पाचभौतिक नाशवान् ही है।

महापुरुषवाक्य है–जो तूं चेला शब्द का शब्द ब्रह्म कर जान।
जोतूं चेला देहका देह खेह की खान ॥ १ ॥

इसलिये सोच तो तीन ही कालमें नहीं करना चाहिये। फिर आप श्रीमुखसे फरमाते हैं—

"मैत्रेय रामदास सखा एक मेरो यहाँ।
धीरज ध्यान प्रकास हरदेवो होसी इसो ॥ १ ॥ (गुरुप्रकरण)

अर्थात् हे नारायणदासजी, यहा एक मेरा रामदासजी जो है वह साक्षात् मैत्रेय

---

१ "यूं रामै जन मागी आज्ञा। लागत जान गुरांकी जाग्या ॥
स्वामी कह्यो रहो तुम याहीं। इन कारण ठहरे जब नाहीं ॥
कर परणंत बहुत परकार। ध्याये मुरधर देश मँझार ॥
(परची श्रीहरि०)

२ इस सोरठेमें सखापद जो है सो उद्धव के लिये ही है क्योंकि भगवान् के सखा उद्धवजी ही थे—

ऋषि हैं बडे धैर्यवान् हैं औ ज्ञान का प्रकाश करने वाले हैं। तथापि उनके लिये भी यही कहना है कि इस नाशवत शरीरके लिये सोच न करें, और हरदेवजी रामदासजी के तुल्य ही धर्यवान् और ज्ञान का प्रकाशक होगा परंतु अभी बालक है इसलिये इसको धीरज दिलासा बधाते रहना, इस प्रकार फरमाकर जैसे परमधाम पधारते हुए भगवान्ने उद्धवजी के लिये महत्त्व प्रदान किया—

नोद्धवोऽण्वपि मन्न्यूनो यद्गुणैर्नार्दितः प्रभुः ।
अतो मद्वयुनं लोकं ग्राहयन्निह तिष्ठतु ॥

(श्रीमद्भागवत स्कंध ३ अध्याय ४ श्लोक ३१)

अर्थात् उद्धव मुझसे अणुमात्र भी न्यून नहीं है क्योंकि यह विषयोंसे बिलकुल क्षोभयुक्त न हुआ, इसलिये यह समर्थ उद्धव लोकों को मद्विषयक ज्ञानका उपदेश करता यहीं रहना चाहिये।

दयालुदासजी महाराजने गुरुप्रकरणमें इसका रूपक इस प्रकार वर्णन किया कि उद्धवरूप नारायणदासजी महाराजको महत्त्वता दिराते हुए श्रीजीमहाराज फरमातेहैं—

' नारायण आज्ञा आदि, इण संज्ञा रहजे यहां ।
दासा सेव समाधि, भक्ति प्रेम सुमरण सदा' ॥ (गुरुप्रकरण)

हे नारायणदासजी, तुम्हें आदि आज्ञा है अर्थात् सबसे पहलही पहल तुम शिष्य हुए हो और दासातन, सेवा, समाधि तथा प्रेमभक्ति और सुमरणमें तुम सदैव बडे तत्पर हो। अधिकारी विहारीदासजीका तो देहान्त होगया है और हरदेवजी छोटे १० वर्षके बालक हैं और यह गुरुपरंपरा शिक्षा प्रणाली लोकोद्धारार्थ शुरू रखनेकी जरूरत है इसलिये तुमसे अंतिम यही आज्ञा है कि तुम्हारे शिष्य बेशक थांमायत वर्ग परंतु तुम इन सबोंमें इसी धाममें निवास करना। इस आज्ञाको सुनकर श्रीनारायणदासजी महाराज विरहसमुद्रमें विकल होने लगे तब तो श्रीजीमहाराजने फिर उनको दिलासादे आशीर्वादात्मक दो शब्द फरमाए—

प्रमाण —वृष्णीनां प्रवरो मंत्री कृष्णस्य दयितः सखा ।
शिष्यो बृहस्पते साक्षादुद्धवो बुद्धिसत्तमः ॥
श्रीमद्भागवत स्कंध १० अध्याय ४६ श्लो १

बुद्धि शुद्धि सेती मुनो धरायमैं आधार ।
कृष्णसखा जेहि विधि रहत उद्धव बुद्धि उदार ॥ १ ॥
रघु० भक्तमाल द्वापरखंड कथा २०

इस प्रमाण से सखा शब्द उद्धव काही सम्बोधन है।

सोरठा ।

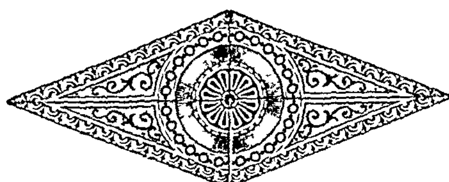
सब मेरा मुझ माँय, रामशब्द राता जिके ।
दूरा कदे न थाय, शब्दरूप मिलसां उठे ॥ १ ॥

दोहा ।

आनंदमें रह ज्यो सदा, कहज्यो सुमरण सार ।
रामसनेही रामजन सांचो एह विचार ॥ १ ॥ (गुरुप्रकरण)

यह अंतिम उपदेश फरमाकर अपनी वाक् वाणी बधकर मोक्ष पधार गए । इस अंतिम गुरुवाक्योपदेशको धारणकर श्रीनारायणदासजी महाराजने जहाँतक आपका शरीर विद्यमान रहा तहाँतक श्रीसिंहथल निजधाम को छोडकर अन्यत्र कहींभी चरण न धरा। यहीं आप धाम पधारे; सिंहथल देवलोंमे श्रीजीमहाराजके देवलके पास सामनेही आपपर छत्री बनीहुई है । सब थाभायतों का वर्षी मेला अपने अपने स्थान ठिकानोंमें होता है परंतु नारायणदासजी महाराजकी वर्षी तो सिंहथलमें ही श्रीपाट कोठारसे सालानी होती चली आती है ।

अब देखिये श्रीहरिरामदासजी महाराजने जिन नारायणदासजी महाराजको इतना महत्त्व दिया और श्रीदयालदासजी महाराजने गुरुप्रकरण मे जिनके महत्त्वका पूरा पूरा वर्णन किया क्या ये वचन अप्रमाणिक समझे जा सकते हैं? पाठकवृंद खयंही विचार करलें । वास्तवमे महात्माओंकी अनुभववाणीमें पहले-पीछेकी शंका करणी ही व्यर्थ है क्योंकि उन महापुरुषोंके अनुभवशब्द हृदयाधकारको मिटानेके लिये साक्षात् सूर्यरूप हैं । उनमें पहिले पीछे क्या ।



---

१ वर्ष पेंतीसा चैत सुदि, सातम शुक्रवार ।
हरिरामा तन छाडिके, जाय मिले निरकार ॥ १ ॥

अथ श्रीनारायणदासजी महाराज की अनुभव वाणी।

साखी।

सत्त गुरु अरु सन्त जन, राम निरंजन देव।
दास नारायण वीनवै, दीजै परभू सेव ॥ १ ॥
नरिया मन का दुखड़ा, किसकू कहे सुनाय।
मन विषयारी विष दशा, दमदम दौड़यो जाय ॥ २ ॥
मन माया के संग फिरै, अंतर करै विकार।
मन करि मनको मारिहो, हरि से करू पुकार ॥ ३ ॥
सद्गुरु की आज्ञा हुई, सुखसैं सुमर्‌या राम।
नरिया निश्चो पाइयो, तजिया कुल बेकाम ॥ ४ ॥
तीन लोक का राजवी, राम निरंजन राय।
सतगुरु के परताप तैं, नरिया तन में ध्याय ॥ ५ ॥
नरिया गुरु आछी करी, चेतन चरण लगाय।
भरम विषै बह जावता, अपणा जान समाय ॥ ६ ॥
नरिया गुरु ऐसी करी, तैसी करै न कोय।
जग सागर संग जावता, राखलियो है मोय ॥ ७ ॥
नरिया रामहिं सुमरिये, टालै जमकी घात।
आलस ऊंघ न कीजिये, अवसर बीतो जात ॥ ८ ॥
नरिया रसना राम कह, कंठ कमल सुमराय।
प्रेम पियाला भर पिया, पीवत पाप नशाय ॥ ९ ॥
हिरदै धुन लागी रहै, सुमरै माह्यो माहिं।
तन सारो चेतन भयो, नरिया सुख उपजाहिं ॥ १० ॥
नरिया नाभी आवता, हुआ सास उसास।
मन तन सगही नाचिया, सुमरन रग रग पास ॥ ११ ॥
रसना नाभी बीचमें, एक अखंडी तार।
नरिया रोम हि रोम में, सार शब्द झणकार ॥ १२ ॥
नरिया भाग्य उदय हुआ, धनि है विधी अपार।
रोम रोम में रम रह्यो, एक शब्द ररकार ॥ १३ ॥

अथ चेतावनी प्रारंभ।

चेतावनि सुन चेतरे, मूरख मन्न गँवार।
राम निरंजन ध्यायले, दैगो सुक्ख अपार ॥ १ ॥

छन्द जाति ऊधोर।

फिरियो जीव जन्मां माहिं। कित्थे चैन पायो नाहिं।
अब तो सिनख करि मोकूंह। साँई सुमरसूं तोकूंह ॥ १ ॥
नायक जन्म देवो मोहि। हिरदै वीसरूं नहिं तोहि।
करसूं संत की सेवाक। भज सूं राम कूं देवाक ॥ २ ॥
दीया गर्भ ही में वास। जठराअग्नि ही के पास।
कीया देह का आकार। सारा अंग ही सुध्धार ॥ ३ ॥
उद्दर माहिं कीवी सार। ऊंधे मुक्ख अम्मी धार।
राख्यो मास ही नव जाण। उद्दर वीच ओखो प्राण ॥ ४ ॥
माहीं करत है पुकार। वाहिर लाव हो कर्तार।
मेरे तोहि को आधार। करसूं याद प्रियतम यार ॥ ५ ॥
श्वासोश्वास ही संभार। प्यारा राखसूं उरधार।
अब तो जन्मियो है वाल। दया करी है दय्याल ॥ ६ ॥
दाई कहै सुधर्‍यो काम। वाहिर काढियो है जाम।
माता हर्ष करि परसैह। वालो कान्ह सो दरसैह ॥ ७ ॥
पिता कहै हूओ न्याल। वेटो कमासी धनमाल।
भाई कहै अपनो वीर। वल तो वंधियो शरीर ॥ ८ ॥
वहिनड़ वाल लेवै पास। राखै मनां मोटी आस।
कडुंवै हुओ मंगलचार। गावै गीत वैठी नार ॥ ९ ॥
माता पिता सेती प्यार। सवसें करत है हितकार।
वालो रमै खेलै सोय। माता पिता विकसै जोय ॥ १० ॥
मही दूध पीवै आय। लाड्डू चूरमाँही खाय।
अब तो साथियाँ में जात। खेलै वहुत ही दिनरात ॥ ११ ॥
कूदै फैल ही करैक। किनता विड्डही मरैक।
राखै पिताही समझाय। मानै नहीं जोरै जाय ॥ १२ ॥
ख्याली खलकसूं खुशियाल। अब तो वीसर्‍यो गोपाल।
खाँगी पाघ ही झुकाय। चंगा चौलणा लग्गाय ॥ १३ ॥
आछो करत है शृंगार। जोवै रूप ही दीदार।
हूवो मरद ही मोस्यार। माहीं ऊपज्या विकार ॥ १४ ॥
करमी करै जारी जाय। कसराँ काढ़सी जमराय।
राखै जोश ही मनमाहिं। मोसा और कोई नाहिं ॥ १५ ॥
मुखसे वुरो ही भाखैह। सब सूं वैर ही राखैह।
हरि से हुओ गुनहै गार। जमरो मार करसी ख्वार ॥ १६ ॥

गाफिल समझ रे अज्ञाण। माथै राख पति कूं जाण।
कीयो नीरसे पैदाक। ताकूं भजरे गन्दाक॥ १७॥
दोलत दिवी है तोईक। गोविंद गाय रे सोईक।
अब तो व्याहि लायो नार। पासैं बाधियो घरबार॥ १८॥
माता पिता से करि जुद्ध। माया बाँटि ली बेसुद्ध।
गाडै व्याज ही देवैज। दूणा दाम ही लेवैज॥ १९॥
पित्र सूं प्रेम ही भागोक। लोभ र मोह सूं लागोक।
नेहा नारि सें दिनरात। बूढो कामना में जात॥ २०॥
यदो घिरत रोटी खाय। सोवै नींद ही अघाय।
चाँवल खाय चगा माल। साइ बिना भूडो हाल॥ २१॥
हत्या करै मारै जीव। बदला मागसी रे पीव।
मासहु खाय पीवै मद्द। हैगो मरद ही गरद्द॥ २२॥
पीवै पोस्त ही को लाय। पोसत पिंड ही को खाय।
पीवै तमाकू अरु भग। जावै नीच जूणाँ सग॥ २३॥
पाचूं पसरिया अप्पार। कीया कम ही हुशियार।
मनवो विषै सूं भरियोह। स्वादाँ लागरे मरियोह॥ २४॥
बदा छाँड मैला खाज। माहे सुमर लै महाराज।
निश्च नाम लै निराश। नहिं तो होय सत्यानाश॥ २५॥
दया दीनता कर भाय। माया राम लेखैं लाय।
मन को देत है निधार। समझै नाहिं रे गव्वार॥ २६॥
कीयो सपदा विस्तार। मेरै पूत पोता नार।
मेरै गाय गोधा अन्न। मेरै ऊठ घोडा धन्न॥ २७॥
आधो अहूं में डोलैह। मुख ता राम नहिं बोलैह।
कहारे भरमियो भइयाह। हरि सें दूर ही रहियाह॥ २८॥
झूठै बधियो रे जाल। बदा खायसी रे काल।
हिरदै माहिं हरि का हेत। मुहडे पड़ेगी बहु रेत॥ २९॥
कीया श्याम मे पचब्र। जासूं झूठ पडियो मन्न।
रक्षा करी दोहरी माहिं। तासें प्रीति कीवी नाहिं॥ ३०॥
कीया गुण ही अप्पार। ऐसा भूलग्यो करतार।
जान्यो नाहिं सिजन हार। माथै पडैगी बहु मार॥ ३१॥
अब तो जरा जोजर थाय। बूढो अग ही धुजाय।
कुबियो डागडी सभाय। आखे धुध लागी जाय॥ ३२॥
बूढा काम हो ये नाहिं। आधा अक्ल नाहीं माहिं।
नारी कहै कैसे काम। नाखो छानडी में चाम॥ ३३॥

बेटा कहै घरमें साल। पापी पड़्यो है बेहाल।
शूको टूक देवै लाय। गल में ऊलड़ै नहिं भाय॥ ३४॥
तन से काम करता सब्ब। आदर भाव करता जब्ब।
अब तन थाकियो म्हारोक। सब कूं लागियो खारोक॥ ३५॥
यो तो स्वारथी संसार। तेरो नाहिं रे परिवार।
बूढो दुखी है मनमाहिं। यामें कोई मेरो नाहिं॥ ३६॥
घर में घणो रे कीतोक। कुछ इक घोह रे पूतोक।
पूतां कियो है विचार। पिता करांगा कुछ लार॥ ३७॥
दुनिया लोक बूझैंआय। बूढ़ा व्यथा तेरै काय।
खोटा कर्म लागा आय। पीड़ा पिंड सारै दाय॥ ३८॥
बूढ़ा राम कहै भाईह। दुष्टी हायही लाईह।
अब तो मौतही आईह। संगी कोई नहीं भाईह॥ ३९॥
नर तूं बीसन्यो बेकाम। संगी नाहिं कीयो राम।
चेत्यो नाहिं रे गंवार। आछो जन्म चाल्यो हार॥ ४०॥
नर तूं काहे कूं आयोह। हरि को नाम नहिं पायोह।
कंठ कूं काल रोक्यो आय। सब ही द्वार बूंद्या लाय॥ ४१॥
मारां दिवी मांहो माहिं। दोहरो पिंड छूटै नाहिं।
बहुतो कष्ट ही हूवोह। माया मोह करि मूवोह॥ ४२॥
लोकां बाल कीयो छारि। देखा देखि रोवै नारि।
जमरो मारि लेग्यो जीव। आडो नाहिं आयो पीव॥ ४३॥

साखी।

पति सूं बे मुख होय करि, सिल्यो मायाके साथ।
अज्ञानी नर अहूं मे, पड़्यो पराये हाथ॥ २॥

छंद जाति ऊधोर।

अब तो लेचल्या जमदूत। कीयो मार करि घर पूत।
लेग्या धर्मके आगेह। लेखा सर्व ही मांगेह॥ ४४॥
झूठा बोल कह नहि सोय। सुकृत नाहिं कीयो कोय।
मैला काम ही कीयाक। हरि का नाम नहिं लीयाक॥ ४५॥
जापर कोपिया जमराय। मारॉ दिवी जाझी लाय।
लातां मारियो पिच्छाड़। गल में घाल घींस्यो नाड़॥ ४६॥
ऊंधो टेर दीवी मार। जम्मॉ जोर कूट्यो जार।
हिरदै नांहि हरिका लेस। नॉंख्यो मुगदरां सूं फेस॥ ४७॥

आगै अग्नि का दव्वार। तपती भाय नाता सार।
ऊपर नाहिके फेन्योह। वदो चाल करि गेन्योह ॥ ४८ ॥
नाख्यो नरक ऊडे ताण। कीडा तोड़ चूटै प्राण।
कूरे पड़ै माथै मार। चदा तोहि कू धिरकार ॥ ४९ ॥
सापा त्रिच्छुवा का कुड। तामें डार दीयो रुड।
त्रिन्छू साँप पिंजरखाहि। दूता मुगदराँ की लाहि ॥ ५० ॥
ऐसी त्रास दीवी ताहि। प्राणी पछ्योही विल्लाहि।
यहा नरक ही भुगताहिं। भुगतै बहुत जुग्गा माहिं ॥ ५१ ॥
जग में स्वाद ही लीयाह। साहिब याद नाहिं कीयाह।
यो तन फेर पावै काँय। पडियो अनत ऊडे माँय ॥ ५२ ॥
बदा राम सुमन्यो नाहिं। दु ख पाप कैसे पाहिं।
मनमें राखता अभिमान। जोधा गया मैली खान ॥ ५३ ॥
करता गर्व ही गुम्मान। गया नरक ही निदान।
ऊँचा महल ही अव्वास। करता नारि नर विलास ॥ ५४ ॥
खाता मेवा मीठा माल। प्याला पीवता निव्हाल।
निर्गुण नाम राता नाहिं। गया गदकी कै माहिं ॥ ५५ ॥
माही केई जुग्गा ताहिं। पीछै चोरासी कू जाहिं।
जूणों अनेक ही भुगताय। जामें ऊपजे खपजाय ॥ ५६ ॥
बहुतो दु ख पावै जीव। सुमन्यो नाहिरे तैं पीव।
सातें कष्ट तन पायोक। जुग जुग माहिं भटकायोक ॥ ५७ ॥

साखी।

सतगुरु शरणै ऊबऱ्या, नरिये सुमऱ्या राम।
नहिं तो भरम्या आवता, दुख पड़ता वे काम ॥ ३ ॥

छद जाति ऊधोर।

शरणै सत के आयाक। भावद भक्ति ही भायाक।
सेवा थाल की लगाह। दुविधा दोष ही भागाह ॥ ५८ ॥
रसना नाम ही लीयाह। अमृत घट ही पीयाह।
हिरदै ध्यान ही धरियाह। तन मन सहज थरहरियाह ॥ ५९ ॥
नामी नाम ही निरधार। सुमरण सहज ही उधार।
सगी साँजही धाऱ्याह। झूठा पास ही डाऱ्याह ॥ ६० ॥
पति सू प्रेम ही ल्यायाह। हरि गुण हेत सू गायाह ॥
सहजाँ ज्ञान ही आयाह। मनवै शान्ति ही पायाह ॥ ६१ ॥

उलटा पछिम कूं ध्यायाह । ऊंचा मेरु करि थायाह ।
बाजा गगन ही वायाह । निरंजन शून्य ही पायाह ॥ ६२ ॥
सुन में शब्द ही निरकार । लागी सुरत ही इकतार ।
शुन में सुक्ख ही भइयाह । दूजा दुःख ही गइयाह ॥ ६३ ॥
पूरण ब्रह्म ही कूं पाय । सहजाँ रहे सुख सम्माय ।
मिटिगे जनम अरु मरणाक । अब तन फेर नहिं धरणाक ॥६४॥
मिलिया नीर में हुय नीर । हंसा चुगत है हरि हीर ।
पाया राम ही महाराज । सरिया सहज जनका काज ॥ ६५ ॥

साखी ।

सतगुरु के परताप तें, नरियै नाम पियाह ।
प्यासा प्राण पिलाइया, पीवत ही जीयाह ॥ ४ ॥
और सकल कूं छाँडि करि, परस्या आतमराम ।
नरिया साँसा को नहीं, जाय मिल्या निजधाम ॥ ५ ॥

इति चेतावनी ।

अथ प्राण-परचा प्रारंभः ।

साखी ।

जन्म जन्म जिव भरमियो, माया मोह लगाय ।
भवसागर में डूबताँ, सद्गुरु लियो रखाय ॥ १ ॥

चौपाई ।

सद्गुरु न्यारा है निर्वाणी । दे दे ज्ञान तारिया प्राणी ॥
सद्गुरु पूरण ब्रह्म पियारा । दर्शन पायाँ बिले विकारा ॥ १ ॥
सद्गुरु एकमेक है साँई । भूल पड़्या जग जाणै नाँई ॥
सद्गुरु सेव करौं मैं थाँरा । मैं हौं तन मन जीव तुम्हारा ॥ २ ॥
सद्गुरु मोकों शरण उबारो । निशिदिन मेरे तोहि अधारो ॥
सद्गुरु मोकों डूबत तारो । भव सागर तें पार उतारो ॥ ३ ॥
सद्गुरु ऐसी दया उपावो । दुख दोज़क कों दूर गमावो ॥
सद्गुरु काम क्रोध कों पालो । मैं तो कपटी विषय विहालो ॥ ४ ॥
सद्गुरु आशा तृष्णा जालो । स्वादी मन माया मोह टालो ॥
सद्गुरु मैं तो अन्ध अज्ञानी । काटो कर्म करौ निज ज्ञानी ॥ ५ ॥
सद्गुरु मो मन दौड़ मिटावो । लालच लोभ रु मोह हटावो ॥
सद्गुरु देवो शील सन्तोषा । मारो मन्न करो निर्दोषा ॥ ६ ॥

सद्गुरु दयो ज्ञान विचारा । अवगुण मेटि करी निस्तारा ॥
जन हरिरामजु भर्म गमाया । संशय शोक रु कर्म नसाया ॥ ७ ॥

साखी ।

सद्गुरु निरंजन हार है, सब का समथ साम ।
अवगुण मेट्या दाल्जी, दिया मोटि निज नाम ॥ २ ॥

चौपाई ।

राम राम रसना मे लीया । प्रेम प्रकाश कंठमें कीया ॥
मनवा माहिं नाम से लाया । हिरदै सुमरण हेत लगाया ॥ १ ॥
नाभी भजन किया अधिकारा । पिंड सारेमें रमे पियारा ॥
रोम रोम में अध उचारा । अंग अंग में है विस्तारा ॥ २ ॥
सहजाँ सुरति शब्द उलटाया । छाड्या देश निदेशा ध्याया ॥
बंकनाल चले इक धारा । मेरुदंड में हुआ पसारा ॥ ३ ॥
वपा सहज वणी चहुँ खडे । उलटा नीर चढ्या ब्रह्मंडे ॥
सुनसागर के माहि समाया । अनहद गाज गगन गणणाया ॥ ४ ॥
पहुँता सन्त अमीरस पीया । तृष्णा घटी जिरे नर जीया ॥
परब्रह्म से प्राण पिलाया । निशिदिन चरणे ध्यान लगाया ॥ ५ ॥
जित्थे काल कर्म नहिं काया । जित्थे विषय विघ्न नहिं माया ॥
राम निरंजन जग से न्यारा । दिया नरैंको सुक्ख अपारा ॥ ६ ॥

साखी ।

मैं हूँ प्राणी आपना, कहा न कीजै दूर ।
प्रेम भक्ति नरैंकों दिवो, राखो नित्य हजूर ॥ ३ ॥

चौपाई ।

शरणै आइ दीनता दाखे । सद्गुरु मोकों चरणाँ राखे ॥
सो गुरु दीया ज्ञान विचारा । भ्रम कर्म तें कीया न्यारा ॥ १ ॥
सद्गुरु मेरे किरपा कीनी । भाव भजन की आज्ञा दीनी ॥
सद्गुरु सतका शब्द सुणाया । मुखले रामनाम सुमराया ॥ २ ॥
रामनामसा नाम न कोई । भावे मोंड सकल फिर जोई ॥
राम राम कहि राम मिलावै । लख चौरासी कबहु न जावै ॥ ३ ॥
सद्गुरु ऐसा तत्त्व बताया । निश्चय करने राम कहाया ॥
सद्गुरु ऊपर प्राण अँवारी । तन मन शीश चरण मं डारी ॥ ४ ॥
रसना रटत जु नेह लगाया । कंठ कमल में सुमरण आया ॥
गद्गद होइ प्रेमरस पाया । पी पी प्राणी कर्म नसाया ॥ ५ ॥
मन इकतार नाम निज भाया । हिरदै ध्यान धणी का आया ॥
दया दीनता ज्ञान विचारी । दिलकी दुमति दूर निवारी ॥ ६ ॥

चेतन चलकरि नाभि सिधाया। श्वास उश्वासे सुमरण लाया॥
तन मन सब ही सहज नचाया। भाँति भाँतिका नृत्य कराया॥ ७॥
रग रग भीतर सहज पसारा। रोम रोम में है ररकारा॥
नाड़ि नाड़ि में जीव जगाया। सारशब्द के संग लगाया॥ ८॥
जीव पलटिया ब्रह्म जु होई। और विकार लिपे नहिं कोई॥
विरहनि झूरी अती अपारा। अब तो पाया पीतम प्यारा॥ ९॥
दया करी मोहि दुःख मिटाया। चरणकमल के बीच रखाया॥
ररंकार सहजॉ लिव लाया। प्राणी बहुत परम सुख पाया॥ १०॥
पीया ऐसी कृपा जु कीनी। शरणे सदा आपमें लीनी॥
सहाय करी अरु सुलटा थाया। पातोत्ताने बंध लगाया॥ ११॥
शिखर चढ़िया पूरब ध्याना। ठाम ठाम का पाट खुलाना॥
खूला ध्यान धरणि कों आया। पातालां में पन्थ जु पाया॥ १२॥
उलटा शब्द पछिम कों ध्याया। मन पवनाका बंध लगाया॥
बंकनाल में सहजाँ बहिया। मेरु मंझि मेवासा दहिया॥ १३॥
अधः ऊर्ध्व बिच राह चलाया। आकाशाँ में अनहद बाया॥
चंद रु सूर गगन घर लाया। नाद बिन्दु के माहिं समाया॥ १४॥
गहरी गाज गगन गणणाया। वर्षे अमृत प्राण पिलाया॥
पी पी सन्त शुन्य में आया। चित शान्ती वर सहज सिलाया॥१५॥
मन पवना स्थिर दशम द्वारा। पांच पचीसों बंध्या सारा॥
इड़ा पिंगला सुषमण मेला। सुरति शब्द जहँ हूआ भेला॥ १६॥
शब्द निरंजन काज सुधारा। भवसागर ते पार उतारा॥
शब्द नकेवल ऊपर वारी। अपना जान रु लिया उबारी॥ १७॥
उत्तर दक्षिण ध्यान मिलाना। पूर्व पश्चिम माहिं समाना॥
परम शून्य है सरजनहारा। सहजॉ मिलिया प्राण हमारा॥ १८॥
सुखसागर है निर्गुण राया। दर्शन किया परम सुख पाया॥
त्रिवेणी में पीव निवासा। मिली पियारी लील विलासा॥ १९॥
पती ऐसी प्रीति लगाई। झिलमिल ज्योती से लिपटाई॥
भव कों वीसर चरणॉ आई। सहजॉ रहे अखंड लिवलाई॥ २०॥
संशय शोक सकलही मेटा। निर्भय निराकार कों भेटा॥
पूर्ण भया परम सुख पाया। तातें अंतर ध्यान लगाया॥ २१॥

साखी।

जीव शीवमें मिल रहे, दूर कहाँ नहिं जाय।
नरियै नाम जु ध्याइया, सहजॉ रहे समाय॥ ४॥

चौपाई ।

तहाँ न त्रिगुण मोह न माया । पाच तत्व नहिं कर्म न काया ॥
धरती वायु न आभ न तारा । राति दिवस नहिं अध न कारा ॥ १ ॥
चद सूर नहिं इद न पानी । घाट न वाट न दुख न प्रानी ॥
जीव न जिंद न खानि न वानी । काम न क्रोध न लोभ न जानी ॥२॥
तीन लोक नाहीं ब्रह्मडा । सात द्वीप नाहीं नव खडा ॥
सात समुद्र नहिं नदी नहाया । भार अठारह वनी न राया ॥ ३ ॥
चार चक्र नहिं भटक न मरणा । जत्त न सत्त न भेप न धरणा ॥
काजी कुरान न वेद न ब्रह्मा । राव न रक न रूप न रभा ॥ ४ ॥
योग यज्ञ जप तप नहिं वरता । सेव न पूज न मूर्ति न धरता ॥
देव न दानव जोध न जुद्धा । जरा न जाल काल नहिं फधा ॥ ५ ॥

साखी ।

एकाएकी ब्रह्म है, न्यारा सब घट माहिं ।
सत सयाना मिल रहा, दुनिया को गम नाहिं ॥ ५ ॥
बाहिर भीतर एक है, घट घट में निरकार ।
जिन पाया जिन सुमरि के, आप उपावनहार ॥ ६ ॥
परचा पहुता प्रानमें, हुआ लेवतॉ नाम ।
कहनी को आवे नहीं, नरियो मिल्यो मुकाम ॥ ७ ॥

इति प्राणपरचा ।

पद १

गुरु दर्शन दो महाराजा ।
अब प्राणी पर दया करीजै सार सकलही काजा ॥ टेर ॥
सगुरु विछड्याँ दु ख अपारा निशि दिन रहत उदासा ।
कृपा करो जन्म वेहाल कल्पत पल पल प्यासा ॥ १ ॥
या जग माहीं सबै निडाणा किसका लेऊ अधारा ।
हरिरामा निजधाम पहूता प्राणी करत पुकारा ॥ २ ॥
अवगुण गारो जीव हमारो शरणे करो सहाई ।
झूरै तन मन माहिं निजारा सतगुरु चरण लगाई ॥ ३ ॥
दरशन पायाँ पावन होई भय साँसा सब जाई ।
कहै नारायण गुरु सुखसागर सुखमें लौ जी मिलाई ॥ ४ ॥

पद २

मोहिं राखो राम हजूरा ।
जन्म जन्म के अवगुण मेटो जान न दीजै दूरा ॥ टेर ॥

दया करी गुरुदेव हमारे रसना राम रटाया।
कंठ हिरदा चिच सुमरण साझ्या प्रेम पियाला पाया ॥ १ ॥
नाभिकमल निज नाम उचाऱ्या रग रग में ररंकारा।
सारशब्द का सकल पसारा तन सारे ततकारा ॥ २ ॥
करता ऐसी कृपा कीनी उलटा ध्यान लगाया।
दास नारायण निरभै नेड़ा चरणां चाकर लाया ॥ ३ ॥

॥ इत्यंपूर्णम् ॥

अथ श्रीहरिदेवदासजी महाराजकृत ब्रह्मस्तुतिः।

छप्पय।

नमो आदि अविगत्त अगम हो आप अरूपी।
अवरण सदा अथाह लहै कुण थाह स्वरूपी ॥
ब्रह्म सार निरकार परापर नूर पियारो।
वसो सर्व जहँ वास नाथ निज आप नियारो ॥
अणदेह अखंड अजन्म अलख आप आप सम आचिए।
हरिदेव स्वामि सस्तूति निज वायक तन मन वाचिए ॥ १ ॥
ब्रह्म नूर भरपूर सर्व निज इष्ट सधारा।
दृष्टि सार अनदृष्टि सृष्टि सब आप अधारा ॥
जीवन जाति सजीव पीव सबही का पेखो।
परै सकल अणपार वीच तहाँ सार विसेखो ॥
निज उहाँ नाथ अविगत अरस परम परा पुरुषोत्तमो।
हरिदेव स्वामि निज राम हो नमो नमो निर्गुण नमो ॥ २ ॥
नमो नमो निरकार सकल सिर सार सहाई।
कला अकल अणकीत महा निज नीति कहाई ॥
देखण हार दयालु सर्व गत पेख सयाना।
पोषण भरण विचार करै हरि सहज पयाना ॥
परकार अघट घट घट प्रगट सुघट होय अणघट सता।
हरिदेव ब्रह्म हित उर प्रणम्य धर्म सवै निज हरि मता ॥ ३ ॥
सुख सागर हरि सोइ अगम आगर अति आनँद।
सुमऱ्याँ देह संतोष प्रीति परस्यां परमानँद ॥
अह निशि ताहि आधार संत उर धार सदाई।
सुख आपण दुख हरण शरण शीतल हरि थाई ॥

---

१ समस्त वाणी श्लोक मेधा ३४०।

मेटै जु मरण भर जा जनम सोइ मेटै साहिब सचा।
हरिदेव स्वामि हरि है सही कबहू नह काई कचा ॥ ४ ॥
अलप आप अण रूप पलक मे विश्व पसारे।
धारण आप कल्याण देव कारज उन सारे ॥
समरथ नाम सचाह थाट ऐसो जग थाए।
घट मठ एह अकार करे हरि सहज किताए ॥
आतम्म आप आपै सहित रूप शक्ति यही रचे।
हरिदेव ताहि प्रणमै सरस साहिब हो साहिब सचे ॥ ५ ॥
सर्व रूप सर्वेश अग अन अग अनेका।
सग रहत नहिं सग रग अमरग है एका ॥
अश आप अवतार धार आतम अनपारा।
गुणा रहित सो रूप रहै निज रूप नियारा ॥
केताहि नूर निधि निधि कला करै नाथ सहजा मही।
हरिदेव दास यदै हरप सोइ स्वामि समरथ सही ॥ ६ ॥
सहाय करण सब जान एक भगवान अनेका।
विश्व बहुत विस्तार आप सबही में एका ॥
पोषै सहज प्रकार परम तोषै सोइ प्यारे।
आदि मध्य अत धर आप हरि होय अधारे ॥
निज पीर शीर जीवन सरन मेटे जन जामण मरण।
हरिदेव दास आनन्द करण नमो नाथ अशरण शरण ॥ ७ ॥
हरि गहरा गभीर धीर हरि समा न होई।
सीर सुधा निज सार पीर पर जाणै सोई ॥
हरि दीरघ दीदार पार हरि नको पुणीजै।
हरि वैगद हकीम महा निज मूळ सुणीजै ॥
हरि समा आप हरि है सही पाप जीव करि है परा।
हरिदेव बाप सब का अगम ताप तुरत मेटतरा ॥ ८ ॥
दाता दीन दयालु जीव निरपालु सदाई।
अघ मूँढ उन्मात होय हरि जहाँ सहाई ॥
नर शिस सोंन सुरेश पणै हरि सहज वडाई।
दई जान नर देह प्रीति पाली सोइ पालै ॥
जीविया जुगत मूवा मुगत हरि निन कुण ऐमी करै।
हरिदेव स्वामि सस्तुति निन तन धायक मन उचरै ॥ ९ ॥
सर्व कहा कयहि सयानो।
अनपार पयानो ॥

हरि सायर गुण तोय कहा सुगुरा नर सारै ।
उक्ती आपै प्यास वाच गुण पियै सुवारै ॥
निज बाज ब्रह्म उर विच अवश्य कर उराह अवगाहियो ।
हरिदेव धारि तन मन वचन चरण शरण हम चाहियो ॥ १० ॥

इति ।

अथ गुरुस्तुतिः ।

गुरु दाता निज ज्ञान ब्रह्म सत्ता विधि वाचे ।
अनुभव दत्त अपार लेह सिख जाचक जाचे ॥
भक्ति सार सोइ वाच वयण कर देह विचारा ।
गुरु यह गम गंभीर कुरँद अघ मेटण हारा ॥
आतम कला ऐसी अगम सुगम करै संपति सची ।
हरिदेव शिखाँ आनँद सरस वन्दन गुरु याविधि वची ॥ १ ॥
गुरु विन भक्ति न भेव गुराँ विन जुक्ति अजुक्ती ।
गुरु विन शिख ना सुखी परम गुरु विना न मुक्ती ॥
गुरु विन सुधी न सार पार गुरु विना न पहुंचै ।
गुरु विन किरिया कूर नाहिं गुरु विना सुनिहचै ॥
गुरु विना काय न है गमा शून्य समा गुरु विन सिको ।
हरिदेव कहै गुरु विन तिके जग जल वूहा नर जिको ॥ २ ॥
गुरु विन सर्व गँवार पुनः पंडित है प्यारे ।
गुरु विन कथनी कूर विना गुरु कहा विचारे ॥
गुरु विन अर्चा किसी विना गुरु चर्चा अंधी ।
गुरु विन नहिं व्यवहार सूंज गुरु विना न संधी ॥
गुरु विना जिको गुण है अगुण सर्व सगुण गुरु साहिवी ।
हरिदेव दास गुरु के शरण चरण कमल चित चाहिवी ॥ ३ ॥
गुरु है दीन दयाल करै सिखपाल सदाई ।
अखै भक्ति परसंग सदा सेवक सुखदाई ॥
गुरु पावन गुरु परम जीव सिख जीवन जानो ।
गुरु का गुण गंभीर दिपै रस राम दिवानो ॥
गुरु समा आप गुरु है गहर मिटै सर्व जग वासना ।
महाराज गुरां प्रणमूं तुझै यह हरिदेव उपासना ॥ ४ ॥
दर्पण भयाँ मलीन दृष्टि मुख नूर न दरशै ।
हीर जवै अणघाट शोभ सागी नहिं परशै ॥
पंडित पूत अपाठ असत है जगमें आदर ।
हय गति होय हठील मोल के समें वेआदर ॥

मेटैं जु मरण भय जा जनम सोइ मेटै साहिब सचा।
हरिदेव स्वामि हरि है सही क्यहू नह कांई कचा ॥ ४ ॥
अलख आप अण रूप पलक में विश्व पसारे।
कारण आप कल्याण देव कारज उन सारे ॥
समरथ नाम सचाह थाट ऐसो जग थाप।
घट मठ एह अकार करे हरि सहज किताप ॥
आतम आप आपे रहित रूप शक्ति एही रचे।
हरिदेव ताहि प्रणमै सरस साहिब हो साहिब सचे ॥ ५ ॥
सर्व रूप सर्वज्ञ अग अन अग अनेका।
सग रहत नहिं सग रग अनरग है एका ॥
अश आप अवतार धार आतम अनपारा।
गुणा रहित सो रूप रहै निज रूप नियारा ॥
श्वेताहि नूर निधि निधि कला करै नाथ सहजा मही।
हरिदेव दास वंदै हरष सोइ स्वामि समरथ सही ॥ ६ ॥
सहाय करण सब जान एक भगवान अनेका।
विश्व बहुत विस्तार आप सबही में एका ॥
पावे सहज प्रकार परम तोपै सोइ प्यारे।
आदि मध्य अत एक आप हरि होय अधारे ॥
निज पीव शीव जीवन सरव मेटै जन जामण मरण।
हरिदेव दास आनन्द करण नमो नाथ असरण शरण ॥ ७ ॥
हरि गहरा गंभीर धीर हरि समा न होई।
सीर सुधा निज सार पीर पर जाणे सोइ ॥
हरि दीरघ दीदार पार हरि नको पुणीजै।
हरि वैराट हकीम महा निज मूल सुणीजै ॥
हरि समा आप हरि है सही पाप जीव करि है परा।
हरिदेव याप सब का अगम ताप तुरत मेटतरा ॥ ८ ॥
दाता दीन दयालु जीव किरपालु सदाई।
अध मूँह उरमात होय हरि जहाँ सहाइ ॥
नरा गिरा सोंज सुरेश वणे हरि सहज वडाले।
दई जान नर देह प्रीति पाली सोइ पाले ॥
जीविया जुगत मूवा मुगत हरि बिन कुण ऐसी करै।
हरिदेव स्वामि सस्तुति निज तन वायक मन उचरै ॥ ९ ॥
हरि अथाह गुण होय सर्व कहा कथहि सयानो।
वेद अरवा जन कहैं परम अनपार पयानो ॥

सुनिये जय तारण चक्र सँभारण कोप धधारण करमुक्तम् ।
ब्रह्म हो अविनाशी० ॥ ७ ॥
भवपुञ्ज के भंगा कुलधर्म भंगा गणिकासंगा विपरंगा ।
अजमेल अनंगा द्विप उपंगा कर्म कुसंगा नितसंगा ॥
हो तारण चंगा सुनहिन वंगा जब जम जंगा छूटेतम् ।
ब्रह्म हो अविनाशी० ॥ ८ ॥
अमरीष भुवाले ऋषि मुनपाले जेहि कर आले दुखटाले ।
चक्री चढ़ चाले उलटी भाले दुग्ग असराले तपघाले ॥
दुर्वासा पाले सोह भयनाले राजा टाले दुखदेवम् ।
ब्रह्म हो अविनाशी० ॥ ९ ॥
आये जल अगारे सोइ ऋषि सगरे चाहरन लगरे खीचगरे ।
तासूं ऋषि अगरे दीनी नगरे जलरत रगरे नय जगरे ॥
प्रिय रजवा ढगरे शबरी पगरे परशत सगरे जलनेतम् ।
ब्रह्म हो अविनाशी० ॥ १० ॥
कौरव मद भरिये है पंड हरिये द्रौपदी उरिये थरहरिये ।
दुःशासन लरिये गहन कचरिये अंबर परिये कर अरिये ॥
विलखी जब तिरिये तो हरि त्रिरिये चीर वधरिये निजनैनम् ।
ब्रह्म हो अविनाशी० ॥ ११ ॥
कौरव पंड भारे जुद्ध करारे गयंद हजारे जहँ गारे ।
सुत वहँ टीटारे श्याम सँभारे गज घंट डारे कृपटारे ॥
राखे जब सारे इसा मुरारे तो कुण पारे पंखनम् ।
ब्रह्म हो अविनाशी० ॥ १२ ॥
तुरकज तन साले नर अनभाले वेऊपगाले हर हाले ।
मगचल पयपाले कलजगटाले शूकरघाले हनयाले ॥
कहियो अँतकाले हराम आले जेहि जमजाले छूटेनम् ।
ब्रह्म हो अविनाशी० ॥ १३ ॥
चातक तव ठाणे गिर अति जाणे मानहि याणे हितमाणे ।
जाकूं अहि हाणे शर कूटाणे जाय उठाणे शीमाणे ॥
पक्षीद सु प्राणे टक्क त्रिवलाणे हरिहि पिछाणे निजतेनम् ।
ब्रह्म हो अविनाशी० ॥ १४ ॥
निज भक्ता नामा अति पनि ग्रामा श्रौं घरधामा हितरामा ।
जीवाये जामा नो लेहि रामा गनी हरामा हर नामा ॥
गोगमने धामा लाय तमामा सुगन्ध विरामा मलिनेमम् ।
ब्रह्म हो अविनाशी० ॥ १५ ॥

एता जु आदि कुल है सगुण गुरु बिन अगुण गिणीजिया।
हरिदेव मिले जब गुरु सही तब गुणवान सुणीजिया ॥ ५ ॥

इति ।

अथ करुणानिधान ग्रंथ प्रारंभः ॥

आदि ब्रह्म जन अनंत के सारे कारज सोय।
जेहि जेहि उर निश्चो धरे, तेहि ढिग प्रगट होय ॥ १ ॥

छन्द त्रिभंगी ।

राक्षस हगवाने ब्रह्मा छाने जाय लुकाने अपथाने।
मच्छा धरि आने अरु भगवाने जलवहराने तिहठाने ॥
शखासुर हाने निगम रुराने श्याम दराने विधिसेतम्।
ब्रह्म हो अविनाशी आनदराशी दोष विनाशी सुखदेतम् जिय० ॥१॥
हिरणख जब ठाढे कौन समाढे धर पय चाढ़े तब डाढ़े।
वेरा हरिताढे आयस गाढ़े वाराहगाढे तन वाढे ॥
राक्षस हणि दाढ इल गढ काढे भो थिर माढे निजखेतम्।
ब्रह्म हो अविनाशी० ॥ २ ॥
अवनीके तवरे अगनित्र अवरे मज्ञा कँवरे बिज्र मवरे।
सिरियादे सिवरे हरि हित हिवरे न्याही नियरे जो जिवरे ॥
ख्याल्त सुन सँवरे बहँ निस भँवरे खेल्त भँवरे निजखेतम्।
ब्रह्म हो अविनाशी० ॥ ३ ॥
प्रह्लाद पुकारे जिह ररकारे निश्चय धारे गमसारे।
हिरणाक्श धारे नहीं हमारे क्रोध निजारे खगसारे ॥
प्रगटे अवतारे सभ प्रहारे राक्षस मारे जनहेतम्।
ब्रह्म हो अविनाशी० ॥ ४ ॥
बाल्क धू ध्याये पिता बेठाये मॉइ रिसाये दुखपाये।
गम पूछी माये हरि नहिं गाये जब लिव लाये वनधाये ॥
धन धाम धमाये सब छिटकाये हरि उर पाये निज हेतम्।
ब्रह्म हो अविनाशी० ॥ ५ ॥
धूमर जब आये शिव भरमाये कँकण लगाये उठधाये।
अखीर जिताये त्यारि पठाये शंभू भाये हरि आये ॥
तिरिया तन थाये नाच नचाये कर शिर थाप भस्मेतम्।
ब्रह्म हो अविनाशी० ॥ ६ ॥
धाये तजि वारण करि जल कारण ग्राह निहारण जुध सारण।
बूडत बहँ वारण परे पुकारण उर इक धारण ररकारण ॥

सुनिये जब तारण चक्र सँभारण कपे वधारण करमुकतम् ।
ब्रह्म हो अविनाशी० ॥ ७ ॥
भवपुज के अंगा कुलधर्म भंगा गणिकासंगा विपरंगा ।
अजमेल अनंगा दोष उपंगा कर्म कुसंगा नितसंगा ॥
हो नारण चंगा सुतहित वंगा जब जम जंगा छूटेतम् ।
ब्रह्म हो अविनाशी० ॥ ८ ॥
अमरीष भुवाले ऋषि सुरपाले जेहि करआले दुखटाले ।
वह्नी वहु चाले उलटी भाले दुख असराले तपवाले ॥
दुर्वासा पाले सोह भवनाले राजा टाले दुखदेतम् ।
ब्रह्म हो अविनाशी० ॥ ९ ॥
आये जल अगरे सोइ ऋषि सगरे वाहरन लगरे स्त्रीवगरे ।
तासूं ऋषि झगरे दीनी तगरे जलरत रगरे नय जगरे ॥
प्रिय रजवा डगरे शवरी पगरे परशत सगरे जलनेतम् ।
ब्रह्म हो अविनाशी० ॥ १० ॥
कौरव मद भरिये है पंड हरिये द्रौपा डरिये थरहरिये ।
दुःशासन लरिये गहन कवरिये अंवर परिये कर अरिये ॥
विलखी जब त्तिरिये तो हरि विरिये चीर वधरिये निजचेतम् ।
ब्रह्म हो अविनाशी० ॥ ११ ॥
कौरव पंड भारे जुद्ध करारे गयंद हजारे जहँ गारे ।
सुत वहँ टीटारे श्याम सँभारे गज घँट डारे दुखटारे ॥
राखे जब सारे इसा मुरारे तो कुण पारे पेखेतम् ।
ब्रह्म हो अविनाशी० ॥ १२ ॥
तुरकज तन साले नर अनभाले वेहपराले इह ह्माले ।
मगचल पयपाले डगडगटाले शूकरवाले हतयाले ॥
कहियो अँतकाले हराम आले जेहि जमजाले छूटेतम् ।
ब्रह्म हो अविनाशी० ॥ १३ ॥
चातक तरु ठाणे शिर अरि जाणे पारधि वाणे दिसताणे ।
जाकूँ अहि ह्राणे शर छूटाणे जाय लगाणे सीचाणे ॥
पप्पीह जु प्राणे टल विवनाणे हरिहि पिछाणे निजहेतम् ।
ब्रह्म हो अविनाशी० ॥ १४ ॥
निज भक्ता नामा अरि पति गामा हते वछामा ढिगतामा ।
जीवादे जामा तो तेहि रामा नतो हतामा इह कामा ॥
गोगमने धामा लाय लगामा मुगल सिलामा करिहेतम् ।
ब्रह्म हो अविनाशी० ॥ १५ ॥

कबीर जन भारे द्विज दुख धारे पतिया फारे दिश चारे ।
आये जब सारे भेष अपारे वणि निज प्यारे विणजारे ॥
बाल्द जन द्वारे आनि उतारे सोइ निधि सारे पोखेतम ।
ब्रह्म हो अविनाशी० ॥ १६ ॥

रैदासजु लागा हरि प्रतिमागा ब्राह्मण जागा सब सागा ।
किल से नहिं रागा ना अणरागा येपै लागा मँदभागा ॥
काढे उरतागा स्याम सुहागा जब द्विजभागा सबसेतम् ।
ब्रह्म हो अविनाशी० ॥ १७ ॥

मीरा सोइ नारी निज हरिप्यारी राणै बिचारी बिषगारी ।
अजलि भरि सारी मुखमें डारी हरि हितकारी दुख टारी ॥
भूपति पच हारी निज बल्हारी भक्ति करारी भावेतम् ।
ब्रह्म हो अविनाशी० ॥ १८ ॥

जनसे दुख दाये कुल्के ताये रामत भाये नर ध्याये ।
नरसी के नाये अक लिखाये हुडी आये जेहि गाये ॥
सॉवल हुय आये दिनी भराये सब सुख दाये जनसेतम् ।
ब्रह्म हो अविनाशी० ॥ १९ ॥

दादू दुख धारे लोक पुकारे मुगल दबारे हुय प्यारे ।
कीने सब रवारे कुल धर्म हारे पद बिचारे धेखारे ॥
जन दिश झोकारे मद्दमँत भारे बदन सारे शुडेतम् ।
ब्रह्म हो अविनाशी० ॥ २० ॥

तारे जन सारा अधम अपारा असख्य जुगाँरा नहिं पारा ।
थापे ध्रुव सारा कहै बिचारा रहु गुण पारा निदभारा ॥
एसे निरकारा जिवके प्यारा तारणहारा उरहेतम् ।
ब्रह्म हो अविनाशी० ॥ २१ ॥

दोहा ।

जहँ जिव उर करुणा धरे, वहाँ करे हरिपाल ।
अपनो बिरद बिचारियो, करुणामयी कृपाल ॥ १ ॥
अधम जीव तुम तारिया, तुम ही तारे सत ।
अब किरपा मोपर करहु यों हरिदेव कहत ॥ २ ॥

इति ।

होवै को भव मान वडाइ ।	तारै	को	निर्मेत्र बुधिताई ॥
सन्त मिल्यां सारा सुख भाइ ।	दुष्ट	मिल्या होवें दुखदाइ ॥ १७ ॥
प्रश्नोत्तर माला सुन लीजै ।	वाच	विचार हृदय शुध कीजै ॥
ज्ञान सार वरण्यो इन माहीं ।	ज्ञान	अज्ञान दियो छिटकाहीं ॥१८॥

दोहा ।

प्रश्नोत्तर माला करी ज्ञान ध्यान को भेव ।
जासे शुध हिरदो हुवै दाखै जन हरिदेव ॥ १ ॥
भक्ति ज्ञान वैराग्य भल, बुधि निर्मल चित सार ।
शान्ती हिरदो ह सरस वाचै करै विचार ॥ २ ॥
प्रश्नोत्तर सान्तो करी, धर्य वचनका मान ।
सो हरिदेव विचारके कियो चौपइ ज्ञान ॥ ३ ॥

इति प्रश्नोत्तर ।

अथ आत्मकृते विज्ञानक्रियाया' पचमः समुल्लासः ।

दोहा ।

विन भक्ती भगत विविध, जुक्ति सीप्त सब जानि ।
ऐसा आदिम जग अनत, अखू असिध सिध आनि ॥ १ ॥
अक्षर उभय उचार निन, अतर सोझि अरूप ।
निन पग पारे क्या परसि, सागी दृष्टि स्वरूप ॥ २ ॥
त्यागी तन मन तास विन, आस बहुल उर आन ।
पास ब्रह्म किह निध ल्हत, नास विना गमनान ॥ ३ ॥
जोग अष्ट साधन जुगति, कष्ट देह अनकाज ।
चयोगृद्ध द्वै सिध निगति, जीव मुगति नै साज ॥ ४ ॥
कारज शुभ करता करम, अशुभ कछु नहिं एह ।
अशुभ शुभ पावै अल्प, न को ताहि निध नेह ॥ ५ ॥
करि हठ मारै तन करम, इन्द्री भोग अनोह ।
राजकाज को सिध शक्ति, भक्ति ब्रह्म नह कोह ॥ ६ ॥

छद भुजगी ।

पवै सहज श्याम लहै भेव सारा । उभै अक ऐसा रहै जीव न्यारा ।
रहै सोय रत्ता सवै अग रासी । विना रामनाम न को ब्रह्मवासी ॥ १ ॥
करै जोग अष्टा दिवै कष्ट काया । सहै अग सारा सवै देह साया ।
तनू सहन साझी पवै सहजतासी । विना रामनाम न को ब्रह्मवासी ॥२॥

तजै वास आसा वने धाम तन्नू । रहै संग पाखे सदासोय रन्नू ।
थपै सोय थानं जहाँ अडिगथासी । विना रामनामं न को ब्रह्मवासी ॥३॥
धरै ध्यान ऐसे रहै एक सारा । सवै श्रुती साझन करै कृत्तकारा ।
सवै धर्म सासाज आसा उसासी । विना रामनामं न को ब्रह्मवासी ॥४॥
गहै सहज काया महा दोप साझै । वसै गेह न्यारा न को जाल वाझै ।
पखै होय निचुं प्रिये देह पासी । विना रामनामं न को ब्रह्मवासी ॥ ५ ॥
सझै आप ऐसा सवै देह सरमा । कला सीख करणी करै नोलि करमा ।
मलूं अंतर धोये सवै निर्मल थासी । विना रामनामं न को ब्रह्म वासी ॥६॥
वसै सुरत सोई सदा जीव वासा । सवै अंग साझै गिनै आप सासा ।
रहै माहिं राता सदा जोति रासी । विना रामनामं न को ब्रह्मवासी ॥७॥
लहै भेव नासा सुरति श्वास लध्धुं । सरूं देख सोई करै काम सिध्धुं ।
सवै स्वरजु फेरै एकै गृह लासी । विना रामनामं न को ब्रह्मवासी ॥ ८ ॥
फुरै वाक सोई करै वहुत फन्नूं । नमै लोक सारा सको सेव निन्नूं ।
सवै सोय मानूं तवै तॉह चासी । विना रामनामं न को ब्रह्मवासी ॥ ९ ॥
तजै आस तारां सजै सहज तनमां । अनंत सिद्धि आवै सहत सोय अनमां ।
छडै आप काया परा देह थासी । विना रामनामं न को ब्रह्मवासी ॥१०॥
चहै सोय आपा धरै आनि चिन्नूं । नवी देह थापै सही आप निन्नूं ।
जहँ धार मन्नूं छिनक देह जासी । विना रामनामं न को ब्रह्मवासी ॥११॥
धरै सोय धारै इती दृष्टि ध्याना । वसै वास देवा लहै स्वर्ग वाना ।
रमै संग अमरा सदा रंगरासी । विना रामनामं न को ब्रह्मवासी ॥ १२ ॥
इसौ अँतर आना लहै भेव आपा । तनूं दोप वीया तजै सोय तापा ।
करै ऋद्धि निरधं निरिधं ऋद्धि थासी । विना रामनामं न को ब्रह्मवासी ॥१३॥
यही विध्ध वहुती महासिद्धि आवै । धरै सोय अंगू गुणह तास ध्यावै ।
यही भांति आपा महा मान आसी । विना रामनामं न को ब्रह्मवासी ॥१४॥
करै अंग आचार सुच्चार केता । लजा कर्म किरिया सवै साझि लेता ।
इसा ब्रह्म या भव करै आन आसी । विना रामनामं न को ब्रह्मवासी ॥१५॥
विद्या वेद पाठी कदा ठीक वारा । सई होम जापा करै अंग सारा ।
सवै आप धर्मा गहे अंग थासी । विना रामनामं न को ब्रह्मवासी ॥ १६ ॥
करै वेदअभ्यास जो द्विज्ज केता । वडा सोय वाचीक सो ज्ञान वेत्ता ।
सवै आप हेताज श्रोता सुनासी । विना रामनामं न को ब्रह्मवासी ॥ १७ ॥
वदै सोय आपा सही ब्रह्मवाना । विया लोक सारै तजै खानपाना ।
गिनै आन छोती इसै हेत तासी । विना रामनामं न को ब्रह्मवासी ॥ १८ ॥

नितू पाठ गीता करै आप नामी । थियै नेम सहत मनू धार पामी ।
सही टेक वाचै सदा नेक प्यासी । विना रामनाम न को ब्रह्मवासी ॥ १९ ॥
कथै मोय गाथा मुणां आप पेसी । हुवै अग दरसा वदे नेम सेती ।
परा ध्यान सासा सब भापिलासी । विना रामनाम न को ब्रह्मवासी ॥२०॥
करै ईशपूजा मोई पट्टकमा । सझै टेन भूतादिका अग समा ।
सरे सेव प्रतिमा करै नास कासी । विना रामनाम न को ब्रह्मवासी ॥२१॥
निवे अग भक्ता करै सेव नामी । सझे मेव पली तनू भेव सामी ।
विष्णु सेव पूजा हिये हेत व्यासी । विना रामनाम न को ब्रह्मवासी ॥२२॥
मनूँ हेत नवधा मधे अग मानै । जिके सेव धमा सवे अँतर जानै ।
सोइ जहाँ सेव मनू माहिं थासी । विना रामनाम न को ब्रह्मवासी ॥ २३ ॥
इति पूज्य प्रतिमा सरै अग थानै । मनु हेत मोई नाना भाँति मानै ।
प्रिय प्रेम सहित सको नेम प्यासी । विना रामनाम न को ब्रह्मवासी ॥२४॥
सवै देवपूजा करै भाति सारी । नमै हेत गीयै सदा रीत न्यारी ।
दियै देव परचा रमै निकट रामी । विना रामनाम न को ब्रह्मवासी ॥२५॥
पसे ग्रह लोका पुरै पथ पारा । सठ अष्टतीथू नहै देह सारा ।
नऊ खड जोये फिरै ग्रह आमी । विना रामनाम न को ब्रह्मवासी ॥२६॥
दियै दान विप्रा सरै मानि देवा । मोई भाति सारी करै न्यात सेवा ।
सरै आधि आपा द्विजा पूज थासी । विना रामनाम न को ब्रह्मवासी ॥२७॥
घटे आधि वहुती जना लोक धावै । जिके दूर सोभा सुनै आय जावे ।
गुणै लोय गाथा तिके विरद गासी । विना रामनाम न को ब्रह्मवासी ॥२८॥
सती आग मझे करै गेह साचो । करै लोय चेता सिर नेह काचो ।
जरै आप काया तनू वात्र प्यासी । विना रामनाम न को ब्रह्मवासी ॥२९॥
महाजुद्ध माँहि करै मार मारॉ । तजै आस काया सोइ सूर सारॉ ।
लडै हेत पेसे परया नेह थासी । विना रामनाम न को ब्रह्मवासी ॥ ३० ॥
सवै शुभ कमा मोई आप साझै । जरै नाम पाये जपै नेह जाझै ।
इता धर्म आना सवै भुगति आसी । विना रामनाम न को ब्रह्मवासी ॥३१॥

दोहा ।

आन धम साधी अनंत, मरम परै निज नाम ।
फज याकू हरिदेव कह, न को ब्रह्मको धाम ॥ १ ॥
ध्यान कथै मीरे ग्रथ, अर्थ अगम का आदि ।
विना भजन नहिं ब्रह्मघर, प हरिदेवो दादि ॥ २ ॥

(अपूर्ण)

अथ हरिजस लिख्यते ।

राग आसा ।

पद १

रामराय मैं हूं मंगन तेरा तुम दानपती सबकेरा ॥ टेर ॥
तुम दाता मैं जाचक तोरा द्वार खड़ा निज देवा ।
निशि दिन अडिग नूर तुम निरखूं सदा करूं तोहि सेवा ॥ १ ॥
तोरा संत विरद कहै आदू सो सुनि तो ढ़िग आयो ।
मैं तो मनू वाच उरसेती साचो नाम संभायो ॥ २ ॥
औलग करूं अभंग हरि आगै विरहवचन निशिवासा ।
याचूं विरद न को उर बीजा एक तुम्हारी आसा ॥ ३ ॥
सुनिहो वचन दीनका साहिब अभै दान मोहि आपो ।
दासै अरज इसी हरिदेवो । कुरंद करमरा कापो ॥ ४ ॥

पद २

राम राय मैं हूं बालक तोरा पिताज तुम हो मोरा ॥ टेर ॥
मैं बालक मति भोर रहे उर कह नहीं जानूं काई ।
दीनबंधु देख हम शिशु मति आप विरद निरखाई ॥ १ ॥
सेवा साज न जानूं साहिब है मति हीन हमारी ।
करिहो अबै मुझे मांहि करता सो है रजा तुमारी ॥ २ ॥
मैं तो बाल केलि संग राता का तो मन गृह मोहा ।
का तो असन बार वस्त्रादिक ए उर सदा समोहा ॥ ३ ॥
तुम हो पिता मुझै हरि नीका मै मति भोर अजाना ।
जानूं नहीं कछू हम काई तुम हो श्याम सुजाना ॥ ४ ॥
मैं मतिहीन किया अति औगुण तुम ना गिनो दयाला ।
कह हरिदेव पिता हरि सुनिज्यो बाल करो प्रतिपाला ॥ ५ ॥

राग सोरठ ।

पद ३

कृपा निधान करियो कछु कृपा दीन माथै ॥ टेक.
मै आदि तुम के अंसा । अब विसर गए निजवंसा ॥
सॉसै में आव विहावै । प्रभु तोहि दया सुख थावै ॥ १ ॥
तुम जीवों के प्रतिपाला । निज देवा देव दयाला ॥
सब के जो अंतरजामी । अब मोहि दया करि स्वामी ॥ २ ॥

हम दीना दीन पुकारे । तुम सुणो सिरजन हारे ॥
अब तारण विरद विचारो । सॉई वेग मुझे तुम तारो ॥ ३ ॥
हमसूं कुछ नांहिं रहीजै । तुम देव दया निज कीजे ॥
हरिदेव सदा हरि तेरो । चित चरण कमलको चेरो ॥ ४ ॥

पद ४

विरदा निधान कहियो निज विरदा आप केरा ॥ टेक ॥
अजामेल से अघभारे । अत पुत्र हेत पुकारे ॥
साद सुणे गुण ध्याये । जमदूता पासि छुडाये ॥ १ ॥
गजराज की सुणि वाणी । सो ध्याये सारंगपाणी ॥
निज आगे चक्र चलाये । गज ग्राह के दु ख मिटाये ॥ २ ॥
आगे अधम अपारे । सो अर्ध टेर सुणि तारे ।
हम औगुण अधिके यातं । प्रभु साद सुणो नहिं तातैं ॥ ३ ॥
मुझ औगुण तुझ ना रहियो । सो अधमतार तुम कहियो ।
निज आपा विरद विचारो । हरिदेव दया करि तारो ॥ ४ ॥

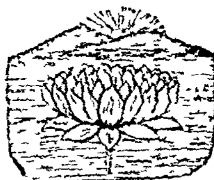
इत्यपूर्णम् ।

समस्त वाणी श्लोक मेघा १०१४ ।

द्वितीयपरिच्छेदः ।

धुरमेल ।

वानी सुखदानी विमल श्रीरामदास महाराजकी ।
अद्भुत आनंदकंद द्वन्द मायाकृत कटि है ।
आदि अन्त सिद्धान्त दान्त ररकार सुरटि है ॥
अनआतम अध्यास भ्यासकृत निश्चय हट्टै ।
गुरुगम करत विचार पार भवमूल जु पट्टै ॥
मनुसृष्टि वृष्टि प्रश्न हु करत घनघुमंड मृदु गाजकी ।
वानी सुखदानी विमल श्रीरामदास महाराजकी ॥ १ ॥



॥ श्री ॥

पद १

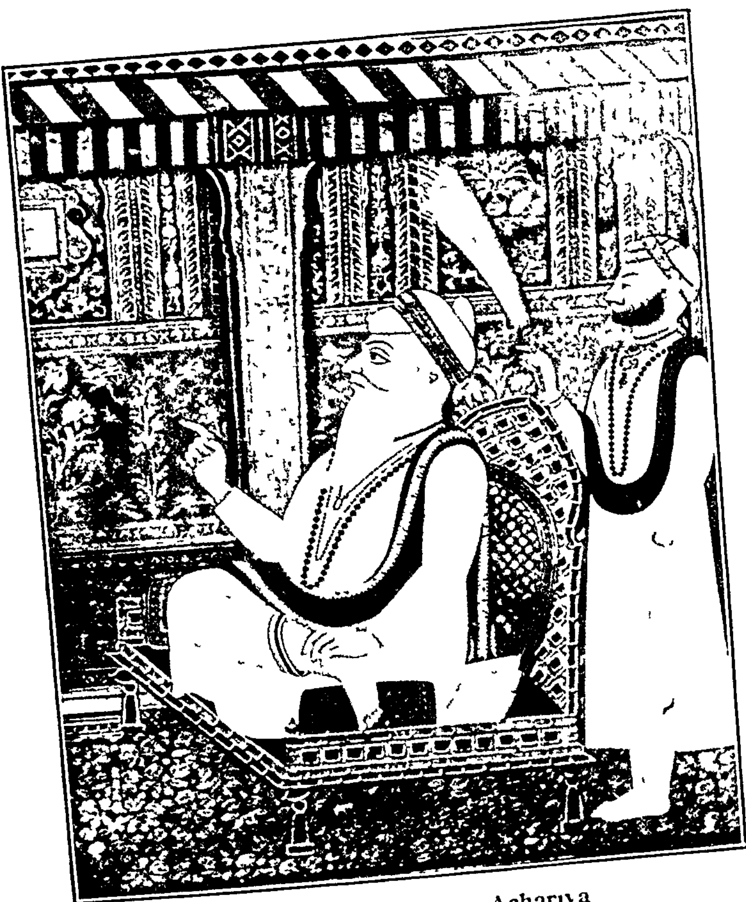
चेतनराम शरण मैं तेरी । अबकी बेर अरज सुन मेरी ॥ टेर
जो रीझो तो भक्ति मोहि दीजै । अपनो जानि कृपा हरि कीजै ॥ १ ॥
आदि अन्त मध्य सकल पसारा । सोई आतमराम हमारा ॥ २ ॥
अचरज देख अचमो माहीं । तेरे जनको सशय नाहीं ॥ ३ ॥
जिके बात तनहीमें पाया । जैमलदास शरण तेरी आया ॥ ४ ॥

पद २

मन रे जो तू राम पिछाने । नेडाहे सो निश्चय आने ॥ टेर
पाच तत्त्व ले किया पसारा । जल स्थल जीव सकल ससारा ॥ १ ॥
तीन भवन के बाहिर माहीं । हरि बिन काज सरै को नाहीं ॥ २ ॥
पालन पोषण करण सँहारण । दीन दया करि दुस्तर तारण ॥ ३ ॥
जैमलदास साच मन भजिये । राम विमुख विषय रस तजिये ॥ ४ ॥

अष्टपदी ।

वाद विषयास्वाद तज मन, गहो ज्ञान विज्ञान रे ।
और ऐसो नाहिं जगमें, राम सम कोइ ध्यान रे ॥ १ ॥
भूल मत भ्रम माहिं मोंदू, अलख करिये याद रे ।
उलटि आपा देख दिलमें, प्रेमनित पसु वाद रे ॥ २ ॥
नाम निश्चय ध्याय निशि दिन, परम पीतम पाय रे ।
शोक सशय मेट, सबही, भेंट त्रिभुवन राय रे ॥ ३ ॥
राम बिन विश्राम नाहीं, स्वर्ग मध्य पयाल रे ।
जीव हरि बिन केम छूटै, कर्म कूटै काल रे ॥ ४ ॥
भलो पूरण भाग तेरो, जिन्द जतरग जाग रे ।
आयु दम दम घटै निशिदिन, रहो निजमन लाग रे ॥ ५ ॥
मानुषो अवतार वीछुरि, बहुरि आवै नाहिं रे ।
भक्ति बिन बहु भया दुखिया, चौरासी लख माहिं रे ॥ ६ ॥
राम घट घट माहिं न्यारा, रूप ताहि न रेख रे ।
और माया खपै उपजै, आप अमर अलेख रे ॥ ७ ॥
अखड इक धुन होइ सुनमें, लगन लागी जाय रे ।
हरिराम महानन्द माहीं, सुरति सहज समाय रे ॥ ८ ॥



Sri Ramdasji Maharaj Achariya
(Khedapa)

॥ श्रीरामो जयति ॥

विभुं पद्मनेत्रं दधानं तुरीयं प्रकाशस्वरूपं नतं विश्वदेवैः ।
श्रुतिज्ञानगम्यं शुभं विश्वनाथं स्तुवे वेदवेद्यं गुरुं रामदासम् ॥ १ ॥[1]

अथ श्री १००८ श्रीरामदासजी महाराजकी अनुभव गिरा प्रकाश ।

स्तोत्रमंत्र ।

सतगुरु सेती वीनती, परब्रह्मसूं परणाम ।
अनंत कोटि संत रामदास, निशिदिन करूं सलाम ॥ १ ॥
प्रथम वंदि परब्रह्म नित, जिना दिये सिरपाव ।
दुतिय वंदि गुरुदेवकूं, दिये भक्तिके भाव ॥ २ ॥
तृतिय वंदि घिन संतकूं, सब के लागूं पाय ।
परब्रह्म गुरु संतकूं, रामदास नितगाय ॥ ३ ॥
प्रथम वंदि गुरुदेवकूं, जिनाँ दियो ततज्ञान ।
दुतिय वंदि परब्रह्मकूं, अंतर प्रगटे आन ॥ ४ ॥
तृतिय वंदि सब संतकूं तिहूं ठौरलौ मान ।
नाम तीन वपु एक है, रामदास कह ज्ञान ॥ ५ ॥
नमस्कारतें रामदास, कर्म सबै कटिजाइ ।
जाइ मिलै परब्रह्ममें, आवागमन मिटाइ ॥ ६ ॥
परब्रह्म सब घट रम रह्या, दूजा कोऊ नाहिं ।
रामदास दुविधा मिटी, जब देख्या घटमाहिं ॥ ७ ॥
परब्रह्म गुरु संतकूं, एकमेक दरसाय ।
रामदास या ऊपजी, जदही मुक्ति कहाय ॥ ८ ॥

इति ।

अथ गुरुदेव को अंग ।

अटल वैण गुरुदेव के, रामदास सत मान ।
एता पूठा ना फिरै, गिरिवर गंग ज्ञान ॥ १ ॥
गिरी मेरु अरु गंगकी, या हद ऊली बात ।
रामदास गुरुशब्दतें, मिलै निरंजन नाथ ॥ २ ॥
तिलक राम रस चरणामृत, लिया प्रेम निजनूर ।
सतगुरु शब्दाँ रामदास, दुखदारिद भव दूर ॥ ३ ॥

---

1 निर्मातास्य पद्यस्य पं दिगम्वरदासः ।

दुख दारिद्र भाजिगे, मिल्या निरंजन नाथ।
ररकार रट रामदास, कर सतगुरु को साथ ॥ ४ ॥
सतगुरु समँदसरूप है, सिष नदी हुइ जाइ।
रामदास मिल एकता, सहजाँ रहे समाइ ॥ ५ ॥
रामनाम तो दुलभ है, जैसी खाँडा धार।
सतगुरु सेती सगरमें, से जन उतरै पार ॥ ६ ॥
सतगुरु सेती प्रीतडी, जे करि जाणै कोइ।
रामनाम धन पाइयो, आवागमन न होइ ॥ ७ ॥
राम रसायन भरपियें, सतगुरु सेतीसग।
रामदास लागा रहै, रोम रोम विच रग ॥ ८ ॥
रोम रोममें रुचि पिया, मनमें भया मगन।
अध नाम रत्ता रहे, रामदास हरिजन ॥ ९ ॥
गुरु जैसा गुरुदेव है, रामा दूजा नाहिं।
भवसागरमें डूबताँ, काढ़ि लिया गहि वाहिं ॥ १० ॥
रामदास सतगुरु मिल्या, भरम किया सब दूर।
निशि अँधियारा मिटगया, ऊगा निर्मल सूर ॥ ११ ॥
रामदास गुरुदेव की, में बलिहारी जाहिं।
साँसा सबही मेटकै, ब्रह्म बताया माहिं ॥ १२ ॥
रामदास सतगुरु मिल्या, कहा अमोलक बैण।
सुन सागर साँई मिल्या, आदि आपना सैण ॥ १३ ॥
सतगुरु का मुख देखता, पाप शरीरा जाइ।
साधुसगति सत राम दास, अटल पदी लेजाइ ॥ १४ ॥
ब्रह्म विलासी सत जन, अगमी गम्म अपार।
सायरसा सूभर भन्या, सतगुरु सिरजणहार ॥ १५ ॥
सतगुरु मेरे शीसपर, मैं चरणांकी रज्ज।
शरणै आयो रामियो, लख चौरासी तज्ज ॥ १६ ॥
चौरासी का जीव था, शरणै लिया सँभाय।
औगुण मेट्या रामदास, सतगुरु करी सहाय ॥ १७ ॥
रामदास की बीनती, साँभलियें गुरुदेव।
और कछू माँगू नहीं जुग जुग तुमरी सेव ॥ १८ ॥
रामदास की बीनती, साँभलिये गुरु दयाल।
रामनाम सुमराइयै, मेटो विषय जजाल ॥ १९ ॥
किरपा की गुरुदेवजी, शब्द दिया निजसार।
रामदास निशिदिन भजो, छाँडो सबै विकार ॥ २० ॥

भवसागर में डूबताँ, सतगुरु काढ्या आय।
रामदास गुरुदेव जी, सहजाँ करी सहाय ॥ २१ ॥
गुरुकी महिमा रामदास, कहियै कहा वणाय।
हमसा पतित उधारिया, जमपै लिया छुडाय ॥ २२ ॥
गुरुसा दूजा को नही, भवसागर के माहिं।
अनँता जीव उधारिया, मिल्या आदि घर जाहिं ॥ २३ ॥
सतगुरु ऐसा रामदास, जैसा पारस जाणि।
लोहाती कंचन करै, तन मन सौंपै आणि ॥ २४ ॥
सतगुरु ऐसा रामदास, जैसा सूर प्रकास।
रात अज्ञान मिटाइ कर, अंतर करै उजास ॥ २५ ॥
सतगुरु ऐसा रामदास, जैसा पूरण चंद।
सिखकूं अमृत पाइ कर, अमर किया आनंद ॥ २६ ॥
सतगुरु ऐसा रामदास, जैसा इंद्र जान।
किरपा करि वरषा करी, भीज गया सब प्रान ॥ २७ ॥
दिया एकही रामदास, घर घर दीया जोय।
सबै अंधारा मिटगया, जगै अखंडित लोय ॥ २८ ॥
सतगुरु दीपक रामदास, सिख चल आया पास।
अनँता जीव जगाइया, अंतर भया उजास ॥ २९ ॥
गुरु जैसा गुरु देव है, सांची कहूं विचार।
गुरू मिलावै ब्रह्म कूं, और वार के वार ॥ ३० ॥
सतगुरु ऐसा रामदास, जैसा चंदन होइ।
सिख सेती सीतल करै, विषिया डारै खोइ ॥ ३१ ॥
सतगुरु ऐसा रामदास, जैसी तरुवर छाहिं।
शीतल छाया मुक्ति फल, ता विच केलि कराहिं ॥ ३२ ॥
गुरुकी महिमा कहा कहूं, मोपै कही न जाय।
चौरासी का जीव कूं, मुक्ति देश लेजाय ॥ ३३ ॥
गोविंदतैं गुरु अधिक है, रामैं कह्या विचार।
गुरू मिलावै रामकूं, राम अमर भरतार ॥ ३४ ॥
राम सबैही सिरजिया, लख चौरासी जीव।
रामदास सतगुरु विना, परत न पावै पीव ॥ ३५ ॥
लख चौरासी जोणिमें, सबही बंध्या जीव।
सतगुरु बंद छोडाइ कर, मेल्या आदू पीव ॥ ३६ ॥

रामदास सतगुरु मिल्या, मिलिया राम दयाल।
सुख सागर में रमरह्या, मेट्या विषय जजाल ॥ ३७ ॥

इति।

अथ गुरुवदन को अंग।

गुरु वदनतैं रामदास, मिटजाइ आल जजाल।
जाइ मिलै परब्रह्ममें, आठ पहर मत वाल ॥ १ ॥
गुरुकू वदन कीजिये, मुख सू कहिये राम।
रामदास सो सिक्ख जन, पावै आदू धाम ॥ २ ॥
सतगुरु वदन अधिक फल, जाका वार न पार।
रामदास मैं क्या कहू, कहिगए सत अपार ॥ ३ ॥
सतगुरु वँदियाँ अधिक फल, चोरासी मिट जाइ।
स्वग नरक दोनों मिटै, जामण मरण मिटाइ ॥ ४ ॥
सतगुरु वँदियाँ रामदास, टलि जाइ कोटि विकार।
करम कटै सवजीव का, मिलै मुक्ति के द्वार ॥ ५ ॥
सतगुरु वँदियाँ वाहिरो, राम न पावै कोइ।
चौरासी में रामदास, जीव जूण वहु होइ ॥ ६ ॥
वदन कर निंदा करै, जाका मूढ मदीठ।
रामदास या जीवकू, जम दरगा मे पीठ ॥ ७ ॥
वदन कर निंदा करै, भुगतै नरक दुवार।
रामदास या दु ख को, है कोइ वार न पार ॥ ८ ॥
किरपा की गुरु देवजी, अंतर किया उजाल।
रामदास निंदा किया, आँन झपेटै काल ॥ ९ ॥
सतगुरु जो सिख ऊपरै, कोप करै सोवार।
तोही सिख शीतल हुवै, आणै नहिं अहँकार ॥ १० ॥
सतगुरु लोभी लालची, क्रोधरूप वह होइ।
वलिराजा प्रहलाद कू, देख निवाऱ्या सोइ ॥ ११ ॥
सतगुरु का गुण अनत है, औगुण एक न जाण।
रामदास घट भीतरै, आपा लेह पिछाण ॥ १२ ॥
सतगुरु दीया रामनाम, निराकार निरवाण।
या में औगुण को नहीं, आपालेहु पिछाण ॥ १३ ॥
पारसरूपी सतगुरू, सिख है लोह निराट।
पलट और ही घाट ॥ १४ ॥

लोह पारस की क्या कहूं, सतगुरु अगम अपार।
तन मन सौंप्या रामदास, करै आप दीदार ॥ १५ ॥

इति।

अथ गुरुधर्म को अंग।

सतगुरुसूं पूठा फिरै, जाकै अंतर काण।
रामदास ताकूं वंद्यां, वहुती हैगी हाण ॥ १ ॥
सतगुरु सूं पूठा फिरै, सो अपती वहु जीव।
अति निंदा गुरुदेव की, परत न पावै पीव ॥ २ ॥
निंदक का मुंहडा वुरा, दीठां लागै पाप।
गुरुद्रोहीसूं रामदास, अलगा रहियै आप ॥ ३ ॥
गुरुधर्मी का रामदास, दर्शण कीजै जाइ।
दर्शण सूं अवगुण मिटै, कर्म विलै हुइजाइ ॥ ४ ॥
सतगुरु वड़ सिख साखहै, रुपी धरणि में आइ।
रामदास वड़ लग गया, गगन गरजिया जाइ ॥ ५ ॥
गगन गरजिया रामदास, फूल्या सून्य मँझार।
डाल चली चहुं कूंटमें, सिख फल लगे अपार ॥ ६ ॥
डाल चली वड पेडतें सव वड़ का विस्तार।
रामा पेड जु सींचिया, सव हरियाली डार ॥ ७ ॥
विट लागा सो नीपना, जल पड़ियां कँद जाइ।
गुरु त्यागै हरि कूं भजै, निश्चय नरकां जाइ ॥ ८ ॥
गुरु हितकारी रामदास, दिन दिन दूणा थाइ।
उलटि समावै ब्रह्म में, ओत पोत हुइ जाइ ॥ ९ ॥
सिख जो ऐसा चाहिये, रह सतगुरु सूं रत्त।
सतगुरु जो न्यारा रहै, सिक्ख न छांडै तत्त ॥ १० ॥

इति।

अथ सुमरन को अंग।

प्रथमहि सुमरन जीभसूं, चोड़ै करो वजाइ।
दो अक्षर रट रामदास, सॉई साद सुणाइ ॥ १ ॥
सुमरन कीजै रामदास, रोम रोम भरपूर।
सुमरन सूं सांई मिलै, सेवक सदा हजूर ॥ २ ॥
रामदास सुमरन कियां, रोम रोम सुख स्वाद।
नाड़ि नाड़ि स्वर सांभलै, घुरै अनाहद नाद ॥ ३ ॥

रामदास सतगुरु मिल्या, मिलिया राम दयाल।
सुख सागर में रमरह्या, मेट्या विषय जजाल ॥ ३७ ॥

इति।

अथ गुरुवदन को अग।

गुरु वदनतें रामदास, मिटजाइ आल जजाल।
जाइ मिलै परब्रह्ममें, आठ पहर मत वाल ॥ १ ॥
गुरुकू वदन कीजिये, मुख सू कहिये राम।
रामदास सो सिक्ख जन, पावै आदू धाम ॥ २ ॥
सतगुरु वदन अधिक फल, जाका वार न पार।
रामदास मं क्या कहू, कहिगए सत अपार ॥ ३ ॥
सतगुरु वॅदियाँ अधिक फल, चौरासी मिट जाइ।
स्वग नरक दोनों मिटे, जामण मरण मिटाइ ॥ ४ ॥
सतगुरु वॅदियॉ रामदास, टलि जाइ कोटि विकार।
करम कटै सवजीव का, मिलै मुक्ति के द्वार ॥ ५ ॥
सतगुरु वॅदियाँ वाहिरो, राम न पावै कोइ।
चौरासी में रामदास, जीव जूण वहु होइ ॥ ६ ॥
वदन कर निंदा करै, जाका मूढ मदीठ।
रामदास वा जीवकू, जम दरगा मे पीठ ॥ ७ ॥
वदन कर निंदा करै, भुगतै नरक दुवार।
रामदास वा दु ख को, है कोइ वार न पार ॥ ८ ॥
किरपा की गुरु देवजी, अतर किया उजाल।
रामदास निंदा किया, आँन झपेटै काल ॥ ९ ॥
सतगुरु जो सिख ऊपरै, कोप करै सोवार।
तोही सिष शीतल हुय, आणे नहिं अहँकार ॥ १० ॥
सतगुरु लोभी लालची, क्रोधरूप वहु होइ।
वलिराजा प्रह्लाद कू, देख निवाज्या सोइ ॥ ११ ॥
सतगुरु का गुण अनत है, औगुण एक न जाण।
रामदास घट भीतरै, आपा लेह पिछाण ॥ १२ ॥
सतगुरु दीया रामनाम, निराकार निरवाण।
या में औगुण को नहीं, आपालेहु पिछाण ॥ १३ ॥
पारसरूपी सतगुरू, सिख है लोह निराट।
रामदास मिलियॉ समा, पलट और ही घाट ॥ १४ ॥

लोह पारस की क्या कहूं, सतगुरु अगम अपार।
तन मन सौंप्या रामदास, करै आप दीदार ॥ १५ ॥

इति।

अथ गुरुधर्म को अंग।

सतगुरुसूं पूठा फिरै, जाकै अंतर काण।
रामदास ताकूं वंद्यां, वहुती ह्वैगी हाण ॥ १ ॥
सतगुरु सूं पूठा फिरै, सो अपती बहु जीव।
अति निंदा गुरुदेव की, परत न पावै पीव ॥ २ ॥
निंदक का मुंहडा बुरा, दीठां लागै पाप।
गुरुद्रोहीसूं रामदास, अलगा रहियै आप ॥ ३ ॥
गुरुधर्मी का रामदास, दर्शण कीजै जाइ।
दर्शण सूं अवगुण मिटै, कर्म विलै हुइजाइ ॥ ४ ॥
सतगुरु वड़ सिख साखहै, रुपी धरणि में आइ।
रामदास वड़ लग गया, गगन गरजिया जाइ ॥ ५ ॥
गगन गरजिया रामदास, फूल्या सून्य मँझार।
डाल चली चहुं कूंटमें, सिख फल लगे अपार ॥ ६ ॥
डाल चली वड पेडतें सब वड़ का विस्तार।
रामा पेड जु सींचिया, सब हरियाली टार ॥ ७ ॥
विट लागा सो नीपना, जल पड़ियां कँद जाइ।
गुरु त्यागै हरि कूं भजै, निश्चय नरकां जाइ ॥ ८ ॥
गुरु हितकारी रामदास, दिन दिन दूणा थाइ।
उलटि समावै ब्रह्म में, ओत पोत हुइ जाइ ॥ ९ ॥
सिख जो ऐसा चाहिये, रह सतगुरु सूं रत्त।
सतगुरु जो न्यारा रहै, सिक्ख न छांडै तत्त ॥ १० ॥

इति।

अथ सुमरन को अंग।

प्रथमहि सुमरन जीभसूं, चोड़ै करो वजाइ।
दो अक्षर रट रामदास, साँई साद सुणाइ ॥ १ ॥
सुमरन कीजै रामदास, रोम रोम भरपूर।
सुमरन सूं सांई मिलै, सेवक सदा हजूर ॥ २ ॥
रामदास सुमरन कियां, रोम रोम सुख स्वाद।
नाड़ि नाड़ि स्वर सांभलै, घुरै अनाहद नाद ॥ ३ ॥

रामदास सुमरन कियाँ, सुमरन निपजै साधि।
सुमरनसें सुन गढ चढ़ै, सुमरन लगे समाधि ॥ ४ ॥
श्रवणाँ सुणियाँ रामदास, मुखसू सुमऱ्याँ राम।
रसना हिरदै नाभि बिच, सहज किया विश्राम ॥ ५ ॥
रसना सू सुमरण किया, अतर लागी तार।
रोम रोम विच रामदास, ऊठत एक पुकार ॥ ६ ॥
मुख सेती सुमरण किया, मन आयो इतबार।
दूजा सब ही झूट है, रामा सुमरण सार ॥ ७ ॥
रामा सुमरण सार है, श्वासोच्छ्वासाध्याय।
किया करम सबही कटै, दूजा लगै न आय ॥ ८ ॥
केताही कुकरम किया, जाण्या नहीं विचार।
सरब पाप पल में कटे, रामनाम चितधार ॥ ९ ॥
कुकरम करू न दिप भरू लगी शब्द की चोट।
सतगुरु शरणै रामदास, पाई हरि की ओट ॥ १० ॥
बुरा भला सब तुम किया, घटमें बैठे राम।
मैं तैं मिटगी रामदास, सहज मिल्या निज धाम ॥ ११ ॥
बुरा किया सब मैं किया, तुम केवल हो राम।
रामदास की वीनती, मेटो सकल विराम ॥ १२ ॥
रामदास सुमरण विना, कदे न छूटै जीव।
अनँत जन्म जोइ पुण्य करै, तोइ न पावै पीव ॥ १३ ॥
पाप पुण्य सू रामदास, स्वर्ग नरक में जाय।
सुमरण विन छूटै नहीं, कोटिक करो उपाय ॥ १४ ॥
सुमरण एको सार है, दूजा आलजजाल।
रामदास सब सोझिया हरिविन परलै काल ॥ १५ ॥
हरि सुमरण कर लीजिये, सास उसासाँ ध्याय।
रामदास सुमरण किया, साहब मिल्सी आय ॥ १६ ॥
सब इन्द्री सुमरण करै, मन ही करै पुकार।
रामदास अब पाविया, सुखसागर भरतार ॥ १७ ॥
रामदास सुमरण तणा, विवरा देउँ बताय।
घट माँहीं अजपा हुवै, सुणो सकल चित लाय ॥ १८ ॥
रामदास सुमरण कियाँ, प्रथम जगी इक नार।
सहस्र एक चौवनमहीं, शब्द करत गुँजार ॥ १९ ॥
कठ में प्रेम प्रकासिया, हृदै होत धमकार।
नाडि नाडि चेतन भई, मन आयो इतबार ॥ २० ॥

नाभि कमल में संचऱ्या, सहस्र चार परकास।
नाड़ि नाड़ि न्यारी घुरै, सुणत रामिया दास ॥ २१ ॥
बहत्तर नाड़ी वंक की, मिली वंक में आय।
रामदास सब घेरकै, उलटा अमर भराय ॥ २२ ॥
नाड़ि सवासै एक ही, सहस्र पांच परवाण।
रामदास घट भीतरै, ए वडि नाड़ि वखाण ॥ २३ ॥
मही नाड़ि दूजी घणी, तीन लोक विस्तार।
रामदास तन सोझकर, सब का करो विचार ॥ २४ ॥
नाड़ी बहत्तर हजार है, सब ही तनके माहिं।
सबहि मिलाणी तीनसूं, त्रिवेणी में जाहिं ॥ २५ ॥
इड़ा पिंगला सुषमणा, त्रिवेणी के तट्ट।
रामदास ता ऊपरै, मंड्या सहज ही मट्ट ॥ २६ ॥
वाँसे चल आघा गया, परम सून्य के माँय।
गगन कूप में रामदास, अमृत भरभर पाँय ॥ २७ ॥
नाड़ि नाड़ि अमृत झरै, पीवत सबै सरीर।
रोम रोम विच रामदास, चलत सुखम की सीर ॥ २८ ॥
साढ़ा तीन करोड़ में, एक होत ररकार।
सहजे सुमरण रामदास, ताका अंत न पार ॥ २९ ॥
उर अंतर नख सिख विचै, एक अजप्पा होय।
राम दास या संत गति, साधू जाणै कोय ॥ ३० ॥
जाप कियाँ मुख द्वार तें, रसना चाली सीर।
अजपा सुमरण घट विषै, को जाणै गुरु पीर ॥ ३१ ॥
गगनमंडलमें रामदास, अनहद घुरिया नाद।
रोम रोम साँई मिल्या, सुमरण पायो स्वाद ॥ ३२ ॥

इति।

अथ विरह को अंग।

नैण हमारा रामदास पिव विन रह्या विसूर।
अंतर दारुण विरह की तन इंद्रिय मनझूर ॥ १ ॥
अंतर दारुण अति घणी, पिंजर करै पुकार।
नैण रोय राता किया, तो कारण भरतार ॥ २ ॥
घाव कलेजै भाल विन, रामा सालै नित्त।
रात दिनां खटकत रहै, तुझ कारण मुझ मित्त ॥ ३ ॥
विरह भाल उरमें लगी, अंतर सालै नित्त।
रामदास सुख ऊपजै, आप मिलै मुझ मित्त ॥ ४ ॥

बाझ नारि कै पुत्र बिन, नित झूरत दिन जाय।
रामदास यों तुझ बिना, तालाबेली माँय ॥ ५ ॥
निरधन झूरै धन बिना, फल बिन नागरबेल।
रामा झूरै राम बिन, बिरही सालै सेल ॥ ६ ॥
बिरह आय घायल किया, रोम रोम में पीर।
रामदास दुखिया घणा, हूंदे खटूके तीर ॥ ७ ॥
कुंजर झूरै वन कू, सूरा अवा काज।
बिरहिन झूरै पीव कू, कवै मिलो महाराज ॥ ८ ॥
बैनड झूरे बीर कू, वर कू झूरै नार।
रामा झूरै पीवकू, दरसण द्यो भरतार ॥ ९ ॥
दरसण कारण रामजी, तलफतहू दिनरात।
रामा पिव पायो नहीं, आन हुवो परभात ॥ १० ॥
आठ प्रहर चोसठ घडी, झूरत मेरा जीव।
रामदास दुखिया घणा, दरसण दो अब पीव ॥ ११ ॥
तुमरे दरसण बाहिरो, सब दिन अहला जाय।
सो दिन नीका होयगा, तुमहि मिलोगा आय ॥ १२ ॥
तुम मिलणाके कारणै, रामा झूर सास।
तालाबेली जीवमें, कद पूरोगे आस ॥ १३ ॥
बिरह आय अतर बसै, सतगुरु के परताप।
रामदास सुख ऊपजै, आय मिलोगे आप ॥ १४ ॥
तुमरे मिलियाँ बाहिरो, दाझै बारबार।
रामा बिरहन कारणै, आण मिलो भरतार ॥ १५ ॥
तुम मिलिया बिन मैं दुखी, बिरही ऊठै लाय।
रामदासके तुम बिना, दम दम अहला जाय ॥ १६ ॥
रामा स्वारथ कारणै, झूरै सब ससार।
मैं झूरू परब्रह्म कू, अतर द्यो दीदार ॥ १७ ॥
अतर दारुण बिरह की, तुमकारण निज राम।
तुमरे दरशण बाहिरो, सकल अलूणो काम ॥ १८ ॥
तुम मिलवा के कारणै, बिरहन झूरै धाय।
राम तणो सदेसडो, कहो बटाऊ जाय ॥ १९ ॥
घाट बटाऊ सब थक्या, थकिया मेरा प्राण।
रामदास तन भीतरै, बिरहजु लागो बाण ॥ २० ॥
पाँव पख मेरे नहीं, मैं अबला बस नाहिं।
मिलवा की श्रद्धा नहीं, झुरणो पिंजर माहिं ॥ २१ ॥

मो झुरवाको जोर है, दूजो कछू न होहि ।
तुम हो जैसा कीजिये, दरशण दीजै मोहि ॥ २२ ॥
विरह विलापां कर रही, दुखी होय बहु जन्न ।
रामदास निजपीव कूं, झूरै रैण रु दिन्न ॥ २३ ॥
रैण विहाणी जोवताँ, दिन भी वीतो जाय ।
रामदास विरहिन झुरै, पीव न पाया माँय ॥ २४ ॥
रामदास विरहिन दुखी, दुखी होत बहु जिंद ।
दुखी जीव करुणा करै, तोहि विना गोविंद ॥ २५ ॥
रामदास कह विरहिनी, जाल करूं तन छार ।
हरि दरसण पायाँ विना, धृक जीतव जम्मार ॥ २६ ॥
धिक हमारा जीविया, भाँग करूं तन भुःख ।
रामदास सांई विना, रोम रोम में दुःख ॥ २७ ॥
विरही तणो संदेसड़ो, सुणो पियारे मित्त ।
तुम विन झूरे रामियो, सास उसासा नित्त ॥ २८ ॥
तुम आवो अब रामजी, तुम विन दुखिया जीव ।
तुम विन झूरै विरहिनी, परम सनेही पीव ॥ २९ ॥
तुम मिलवा के कारणै, दिन दिन दूणी चाय ।
रामदास विरही भया, अंदर लागी लाय ॥ ३० ॥
आठ प्रहर विरही जगै, जाका मोटा भाग ।
रामा प्रीतम कारणै, उनमुन अति वैराग ॥ ३१ ॥
अंतर दारुण विरहकी, ताकूं लखै न कोय ।
रामदास सो जाणसी, जा घट लागी होय ॥ ३२ ॥
लागी जबही जाणियै, आठों पहर विसूर ।
रामा प्रीतम कारणै, रोम रोम सब झूर ॥ ३३ ॥
पिव मिलवाके कारणै, विरहिन ऊठै लाय ।
रामदास कैसे मिटै, पीव विना दुख पाय ॥ ३४ ॥
तुम सुखसागर साँइयाँ, विरही दाझ मिटाय ।
दव लागो तन भीतरै, तुम मिलियाँ सुख थाय ॥ ३५ ॥
रामदासके विरह की, अंतर लगी पुकार ।
रात दिनां लागी रहै, सतगुरु के उपकार ॥ ३६ ॥
इति ।

अथ मन मृतक को अंग ।

रामदास मन मारिया, मार रु कीया ख्वार ।
मूवां पीछे भूत हुय, फेर त्यार को त्यार ॥ १ ॥

रामदास मन मारिया, मार ह दीया वाल।
घर लागो अग्नी बुझी, फेर उठेगी झाल ॥ २ ॥
सरप मार अर नाखियो, रामा साम्हे वाय।
वायु लाग चेतन भयो, उलट उणीकों खाय ॥ ३ ॥
मन कू मृत्तक जाण कर, मत कीजो विश्वास।
रामदास मन सरप ज्यू, जद तद करै विनास ॥ ४ ॥
रामदास मन मारियो, मार ह काढी खाल।
घायलिया खरगोस ज्यूँ, फेर ऊठियो चाल ॥ ५ ॥
मन कूँ मृत्तक जाणकर, मत कोइ रहो नचींत।
रामदास कब ऊठ कर, अतर करै कुपीत ॥ ६ ॥
मन मृत्तक सो जाणिये, घायल ज्यू फिरराय।
रामदास दुखिया रहै, हरि सुमिरत दिनजाय ॥ ७ ॥
जन रामा सतगुरु मिल्या, अर्थ बताया एक।
मन मृत्तक हुय लगि रह्यो, आद अंत या टेक ॥ ८ ॥

इति।

अथ सूक्ष्म मारग को अंग।

सो मारग पाया नहीं, साधु पहुता घाय।
रामदास आगे रह्या, कल्ह कल्पना मॉय ॥ १ ॥
रामदास घर अलग है, जाका थाह न कोय।
अतर निश्चय किम हुवे, है वाका मग सोय ॥ २ ॥
कोन दिसा सू आनिया, कहो कोन दिस जाय।
रामदास अब भूलग्या, इहाँ पडेहैं आय ॥ ३ ॥
रामदास उण देस सू, चाल न आया कोय।
कहु कुण कू ले बूझिये, मेरे मन की सोय ॥ ४ ॥
रामदास उण देस सू, जावै सब ससार।
मार सीस पर हीत को, जाकी सुद्ध न सार ॥ ५ ॥
बादल आडा जगतके, सूर श्याम निच नाहिं।
साधु देह ससार में ब्रह्म पटतर माहिं ॥ ६ ॥
साधु राम तो एक है, विरला जाणै कोय।
रामा साधू ब्रह्म में, ब्रह्म साधु में होय ॥ ७ ॥
ब्रह्मदेस सू सतजन, आन धर्यो अवतार।
रामदास उणदेसको, अनुभव कियो विचार ॥ ८ ॥
रामदास यूँ समज कर, साधू शरण समाय।
साँसा दूर गमाय कर, अमर देश लेजाय ॥ ९ ॥

धरती अरु असमान विच, उभय वेलि असराल ।
रामदास सब सोधिया, तंतु चल्या चहुं नाल ॥ १० ॥
सिध साधक जोगी जती, सबही किया विचार ।
रामदास समझ्यॉ विना, धोखो वारंवार ॥ ११ ॥
आशा तृष्णा वेलड़ी, जामण मरण अखूट ।
समझ्या सो तो सिध हुवा, अणसमझ्या सो झूट ॥ १२ ॥
मारग अगम अथाह सा, मोपै लख्या न जाय ।
जन रामा सतगुरु मिल्या, पलमें दिया वताय ॥ १३ ॥

इति ।

अथ पीव पहिचान को अंग ।

पड़दामें रहै रामदास, सोतो धणी न जाण ।
सकल मंडमें रमरह्या, तासूं करो पिछाण ॥ १ ॥
सब सूँ न्यारा रामदास, दुनिया जाणै नाहिं ।
मैं हूं सेवग जासका, सकल मंड ता माहिं ॥ २ ॥
माय वाप जाकै नहीं, है अणघड़ अलेख ।
रामा ऐसा झीण है, रंग रूप नहिं रेख ॥ ३ ॥
सब का करता एक है, परब्रह्म निजदेव ।
रामदास घड़िया तजो, करो जास की सेव ॥ ४ ॥
रामा एक पिछाणिया, ताहीसूं लिवलाय ।
जो दूजा मुख नीकसै, तो यूं जीभ कटाय ॥ ५ ॥
सतगुरु के परताप सूं, लीया पीव पिछाण ।
रामदास मुख आपणे, दूजी चहूं न वाण ॥ ६ ॥

इति ।

अथ शब्द को अंग ।

रामदास सतशब्द का, भीतर लागा भेद ।
बाहिर घाव न दीसही, रोम रोम विच छेद ॥ १ ॥
छेद पड्या सत शब्द का, भेद गया तन माहिं ।
रामदास लागी इसी, करक कलेजा माहिं ॥ २ ॥
लगी शब्द की रामदास, अधःऊर्ध्व विच चोट ।
रोम रोम ररंकार की, सब घट एको दोट ॥ ३ ॥
दोट लगी सत शब्द की, ब्रह्मांड निकसी जाय ।
रामदास ब्रह्मांड में, शब्द रह्यो गुंजाय ॥ ४ ॥

सोरठा ।

शब्दतणी सब मार, साराई शरीर में ।
रामा अणी न धार, रोम रोम बिच वहगई ॥ १ ॥

साखी ।

शब्द बाण सू मारिया, सबही मनका खोट ।
रामदास आकाश में, लगी अखड इक चोट ॥ ५ ॥
धर अबर बिच रामदास, एक शब्द गुजार ।
उहाँसे आघी उलटि के, निकसी दशवें द्वार ॥ ६ ॥
शब्द गाज ब्रह्माड में, जाण मणकी बीण ।
रामदास सुर सभले, महा झीण सू झीण ॥ ७ ॥
रामदास घायल भया, सच शब्द की मार ।
आठ पहर घूमत रहे, साई हृदा धार ॥ ८ ॥
शब्द मार करडी घणी, बिरला झेले कोय ।
रामदास सो झेलसी, निरह निकलता होय ॥ ९ ॥

सोरठा ।

रामा शब्द सभाय, सतगुरु वाह्या तनमें ।
आठ प्रहर घूमाय, घायलग्या सो जाणसी ॥ १ ॥

साखी ।

जन रामा सतगुरु मिल्या, शब्द जु वाह्या तीर ।
उर अतर नख सिख निचै, सारे भिद्या शरीर ॥ १० ॥

इति ।

अथ ब्रह्म एकता को अग ।

सगुण जु निगुण रामदास, तू एको कर जाण ।
एक ब्रह्म सब बीच में, समरथ पद निरवाण ॥ १ ॥
सगुण जु माया रामदास निगुण माहिं समाय ।
एक ब्रह्म विस्तार है दूजा कह्या न जाय ॥ २ ॥
पाला गल पाणी हुवा, जीव पलट हुवा ब्रह्म ।
निगुण सगुण जु एक हुय, रामा छूटा भर्म ॥ ३ ॥
जीव मिलाणा सीव में, पलट हुवा निज ब्रह्म ।
हरिजन हरितो एक है, रामा कहा है भ्रम ॥ ४ ॥

एक ब्रह्म सब बीच में, ताका वार न पार।
रामदास तासूं मिल्या, दुबध्या दूर निवार ॥ ५ ॥
इति।

अथ ग्रंथ–गुरु–महिमा ।

आये संत सधीर, लिये जगमें अवतारा।
खोले भक्ति भंडार, मिट्याहै तिमिर अंधारा ॥ १ ॥
अमर लोक सूं आय, सिंहथल माहिं विराजे।
तेजपुंज परकास, बजे अनहदके वाजे ॥ २ ॥
सतासमाधि[1] अगम जहँ आसण, सुखमण सहज समाधी।
आय रामियो चरणाँ लागो, सिख है आदि अनादी ॥ ३ ॥
हरिरामा हरि है अवतारा, अंतर कला कबीरूं।
नामदेवसा दृष्टि देखताँ, सूरा संत सधीरूं ॥ ४ ॥
पत प्रहलाद चाल सनकादिक, ज्ञान सहित शुकदेवू।
ध्रुवसा ध्यान अटल अनुरागी, गोरख जैसा मेवू ॥ ५ ॥
दादूसा[2] दीदार दुरंस, कोइ दर्शण पावै।
काल जाल सब जाय, भरम अघ दूर गमावै ॥ ६ ॥
दीर्घसा दिग्पाल, मेरुसा अविचल कहिये।
सूरजसा परकास, समँदज्यूं थाह न लहिये ॥ ७ ॥
समँद सँख्यामें होय, सत्तगुरु असँख कहाये।
गोविंदतें दीरघ, चंदतें शीतल थाये ॥ ८ ॥
ब्रह्म विलासी संत, ब्रह्म का है व्योपारी।
ज्ञान ध्यान गलतान, दीसतां दर्शण भारी ॥ ९ ॥
मुरधरके मँझ माहिं, प्रगट्या सच्चा साँई।
देख्या जगत रु भेख, और ऐसा कुछ नाँई ॥ १० ॥
ऐसा है कोई संत, सूरवाँ कहियै सादू।
हरिरामा गुरुदेव, मिल्या पूरब पुन आदू ॥ ११ ॥
जो पावै दीदार, दुरस होय चरणा लागै।
भर्म कर्म सब जाय, काल अघ दूरा भागै ॥ १२ ॥
सिख कूं ज्ञान बताय, ब्रह्म के माहिं मिलावै।
ऐसी औषधि लाय, जन्मका रोग मिटावै ॥ १३ ॥
सुणिया था सुरलोक, देवता वायक पूगा।
अधिक ज्योति परकास, अनँत जहँ सूरज ऊगा ॥ १४ ॥

---

1 असंप्रज्ञातसमाधि। 2 सहोदरभाई।

मिटिया तिमिर अनेक, तेज परकास्या माँही ।
रामाकू गुरुदेव मिल्या, पर सधा साँइ ॥ १५ ॥
ऐसा है गुरुदेव, हमारे शीश निराजै ।
जेती महिमा होय, गुरा कू पती छाजै ॥ १६ ॥

साखी ।

गुरुमहिमा सीखै सुणै, आपा लेह विचार ।
भजन करै गुरुदेव को, सो जन उतरै पार ॥ १७ ॥
गुरुकी महिमा रामदास, करता है दिनरात ।
सतगुरुसा दूजा नहीं, सत भाखतहू बात ॥ १८ ॥

चौपाई ।

सद्गुरु समी नहीं पर-दखिणा । सद्गुरु समा प्रेम नहिं चखणा ।
सद्गुरु समा तीर्थ नहिं तिरणा । सद्गुरु समा और नहिं शरणा ॥ १ ॥
सद्गुरु समा धूप नहिं रूपम् । सद्गुरु सम नहिं तत्व अनूपम् ।
सद्गुरु समा पुण्य नहिं दाना । सद्गुरु समा ज्ञान नहिं ध्याना ॥ २ ॥
सद्गुरु समा जोग नहिं जग्गा । सद्गुरु समा और नहिं सग्गा ।
सद्गुरु समी कहत नहिं कहणी । सद्गुरु समी रहन नहिं रहणी ॥ ३ ॥
सद्गुरु समा उडत नहिं गडिता । सद्गुरु समा पढ्या नहिं पँडिता ।
सद्गुरु समा पिता नहिं माता । सद्गुरु सा नहिं तत्व निधाता ॥ ४ ॥
सद्गुरु समा वीर नहिं बन्धू । सद्गुरु समा और नहिं सन्धू ।
सद्गुरु बिना नरक में जावै । सद्गुरु बिन कहु कौन छुडावै ॥ ५ ॥
सद्गुरु बिना कबहु नहिं छूटै । जहँ जावै जहँ जमरो लूटै ।
सद्गुरु बिना बहुत फिर भटकै । जहँ जावै जहँ जमरो पटकै ॥ ६ ॥
सद्गुरु बिना सर्व कों ध्यावै । गोगा पाबू मात सरावै ।
सद्गुरु बिना सर्व कों जाणै । क्षेत्रपाल बहु भूत बखाणै ॥ ७ ॥
सद्गुरु बिना सब कों मेवै । धूप रूप सो बहु दिन सेवै ।
सद्गुरु बिना सबै कों जोवै । करामात रुधि सिधि कों रोवै ॥ ८ ॥
सद्गुरु बिना एक नहिं सूनै । अनँत दवकों फिर फिर पूनै ।
सद्गुरु बिना षट् देय बखाणै । हदकी बात सफल कर जाणै ॥ ९ ॥
सद्गुरु बिना राम नहिं पावै । रसना कठ किमु प्रेम मिलावै ।
सद्गुरु बिना हृदय नहिं सूधा । निजनाम बिन कमल्नु ऊधा ॥ १० ॥
सद्गुरु बिना नाभि नहिं आवै । श्वासोच्छ्वास कहो किमु लावै ।
बिन रगरग नहिं बोलै । अन्तर ध्यान कहो किमु खोलै ॥ ११ ॥

उदय अस्त लग अदल चलावै। विध्धि लोक सुरलोकाँ जावे ॥ १० ॥ तोहि०।
सप्तद्वीप लो आँण सवाई । एक चक्रवर्ती ठकुराई ।
एको सुक्ख कही नहिं भाया। फिर पाछा गभवासा आया ॥ ११ ॥ तोहि०।
कोटिक ब्रह्मा विष्णू ध्यावै । शिव शक्ती सू ध्यान लगावै ।
और देव बहुतेरा सेवै । धूप रूप सो निशि दिन खेवै ॥ १२ ॥ तोहि०।
चवदह भवन काल घर जावे । ब्रह्मा विष्णु महेश डरावै ।
काल डरै अणघड सू भाई । तासू सताँ सुरति लगाई ॥ १३ ॥ तोहि० ॥

साखी।

ता मूरत पर रामदास, वार वार बलिजाय ।
विणज करै ता नामको, जाकूं काल न खाय ॥ १ ॥

चौपाई।

शून्य शिखरमें हाट मडाया । विणजण कू व्योपारी आया ।
हरि हीरों की धड़ी लगाई । निजनाम की गूण भराइ ॥ १ ॥
पाच पचीस बलधिया लाया । गूण घाल अरु लाद चलाया ।
सतगुरु कहै चेला तुम जावो । काया पाटण विणज हलावो ॥ २ ॥
चेला चलकर लारै आया । दिल भीतर बाजार मडाया ।
चित्त चोहटे आण उतारी । फिर फिर जावै सब व्योपारी ॥ ३ ॥
ततकी तराजू दिल की डाँडी । उर भीतर हम हाट जो माँडी ।
फड़दा करम परा कर पाखै । तत्त नाम एक हीर जु राखै ॥ ४ ॥
अध ऊर्ध्व विच रस्त चलाइ । जमडाणी अब न्यारा भाई ।
बिणजसरै विणजारो जागे । जम डाणी का जोर न लागै ॥ ५ ॥
हाट मँडाई चोड़े चोहटे । चोर न मुसे लाट नहिं बाटे ।
विणजण कू जग चलकर आवै । हीरा पारख कोई न पावै ॥ ६ ॥
जौंहरि होय सो पारख पावै । तन मन दे हीरा ले जावै ।
हरि हीरा की नाव चलाई । जगभीतरमें धुरा बधाई ॥ ७ ॥
धुर बोहरे अब मेल घणेरा । विणज करै अरु सुनमें डेरा ।
आपहि धुर आपहि है बोरा । आपहि विणजै आपहि हीरा ॥ ८ ॥
हरि हीरा का भन्या भँडारा । विणज करै है अगम अपारा ।
विणज करै अरु सुनमें आया । सतगुरु सेती सीस निवाया ॥ ९ ॥
शून्य शिखर में गुरू विराजै । रात दिना नित नोबत बाजै ।
सिख सतगुरु एक मिल हूवा । विणज करै अब क्यू न जूवा ॥ १० ॥

साखी ।

सतगुरु समाजु को नहीं, इण जुग ही के माहिं ।
रामदास सतगुरु विना, दूजा दीसै नाहिं ॥ १ ॥
सूरत शुद्ध कवीरसी, दादू सा दीदार ।
हरिरामा हरि सारसा, अनँत जोत अधिकार ॥ २ ॥
हरिरामा गुरु सूरवाँ, ज्ञान ध्यान भरपूर ।
चौरासी सूं काढ कर, किया काल जम दूर ॥ ३ ॥
ऐसा साधू नामदे, जैसा है हरिराम ।
रामें कूँ शरणै लियो, मेल निरंजन राम ॥ ४ ॥
हरिरामा प्रहलादसा, जैसा रामानंद ।
चरण परस चित चेतिया, मनमें भया अनंद ॥ ५ ॥
विष माया सब त्यागकरि, हिरदै ध्यान लगाय ।
रामदास निरभै भया, सतगुरु शरणै आय ॥ ६ ॥
सतगुरु केवल रामदास, मिल्या निकेवल माँय ।
हरिरामा सँत ब्रह्म है, सिखभी निरमै थाय ॥ ७ ॥
चरणा चाकर रामियो, सतगुरु है महाराज ।
च्यार चक्क चवदै भवन, ताहि परै सँतराज ॥ ८ ॥
सतगुरु को मुख देखतां, पाप शरीराँ जाय ।
साधुसंगति सत रामदास, अटल पदी लेजाय ॥ ९ ॥
गुरु गोविंद की महरतें, रामा पड़ी पिछाण ।
सब संतां के ऊपरै, वारूं मेरा प्राण ॥ १० ॥
दरसण दीठां रामियां, भाज जाय सब भर्म ।
ऐसा गुरु हरिरामजी, परस्यां काटै कर्म ॥ ११ ॥
पूरण ब्रह्म विराजिया, गाम सिंहथल माहिं ।
रामदास जन जाणसी, दूजाँ कूं गम नाहिं ॥ १२ ॥

इति ।

॥ श्रीरामभक्तेभ्यो नमः ॥

अथ श्रीभक्तमालप्रारंभः ।

साखी ।

मैं अवला हौं रामदास, आँधो अंत अचेत ।
तुम सतगुरु हो शीश पर, हमकों करो सचेत ॥ १ ॥
रामदास की वीनती तुमहो, अगम अपार ।
भक्तमाल का भेव दो, सतगुरु करौं जुहार ॥ २ ॥

चौपाई ।

सतगुरु मिल्या नामनिज पाया । सत्तशब्दकौं निशिदिन ध्याया ॥
हृदय कमल घर लीया वासा । वीन भक्ति मोहि उपजी आसा ॥ १ ॥
नाभिकमल में राम मिलाया । रोम रोम में रंग लगाया ॥
उलटि शब्द पश्चिम दिशि फिरिया । अध ऊर्ध्व प्रेमरस झरिया ॥ २ ॥
मनवा उलटि अगम घर आया । सव सन्तन का दर्शन पाया ॥
सव सँत मेरे शीश विराजै । सत्त शब्द सन्ताँ मुख छाजै ॥ ३ ॥
सव सन्तन कौं राम पियारा । भक्तमाल का करौं उचारा ॥
रामनाम सपति सुखदाई । सव सन्तॉं मिल साख वताई ॥ ४ ॥
रामनाम ध्यावै कुल मॉंइ । सो वाधव है मेरा भाई ॥
रामनाम कौं निशिदिन ध्यावै । आवागमन वहुरि नहि आवै ॥ ५ ॥
रामनाम कौं निशिदिन ध्यावै । अटल पद्द अमरापुर पावै ॥
रामनाम कौं निशिदिन ध्यावै । दु ख दारिद्र हि दूरि गमावै ॥ ६ ॥
रामनाम से वहुता तिरिया । अनँतकोटि अनेक उधरिया ॥
रामनाम की सुनिये साखा । अजामेल पुत्र जिन राखा ॥ ७ ॥
रामनाम की कहाँ वडाई । अहिल्याकौं जु विमान चढाई ॥
रामनाम का मता अपारा । ध्रींगर कुटुव सहेता तारा ॥ ८ ॥
रामनाम गजराज उधारे । सव सन्तन का काज सुधारे ॥
रामनाम से शिला तिराई । पाणी ऊपर पान चँदाई ॥ ९ ॥
रामनाम केता गुण गाऊ । जुग जुग भक्ति तुम्हारी पाऊ ॥
रामनाम की महिमा भारी । मो अवला कौं तार मुरारी ॥ १० ॥
तीन लोक मे राम धियाया । सो सन्त जु मेरे मन माया ॥
रामदास कौं राम पियारा । जो सुमरे सो प्राण हमारा ॥ ११ ॥

साखी ।

हरि की महिमा रामदास, कहिये कहा वनाय ।
अनँतकोटि नर उद्धरे, रामनाम लिव लाय ॥ १ ॥

छद नीसानी ।

सतगुरु स्वामी थौ निजनामी निज ही नाम धियावन्दा ।
गणेश गरवा कानाँ सरवा ऋधि सिद्धि वुद्धि मिलावन्दा ॥ १ ॥
दश अवतारू व्रह्म विचारू ररकार मिल आवन्दा ।
पानी पवन ह धरनी अवर चन्द सूर गुन गावन्दा ॥ २ ॥
नव भी नाथू वारह पथू परमल परमू ध्यावन्दा ।
छउ भी जतियाँ सातों सतियाँ चेत जानि जुग जीवन्दा ॥ ३ ॥

एको अच्छर मंडे मच्छर ॐकार उपावन्दा।
लखचौरासी है अविनासी पूर्णब्रह्म समावन्दा ॥ ४ ॥
है भी न्यारा प्रियतम प्यारा जाहिर जोगी जाणन्दा।
कोटि अनन्तू मिले निरन्तू रोम रोम रस माणन्दा ॥ ५ ॥
है जुग चारू सन्त अपारू दास दीनता गावन्दा ॥
हम कीड़ी कायर हरि सुख सायर उलटा अभर भरावन्दा ॥ ६ ॥
थाह न पाया ध्याय मिलाया समदाँ वून्द समावन्दा।
'रामादासू सतगुरुपासू नमि नमि शीश नमावन्दा ॥ ७ ॥

साखी।

सतगुरु सेती वीनती, मनका मत्सर मेट।
रामदास कौं दीजिये, भक्तमाल जश भेट ॥ १ ॥

चौपाई।

प्रथम हि नाम सदाशिव लीया। पार्वती कौं निज तत दिया ॥
सो सुनि नाम सूवा ले भागा। उदरहि माहिं राम लिव लागा ॥ १ ॥
बाहिर आइ बसे वन जाई। रामनाम से प्रीति लगाई ॥
वेदव्यास बहु ज्ञान उपाया। राम राम कहि उलटि समाया ॥ २ ॥
ब्रह्मा विष्णु रामसे रत्ता। कुबेर जोगी राम सुमरता ॥
शेषनाग गुरुज्ञान विचारा। सहस मुखाँ से राम उचारा ॥ ३ ॥
राम रसायन नारद पीया। ऋषि सनकादिक हरिगुण लीया ॥
मारकंड लोमश ऋषि भाई। रामनामसे प्रीत्ति लगाई ॥ ४ ॥
गर्ग ऋषी जु रामसे रत्ता। गौतम कागभुशुंडि सुमरता ॥
जयदेव ऋषि की प्रीति पियारी। उद्धव हरिसे लाई तारी ॥ ५ ॥
पिप्पलाद ऋषि हरि हर ध्याया। ज्ञान पाय अज्ञान मिटाया ॥
कुंभी ऋषि काम को जीता। काया गढ ले भया वदीता ॥ ६ ॥
करणवंध ऋषि राखी काया। नाद विन्द ले गांठ घुलाया ॥
अगस्त्य ऋषि जुगे जुग जीया। सात समँदका पाणी पीया ॥ ७ ॥
भृगुजी ऋषि ब्रह्म को चीन्हा। विष्णुदेवका परचा लीन्हा ॥
सेवा करी श्याम से लागा। काल क्रोध भय अंतर भागा ॥ ८ ॥
नासकेत उद्दालकयूरा। आन सिल्या सुखसागर सूरा ॥
ऋषि समीक भूमंडल गाया। रामनाम को निशिदिन ध्याया ॥ ९ ॥
ऋषि दालभ्य एक धुन धारी। सत्तशब्द से प्रीति पियारी ॥
मुनि वशिष्ठ समाधी सूरा। निशिदिन रहते हरी हजूरा ॥ १० ॥

ऋषभदेव रामसे राता । निजनामसे कीया नाता ॥
गुरु गांगेय राम गुण गाया । जिन माँई को भेद बताया ॥ ११ ॥
विश्वामित्र ह्रि ब्रह्म विचारा । रोम रोम में राम उचारा ॥
याज्ञवल्क्य तत्व ता हूवा । मन को जीति सन्तों मिल वूवा ॥ १२ ॥
राजा भरत महा पटरानी । दोना भक्ति निकेवल जानी ॥
महावीर महा तत पाया । केवल होइ मोक्षपद पाया ॥ १३ ॥
केशी कुँवर काम दल पाला । परदेशी सन्तों मिल हाला ॥
चोवीस तिर्थकर राम धियाया । केवल होइ मोक्षपद पाया ॥ १४ ॥
भगवधाम निरंजन मेला । निजनाम सैं कीया मेला ॥
काल जाल जम का डर नाहीं । भगवद मिल्या ताहि घर माहीं ॥१५॥
सरियादे प्रह्लाद उधरिया । रामनाम ले कछू न डरिया ॥
भीड़ पड़ी सन्तों पख आया । हिरण्यकशिपु को मार गुड़ाया ॥ १६ ॥
सिंह रूप अवतार धारिया । तिलक दिया प्रह्लाद तारिया ॥
कार्तिकस्वामी हनुमत सूरा । सीता लक्ष्मण राम हजूरा ॥ १७ ॥
त्यागा राज भरत वन लीया । राम रसायन निशिदिन पीया ॥
रिपुदन राम राम गुण गाया । मन्दोदरी विभीषण पाया ॥ १८ ॥
तुलसीदास राम का प्यारा । आठों पहर मगन मतवारा ॥
भूत मिल्या हरि भेद बताया । हनूमान हरि चरणाँ लाया ॥ १९ ॥
राजा जनक राम का प्यासा । खट दिलीप प्रेम परकासा ॥
परीक्षित प्रेम पियाला पीया । जन्मेजय निजतत लै जीया ॥ २० ॥
पारायण सुनिके पद पाया । आवा गमन बहुरि नहिं आया ॥
रुक्मांगद पुँडरीक उधरिया । राजा शिवी सत्य से तिरिया ॥ २१ ॥
गूँड राज गोविन्द गुण गाया । सुखसागर में सहज समाया ॥
मोहमर्द निरमोही राजा । दीठा जाय अगम का छाजा ॥ २२ ॥
परजादीप परम तत पाया । हाकम सन्ताँ चरण लगाया ॥
कटिया करम रामको गाया । दिन पतीसाँ मोक्ष मिलाया ॥ २३ ॥
मोरध्वज का मता करारा । त्यागी देह राम का प्यारा ॥
सदावत दीया सुख पाया । सन्तन को बहु हीरा नवाया ॥ २४ ॥
प्रेम भक्ति सूँ प्रीति लगाई । वैकुंठाँ चढ़ि नौबत बाई ॥
जन अमरीष रामगुण गाया । चरणामृत लेकर सुख पाया ॥ २५ ॥
दुरवासा ऋषि शापन आए । उलटा दुःख उसीको धाए ॥
तति लगी तनमें बहुभारी । साहिब सेती अरज गुदारी ॥ २६ ॥
हरिजन हरि को बहुत पियारा । भक्तकाज धरिया अवतारा ॥
उलटा ऋषी लगाए पाए । सन्तन का कारज सुधराए ॥ २७ ॥

द्विज कन्या दिल माहीं दरस्या । उलटी मिली अगम घर परस्या ॥
राजा हरिचंद सती कहाया । सत्त न हान्या हाट विकाया ॥ २८ ॥
बलि जिग माहीं जाग रचाया । बावनरूप छलन को आया ॥
बलि नहि छलिया आप छलाया । राज पयालाँ निश्चैपाया ॥ २९ ॥
पांडव पाँच राम का प्यारा । कुन्ताँ माता अगम अपारा ॥
पांडव जग में जाग रचाया । चार कोंट का ऋषी बुलाया ॥ ३० ॥
जाग जीमिया शंख न बोला । स्वामी काहिन अन्तर खोला ॥
स्वामी भेद सन्तका दीया । पांडव जाय वाल गुण लीया ॥ ३१ ॥
वालमीकि की शोभा सारी । कीन्हो जाग सँपूरण भारी ॥
दूजा वालमीकि इक हुआ । रामनाम कहि निरभै चूआ ॥ ३२ ॥
शतकोटी रामायण कीन्ही । स्वर्ग मृत्यु पातालाँ दीन्ही ॥
निश्चै नाम एक की आसा । रामनाम कह ब्रह्म विलासा ॥ ३३ ॥
द्रौपदि प्रेम पियाला पीया । चीर वधार परम सुख लीया ॥
विदुर जु सेव भक्ति का पाया । नाम निकेवल निशिदिन ध्याया ॥ ३४ ॥
वथवै हन्दा शाक चनाया । साहिव को परसाद कराया ॥
साहिव साधू प्रीति पियारी । कैरव हार गए अहँकारी ॥ ३५ ॥
सूरदास सन्ताँ सुखदाई । रामनाम से प्रीति लगाई ॥
कालू कीर राम का प्यारा । रोम रोम में लीया झारा ॥ ३६ ॥
सँत हरिदास सुरति उलटाई । देवहुति भूमि सातवीं पाई ॥
ध्रुवजी ध्यान धणीसे लाया । अटल पदी अमरापुर पाया ॥ ३७ ॥
भक्त वंश में सन्त जु सूरा । वैकुँठा मिलिया जन पूरा ॥
रतनदास राम सों रत्ता । रोम रोम में लागा तत्ता ॥ ३८ ॥
नरसीदास राम का प्यासा । प्रेम भक्ति पाई परकासा ॥
साँई के सँत हुआ हजूरी । कर माहेरो आशा पूरी ॥ ३९ ॥
तिलोकचँद की भक्ति करारी । लेखण स्याही आप मुरारी ॥
सुदामा का दारिद हरिया । रामनाम ऐसा गुण करिया ॥ ४० ॥
प्रेम भीलणी भक्ति पियारी । बोर पायकर शिपा वधारी ॥
सरिता नीर निरमला कीया । शवरी रघुवर टीका दीया ॥ ४१ ॥
सर जहँ ऋपी सत्तगुरु पाया । ऋपि मिल हरि दर्शन को आया ॥
शवरी भक्ति भली पण कीन्ही । सव ऋपियां मिल मोंहे लीन्ही ॥ ४२ ॥
ईश्वर वाप गधा कूं कीया । पिता पुत्र खोला में लीया ॥
नेमनाथ नारायण ध्याया । भेदी भेद ब्रह्म का पाया ॥ ४३ ॥
आदिनाथ मिलिया अविनासी । केवल हुआ एक सुखरासी ॥
गनिका गुरु सुवा को पाया । सत्तशब्द को निशिदिन ध्याया ॥ ४४ ॥

रका वका राम पियासा । नामा छींपा हरि का दासा ॥
देवल फेर रु दूध पिलाया । ध्यान रूप हुइ भोजन पाया ॥ ४५ ॥
परचा पूगा परज पतीनी । दशधा भक्ति नामदे कीनी ॥
दत्त दरश दिल भीतर पाया । गुरु चोवीसू ले गुण गाया ॥ ४६ ॥
निश्चय एक नाम की आसा । रामनाम कह ब्रह्म विलासा ॥
विष्णुस्वामी माधवाचारा । सत्त शब्द ले किया पसारा ॥ ४७ ॥
रामानुज निम्बारक भाई । कलियुग माहीं भक्ति हलाई ॥
राघवानन्द राम का प्यारा । रोम रोम में लीया धारा ॥ ४८ ॥
रामानन्द मुख राम उचारा । निर्गुण भक्ती किया प्रचारा ॥
चार सम्पदा बावन द्वारा । हुआ शिष उजियागर सारा ॥ ४९ ॥
भावानन्द अनँतानँद दासा । रामनाम से लाई आसा ॥
नरहरिनन्द निकेवल लीया । स्वामि गालवे हरि रस पीया ॥ ५० ॥
धैनै सुरसुरै सुरति लगाई । रामनाम मीठो रे भाई ॥
सन्तन के मुख बीज बुहाया । खेती माहिं नाज निपजाया ॥ ५१ ॥
दास पँचीण मगन मत वारा । सहज समाधि वणी इक धारा ॥
सब सन्ताँ में चक्वै हूआ । ब्रह्म निराल क्यूं नहि जूआ ॥ ५२ ॥
हुइ निणनाग वालद लाया । सदावर्त दे सन्त सराया ॥
कमाल कमाली हरि गुण गाया । सुखसागर में सहज समाया ॥ ५३ ॥
कबीर कमाल जमाल जमला । शेख फरीद सुमरिया अल्ला ॥
श्रीसहस्रास्य गुरू गम पाइ । बहत्तर शिष मिल पद्धति लाई ॥ ५४ ॥
सेनै सुखा योगानँद भाई । आय मिल्या सुखसागर माँई ॥
सीता पीपै प्रेम पियारा । रामनाम रटिया इक धारा ॥ ५५ ॥
गेले माँहि किया सिंह चेला । रामनाम से वाध्या वेला ॥
झाँपापात समँद में लीन्ही । छापा आय परगटी कीन्ही ॥ ५६ ॥
राम राम रैदास उचरिया । रोम रोम में नीझर झरिया ॥
काढ़ि जनेऊ विप्र जिमाया । दालग स्वामी मुखाँ बोलाया ॥ ५७ ॥
पद्मावती प्रेम रस पागी । सब सँग छाँडि राम लिव लागी ॥
विप्र तणा चरणामृत दीया । साहिब सहजाँ अमृत पीया ॥ ५८ ॥
अमृत उलटि मिल्या घट माहीं । जन रैदास सत्तगुरु पाहीं ॥
कुल मारग को काने त्याग्या । मीरा चली गुरा की आज्ञा ॥ ५९ ॥
रतना करमा मीरा बाइ । झाली प्रीति राम से लाई ॥
पूली प्रेम पियाला पीया । सतगुरु से मिल निज तत लीया ॥ ६० ॥
श्रमण मन कों थिर करि राखा । रामनाम भनिया सुण साखा ॥
धर्मदास ध्यान करि ध्याया । अनहद नाद अखंडित पाया ॥ ६१ ॥

टीलमदास लगावै तत्ता । लाहूदास राम से रत्ता ॥
ज्ञानी ज्ञान चीन्हिया निर्गुण । माया दूर करी सब सर्गुण ॥ ६२ ॥
गैबीराम गैब से सिलिया । सब सन्तों सुखदाई भिलिया ॥
गोविन्दराम राम गुण गाया । केवलदास निकेवल पाया ॥ ६३ ॥
अल्हैदास अगम की आसा । भक्ति पदीमें कीन्हा वासा ॥
कोल्ह गैंस कुलशेखर सारा । मुकुन्ददास मिल्या तत तारा ॥ ६४ ॥
मुरलीदास मलूका बेई । आन मिले सुखसागर तेई ॥
चँदरै चित चेतन करि जाण्या । सतरै रोम रोम रस माण्या ॥ ६५ ॥
मुक्ख भीड़ पीया रस वंकी । चवड़ चपट मँड्या चित चोकी ॥
चित से चित चेतन करि ध्याया । आतम में परमातम पाया ॥ ६६ ॥
हीरदास हरि का हित कारी । सत्यशब्द से प्रीति पियारी ॥
कान्हरदास काम कों त्यागा । रामनाम से निशिदिन लागा ॥ ६७ ॥
मगनीराम मगन में रहणा । आठ पहर नित राम सुमरणा ॥
जंगीराम जुक्ति करि जाना । ब्रह्म चीन्ह निज तत्व पिछाना ॥ ६८ ॥
बालकदास ब्रह्म व्यौपारी । उलटे आइ लगाई यारी ॥
केशवदास काम कुण काजी । राम राव भजिया हुइ राजी ॥ ६९ ॥
हरचँददास चरणा चित लाया । सतगुरु सेती प्रेम सिलाया ॥
चेतनदास चेत जुग जीया । आतम राम रसायन पीया ॥ ७० ॥
मोहनदास मानगढ मारा । रोम रोम में राम पुकारा ॥
मानादास महा रस पीया । उलटे आइ अगम सुख लीया ॥ ७१ ॥
दास मुरारि मिल्या तन मॉए । तिरबेणी चढि ध्यान लगाए ॥
सँत शिवदास श्यामसे सच्चा । सत्त शब्दसे निशिदिन रच्चा ॥ ७२ ॥
बाणारसी राम सों लागा । उलटा सिल्या अगम घर आगा ॥
दईदास दिल माहीं दरसा । रोम रोम में अमृत बरसा ॥ ७३ ॥
जन पयहारी परिपक हूआ । ब्रह्म विलास कबहु नहि जूआ ॥
कृष्णदास राम गुण गाया । वे गलते का महन्त कहाया ॥ ७४ ॥
अगर कील्ह हुआ उजियागर । अनुभववानि मिल्या सुखसागर ॥
धम्बर नाभै हरि गुण गाया । भक्तमाल कर सन्त सराया ॥ ७५ ॥
सम्मन सेऊ प्रेम पियारा । राम राम रटिया इक धारा ॥
धाटमदास जातिका मेणा । सतगुरु सेती सिलिया सेणा ॥ ७६ ॥
डाला भर गेहूं का लाया । सन्तन को परसाद कराया ॥
फीता सिल्या राम से राजी । रोम रोम में झालर बाजी ॥ ७७ ॥
तापै तपस्या करी करारी । लोधिये जाय लगाई यारी ॥
नानक गुरू नाम निज पाया । चार कोंट में पन्थ हलाया ॥ ७८ ॥

ईश्वरदास रामका प्यारा । हरि गुण कथिया अगम अपारा ॥
आशोदास अगम की आसा । कनक दडवत की बहुदासा ॥ ७९ ॥
परमानँद आनँद दुइ भाई । रामनाम से प्रीति लगाई ॥
धरि अवतार वूढण हुइ आया । दादू कौं निज नाम सुनाया ॥ ८० ॥
दादूदास राम का प्यारा । चार पन्थ ले किया पसारा ॥
बावन शिष्य हुए उजियागर । अनुभव बानि मिले सुखसागर ॥ ८१ ॥
दासगरीब गुरू घर आया । भेदी भेद ब्रह्म का पाया ॥
रज्जब पिया राम रस भारी । सतगुरु सेती प्रीति पियारी ॥ ८२ ॥
प्रीति लगाय प्रेम रस पीया । नाम निकेवल निशिदिन लीया ॥
सुन्दरदास मिल्या सुख माँए । नाम निकेवल निशिदिन ध्याए ॥ ८३ ॥
मुक्ति पन्थ का पाया मारग । दादूराम मिल्या गुरु तारग ॥
पीये प्रेम पियाला पीया । गोरख जोगी दर्शण दीया ॥ ८४ ॥
जो गोरख जोगी तुम आदू । उरभीतर में है गुरु दादू ॥
लालदास लागा गुरु घाटी । फीन्ही दूर भर्म की टाटी ॥ ८५ ॥
नान्हूराम निकेवल लीया । जन गोपाल जानि जग जीया ॥
दासप्रयाग परम पद पाया । जैमलदास नितो नित ध्याया ॥ ८६ ॥
घडसी टीलमदास फकीरा । सन्तदास मिलिया सुखसीरा ॥
बखना बार्जीदा हरिदासा । सदने राम भज्या इक सासा ॥ ८७ ॥
शोभाराम रामगुण गाया । हरिव्यासी हरि माहिं समाया ॥
परशुराम राम मतवारा । सब सन्ताँ से मिलिया प्यारा ॥ ८८ ॥
ततवेता निज तत्व पिछाना । घमडीराम राम कू जाना ॥
वीरम त्यागी तन मन त्याग्या । राम राम भजिया गुरु आज्ञा ॥ ८९ ॥
हरदासी हरि से हित लाया । रामनाम कौं निशिदिन ध्याया ॥
खोजी खोज पकडिया सैंठा । सब सन्ताँ माहीं मिलि बैठा ॥ ९० ॥
केवल चूया ब्रह्म विलासी । उलटा अलख मिल्या अविनासी ॥
खेमदास की आशा पूरी । निशिदिन राचा राम हजूरी ॥ ९१ ॥
शंकर स्वामी सुमरण कीया । अजपाजाप रामरस पीया ॥
गोपीचन्द भरतरी पूरा । अनहद अखड बजाया तूरा ॥ ९२ ॥
गोरखनाथ मछन्दर जोगी । रग रग भेद लिया रस भोगी ॥
कोटि निमाणू राजाहूआ । गाया राम अगम घर छूआ ॥ ९३ ॥
हरीदास पूरा गुरु पाया । नाम निरंजन पंथ चढाया ॥
बारह शिष्य मिले सुखमाँई । पाटू माता चेली थाई ॥ ९४ ॥
द्वादश पन्थ सन्त बड भागी । छाप निरंजन माया त्यागी ॥
भजन त्यागि निरंजन ध्याए । तातें निरँजन पन्थ कहाए ॥ ९५ ॥

जगजीवन तुरसी अरु सेवा । रामरसायन पीया मेवा ॥
भुवन मेव भक्तीका पाया । खाँडै खेरतणे लोह वाया ॥ ९६ ॥
राजा जसू जुक्तिकरि जाना । ब्रह्म चीन्ह निज तत्त्व पिछाना ॥
जगतसिंह की प्रीति पियारी । राव पलटि चरणाँ मति धारी ॥ ९७ ॥
देवे पंडे प्रीति लगाई । पत्थर मूरति मूँछ अणाई ॥
गूदड़ रूप होय हरि आया । सन्तदास सँत दरशण पाया ॥ ९८ ॥
किरपा करी नाम निज दीया । सास उसास एक ध्वनि लीया ॥
सन्तदास मिलिया सुख माँई । तिरबेनी चढि ध्यान लगाई ॥ ९९ ॥
अनुभव शब्द सन्त बहु बोल्या । भक्ति पन्थका पड़दा खोल्या ॥
गांव दांतड़े का सँत वासी । चारों कोंट भक्ति परकासी ॥ १०० ॥
बालकदास रामका प्यारा । प्रेम परम तत किया पसारा ॥
गिरधरदास रु खेमकुमारी । परमानन्द लगाई यारी ॥ १०१ ॥
जाहर जोगी जगमें जीता । शूरवीर सँत भया विदीता ॥
दरियासा दिल माँही दरसा । उलटा मिल्या अगम घर परसा ॥ १०२ ॥
सहज समाधी सन्त कहाया । प्रेम पियाला भरि भरि पाया ॥
किसनदास कामकों मेट्या । उलटा चढ्या अगम घर भेट्या ॥ १०३ ॥
नाद बिन्द में सन्त जु सूरा । दशमद्वार निज परसत नूरा ॥
सुखरामा सतशब्द सँभाया । मनकों ले खुरसाण चढाया ॥ १०४ ॥
कर्म काटि सब काने कीया । दीठा जाय अगम का दीया ॥
नानकदास नाम निज पाया । श्वासोच्छ्वास नितो नित ध्याया ॥१०५॥
पूरणदास प्रेमरस पीया । सतगुरु संग मिल जुग जुग जीया ॥
मोहनदास मिल्या सुख मॉई । तिरबेनी चढि ध्यान लगाई ॥ १०६ ॥
सेवादास मिल्या सुख माँई । वैकुंठॉ चढि नौबत बाई ॥
सदाराम शून्यका वासी । परम ज्योति सहजाँ परकासी ॥ १०७ ॥
घमडीराम घमड में रत्ता । रोम रोम में लागा तत्ता ॥
चरणदास चरणाँ चित लाया । सतगुरु सेती प्रेम मिलाया ॥ १०८ ॥
जैरामा जन मिलिया जाहीं । काल जाल जमका डर नाहीं ॥
खेतादास खरा हुइ लागा । उलटा मिल्या अगम घर आगा ॥ १०९ ॥
हेमदास हरिका हित कारी । सत्त शब्दसे प्रीति पियारी ॥
हरीदास सन्त जु बडभागी । उलटी सुरति निरन्तर लागी ॥ ११० ॥
साँवलदास मिल्या सुखमांई । पारब्रह्म परमानॅद पाई ॥
दास पॅचायन परिपक हूआ । हदकों त्यागि बेहदकों चूआ ॥ १११ ॥
टीलमदास रामका प्यारा । रोम रोम विच लीया झारा ॥
पच्छिम दिसा मुसाफिर आए । जैमलदास भणत बतलाए ॥ ११२

तासेती जैमल जल पाया । जब बालक कों संग बुलाया ॥
सुण रे बालक बात हमारी । तोकों दागूँ गुरु हदारी ॥ ११३ ॥
गेलमें गुरुज्ञान सुणाया । योग सहित निज नाम बताया ॥
जैमलदास जानि जुग जीया । आतम राम रसायन पीया ॥ ११४ ॥
पँचग्राहीके महन्त कहाये । सब सन्तन में सहज समाये ॥
ब्रह्मध्यान सुणियो सुधि पाई । एको नाम सत्य है भाई ॥ ११५ ॥
जबतें रसना राम धियाया । कण्ठकमल में प्रेम मिलाया ॥
हृदयकमल चमत्कार सुणीजे । चाली सुरति सतगुरू कीजे ॥ ११६ ॥
जैमलदास सतगुरु पाया । जद मनवा मेरा पतियाया ॥
हरिरामा हरि का हितकारी । सहज समाधि बनी अति भारी ॥ ११७ ॥
ब्रह्म विलासी हरिजन सूरा । शिष शाखा मिल हुआ पूरा ॥
सत्य शब्द ले किया पसारा । सप्तद्वीप नव खण्ड निस्तारा ॥ ११८ ॥
निज नाम की नाव चलाई । तारक मन्त्र भक्ति अति भाई ॥
चाँपाँ माता चित करि पीया । उलटे आइ अगम सुख लीया ॥ ११९ ॥
रोम रोम महुआँ लिव लागी । दास निहारि मिले वडभागी ॥
रखियाँबाई रामपियारी । अनहद अखण्ड लगाई तारी ॥ १२० ॥
दासनरायण अमी पियाया । आदूराम रामगुण गाया ॥
लक्ष्मणदास राम लिव लागी । ज्ञान विचार भए वैरागी ॥ १२१ ॥
दईदास गुरुज्ञान समाया । मनसें ले गुरुचरण चढाया ॥
सब सिक्खाँ सपति सुखदाई । सतगुरु सेती प्रीति लगाई ॥ १२२ ॥
गाम सींहथल सतगुरु मिलिया । रामदासका अन्तर भिलिया ॥
सतगुरु ब्रह्म एक है साधो । रामनाम निशिदिन आराधो ॥ १२३ ॥
रामदास सन्ता शरणाई । भक्तमाल ले शीश चढाई ॥
भक्तमाल भगवद् मन भाई । अनँत कोटि मिलिया इन माँई ॥ १२४ ॥

साखी ।

रामदास रंग से मिल्या, सुन्दर सुख के माहिं ।
सहुरु है हरिरामजी, (चाँपा) माता सहज समाहिं ॥ १ ॥
सहज मिल्या गुरु घाटमें, सुखसागरकी तीर ।
सब सन्तनमें मिल रह्या, चुग्या नाम निज हीर ॥ २ ॥

छन्द अर्धभुजंगी ।

हँसै हीर पाया निर्तो सहज ध्याया ।
गहो कण्ठ लागी चली धुन्न आगी ॥ १ ॥
हृदै जाय हिलिया मनो देव मिलिया ।
लगी प्रीति प्यारी चलै गंग भारी ॥ २ ॥

विना मात पित्ता इक्को राम राया।
अनँत कोटि साधू सबे माहिं आया ॥ २० ॥
कह्यो बात ऐसी सुणो पुरुष नारी।
सहजे मिलाय हुआ ब्रह्मचारी ॥ २१ ॥
अनँत कोटि साधू सबे माहिं आई।
इक्को नाम निज निकेवल्ल ध्याई ॥ २२ ॥

साखी।

अनँत कोटि नर उद्धरे, रामनाम लिव लाइ।
भक्त पदीमें रामदास, सहजाँ रहे समाइ ॥ १ ॥
ॐकार ते ऊपना, दृष्टि कोट आकार।
वाके ऊपर रामदास, ररकार ततसार ॥ २ ॥
ॐकार उत्पत्ति भई, धर अबर कैलास।
वाके ऊपर रामदास, अलख पुरुषका वास ॥ ३ ॥
अधर अखंडी अलप है, रूप रेख नहिं रंग।
रामदास जहाँ मिल रह्या, सतगुरु हदे संग ॥ ४ ॥
अजब झरोखे अगमके, निरख ब्रह्मका वास।
ॐकार अजपा नहीं, नाद बिन्द नहिं सास ॥ ५ ॥
चन्द सूर नहिं सचरे, पाणी पवन न जाहिं।
धर अंबर भी घहँ नही, रामा जिस घर माहिं ॥ ६ ॥

॥ इति श्रीभक्तमाल सम्पूर्णम् ॥

अथ ब्रह्मजिज्ञासा।

चौपाई।

शब्द बाण सतगुरुका भाई। मन कू बींध लिया छिन माँई।
मन बींधाँ पाँचूँ बींधाँणाँ। पचीसामें उलट समाणाँ ॥ १ ॥
ज्ञान पाय अज्ञान मिटाये। दुर्मति दुविधा दूरि गमाए ॥
काम क्रोध मारे अहँकारा। राम राम रसना रट प्यारा ॥ २ ॥
शील सतोष सहजमें आया। मान गुमान अमान गमाया ॥
शंका भूल भरम सब भागा। कटिया काम ध्यान उर लागा ॥३॥
शब्द किया घट माहिं पसारा। रोम रोम लगिया ररँकारा ॥
तीनों कोट किया चकचूरा। चोथे जाय मड्या सँतसूरा ॥ ४ ॥
एकल मल्ल ममगज जूझे। चवदे क्रोड़ जमपुरी धूजे ॥
रसना हृदय नाभि लिव लागी। रोम रोम चेतन हुइ जागी ॥५॥

सप्त पयाल छेद छिन माँई । पातालाँ सुख सीर हलाई ॥
मूल उलट औघट्टे आया । गुदा छेद पीठ वँध लाया ॥ ६ ॥
पूरव पलट पछिम दिशि लागा । चढिया शब्द मेरु हुय आगा ॥
मेरु दंड हुय चढ्या अकाशा । सहज किया तिरवेणीवासा ॥७॥
अधःऊर्ध्व विच खेल मँडाया । विना पंख इक पँखि उडाया ॥
वंकनाल वहै अमृत धारा । पी पी संत भया मतवारा ॥ ८ ॥
माया मूल उलट घर आए । ररँकारसूं ध्यान लगाए ॥
ररंकारकी अमृत सीरा । पीवैगा कोइ संत सधीरा ॥ ९ ॥
माला एक फिरै तन माँई । आकाशाँ लिव ध्यान लगाई ॥
रोम रोम विच अणरट लागी । संधि संधि महँ जीव स जागी॥१०॥
नाभि नैण विच झिलमिलजोती । सुखमण घाट चुगै हंस मोती ॥
सुखमण सीर चहूं दिशि छूटै । रोम रोम अमृत रस फूटै ॥ ११ ॥
धर अंवर विच अरट चलाया । उलटा नीर अकाशाँ आया ॥
जहँ सुख सागर सहज भराया । रोम रोम सींची सव काया ॥१२॥
उलटी गंग अपूठी वाली । फूल्यो वाग वनी हरियाली ॥
धरती माहीं वीज वुहाया । आकाशां फल फूल लगाया ॥ १३ ॥
तीन लोकमें नाल पसारा । वेल किया वहुता विस्तारा ॥
मनसा चाल अगम घर आई । जहँ निज मनवा रह्या समाई ॥१४॥
उलटी सुरत मिली आकाशा । जहँ देख्या एको सुख रासा ॥
तेज पुंज जहँ अपरम नूरा । सहस्रकला ले ऊगा सूरा ॥ १५ ॥
चंद विहूणा देख्या चंदा । जहँ पहुंच्या निर्भय हुइ वंदा ॥
अगम महलमें दीपक वाला । तीन लोक में भया उजाला ॥ १६ ॥
दसवैं जाय परसिया देवा । जहँ मन सहज करत है सेवा ॥
प्रेमहि पाती फूल चढ़ावै । भावहि भोजन भोग लगावै ॥ १७ ॥
प्रेम पलीतो प्रेम हि लावै । प्रेमहि झालर ताल वजावै ॥
प्रेम आरती प्रेमहि गावै । प्रेमहि शुनमें ध्यान लगावै ॥ १८ ॥
घंट घूघरा घमक वजावै । राग छतीसों मंगल गावै ॥
पांच पचीसों रास मंडाई । पडै नगारै नोवत घाई ॥ १९ ॥
वाजै ढोल ढमढमै ढाई । भेर भूंगला शब्द सुणाई ॥
तार तंदूर जंत्र इक डंका । वाजत वरघू हू हू वंका ॥ २० ॥
सुनकै मांही शंख वजाए । श्रवणां मुरली टेर सुणाए ॥
अंवर गाज करै घनघोरा । कोयल वोलै पपिहा मोरा ॥ २१ ॥
वारहमास वहुत झड़ लाये । नदीनाल सव खाल चलाये ॥
धुनकी ध्वजा नेज फहराया । गढजीता नीसाण घुराया ॥ २२ ॥

चवदै लोक ऊपरै राजा । जिनकै बजै अनाहद बाजा ॥
देव दुनी सब दरशण आये । नमन करै बहु शीस निवाये ॥ २३ ॥
च्यार कोंट को हासल आवै । सतगुरु आगे आण चढावै ॥
सँत का राज अदल गढ़ माहीं । परजा सुखी सरव सुख पाहीं ॥२४॥
चेतन चोकीदार दिराया । नाहर चोर सब पकड मँगाया ॥
तख्त बैस अरु हुक्म हलावै । सिंह बकरी सब सग चरावै ॥ २५ ॥
रोमरोममें राम दुहाई । सत करै निभय पतसाइ ॥
सुरत सुदरी सझ सिणगारा । चाली महल पीव बहु प्यारा ॥२६॥
सुपमण सेझ पिया सग खेले । पलक पक पीव नहिं मेलै ॥
पूरण वर पाया अविनासी । पाच पचीसों करत खवासी ॥ २७ ॥
सुरत शब्द शून्य में लोटै । ऋद्धि सिद्धि दोउँ पाँव पलोटै ॥
राजपाट पाया पट राणी । वरमिलिया है सारग पाणी ॥ २८ ॥
जाकै रूप रग नहिं रेखा । गृह नहिं त्याग नहीं कोइ भेखा ॥
ना कोइ पिता मात नहिं जाया । ना ऊ किम की कूखन आया ॥२९॥
देखा पक शून्यमें रूँखा । पेड न डाल न लील न सूखा ॥
फल नहिं फूल पान नहिं पाती । आपो आपहि अमर अजाती ॥३०॥
जीव न जिंद न करम न काया । नों कोइ मान मोह नहिं माया ॥
धर अवर नहिं तेज न तारा । मेघ न बरपा इद्र न वारा ॥ ३१ ॥
पवन न पाणी चद्र न सूरा । घाज न बाजे ना कोइ तूरा ॥
एको ब्रह्म और नहिं काँई । ररकार सो सत है सॉई ॥ ३२ ॥
ररकार देवन का देवा । जिनका लहै और नहिं मेवा ॥
ररकार है प्राण अधारा । जाकू लखे सत जन प्यारा ॥ ३३ ॥
ररकार सत शब्द हमारा । अनत कोटि भव उतरे पारा ॥
ररकार गुरुदेव बताया । रामनाम हम निशिदिन ध्याया ॥ ३४ ॥
हरिरामदास है गुरू हमारा । ज्ञान ध्यान बहु अगम अपारा ॥
ब्रह्म जिज्ञास ग्रथ इम भाखू । उरमें गुरू सीस सत राखू ॥ ३५ ॥
रामदास सतगुरु का चेरा । सतहै साहिब सिरपर मेरा ॥
रामदास सतनका दासा । जुग जुग राम तुम्हारी आसा ॥ ३६ ॥

साखी ।

रामदास की वीनती, सामलिये गुरदेव ।
और कछू माँगूनहीं, जुग जुग तुम्हरी सेव ॥ १ ॥
रामदासकी वीनती, सामलिये गुरु दाल ।
रामनाम सुमराइये, मेटो विपय जजाल ॥ २ ॥

इति ।

रेखता ।

(१)

गुरू परताप तें राम हम पाविया । गुरू परताप तें भर्म भागा ।
गुरू परताप तें काल दूरै गया । गुरू परताप तें रटण लागा ॥
गुरू परताप तें कंठ परकासिया । गुरू परताप तें जीव जागा ।
गुरू परताप तें चाल हिरदै गया । गुरू परताप तें ध्यान लागा ॥
गुरू परताप तें नाभिमें संचऱ्या । गुरू परताप अजपाजु होई ।
गुरू परताप तें उलट ऊँचा चढ्या । गुरू परताप तें अगम जोई ॥
गुरू परताप तें वंक नाली वहै । गुरू परताप तें मेरु आया ।
गुरू परताप आकासमें रम रह्या । गुरू परताप ब्रह्मांड छाया ॥
गुरू परताप तें तीन धारा मिली । गुरू परताप असनान होई ।
गुरू परताप तें गंग जमुना वहै । गुरू परताप सव कर्म खोई ॥
गुरू परताप तें जोति सूं मिलगया । गुरू परताप जम हाथ जोड़ै ।
गुरू परताप रिधि सिद्धि दासी भई । गुरू परताप चढज्ञान घोड़ै ॥
गुरू परताप तें अखंड नोवत वजै । गुरू परताप तिहुं लोक जीता ।
गुरू परताप तें राज निर्भै भया । गुरू परताप सवमें वदीता ॥
गुरू परताप तें जगत चरणाँ पड़ै । गुरू परताप सुर असुर वंदै ।
गुरू परताप की संत महिमा करै । गुरू परताप सव वात खंदै ॥
गुरू परताप की कहा महिमा कहूँ । गुरू परताप तें ब्रह्म हूवा ।
गुरू परताप तें रामिया राम मिल । गुरू परताप तें नाहिं जूवा ॥ १ ॥

(२)

प्रथम मुख द्वार हम सार सुमरण किया । आठ ही प्रहर हरि नाम ध्याया ।
दूसरै कंठ में प्रेम परकासिया । गला में गदगदी स्वाद आया ॥
तीसरै हृदामें जाय वासा किया । मन्त्रहीमन्त्र मिल झीण गाया ।
वाज मुरली सुणी जोर नीकाँ गुणी । संतकूं वहुत इतवार आया ॥
चतुर्थं नाभिमें शब्द परकासिया । भँवर गुँजार होय एक वाजा ।
छेद पाताल अरु उलट पश्चिम दिसा । देखिया गैवका अगम छाजा ॥
उलँघिया मेरु आकाशमें घर किया । सहज वरषा वणी एक धारा ।
इला अरु पिंगला सुषम गंगा चलै । पीवता वन्न नखसिक्ख सारा ॥
गगन अंवू गजै अनँत वाजा वजै । धिन्न अव धिन्न सँत भागतेरा ।
सद्गुरु महरतें दास रामा कहै । जन्म अरु मरण भव मिट्याफेरा ॥ २ ॥

(३)

राम ही आदि अरु अंत मध राम है । राम ही घरे अरु माहिं वारै ।
रोम ही रोममें राम ही रम रह्या । राम ही राम मिल मुक्ति द्वारै ॥

राम ही जगत अरु मेरु षट्दर्शणी । राम ही ग्रह्व अरु त्याग माहीं ।
राम ही जप्प अरु तप्प तीरथ सबे । राम ही राम बिन और नाहीं ॥
सप्त ही द्वीप नव खंड में राम है । राम ही देश परदेश रमता ।
हद बेहद में एक ही राम है । राम ही रहत परगट्ट गुप्ता ॥
राम ही तेज अरु पुञ्ज सो देवता । राम आकार निरकार न्यारा ।
राम ही दृष्टि अरु मुष्ट सो राम है । राम ही देख अदेख प्यारा ॥
राम ही जल जीवादि अरु पवन है । राम ही चंद अरु सूर तारा ।
राम ही केतु अरु राहु साढ़ासती । राम ही राम सो सप्त वारा ॥
राम ही मात अरु तात बांधव सबै । राम ही नारि अरु पुरुष होई ।
राम ही राम तिहुँ लोक में रम रह्या । राम बिन और दूजा न कोई ॥
राम ही स्वर्ग पाताल भूलोकमें । राम ही धरणि अरु राम गगना ।
रामिया एक ही राम सू मिल रह्या । राम ही राम कछु नाहिं विघना ॥३॥

(४)

शहर बाज़ार का खेल आछा मँड्या । आपका आप साथी बुलाया ।
हम्म भी सर्ने के बीचमें खेलते । गुरापै जाय सत शब्द लाया ॥
राम रसना कह्या चाल हिरदै गया । पिंड भारी भया पाँव थके ।
दृष्टि कर देखियो मग्न चाले नहीं । जाय अब खेल कुण खाय धके ॥
और ही खेलता राम कूँ रटत है । थके सो थके हम पार बैठे ।
सुरत सो उलटि सुन सिखर मैं संचरी । गुरू के घाट में जाय पैठे ॥
सत ही शुद्धि सू सोहं सोहीं करै । एक ही पेड सू ध्यान लावै ।
सुरत उलटाय अरु अगम ऊँचा चढ़्या । रामिया राम नीसाण बावै ॥४॥

इति ।

अथ हरिजस लिख्यते ।

राग बिलावल ।

पद १

जाग जाग रे जोगिया, क्यों नहिं नगर जगावै ।
आठ प्रहर जागत रहो, सुन शहर बसावै ॥ टेक ।
मुख सेती सुमरण किया, कंठ में चल आया ।
गद गद लहरा सुषम की, सूता जीव जगाया ॥ १ ॥
हिरदै में हरि आनिया, चेतन तन सारा ।
शुद्धि कमल परकासिया, जग सेती न्यारा ॥ २ ॥
नाभि कमलमें सत जन, सहजाँ चल आया ।
नाद अनाहद सभल्या, सुख रास मँडाया ॥ ३ ॥

स्वर्ग मृत्यु पाताल में, एको धुन होई।
तीन लोक चेतन भया, जाग्या सब कोई ॥ ४ ॥
उलट पयाल आकासमें, चढ उलंघे मेरा।
इला पिंगला सुषमणा, तिरवेणी डेरा ॥ ५ ॥
त्रिकुटी सूं आगे गया, सुन माहिं समाया।
सुख समाधि सहजाँ लगी, निरभै पद पाया ॥ ६ ॥
मन पवनां पहुँचे नहीं, बुधि जाण न पावे।
रामदास धिन संतजन, ता घर लिव लावे ॥ ७ ॥

पद २

राम सुमर रे प्राणिया। भूले मत भाई।
सुमरण विन छूटै नहीं। जम द्वारै जाई ॥ टेक
सब दुनियाँ भरमी फिरै। तीरथ अरु वरता।
जैसा पाणी ओसका। कोइ काज न सरता ॥ १ ॥
तपसी त्यागी मुनीश्वरा। पढिया अरु पंडिता।
नाम विना खाली रह्या। सिध उडता अरु गडता ॥ २ ॥
क्या आचार विचार है। क्या साधन सेवा।
सतगुरु विन पावे नहीं। आतम निज देवा ॥ ३ ॥
जगत भेख एको मता। एकै दिस जावै।
तत्त नाम जाणे नहीं। फिर गोता खावै ॥ ४ ॥
साधु संगति निशि दिन करै। एक राम धियावै।
रामदास धिन संतजन। निरभै पद पावै ॥ ५ ॥

रागसोरठ।

पद ३

मनरे करो गुरां की सेव। उलटि परसो देव ॥ टेक।
अज्ञानमें मद मोह माता। नामसूं नहिं नेह।
संतका सत संग विन। होयगा सब खेह ॥ १ ॥
साधु सब ही वंस मेलै, कुवँस मूरख जाय।
औघट घाटी लूटसी, सर्व कूं जम खाय ॥ २ ॥
वेद वावर मँडी आडी, हाक तीनों देव।
पारधी जम काल लूटै, आन फररा खेव ॥ ३ ॥
तोड़ वावर ढाहि फररा, दोड़ बाहिर आय।
रामिया गुर ज्ञान लाया, उलट सहज समाय ॥ ४ ॥

पद ४

मनरा तीरथ न्हायले, क्या भटकणसू काम ।
अठसठ तीरथ सब क्रिया, पर कह्या मुख राम ॥ टेक ।
मन माहीं मथुरा बसै, दिलहि द्वारका जान ।
काया काशी न्हायले, आठों पहर सिनान ॥ १ ॥
वारै सोलै सहेलडी, मिलकर न्हावण जाय ।
तिरवेणीरे घाटमें, नित्य स्नान कराय ॥ २ ॥
पाँचों पाजर पहरके, चढे पचीसू लार ।
नोवत वाजे गैबकी, मारलियो अहँकार ॥ ३ ॥
हद छॅडी वेहद गया, अगम रह्या लिव लाय ।
जीव सीव मेला भया, सुखमें रह्या समाय ॥ ४ ॥
दसवें देवल परसिया, जागी अदर ज्योति ।
रामदास जहाँ रमरह्या, पाप पुण्य नहिं छोति ॥ ५ ॥

पद ५

चालो मन उणदेस में । जहाँ सता का वास ।
जहाँ पहुच्याँ निरमय हुवै । लगै न जमकी त्रास ॥ टेक ।
पूरव दिशिसू चालिया । कठ किया परकास ।
उर भीतर वासा लिया । मगन भया निजदास ॥ १ ॥
अध कमल परकासिया । खुली वक की बाट ।
वकनाल हुइ चालिया । चल्या पछिमके घाट ॥ २ ॥
मेरुदड उलधिया । ऊर्ध्व कमल परकास ।
चँदसूर मेला भया । गगन किया जाय वास ॥ ३ ॥
पाँच पचीसों एक हुय । मिल्या त्रिकुटी माँय ।
अनहद वाजा घुर रह्या । हस मिल्या जहँ जाय ॥ ४ ॥
हस मिल्या परहसमें । लागी शून्य समाधि ।
रामदास निर्भय भया । मिल्या पूर घर आदि ॥ ५ ॥

पद ६

चलो सताँ जहा जाइये । गुरु गोविंदके पास ।
दरशनसू सब दुख मिटे । हिरदे भक्ति प्रकास ॥ टेक
श्रवणाँ सुणिया सतगुरू । मनमें उठ्या हुलास ।
सुणत समय पैंडे चल्या । अति दरशन की प्यास ॥ १ ॥
दरशनसू दुविधा मिटे । नैणा बँध्या सनेह ।
रोम रोम आनँद भया । दूर्यों बूठा मेह ॥ २ ॥

पद ४

मनरा तीरथ न्हायले, क्या भटकणसूं काम ।
अठसठ तीरथ सब किया, एक कह्या मुख राम ॥ टेक ।
मन माहीं मथुरा बसै, दिलहि द्वारका जान ।
काया काशी न्हायले, आठा पहर सिनान ॥ १ ॥
थारे सोले सहेल्डी, मिलकर न्हावण जाय ।
तिरवेणीके घाटमें, नित स्नान कराय ॥ २ ॥
पाँचों पाखर पहरके, चढ़े पचीसू लार ।
नोबत बाजे गैबकी, मारलियो अहंकार ॥ ३ ॥
हद छॅडी बेहद गया, अगम रह्या लिव लाय ।
जीव सीव मेला भया, सुखमें रह्या समाय ॥ ४ ॥
दसवें देवल परसिया, जागी अदर ज्योति ।
रामदास जहाँ रमरह्या, पाप पुण्य नहिं छोति ॥ ५ ॥

पद ५

चालो मन उणदेस में । जहाँ सता का वास ।
जहाँ पहुच्याँ निरभय हुवै । लगे न जमकी त्रास ॥ टेक ।
पूरब दिशिसूं चालिया । कठ किया परकास ।
उर भीतर वासा लिया । मगन भया निजदास ॥ १ ॥
अध कमल परकासिया । खुली चक की वाट ।
बकनाल हुइ चालिया । बस्या पछिमके घाट ॥ २ ॥
मेरुदड उलघिया । ऊर्ध्व कमल परकास ।
चँदसूर मेला भया । गगन किया जाय वास ॥ ३ ॥
पाँच पचीसों एक हुय । मिल्या त्रिकुटी माँय ।
अनहद बाजा घुर रह्या । हस मिल्या जहँ जाय ॥ ४ ॥
हस मिल्या परहसमें । लागी शून्य समाधि ।
रामदास निभय भया । मिल्या पूव घर आदि ॥ ५ ॥

पद ६

चलो सताँ जहा जाइये । गुरु गोविंदके पास ।
दरशनसूं सब दुख मिटै । हिरदै भक्ति प्रकास ॥ टेक
श्रवणाँ सुणिया सतगुरू । मनमें उठ्या हुलास ।
सुणत समय पैंडे चल्या । अति दर्शन की प्यास ॥ १ ॥
दुविधा मिटै । नैणा बँध्या सनेह ।
रोम आनँद भया । दूधाँ वूठा मेह ॥ २ ॥

परदक्षिणा दंडोत कर। चरण निवाये शीस।
किरपा कर गुरु देवजी। नाम किया वकुशीस ॥ ३ ॥
मुखसेती सुमरण किया। कंठ जगाया जीव।
हिरदै हिल मिल होत हैं। नाभि पधारे पीव ॥ ४ ॥
सप्त पयाल हि छेद कै। उलट पछिम के देश।
अधःऊर्ध्व परकासिया। अगम किया परवेस ॥ ५ ॥
अगम देशमें रम रह्या। गगन रह्या गरणाय।
त्रिवेणीके तख्त पर। हंस विराज्या जाय ॥ ६ ॥
गढ चढिया नौबत घुरी। थप्या ब्रह्म का राज।
तिहूं लोक कायम किया। मिल्या राममहाराज ॥ ७ ॥
दसवें देवल परसिया। अरस परस दीदार।
सुरत मिली जाय ब्रह्म सूं। ब्रह्म आप निरकार ॥ ८ ॥
तज आकार निरकार मिल। राम निरंजण राय।
रामदास केवल मिल्या। सुखमें रह्या समाय ॥ ९ ॥

राग सारंग।

पद ७

संतों संचय करो हरि नामको।
इण संचयसूं बहुत सुख पावै आदि अंत यो काम को ॥ टेक
दुनिया संचै गर्थ भंडारा सोना रूपा दाम रे।
संचो रह्यो धूलके माहीं जीव गयो वेकाम रे ॥ १ ॥
जगत भेख मायाके कारण पच्च मरै दिन रात रे।
अंतवेर नागा हुय चालै ना कोई संग न साथ रे ॥ २ ॥
दुनियाँ करै आनकी सेवा दस दिन सरसा थाय रे।
अंतकाल आडा नहि आवै जम्म पकड़ लेजाय रे ॥ ३ ॥
सांख्य जोग नवधा अरु तिरगुण स्वर्ग लोक लग जाय रे।
यासूं नहीं ब्रह्म सूं मेला जन्म धरै धर आय रे ॥ ४ ॥
जोग जग्य जप तप व्रत दाना ये सब फूल कहाय रे।
फूल देख दुनियाँ लोभाणी अंतकाल कमलाय रे ॥ ५ ॥
नाम विना सब संचय झूठा फास फूस होय जाय रे।
रामदास इक राम रटीजै अमर लोक लेजाय रे ॥ ६ ॥

पद ८

संतो सुणो संचयरो विवेक रे।
इण संचयसूं अनेक उधरिया पाया पुरुष अलेखरे। टेक

ब्रह्मा विष्णु शेष अरु शम्भु रहे राम लिव लाय रे।
सकल मंड का करता कहिये ज्यों यो सचो पाय रे ॥ १ ॥
गोपीचंद भरथरी सच्यो सच्यो गोरखनाथ रे।
नव नाथों के योही सचय मिल्या निरंजन नाथ रे ॥ २ ॥
चौवीस तिथंकरॉ योही सचो केवल मिलिया जाय रे।
बहुरि जन्म धरणि नहिं आया सुखमें जाय समाय रे ॥ ३ ॥
सनकादिक अरु सत ऋपीश्वर नवयोगेश्वर पाय रे।
जनक विदेह अरु ध्रुव प्रह्लादा रह्या अटलमठ छाय रे ॥ ४ ॥
पांडव हरिचंद बली विभीपण निहचे राज कमाय रे।
शुकदेव व्यास परीक्षत राजा मिल्या मुक्तिम जाय रे ॥ ५ ॥
राज करतॉ अनेक उधरिया सुणी गुरा की सीख रे।
दुर्वासा ऋषि उलट मिलाया भक्त हेत अवरीप रे ॥ ६ ॥
वाल्मीकि अरु गनिका शवरी रका वका दास रे।
झीवर कुडुव सहेता तान्या राखलिया हरि पास रे ॥ ७ ॥
नामदेव अरु रामानंदा पीपा धना कवीर रे।
सेना सदना अरु रैदासा मिलिया सुख की सीर रे ॥ ८ ॥
दादू जाय दीनसू मिलिया सिख साखा वहु लारै रे।
नानग हरीदास ततवेत्ता परसा खोजी पार रे ॥ ९ ॥
दास मुरारि मलूका ज्ञानी सतदास दरियाव रे।
किसनदास सुखरामा नानग मिल्या ब्रह्म के भाव रे ॥ १० ॥
अनँत कोटि साधू जन पहुँता जाका अंत न पार रे।
केता पतित पारगत हूवा मिल्या मुक्तिके द्वार रे ॥ ११ ॥
जन हरिराम चरण हम लागा सब संतन का दास रे।
रामदास गुरु गोविंद शरणै पूरी मनकी आस रे ॥ १२ ॥

राग कानडो।

पद ९

राम सरीसा और न कोई। जिन सुमर्‍यां सुख पावै सोई। टेक
राम नामसू अनेक उधरिया। अनँत कोटि का कारज सरिया ॥ १ ॥
जो हरि सेती लावै प्राता। राम नाम ताही का मीता ॥ २ ॥
राम नाम जिण ही जिण लीया। तिण तिण वास ब्रह्म में कीया ॥ ३ ॥
राम दास इकरामहि ध्याया। परम ज्योति के माहिं समाया ॥ ४ ॥

पद १०

ऐसी जड़ी मोहि सतगुरु दीनी। तन मन अप अंतरमें लीनी। टेक
श्रवणाँ सुणत बहुत सुख पाया। निरखत जड़ी नयन खुल आया ॥ १ ॥

रोम रोममें रम गयो, नाड नाड निज नाम।
सुदर सुख में पाविया, जहँ अजपा की धाम ॥ ३ ॥
पाँचों उलटा एक घर, पश्चिम दिशि की घाट।
सुदर सहजाँ सॉपड़े, तिरवेणीके घाट ॥ ४ ॥
ॐ नहीं अजपा नहीं, नहिं कहण सुनन की वात।
सुदर मिल्या समाधिमें, कर सतगुरुको साथ ॥ ५ ॥

॥ श्री ॥

अथ श्रीदयालुदासजीमहाराजकी फरमाईहुई अनुभवगिरा।



नमस्तुति।

नमो राम गुरुदेवजी, जन त्रिकालके वन्द।
विघ्न हरण मगल करण, रामदास आनन्द ॥ १ ॥

छप्पय छद।

नमो निरजन देव सेव किन पार न पायो।
अमित अथाह अतोल नमो अनमाप अजायो ॥
एक अखड अमड नमो अणभग अनादम्।
जगमें ज्योति उद्योत नमो निर्भेव सुखादम् ॥
नमो निरजन आपहो कारण करण अपार गत।
रामदास वदन करै नमो नूर भरपूर तत ॥ १ ॥
नमो राम रमतीत भज्या आनद स्वरूपम्।
करुणामय किरपाल प्रगट तत्काल अनूपम् ॥
सत परम विश्राम राम आधार सदाई।
सदा दयालु निहाल काल व्यापै न कदाई ॥
आप रूप जन उद्धरण भगतॉ विरद वधारणा।
रामदास वदन करै नमो परम गति धारणा ॥ २ ॥
नमो राम रमतीत प्रथम गुरुदेव दयालम्।
नमो साधु अनादि काल तीनों रिछपालम् ॥
आदि अत पुनि मध्य दुद भक्ति वधावत।
महिमा अमित अथाह पार वरणन किम पावत ॥

अथ गुरुस्तोत्र मन्त्र।

छप्पय।

राम संत गुरु साधु आदि परणाम सदाई।
नमस्कार दंडोत प्रेम भक्तों सुखदाई॥
मन वच सेवन पूज्य सदा चरणोंको चेरो।
रामस्नेही दास मानज्यो वदन मेरो॥
संध्या मध्य प्रभातलों सुमरों श्वास निकंदना।
चाल्याल शरणागती रामजनोंको वंदना॥ १॥
अष्टअंग दंडोत होत गति आनंद आतम।
पुनि सुपरिक्रमा भाव चाव गुरुगम परमातम॥
शीश नमाय लगाय गुरू पदपंकज परिमल।
बहुत भाँति संस्तुति जोरि जुग तन्नता निरमल॥
अष्टजाम पल पल महीं उदय कार संध्या सिंधर।
चाल्चालके उर बसो श्वास श्वास गुरुपद निवर॥ २॥
हरि सरवर जल भाव मीन शिख क्रीडा करहीं।
प्रेम उमंगा लेत हेत दूजा परहरहीं॥
मच्छ साँप भ्रम जाल कालसा कीर न खावत।
निर्भय नित्य निगज सुधा सुमरण रस पावत॥
त्रिविध जलण शीतल करण सुखसागरमें रमरह्या।
रामदास गुरु वंदना चालवाल शरणा लह्या॥ ३॥

---

१ नमस्कारमन्त्र—त्राहि मां पापिनं घोरं धर्माचारविवर्जितम्।
नमस्कारेण देवेश संसारार्णवपातकात्॥ १॥
२ दंडवतमन्त्र—अपराधसहस्रभाजनं पतितं भीमभवार्णवोदरे।
अगतिं शरणागतं हरे कृपया केवलमात्मसात् कुरु॥ १॥
दंडवत अधिकार—प्रणमेद्दण्डवद्भूमौ भक्तिप्रह्वेण चेतसा।
दशवारं जपेन्मन्त्रं तत स्तोत्रमुदीरयेत्॥ १२॥
(श्रीमद्भागवतस्कं० ६ अ० १९)
जपेदष्टोत्तरशतं स्तुवीत स्तुतिभिः प्रभुम्।
कृत्वा प्रदक्षिणां भूमौ प्रणमेद्दण्डवन्मुदा॥ ४२॥
(श्रीमद्भागवतस्कं० ८ अ० १६)
इस पुंसवन और पयोव्रतके प्रमाणसे स्त्रियोंकोभी दंडवतका अधिकार है।
३ प्रदक्षिणमन्त्र—यानि कानि च पापानि जन्मान्तरकृतानि च।
तानि तानि प्रणश्यन्ति प्रदक्षिणपदेपदे॥ ३॥

हरि गुरु संत अनंत कौन वरणत यह शाखा।
नाम तीन वपु एक जीभ नभ अक्षर भाखा।
भक्ति विलास प्रकाश दास हेतारथ कारण।
निर्गुण सहगुण रूप अंध अज्ञान विडारण॥
शब्द रूप परगट नमो निश्चल सद्गति सिद्ध गुर।
यह सुस्तोत्र हि मंत्रको दास शिरोमणि वास उर॥ ४॥

इति

धुरमेल।

हरिरामदास सतगुरु नमो रामनाम परताप सिध।
भरथखंड उद्योत देस वागड़ वलिजाऊँ।
सिंहथल शहर सुथान जहाँ नित शीसनमाऊँ॥
सव संतनको धाम राम भजि भया विख्याता।
भक्ति मुक्ति दातार ज्ञान अनुभवके दाता॥
रामदासके प्राणपति अटलवाच भगवान विध।
हरिरामदास सतगुरु नमो रामनाम परताप सिध॥ ५॥
हरियानंद आनंदघन भक्तिपुंज परगट भये।
शील साच संतोप दया धीरज गुनवंता।
प्रेम नेम निज भाव दिव्य दृष्टी बुधिवंता॥
ब्रह्मज्ञान सनकादि तत्त्ववेत्ता शिव सागर।
निरभै नाम प्रताप हंस परमहंस उजागर॥
भरम भूत अज्ञान निशि काल चोर दूरे गए।
हरियानंद आनंद घन भक्ति पुंज परगट भए॥ ६॥
अनुभव किरण प्रकाश बहु तरणि उदय ब्रह्म नभ जहाँ।
भक्तिहि मानसरोत रमे निश्चल मन विरती।
गुरु आज्ञा अनुसार एक रस निर्भय जुगती॥
कर्म केतु डर नाहिं जलद माया मिट जाना।
ज्ञान हृदय चख खुले स्वप्न जिव भूल मिटाना॥
निज स्वरूप निर्खत भए सिख सरोज फूले वहाँ।
अनुभव किरण प्रकाश बहु तरणि उदय ब्रह्म नभ जहाँ॥ ७॥
रामदासके मुकुट मणि नमो नमो हरिरामजी।
च्यार वरण आश्रम्म सर्वसूं निरपख न्यारा।
आशय अगम अगाध रामजन रामपियारा॥
घीका घी ज्यों भया छाछ मायासे न्यारा।
जग छोई ज्यों डारि सर्व रस परे पियारा॥

गुप्त भेद परगट करण आतमके विश्रामजी ।
रामदासके मुकुटमणि नमो नमो हरिरामजी ॥ ८ ॥

सिंहथलग्राममहिमावर्णनम् ।

हरि कन्या पुनि जन्म धुर, त अर्तं कविता खेत ।
हंस ताहि पुर वदना, श्वेत द्वीप साकेत ॥ १ ॥

धाममहिमावर्णनम् ।

मन गज मारण साधु सिंह, इद्रिय पशू अहार ।
हेमगिरी अस्थान जन, नवनिधि भक्ति प्रकार ॥ २ ॥
सो प्रथम भिन भिन कही, जन ही के परसाद ।
प्रेमलछन ऊमा जनम, परा शम्भु दोमाद ॥ ३ ॥

श्रीहरिरामदासजीमहाराजनाममहिमावर्णनम् ।

हरि पधार जिव अघ हन्या हरि गजराज सहाय ।
तार लियो भव सिंधुमें जन्मत मौसर पाय ॥ १ ॥
विघ्न हरण मगल करण जनकसुतापति नाम ।
जय जय मगल तासु पद कारनमो सर साम ॥ २ ॥
कलीकाल निशि घोरमें हरि हरि कियो प्रकास ।
सत त्रेता द्वापर जहाँ गुरु हरिरामादास ॥ ३ ॥

छप्पय ।

हरि भजत टरत सब फद द्वद उप्पाधि विनासत ।
हरि रटत हर न हुय जहर टेर मुख हरि ले निकासत ॥
हरि तत अति उज्वास ज्ञान परकास विज्ञानस ।
हरि सत कल पोडशा असुर सब मेट अज्ञानस ॥
हरिराम स्वामि समथ शरण हरण विघ्न अनेक अब ।
जनरामा उछरग अगम निगम साख भाखंत सब ॥ १ ॥

---

१ समुद्र । २ लक्ष्मी । ३ सीता । ४ प्रथमाक्षर (सी) । ५ (थ) । ६ पगल अत (ल) । ७ नाम (सीथल) । ८ हिमाचल । ९ स्थल । १० श्रीहरिरामानन्दजी महाराज । ११ प्रेमलक्षणाभक्ति । १२ उमा=पार्वती । १३ पराभक्ति । १४ जवाई । १५ हरि । १६ राम । १७ (श्रीहरिरामदासजी महाराज) । १८ नमस्कार । १९ मालिक । २० सूय । २१ उच्छ्रित=ऊँचा । २२ आगम=शास्त्र । २३ वेद और शास्त्र यही साक्षी देरहे हैं कि हरि नाम ऊँचा है ।

अष्टक ।

छंद त्रिभंगी ।

अपरम ब्रह्म आपं हणत न कापं मंत्र न जापं मिटतापं ।
परमं पद आपं निर्जन तापं मोल न मापं है आपं ॥
रूपं नहि तापं लिप्त न छापं आपो आपं अप्पारं ।
गुरू हमारं रत ररकारं निरकारं जिय निरकारम् ॥ १ ॥
पूरन ब्रह्म आदू सहज समादू मेट उपादू ब्रह्मनादू ।
अज्ञान मिटादू द्वंद हटादू तत्त्व मिलादू प्रमसादू ॥
दिपते जिमि दादू जोग जुगादू कौन बतादू सनकादू ।
गुरू हमारं रत ररकारं निरकारं जिय निरकारम् ॥ २ ॥
ब्रह्मा मुख बाणी सारंग पाणी तद्वत जाणी निरवाणी ।
तिरधा विति जाणी आतम प्राणी घट मध आणी दरसाणी ॥
ब्रह्म सुरत समाणी तहँ ठहराणी लिव्व लगाणी प्रमपारम् ।
गुरू हमारं रत ररकारं निरकारं जिय निरकारम् ॥ ३ ॥
परमं घर मायं उलट समायं सहज सुनायं थिरतायं ।
अचलाचलमायं रतररायं एककहायं उनमायम् ॥
तद्वत पद गायं चितवृतिनायं तीन नथायं इकथारं ।
गुरू हमारं रत ररकारं निरकारं जिय निरकारम् ॥ ४ ॥
अगम अपारू कौन विचारू गाय न पारू गुनधारू ।
सहजं ररकारू एक अधारू नमो सुखारू निजसारू ॥
अपरम विस्तारू संत मिलारू नाय मकारू ततसारं ।
गुरू हमारं रत ररकारं निरकारं जिय निरकारम् ॥ ५ ॥
तहँ लिवलायं एक समायं निरँजन रायं मुखगायं ।
प्राण प्रचायं चाह मिटायं द्वैत न थायं अखरायम् ॥
अधरं घरपायं स्थिरता सायं भय नहि लायं इकतारं
गुरू हमारं रत ररकारं निरकारं जिय निरकारम् ॥ ६ ॥
संतन सब गायं एक बतायं धिन सो ध्यायं पदपायं ।
उलट न आयं जुरा न खायं गर्भ न जायं मिटकायम् ॥
साहिब तुम सायं मिले वधायं धिन धिन थायं विस्तारं ।
गुरू हमारं रत ररकारं निरकारं जिय निरकारम् ॥ ७ ॥
एकं तज अष्टं मिटे दुखष्टं सोई स्पष्टं सब सष्टं ।
अष्टं पुनि इष्टं गावत नष्टं कहे घटतष्टं एकष्टम् ॥
वेदं पति स्प्टं सुरता चष्टं अंत एकष्टं सिधकारं ।
गुरू हमारं रत ररकारं निरकारं जिय निरकारम् ॥ ८ ॥

दोहा ।

नमो तारणा जन समय, परब्रह्म अखिल अनाद ।
यों समाधि मुरशिद मिले, पूरण अगम अगाद ॥ १ ॥
ज्वाला सुत नभ मध मिले, फेर न सूतर माय ।
यों हरिराम राम तत, उलट पलट नहिं थाय ॥ २ ॥

अथ उभयगुरुमहिमाअष्टक ।

छंद गीतक ।

नमो नित अवतार हरि जन नमो वार प्रतापयम् ।
सब हरण कलमष तरण तारण राम मंतर जापयम् ॥
जगजीवतारण दयाधारण दयापाल पधारयम् ।
धिन लोक चवदे माहिं उच्छव भक्ति विरद वधारयम् ॥ १ ॥
जुग सोइ धिन दिन साधुवपुधर समो ज्ञान प्रकाशयम् ।
पुरदत्त अनुभव गस्त आतम त्रिविध ताप विनासयम् ॥
धिन द्वीपजंबू खंडभरत करण कमज्या भूमयम् ।
उद्योत सिद्धत पथ हरिपुर मेट माया धूमयम् ॥ २ ॥
तहँ देश मारू मद्ध धिन धर गाम जहँ विश्रामयम् ।
धिन सदन हरिजन पतितपावन प्रगट रामसनामयम् ।
धिन वंश अदाज तातमात सप्त गोतजु उद्धरे ।
जन सकल पावन दरश थावन साधु गंगा अघ हरे ॥ ३ ॥
जन राम निर्मल दश उज्वल चरण घाट सरोरयम् ।
शिष हेत भावन उदय कारण मेटि पाप करोरयम् ॥
नित न्हाइ निर्मल साच आशा इष्ट मन वच धारयम् ।
चत वरण नर अरु नारि अलज परश सिद्धत पारयम् ॥ ४ ॥
वड भाग जाग समाज हरिजन काल जीव वँचावना ।
मिल अमरपद सिद्ध अगम आनँद राम अमृत पावना ॥
मिल सब तीरथ पुरी सातू धाम क्षेत्र अनंतयम् ।
सब ग्रंथ अर्थ तत्वसार मूलमंतर संतयम् ॥ ५ ॥
धिन मोक्षगामी राह अपवर्ग तुल न तोले जासकम् ।
चव ब्रह्म शेष उचार मुख सुख नित्य महिमादासरूम् ॥
हुलसाय सो मन नमो सतगुरु नाम हरियानंदयम् ।
सुस्थान सिंहथल प्रणम्य मन वच वारंवार सुवंदयम् ॥ ६ ॥
जनपद प्रसाद साधु आद नमो रामादासयम् ।
मो मुकुट मणि धिन करण कारण चरण शरण निवासयम् ॥

धिन भूमि जोजन पुर स्थानक साधु चरण सधारयम् ।
धिन राम म्होलो विराजतं नित राम ज्ञान उचारयम् ॥ ७ ॥
धिन दरश कर्ता विघ्न हर्ता दीनदाता आपयम् ।
भव भरम आन उपास खंडण एक आतम जापयम् ॥
परमात्मा परसाय सद्गुरु वार वार प्रणामयम् ।
जिव धालवालं कर निहालं रामदासं रामयम् ॥ ८ ॥

दोहा ।

राम नाम औपम सदा, तुलै न तोलै आन ।
रामदास पदकंज रज, धालवाल धर ध्यान ॥ १ ॥

अथ श्रीरामदासजीमहाराजमहिमावर्णनम् ।

धुरमेल ।

कलि कबीर पुनि प्रग्गटे रामदास महाराज धिन ।
भर्म कर्म भव भंज काज कारण जिवतारण ।
राम नाम उपदेश भक्ति केवल विस्तारण ॥
काजी पंडित भेख द्वैत पख झगरा मेट्या ।
आतम दृष्टि उद्योत परम परमातम भेट्या ॥
हंस ज्ञान शिवसिद्ध मुख नीर क्षीर निरताप भिन ।
कलि कबीर पुनि प्रग्गटे रामदास महाराज धिन ॥ १ ॥

मारू धर पावन करी रामदास अवतार नित ।
आन उपाधि कुपंथ भरम अज्ञान मिटाया ।
अनुभव सूर उद्योत नूर आतम दरशाया ॥
चार वरण नर नारि राम भज कारज कीना ।
साँच वाँच उपदेश साधु संगति लिव लीना ॥
धाल वाल वलि वलि समो मन वच क्रम उर ध्यानचित ।
मारू धर पावन करी रामदास अवतार नित ॥ २ ॥

भक्त समो भूमंडमे वलि वलि वारंवार नित ।
समत अठार प्रसिद्ध वर्ष नवको भल आयक ।
शुक्ल पक्ष वैशाख तिथी एकादशि लायक ॥
तादिन उदै उद्योत परस सतगुरु पद पूरा ।
आप आप मिल आय रामभज उदै अंकूरा ॥
सद्गुरु मिल सद्गुरु भया धाल वाल धरि ध्यानचित ।
भक्त समो भूमंडमें वलि वलि वारंवार नित ॥ ३ ॥

अथ गुरुअष्टक।

छंद त्रिभंगी

वदन गुरु दाता आप विधाता सुखनिधि साता ततराता।
परम सिध थाता ना पछपाता वरण न जाता धिन दाता॥
सम दिष्टाता ब्रह्म निजज्ञाता अक्षर दाता इम भारम्।
धिन करुणासार गुरू हमार रत ररकार जिप ररकारम्॥१॥
जय जय अविगत्तू निर्गुन तत्तू निश्चल चित्तू नहि जत्तू।
अधर वरत्तू सृष्टि करत्तू सवही पत्तू गुरु रत्तू॥
निरकार निरत्तू कवू न अत्तू ब्रह्म न मत्तू नहपारम्।
धिन करुणासार गुरू हमार रत ररकार जिप ररकारम्॥२॥
नमो अरगा रट जिम सगा इष्टि न अगा एक रगा।
नामी नगा सव गतरगा तत मत अगा अण रगा॥
अखर अभगा सव उपरगा नाहिन लघा आधारम्।
धिन करुणासार गुरू हमार रत ररकार जिप ररकारम्॥३॥
नमो दयाल शरण न जाल नाहिन काल गोपालम्।
सँत रिछपाल करे निहाल तरुण न वाल प्रतिपालम्॥
तारण ततकाल एक सवाल आनतयाल उरधारम्।
धिन करुणासार गुरू हमार रत ररकार जिप ररकारम्॥४॥
यह निज सरण कलाजु तरण अय मन हरण उद्धरणम्।
रट गत करण अजराजरण कदेन मरण नह डरणम्॥
सव सिध नरण जन उद्धरण चारू चरण नरनारम्।
धिन करुणासार गुरू हमारं रत ररकार जिप ररकारम्॥५॥
गुरु गम गाऊ मोसर पाऊ सीसनिवाऊ वलि जाऊँ।
श्वासा लिवलाऊ यह नितचाऊ सरणासाऊ मनभाऊँ॥
तातैं ताऊ एहि सराऊ परो न जाऊ जीवारम्।
धिन करुणासार गुरू हमार रत ररकार जिप ररकारम्॥६॥
जयजय गुरु वदन सव सुखसदन अघनिरदन करकदन।
तुम अज्या तरदन लहर समदन एक मनदन कटफदन॥
नमो स चदन मेटण द्वदन सव घट मदन तू सारम्।
धिन करुणासार गुरू हमार रत ररकार जिप ररकारम्॥७॥
तुमही तुम सारे जीवनतारे प्राण अधारे अप्पारे।
तुम इच्छा धारे पथ विचारे प्रान हमारे उच्चारे॥
नाहिन न्यारे प्रीतम प्यारे एही सद्वारे उजियारम्।
धिन करुणासार गुरू हमार रत ररकार जिप ररकारम्॥८॥

दोहा ।

इष्टहि माहिं सुदिष्टता, करुनासागर राम ।
अवके मेरी मानज्यो, इन जिव सह्यो विराम ॥ १ ॥
छीन छीन छीनत भए, लीव लीन अघत्रास ।
अरज करूं हितचित सदा, सतगुरु रामादास ॥ २ ॥

अथअष्टक ।

छंदभुजंगी ।

नमस्ते नमस्ते सदासुक्खस्वामी । नमस्ते नमस्ते अहो अंतर्यामी ।
नमस्ते दयालं कृपालं च देवा । नमस्ते भगत्तं समुक्तं स मेवा ॥
नमस्ते पराधर्म शब्दं अतीतं । नमस्ते पंचू तीन मनमोह जीतं ।
नमस्ते रामायं सदायं उधारं । मिले रामदासं सुदासं निर्कारम् ॥ १ ॥
प्रणम्यं च देवादि देवाधिदेवं । अष्टअंग दंडोत उद्योत सेवं ।
चंदन निकंदन जीते संत सारे । त्रिकालं कृपालं भगत विरदवारे ॥
जुगे जुग्गमायं सहायं सुदाता । नमस्ते दयालं कृपालं विख्याता ।
अचिंत्यं असिंत्तं नमस्ते सवारं । मिले रामदासं सुदासं निर्कारम् ॥ २ ॥
मनःशील मीलं विहंगंबुहारं । रतेराम रमतीत भवसिंधुपारं ।
अद्रोहं अछोहं अनामं अकामं । समाधं सुखाधं अगाधं प्रणामं ॥
चतुर्पत्तिमेकं तजे दश्शदोषा । निराकार निर्लेप नहिं कालजोषा ।
अभय धाम विश्राम आनंद पारं । मिले रामदासं सुदासं निर्कारम् ॥ ३ ॥
जितं सत्वतत्वं नमस्ते अघादं । धीरं गंभीरं सधीरं समादं ।
अडोलं अबोलं नहीं मान माया । दष्टं न मुष्टं न कष्टं न काया ॥
अखंडं अमंडं प्रचंडं अपारं । निराकार निर्धार सर्वज्ञ सारं ।
तहाँ जीव सीवं अनेकं गतारं । मिले रामदासं सुदासं निर्कारम् ॥ ४ ॥
(जानं न सेवं अहो देव देवं । पन्यो पायपायं अहो रामरायं ।
नमो नाथनाथं भयो साथसाथं । कहा गाथ गातं रखोजीवजातं ।)
भो प्रभो पावन्न परमं दयालं । करंते जहं तहं मेरी सँभालं ॥
विकारं हमारं मिटारं मुरारं । अहो देव आनंद आनंद कारं ।
सदा विरद वारू करो क्यों न सहायं । अपत्तं सु सिफ्तं कहा मुक्ख गायं ।
अलामं गुलामं तमें भवन जायं । अहो रामरायं अहो रामरायम् ॥ ५ ॥
हमें राम इच्छा करो मन्न भायं । गरीवं निवाजं सदा सुक्खदायं ।
मेरी लाज लाजं तुमें महाराजं । जानो राय रायं सदायं सकाजं ॥
करी जीव रिच्छा सु इच्छा कृपालं । रुद्रादि इंद्रादि ब्रह्मादि स्वालं ।
मनु इंद्र चंद्रं फवीन्द्रं वतायं । अहो रामरायं अहो रामरायम् ॥ ६ ॥

सवै पात पात गुरुभ्यो प्रज्ञान । अनुभ्यो सुनभ्यो यही विद्यमान ।
इष्ट स सिष्ट प्रतिष्ट प्रकास । सुपष्ट सुदिष्ट सुमिष्ट अभ्यास ॥
दुसष्ट फसष्ट नमस्ते अधार । तिरष्ट हरष्ट मनष्ट हमार ।
सुचष्ट गुरष्ट यही मन्त्र गाय । अहो रामराय अहो रामरायम् ॥ ७ ॥
मनादि अनादि सासा सदाय । जनादि तनादि ग्रथादि गाय ।
रकार मकार गुरू दस मत्त्व । अनाद जुगाद शिखों शिरूखतत्त्व ॥
अनुसार ससार अपार त्रिकाल । इड खड मड अमड विचाल ।
इमस्त शिवस्त गुरुदेव माय । अहो रामराय अहो रामरायम् ॥ ८ ॥

दोहा ।

कहा अनुज अस्तुति करै, तुम प्रभु अगम अगाद ।
आदि अत भवतारणा, कारण करणा साद ॥ १ ॥
अष्ट छद आनद पढ, दूर होय त्रय ताप ।
यहि विधि गावत ग्रथ सब, सतगुरु समरथ आप ॥ २ ॥

इति अष्टक ।

अथ साधुको अग ।

प्रथम साधु मुख रामरत, साच वचन गुरु ज्ञान ।
रामदास मन वच क्रम, परमातम लिव ध्यान ॥ १ ॥
ज्ञान गरीबी धारणा, मन सबसे निरदोप ।
शील सत्य सतोपता, सरधा सुमरण मोप ॥ २ ॥
साध साधना शब्दकी, उर अतर मुख एक ।
हितकारी सबका सजन, रामा ज्ञान विवेक ॥ ३ ॥
कहै रहै इकरस दशा, आदि मध्य अँत एक ।
रामा गुरुधर्म आसरै, राम नाम निज टेक ॥ ४ ॥
दया भाव छिम्या समँद, गहरा अगम अथाह ।
दुजनता लू की बजण, उष्ण कदे नहि थाह ॥ ५ ॥
दादुर पर करि है कहा, आप हि शीतल होय ।
कठिण बाण दुजन बचन, रामा भिदै न कोय ॥ ६ ॥
बाढै काटै झांन्दै, चदन तजै न बास ।
साधु कसोटी जन सहै, हीरा वणकी त्रास ॥ ७ ॥
रामा घानी चढत है, कनक अग्निके माय ।
साधु कसोटी ज्ञान मन, क्रम मैल जल जाय ॥ ८ ॥
ब्रह्म अग्नि जनकै उदय, जलै वासना मूर ।
रामा साधक भजनका, अष्ट नष्ट मल दूर ॥ ९ ॥

जिम था तिम सहजाँ भया, मँद गुण मिट्या विकार।
साधु सनेही रामका, रामा धिन दीदार ॥ १० ॥
निर्मल नयन वायक विमल, अनुभव गिरा उचार।
रामा जनकी पारखा, निर्पख निरणै सार ॥ ११ ॥
हंस दशा एको मता, उन्मत्ता अणराग।
वैर विरोध किणसे नहीं, रामा अगम अथाग ॥ १२ ॥
हरप शोक भय भंजना, शत्रू मित्र समीप।
रामा दश दोपां रहित, हरिजन लखण महीप ॥ १३ ॥
बाहर दशा मिलाप विधि, आतम ब्रह्म इकताय।
रामा सेवक साधुका, पूज्य परमपद पाय ॥ १४ ॥
रामा स्वामी भक्तका, स्वामी अगम अपार।
तन स्वामी स्वामी धणी, देखो तत्त्व विचार ॥ १५ ॥
स्वामी समर्थ एक है, ता रत स्वामी होय।
पुत्रजु पिता स्वरूप है, रामा पद्धति सोय ॥ १६ ॥
अंश वंश भगवद् भक्त, रामा छाना नाहिं।
आतम परमातम मिले, साधु परमपद माहिं ॥ १७ ॥
साधु अंग हरि रंग है, परमारथ परकाज।
रामा सलिता सिद्ध तरु, जीव उधारण ज्याज ॥ १८ ॥
मेह वूठा तूठा हरी, छाना नाहीं कोय।
रामा साखां सायदां, प्रगट पुकारै लोय ॥ १९ ॥
साधू दुतिया नीर सम, उपला रेख असाद।
जल माहीं कोरा रह्या, रामा जड़ता आद ॥ २० ॥
साधूका दिल मोंम सम, काटी हृदय असाधु।
रामा सोना होय कद, पारस मिल्यो न साधु ॥ २१ ॥
काम क्रोध माया मगज, कदे न उपजे अंग।
रामा प्रेमी रामका, साधू मता अभंग ॥ २२ ॥

सोरठा।

ऐसा धिन जन आज, द्यालवाल शरणागती।
रामदास महाराज, भल आये जग तारवा ॥ १ ॥

इति।

अथ साधुमहिमाकोअंग।

भक्तवछल विर्द रामजी, जन विन कहता कोय।
संतॉ हित अवतार धर, भगवद्गीता सोय ॥ १ ॥

रामभक्ति परगट करण, जुग जुग माहीं संत ।
संतों महिमा रामदास, आज्ञा की भगवंत ॥ २ ॥

श्रीभगवानवचन ।

मैं आधूं संतों महीं, संत हमारी देह ।
जे मोकू तृप्ति करै, संतोंके मुख देह ॥ ३ ॥
शबरी जिग पांडव कथा, छिल्का विदुर द्वार ।
व्यास वचन साखी सदा, जाणै सब संसार ॥ ४ ॥
वाल्मीकि पंच ग्रासमें, तुल्यो न जिग असमेद ।
भाव प्रीतसे हम लिया, संतों माहीं भेद ॥ ५ ॥
पत्र पुष्प फल आदि दे, अन जल भाव विचार ।
साधु समर्पण मम करै, मान लेहु निरधार ॥ ६ ॥
भाव भोग सम भोग नहिं, संता के आधीन ।
प्राण सनेही रामजन, भक्ती परगट कीन ॥ ७ ॥
मम स्वरूप निश्चै करण, आदि अंत निजधाम ।
सो संतों में देखियो, परगट साखी राम ॥ ८ ॥
लक्ष्मी आदि वैकुंठ दे, भक्त समी नहि कोय ।
निज निवास निज निधि इहा, रामा परगट जोय ॥ ९ ॥
भक्ती ज्ञान वैराग्य सुत, परगट मेरो वास ।
मेरो मग मेरो दरश, परसै रामादास ॥ १० ॥
साधु शब्द मेरी गिरा, अनुभव ग्रंथ अपार ।
जो श्रवणों नीकों करै, जाय सबके द्वार ॥ ११ ॥
भक्तों नासी नाक मम, भक्तों साखी साख ।
आख नाक आनन वदन, सीस शिरोमणि राख ॥ १२ ॥
हाथ पाँव नख शिख हृदय, अष्टअंग मन बुद्धि ।
सो बरणे जनु संगता, रामा परगट शुद्धि ॥ १३ ॥
भक्त कहै सोइ करु, यह मम टेक निधान ।
कुण प्यारो जय विजयसो, रामा धान्यो प्रान ॥ १४ ॥
मम पद मेरी ईदाता, तजी भक्तके काज ।
वाराह नरसिंह मीन हुइ, हयग्रीव कुन साज ॥ १५ ॥
लाज प्रतिज्ञा प्राण मम, बोल बाँह आधार ।
रामा परगट देखलो, जुग जुग जन विस्तार ॥ १६ ॥
धरम सह्य आज्ञा यह, रखवालो नित नेम ।
निरबधण बधणमइ, बँध्यो भावना प्रेम ॥ १७ ॥

भक्त नचावे तो नचूं, जाचक वलिके द्वार।
वेठ्यो भयो मलूकके, रामा धिन करतार॥ १८॥
पनवाड़ा नाख्या अवश्य, पांडव जिगके माहिं।
रामा लज्जा द्रौपदी, आई तातें ताहिं॥ १९॥
द्वाली भयोक वालदी, दास खास जनहेत।
नीर पिलायो नारि हुय, रामा नरसी नेत॥ २०॥
घट घट माहीं रामजी, जैमलके जुध भीर।
अश्व चढे धायो अवश्य, रामा अपणी पीर॥ २१॥
तनु कासी सारी करी, विपति सही धर रूप।
रामा माधोदासके, आप सिलावण चूँप॥ २२॥
रूखो सूखो ना गिन्यो, लावण पुरस्यो खीच।
करमांकूं कीनी प्रगट, राम जनाके वीच॥ २३॥
भक्ताँ हित केता चरित, महिमा अनंत अपार।
शब्द ब्रह्म साखी सदा, परसापरस वुहार॥ २४॥
रामजना वक्ता जहाँ, श्रोता लक्ष्मी रूप।
रामा संशय भक्तके, वक्ता आप अनूप॥ २५॥
ठाढो राखै जहाँ रहूँ, मेल्है जाऊं जेथ।
भक्तिमान् सो घर वडा, भक्ताँ विना न केथ॥ २६॥
सव प्रतिपालक मैं सदा, सवही मेरा जीव।
भक्ताँ द्रोही द्रोह मम, मेटूं पालण सीव॥ २७॥
मेरो वैरी जगतमें, निंदक सम नहि कोय।
जड़ा मूल खोऊं अवश्य, रामा मारूं जोय॥ २८॥
प्राण घातकी जगतमें, भक्त द्रोह दुख दाय।
कहै भगवत छोडूं नहीं, तीन लोकके मॉय॥ २९॥
वंचै न किनके आसरै, शिव कमला अज ठोर।
रामा रक्षा कुण करै, सव पातक को मोर॥ ३०॥
दुरवासाकूं पूछिकै, कीज्यो कोई क्लेश।
शरणो द्विजवर दुखित को, मेट्यो मर्णा अंदेश॥ ३१॥
जनद्रोह जनसे मिटै, हमसे मिटै न कोय।
हूं चाकर भक्ताँ तणो, महिमा प्रग्गट सोय॥ ३२॥
लक्ष्मी दासी भक्तकी, चवड़े कीनी चाय।
च्यार पदारथ मुक्तिचत, रामा संताँ दाय॥ ३३॥
साधु शब्द मेटै दुष्ट, सो मेरे मुखथाप।
रामा देहकृत देखही, चख फोड़नको पाप॥ ३४॥

जनका भाव बधारिकै, पीछै मोला होय।
रामा भगवत् धर्ममें, वैरी कहिये सोय ॥ ३५ ॥
हास्य करावै भक्तकी, मेरी नाकी घात।
मस्तक छेदण रामदास, आनदेवकी जात ॥ ३६ ॥
गुरु आज्ञा लोपे दुष्ट, हाथ हमारा छेद।
नुगुरो हुइ जनसे बिडै, रामा पगुल तेह ॥ ३७ ॥
मेरा पग वादृत अवश्य, दासों माहिं विखेप।
रामा भोजन साधुके, हरे स पेट दुखेप ॥ ३८ ॥
याद करै गुरुदेवसे, जाणीतल मन मोद।
रामा हिरदै घातकी, लह्यो न उत्तम बोद ॥ ३९ ॥
आन मत्र भूता यजै, मूक हमारै सोय।
मम मारण सम जाणिय, साधू वेमुख होय ॥ ४० ॥
देश कहा परदेशमें, चाहत घर कुशलात।
मेरो घर है रामजन, सदा हमारै साथ ॥ ४१ ॥
बडे पुरुषके पुत्रकू, लाड लडावै कोय।
बैठा सूता रोटिया, दोनू पख सुख होय ॥ ४२ ॥
राम जनोंके दासकी, मान लेउ अरदास।
या लोकां परलोकमें, ब्रह्मानद विलास ॥ ४३ ॥
मोसू बाधै प्रीतडी, राम जनोंके सग।
मेरो प्यारो होय जद, रामा भक्ता रग ॥ ४४ ॥
ब्रह्मड निधि दाता हरी, कमजा कर कोइ लेत।
कैवल्पद दाता अवश्य, रामा सतों हेत ॥ ४५ ॥
अश यश परगट करण, जहँ अवतार धरत।
रामा नित अवतार जन, महिमा कोटि अनत ॥ ४६ ॥
कहा पारसका मोल है, कहा साधुकी जात।
लोहा जिमि क्चन करै, हरिजन ज्ञान विख्यात ॥ ४७ ॥
कामधेनु चिंतामणी, कहा सुरतरुका मोल।
रामा गुण परगट करै, साधू शब्द अतोल ॥ ४८ ॥
हरिजनकु हीणो गिणे, मेरै हीणो सोय।
कहा ब्राह्मण क्षत्री वैश्य, कुलको घटे न कोय ॥ ४९ ॥
रामा धिन माता पिता, पुत्र भया ते साध।
रामभजन करता रह्या, सत गोत मिट व्याध ॥ ५० ॥

सोरठा ।

धिन जननी जग माहिं, हरिजन जिनके पुत्र होय।
आन विषै दुख दाहि, राम विमुख गंडशूरड़ी ॥ ५१ ॥
कूख सपूती सोय, सूर सती साधू भए।
पक्ष उजालै दोय, रामा वंश भलाइयाँ ॥ ५२ ॥

इति ।

अथ साधुदर्शन-मिलाप-माहात्म्यकोअंग ।

दर्शण च्यार प्रकार जन, कहत मुनीश्वर वेद ।
रामा गुरु प्रसादते, जीव उधारण भेद ॥ १ ॥
श्रवण चक्षु दर्शण जनॉ, परसण ज्ञान विचार ।
शब्द दर्श परगट भया, लह्या आप ततसार ॥ २ ॥
प्रथम श्रवण सुण साधुका, दर्शण कीजै जाय ।
रामा महात्म्य अगम है, भक्ति मुक्ति पद पाय ॥ ३ ॥
जन चितवन फल सहस्र हुय, गमन करत लख होय ।
रामा पद अश्वमेध यज्ञ, फलै मनोरथ सोय ॥ ४ ॥
विघ्न हरै आनंद करै, रामा दर्शण साद ।
चल ताहीं सुख ऊपजै, फलै मनोरथ आद ॥ ५ ॥
आधि व्याधि विक्षेपता, देव चतुर्दश लाग ।
सो सहाय मारग महीं, भक्ती दृढ अनुराग ॥ ६ ॥
धरणि गगन पाणी पवन, चंद सूर पख होय ।
लगन रामजन मिलनकी, उदै पदारथ सोय ॥ ७ ॥
जम चोकी भाजत अवश्य, पंथ पारषद साथ ।
साधू दर्शण जातरा, सहायक त्रिभुवन नाथ ॥ ८ ॥
विघ्नहरण मंगलकरण, आनंद उदय अनंत ।
रामा धिन दिन धिन घड़ी, साधु दर्श भगवंत ॥ ९ ॥
साष्टांग दंडोत करि, देखत शीश नमाय ।
राम राम महाराज मुख, रामा विघ्न विलाय ॥ १० ॥
जन्म करम पातक सकल, हरा गया तत्काल ।
रामा जोरत हाथ जुग, वंदन राम कृपाल ॥ ११ ॥
जमदँड दूरै होय है, अष्टअंग दंडोत ।
चौरासी फेरा मिटै, परिक्रमा फल होत ॥ १२ ॥
दर्शण परसण रामजन, अनंत कोटि संत ज्ञान ।
रामा महातम ज्ञानका, शब्द ब्रह्म आख्यान ॥ १३ ॥

साधू दर्शण देखतॉं, मन परसण हुय जाय।
अमी दृष्टि सतगुरु कृपा, राम बताया मॉय ॥ १४ ॥
सूर उदय रजनी मिटै, साधु हरै अज्ञान।
रामा शशि दरवै अमी, शीतल ध्यान विज्ञान ॥ १५ ॥
सब पदारथ सब सिद्धि, दर्शण च्यार मिलाप।
रामा महातम अगम है, परसै आपोआप ॥ १६ ॥
रामा लावा लोडसी, आतम उदै अकूर।
जन्म सफल जीवन सफल, नितप्रति साधु हजूर ॥ १७ ॥

इति।

वक्ताजिज्ञासुप्रतिवचन सुखगामीआख्यान।

रामा जेज न कीजिये, मिलतॉं हरि के संत।
ज्ञान उदय अघ दूरि हुय, आज मिले भगवंत ॥ १ ॥
शब्द ब्रह्म परब्रह्मका, खोलै भक्ति भँडार।
रामदास ता भक्तिके, हरिजन बडा उदार ॥ २ ॥
मनरे दासा बदगी, करियै चित्त लगाय।
यह मोसर दिन पाहुणा, राम कृपाते पाय ॥ ३ ॥
श्वास श्वास छीजत अजहय, दुष्कर काल करूर।
रामा याते ऊवरे, समरथ साधु हजूर ॥ ४ ॥
क्षणभगुरको ठाट है, अल्प आयु कलि काल।
रामा जेज न कीजिये, मिलता साधु सुकाल ॥ ५ ॥
ज्ञान सीख मन धारिकै, दरशण कीजे साध।
रामा भाव बधारिये, यह है धर्म अगाध ॥ ६ ॥
अडसठ तीर्थ शिरोमणी, गगा निर्मल नीर।
सो चाहत जनके चरण, दावरी पद रज खीर ॥ ७ ॥
तुलै न तोलै धर्म कोउ, दरशण साधु मिलाप।
ऊणत जन्माजन्मकी, मेटण त्रिविधहि ताप ॥ ८ ॥
जोग जज्ञ तप दान पुनि, अचन वदन सोय।
रामा तुलै न फल कोउ, राम साधु मिल होय ॥ ९ ॥
राम मिल्या सतां महीं, सतॉं विना न राम।
आदि अंत मध्य देखलो, रामा जन परणाम ॥ १० ॥

सोरठा।

चाल्याल्या घिन सोय, फ्रोड़ा छाडा जन्मरा।
साधु मिल्या सुख होय, अमिट भाव रहज्यो सदा ॥ १ ॥

इति।

अथ भक्तिभावकोअंग ।

रामा भक्ती अंग यह, वरतै ज्ञान विचार ।
मन क्रम वच इक धारणा, अमिट भाव इकतार ॥ १ ॥
आर्जवता संतोपता, कदे न मन अभिमान ।
श्रवण कथा रुचि राम रति, पूजा साधु विधान ॥ २ ॥
साधु वैण सांचा हृदे, कदे न पलटै मन्न ।
करै कीर्तन एक रस, राम भजन हरिजन्न ॥ ३ ॥
चरणसेव पूजन जना, वदन दासा नित्त ।
सखा समर्पन भावना, रामा साचे चित्त ॥ ४ ॥
भलॉ पधारे रामजन, आनंद अगम अपार ।
आज भयो पावन भवन, रामा भाव वधार ॥ ५ ॥
रामा भाव वधावना, पलकॉ प्राण अवार ।
आज भयो वैकुंठ घर, चरण रामजन धार ॥ ६ ॥
पदरज जीव उधार मम, मन मंजन शुधि होय ।
चार पदारथ मुक्तिचत, अव संशय नहिं कोय ॥ ७ ॥
आज पधारे रामजी, अमर पुरी एवास ।
रामा भाजै राम जन, हरै कठिण जम त्रास ॥ ८ ॥
भूत प्रेत छल छिद्रता, डाकण स्यारी जोय ।
मूठ मंत्र भाजै भरम, नवग्रह रहै न कोय ॥ ९ ॥
लाग जाग सारी मिटै, खेड़ा राक्षस दूर ।
आज भए पावन परम, साध चरण धिन धूर ॥ १० ॥
अगड़ वगड़ धिन सोहना, पंथ संत महाराज ।
भला विराजे रामजन, आनंद ब्रह्म समाज ॥ ११ ॥
विष्णु ब्रह्मा शिव संत सव, आए सतगुरु संग ।
रामा केवल भक्तका, प्राप्ती ज्ञान अभंग ॥ १२ ॥
भक्त भाव कारण सफल, परमपदारथ साद ।
रामा भक्ती भाव दृढ, धरम परायण आद ॥ १३ ॥
भाव विना भक्ती नहीं, भक्ति विना नहि भाव ।
रामा किरणॉ सूर मिल, द्दगमध्ये दरसाव ॥ १४ ॥
रामा भक्ती भाव मिल, यह सद्गतिके मूल ।
रामभजन तत मूल है, मेटण संशय सूल ॥ १५ ॥
रामा भक्ती अंग सव, प्रवल भावते होय ।
राम दिसावर साधुमें, साखी प्रग्गट जोय ॥ १६ ॥

जल माही प्रतिबिंब चँद, द्रवे अमी अखड।
रामा ब्रह्मड साधु वपु, पूरण ब्रह्म अमड ॥ १७ ॥
परम पदारथ सत है, भाव दिसावर आद।
रामा महँगा भाव है, कारण भाव प्रसाद ॥ १८ ॥
राम दिसावर साधु है, साधुभावके मॉय।
रामा परगट देखलो, साक्षात दरसाय ॥ १९ ॥
लाखा पैसा भावमें, वस्तु देशातर जाय।
रामदास इक भाव विन, रोवे मूल ठगाय ॥ २० ॥
हाथ पॉव नहिं वस्तु के, नाहिन किणसू नेह।
भाव विकावत रामदास, लाखा कोसा तेह ॥ २१ ॥
वस्तु आपणे चाहती, जाको बूझे भाव।
रामा जाय बजारमें, बूझे नहिं सब भाव ॥ २२ ॥
रामा शब्दा भावमें, ब्रह्मानद गलतान।
राम मिल्यॉकी पारखा, दरशण परसण ज्ञान ॥ २३ ॥
साधु मेह किनके घरे, राम क्रिपा तहॅ जाय।
रामदास आनद उदय, लीजै भाव बधाय ॥ २४ ॥
तहॅ सुगध जहॅ भ्रमर है, मीन नीर अस्थान।
रामा भक्ती भाव है जहाँ साधु प्रज्ञान ॥ २५ ॥
समर सिंह सूरा जहाँ, वणिक देस व्यवहार।
रामजनॉ विचरै अवस, भाव भक्ति जिण द्वार ॥ २६ ॥
भूख तृषा देखै नहीं, जात पॉति धन धाम।
रामा सॉची भावना, सत जहाँ विश्राम ॥ २७ ॥
रामा भोजन भावसो, लगै रामके भोग।
भाव विना अमृत गरल, हरिजन जाणे रोग ॥ २८ ॥
व्यजन चार प्रकारके, छप्पनभोग विलास।
रामा एकुण भावमें, जाणे हरिके दास ॥ २९ ॥
कहा लूखा सूखा कहा भोजन भाव प्रसाद।
रामा महिमा विस्तरी, बोर केल फल आदि ॥ ३० ॥
गर्व अहार समथ करै, भाव जिमावे सत।
रामा तृप्ती होय जद, नमो नमो भगवत ॥ ३१ ॥
हीरख पधरणा सावट्ठ, भाव समा नहिं कोय।
आसण बासण भावका, तो पीछे सब होय ॥ ३२ ॥
राम सदन हरिजन अवश्य, रामा साचा भाव।
सुरत देव निजपद लियो, परसण जादव राव ॥ ३३ ॥

गोप ग्वाल भावन भवन, अवध पुरी तरि सोय ।
राम दरस नौका भए, पातक रह्यो न कोय ॥ ३४ ॥
राम रूप हरिजन प्रगट, भाव भक्ति आराध ।
जुग जुग माहीं देखलो, रामा तारण साध ॥ ३५ ॥
मन वच क्रम सरधा लियाँ, वर्णे सजनके हेत ।
रामा साची भावना, जन्म सफल कर लेत ॥ ३६ ॥
दृष्टि पदारथ बुद्धि लौं, उत्तम ब्रह्मंड माहिं ।
रामा अरपै भावसूं, सेवग संशय नाहिं ॥ ३७ ॥
निगम पुराण शास्तर कहै, अनुक्रम भाव समेत ।
जैसी विधि चित चाहना, जन्म सफल करलेत ॥ ३८ ॥

सोरठा ।

भक्ती भाव अपार । धिन जन सेवग साधुका ॥
सहजाँ भवसिंधु पार । द्यालवाल संशय नहीं ॥ ३९ ॥

इति ।

अथटेककोअंग ।

टेक एक सारॉ सिरै, राग थंभ शिव शेप ।
रामा सता अनेक है, ररंकार रत एप ॥ १ ॥
ब्रह्मंड चवदै लोक सव, रामा एक अधार ।
पनॅग टेक अविचल सदा, जपै एक ररॅकार ॥ २ ॥
राम जना परतीत दृढ़, खरो भरोसो एक ।
राम विना मानै नहीं, पचि पचि मरो अनेक ॥ ३ ॥
रामा आदि अनादिमें, निरपख निर्भै एक ।
राम सुमर अम्मर भया, जुग जुग संत अनेक ॥ ४ ॥
नमो नमो प्रह्लादकी, अविचल टेक सदाहि ।
राम कहत रामै मिल्या, रामा वंदौं ताहि ॥ ५ ॥
हिरण्यकशिपु पच पच मरा, कमजा खोई अंध ।
अंत टेक साची रही, भक्त टेक परवंध ॥ ६ ॥
रामा हरिजन अगम गति, राम नाम सव टेक ।
एकै मांहि अनेक है, एक विना शुन देक ॥ ७ ॥
खंड करूं आकाशका, पछिम उगाऊं सूर ।
राम विना मानूं नहीं, हरिजन उदै अंकूर ॥ ८ ॥
रामा कला अनेक करि, कोटि रचै ब्रह्मंड ।
रामविना मानै नहीं, हरि जन टेक अखंड ॥ ९ ॥

सता दिखावै विष्णुकी, आणधरै अवतार।
रामविना मानै नहीं, हरिजनका मत सार ॥ १० ॥
परगट साखी देखलो, खुदवे टेक कबीर।
रामा रत्ता एकसू, टूटे झड़या जंझीर ॥ ११ ॥
वालमीकि इक आसरै, परगट परचो होय।
शख पचानन पूरियो, हरिजन समो न कोय ॥ १२ ॥
देह धरो केती करो, अंतर गत कहि देत।
सत न मानै राम विन, झूंठ सिधाइ नेत ॥ १३ ॥
उडै गडै जल पर चलै, लघु दीरघ हुइ जाय।
मानै नाहीं रामजन, रामा झूठ उपाय ॥ १४ ॥
क्रोड़ पिंड परगट करै, क्रोड़ों भुजा अनेक।
रामा हरिजन रामविन, मानै नाही एक ॥ १५ ॥
काल काल भी आपना, काल काल मतमान।
रामा एकण रामविन, सबही फोकट जान ॥ १६ ॥
शाकी माया मडही, नाना रूप अनेक।
हरि जन रत्ता अरूपसू, रामा कारण एक ॥ १७ ॥
राम टेक छाडै नहीं, आदि अंत इक ध्यान।
रामा चवड़े देखलो, सूरॉ कैसा प्रान ॥ १८ ॥
सती न प्यारा लूगड़ा, दाता गिणै न धन्न।
राम वारणै रामदास, सता कीनो मन्न ॥ १९ ॥
जीव दियो इक राम कू, राम प्राण पति एक।
तिरो मरो भावै गिरो, रामा डर नहिं नेक ॥ २० ॥
स्वरग नर्क सहाय नहीं, जे नर रत्ता राम।
मुक्ति न वछै रामदास, क्या करणीसे काम ॥ २१ ॥
करणी एको राम है, राम विना शुन सोय।
रामा केवल टेक इक, यामें आनद होय ॥ २२ ॥
धरिया दिक गावै लग्या, अपणी अपणी टेक।
जाति पाति कुल परखता, रामा करमा रेक ॥ २३ ॥
जोनि धरै गुण विस्तरै, आइत जीव सभाव।
रामा हरिजन क्यों तजै, राम भजनको डाव ॥ २४ ॥
शिव गुण कँठ लीया रहै, रानस अज निगमेक।
प्रतिपाल्क सात्विक विष्णु, रामा अपणी टेक ॥ २५ ॥
वड्वानल सिंधु ना तजै, अग्नी चुगै चकोर।
रामा इदर गाजियाँ, प्रगट बोलै मोर ॥ २६ ॥

अनड़ टेक आकाश थिर, जलचर जलके माँय।
थलचर थलमें रहत है, रामा अपणे भाय ॥ २७ ॥
कुरंग मरत है नाद रस, तजै न अपणी टेक।
साधु टेक कैसे तजै, रामा पतिव्रत एक ॥ २८ ॥
देह गेह घर तजत है, कामक्रोधके हेत।
जगसे आया ज्ञानि जन, राम पियाके नेत ॥ २९ ॥
लोभ मोहकी धारमें, झूलत मेंमत होय।
रामा हरिजल झूलता, हरिजन संकै न कोय ॥ ३० ॥
जीव भूत कसणी सहै, श्वासा लेत निधान।
राम टेक जन श्वास है, रामा जीवन प्रान ॥ ३१ ॥
राम टेक जुग जुग अमर, परगट भक्त निसाण।
भक्त विछल विरद विस्तर्‍यो, भगवद वचन प्रमाण ॥ ३२ ॥
राम निभाज्यो टेक इक, यह मेरी अरदास।
जीवत तजै न रामदास, मूवां हरिके पास ॥ ३३ ॥
टेक निभावो रामजी, तन जावो सोवार।
रामदास हरि गुरु कृपा, यह मत जनका सार ॥ ३४ ॥
रामदास अरदास यह, यह सतगुरु वरदान।
मन वच क्रम इक धारणा, राम टेक पख प्रान ॥ ३५ ॥
रामा भवके दुःख को, संशय नहीं लगार।
राम टेक मेरी रखो, आदि अंत इकतार ॥ ३६ ॥
जैसी धारी धारणा, ऐसी अंत निधान।
राम टेक निभज्यो सदा, रामदास गुरु ज्ञान ॥ ३७ ॥

सोरठा।

श्री गुरु समरथ आप, एक भरोसो आसरो।
राम मंत्र जप जाप, चालचाल एकै मही ॥ ३८ ॥

इति।

अथचेतावणीकोअंग।

छप्पय।

क्षणिक वीत नरदेह तिनक तूटत कहा वारा।
ज्यों तुषार आदित्य क्षुभित प्रतिविंव बुहारा ॥
लकरी अग्नि प्रभाव तेल जरताँ बुझ वाती।
सलिता नीरस तीर जात सासा दिन राती ॥
अभ्र छांह सुख सैन कहा यों जग देखत जाहि सब।
जन रामा मोसर दुलभ हरि भज लेखै लाय अब ॥ १ ॥

दुलभ दुलभ नर देह लेह सुमरण रट राम।
क्षणिक क्षणिक क्षण भग जगत अधिपति सब काम॥
भगवद वायक गाय ध्याय दुतिया मध भाखे।
एकादश प्राकृत्त काव्य हरि निणय दाखे॥
गुरु प्रसाद सब जन कहे दुलभ देह परकर अवे।
जन रामा बीतों अवधि फेर न आसी को कवै॥ २॥
तरु तें तूटा फूल डार धुर लगै न कोई।
कागद अक सकेल पुनि सकेला नहि होई॥
सती साझ सिणगार तेल तिरिया इक वारा।
ओला जल गल मिल्या फेर होवै नहिं सारा॥
मोह वासना नीर मझि नर देह कदे नहि गालिये।
जन रामा हरि प्रेम विच गल्या त सब दुख टालिये॥ ३॥
धरण जीव घट मरण राव राजा पलसाई।
वृत्रासुर हिरण्याक्ष जोध बलि गया विलाई॥
दशकधर सुर अघ हिरणकश्यपु चकचूरा।
पटचकवै पट होय बाणासुर मरगे सूरा॥
छपन कोटि क्षोहणि अठार अवतार धरण सोभी गए।
जन रामा चवदे भवन अवनि अवधि कहो कुण रहे॥ ४॥
भजो भजोरे राम तजो जगकी चतुराई।
सजो सजोरे साज काच तन जात विलाई॥
गया मिले नहिं बहुरि मुकर भजन नहिं सदत।
क्रोड जतन मिल प्रज्ञा कहै सोई मति मदत॥
जाता निश्चै जाय सर रहता हरि सगी सदा।
चेत चिंतामणि उरमही ता पाया आतम मुदा॥ ५॥
रहता सतगुरु शब्द एक सरवग सदाई।
नमो राम रमतीत गया नहि भया कदाइ॥
एकै रस अनादि साधु तासू लिवलायक।
राम शब्द आराध परम पूरण पद पायक॥
ज्ञान सूर भरपूर घट तम अज्ञान अघ मेट है।
जन रामा जीवन सफल साचा साहिब भेट है॥ ६॥
जन्म सफल कर आज राज मिनखातनु पायो।
वाछित ब्रह्मा इद्र करम भोमस कुण नायो॥
अलभ्य परम अस्थान ज्ञान केवल गति न्यारी।
योग यज्ञ घमड मरमगी बुद्धि हमारी॥

नाग लोक तप देव कहा सब वांछित नरदेह धर।
जन रामा खंड भरतमें चोथो पद मिल सोइ कर ॥ ७ ॥
खरची खावण ठोर और अस्थान अथिर इत।
कमज्या करण सुखेत हेत नरदेह चेत चित ॥
केवल शब्द अराध साधु सब याकूं गावत।
निर्भय मिलै सुथान वहुरि भव दुख नहिं पावत ॥
या सुखमें मत भूल नर मंडप मंड केता भया।
जन रामा मेरी मही अंत देख किण दिस गया ॥ ८ ॥
कहॉ वे भोग सॅभोग कहाँ मंदिर वे माया।
हीर चीर सिणगार प्रीत युवती रस छाया ॥
चंद वदन तन कुंदन लजत कंदर्प चख सोहै।
कहॉ वे रूप किशोर कंज सुत अंत सको है ॥
नव खंड डंड तप स्वर्ग गति इच्छा चक्र वरतत जगत।
मन प्रकार सुख शक्र लख जन रामा हरि विन अगत ॥ ९ ॥
कहुंक ढरे मैदान चुणत कहुं कली चढावत।
कहूंक सुन ऐवास कहूं जग नगर वसावत ॥
किसी और मन धीर गीरवो किनको करियै।
सब जाता संसार राम भज पार उतरियै ॥
चेत हेत हरिनाम तूं झूंठो मोह निवारियै।
जन रामा मन समझ कर साधु वचन उर धारियै ॥ १० ॥
चेत चेत रे चेत नेति नित ऐसे गावै।
शेष एक आधार पलक वीसर नहिं जावै ॥
ब्रह्मा विष्णु महेश धारणा एक धरावै।
सदा ध्यान सम्माधि आदि अनादि समावै ॥
सो मौसर अवही मिल्यो चढ विमाण कह पारपद।
जन रामा गाफिल नरां जोंण चोरासी पारकद ॥ ११ ॥
इन पुर तें दोय माग इच्छा हुय सहजाँ जाना।
एक ब्रह्म अस्थान एक जम हाथ विकाना ॥
उर विज्ञान जन साथ राम पँवडा भर लीजे।
निरभै नित आनंद अगम वर आसण कीजे ॥
पर उपकारी संत धिन जीवन वंध छुडावना।
जन रामा आदू कवल कर सच्चा दिन पाहुना ॥ १२ ॥
सूकर श्वान सियाल रासभा उष्टर जानो।
हरि वेमुख मतिअंध काल भख उनही मानो ॥

वायस आहार निहार साप घर मंदिर माया ।
बैठक गति चमगाद स्थूल अजगरसी काया ॥
कुल कुहार मकरी प्रवच किण कारण नर तनु धर्‍यो ।
जन रामा किरकट अवधि नाहिं न हरि मुख उच्चर्‍यो ॥ १३ ॥
औसर मोसर जाय जाय जग सग रसोई ।
कुटुंब मान मनुहार सजन वधू भूत सोई ॥
कुवट कुपथ कुप्यार प्यार ता और निभावत ।
राज काज हमगीर लाज मं वड में ध्यावत ॥
आरंभ अनेक उद्यम अशेष मिनखातनु हिम्मत प्रबल ।
जन रामा धृक् जासु बुधि हरि गुरु जन दरसण निबल ॥ १४ ॥
इति ।

अथकालचेतावणीकोअंग ।

पुरुष कहत घर मुझह धरणि कह मुझह समावत ।
उल्ट पल्ट व्यवहार भेद कोऊ नहिं पावत ॥
चढे अश्व के अश्व सेल राजस प्रभुताई ।
अहू साज सम्माज परत भ्रम कूपमें जाई ॥
इंद्र आदि भूपति कहा असुर नाग धर वपुजिता ।
जनरामा सरपा चवन तिन विचार खावत खता ॥ १ ॥
मरद गरद कइ भया अजू होवणकी वारी ।
महल मंदिर धन धाम रूप युवती सुत नारी ॥
राज वाजि गज कोट सहर सबका देशायक ।
सुभट सचिव तप तेज गमन गति सूरज जायक ॥
खलन दलन माया महा हाहाज काल सब खाय है ।
जन रामा स्थिर प्रीति कर रहता राम सदाय है ॥ २ ॥
वादे विणसै देह नेह करियों क्या होइ ।
जाती रहती नाहिं चिता करजो मत कोइ ॥
कहता सतगुरु सत नाम नातो इक साचो ।
सदा शब्द गुरु संग रंग मनताके राचो ॥
यह झूठो पड़ पच सबै किणतें सम्बन्ध कीजिये ।
जन रामा सासों अर्को आदि सिन्न कर लीजिये ॥ ३ ॥
हितकारी भवसिंधु एक हरिजन है तेरा ।
तात मात कुल भ्रात पुत्र युवती उरझेरा ॥
मोह नीर मन ग्राह तनु कृत जलचर जेता ।
तो सावण हुसियार लार लागा अघतेता ॥

वज्र नाम नौका सधर मान वचन जन लेतिरै ।
जन रामा दाता दयालु यह प्रकार कारज करै ॥ ४ ॥
जाय जाय दिन जाय ताहि लेखै अव लावो ।
गाय गाय इक राम बहुरि मौसर नहिं पावो ॥
साय साय गुरु ज्ञान लाय एकण मन धारण ।
ध्याय ध्याय अव ध्याय आय लागा जोधारण ॥
कटक काल दुष्कर कही हरिजन पुरमध्य छूट है ।
जन रामा पासे गयाँ सहीत जमरो लूट है ॥ ५ ॥
लूट मंडी मैदान खूटग्या केइ जोधारा ।
अतिरथी महारथी सरव कालानल चारा ॥
केइ खाधा केइ खाय कई खावणकी वारी ।
नर सुर असुरह नाग कहा पुरुषा रत नारी ॥
सुख विलास रंजन मना भोग भोगावण सव गये ।
जन रामा उर दृष्टि कर को को जनमत को रये ॥ ६ ॥
चेत चेत नर चेत कहा तेरी ठकुराई ।
ज्यों तीतरकूं वाज चुहाकूं लेत विलाई ॥
तस्कर देख्याँ वार जाण दशरावै महीका ।
वैश्य वाट पर भील सेर भख चीत सहीका ॥
कहाँ गीदी वलखाँह अव मीच आय लागी निकट ।
रामा सास सरीरमें के लीया लेसी झपट ॥ ७ ॥
शिशर गई पोगंड किशोरहु तरुण विलायक ।
वृद्ध जरा तनु क्षीण छीन वल रूप घटायक ॥
भय कंपत सव हाड त्वचा सल नेतर झरि हैं ।
वहरा चूंध विघाट ठीक वोलण नहिं परि है ॥
श्याम पलट श्वेतहु भया सुधि वुधि अंग न सार है ।
जन रामा चेतत नहीं आज काल जम मार है ॥ ८ ॥
लख चौरासी जीव जात सव हीके होई ।
जलचर अनचर पवन गगन अस्थिन भख सोई ॥
तात मात मन कुटुंव मरत मोहकि सव धारा ।
सूरवीर वलवंत सरव मैं वडमें ख्वारा ॥
हरप शोक जहँ तहँ सवै यामें कहो कहा झूठ है ।
जन रामा अवरण विना काल सकलकूं लूट है ॥ ९ ॥

इति ।

अथ हरिजस।

राग भैरव।

पद १

श्रीगुरु रामदास नित दर्शन ऊठत उदय प्रभाते हो।
अष्ट अग दडोत सदा ही त्रिविधि ताप मिटाते हो। टेर
गुरुधर्म भाव परिक्रमा दीजे चौरासी मिट फेरा हो।
दर्शन स्पर्शन मुक्ति प्रामी जन्मजन्मका चेरा हो ॥ १ ॥
भूरि भाग्य सिख राम सभामें आनद उदय सदाई हो।
निविधि पूजन करिये सतगुरु श्रद्धा भाव वडाई हो ॥ २ ॥
येही नेम प्रेम उर मेरे चरण शरण जिव रहज्यो हो।
द्यालवाल पर परसन होकर भक्तिदान मोहि दीज्यो हो ॥ ३ ॥

पद २

रामदास गुरु चरणा माहीं रहज्यो चित्त हमारा हो।
यह वरदान जन्मभर चाहू परचे प्राण अधारा हो ॥ टेर
गुरु सेवा मोसर वड भागी धिनधिन आशा माही हो।
आये साधु धरम द्वारा सिध भाग्य वडे ओलखाही हो ॥ १ ॥
चल्ला तीर्थ अपवर्ग हरिजन रामरुपाते परसे हो।
जिग अश्वमेधा फल इक पावडे वडभागी उर दरसे हो ॥ २ ॥
भाव वधावा साधु उछाहा जावै लावै द्वारे हो।
द्यालवाल उधरण यह नाको गुरुमुख ज्ञान विचारे हो ॥ ३ ॥

पद ३

रातगई परभात भयो है जागो जागण द्वारा हो।
सतगुरु ज्ञान दृष्टि दिखलावै राम उद्योत अपारा हो ॥ टेर
सार असार पदारथ भासे ब्रह्म शक्ति उर माही हो।
उत्तम सुमिरण सास उसासा कालतणा डर नाहीं हो ॥ १ ॥
अघ अज्ञान भूत भ्रम भागे शाका डाकण दूरै हो।
ममता नींद मोह मद सुपनो दोऊ दुखाकू चूरै हो ॥ २ ॥
बीजक दोय अन्तर उर साचा जीव आद पितु पावै हो।
जन रामा अब जेज न कीजे सतगुरु ज्ञान जगावै हो ॥ ३ ॥

पद ४

चौथे भाग रहत जब रजनी राम सनेही जागे हो।
सतगुरु सरूप ध्यान उर धरिये राम भजन सं लागे हो। टेर

कारज येही रामसनेही गर्भ का कौल सुधारै हो।
या जगमें केता दिन रहणा मोह अज्ञान मिटारै हो॥ १॥
स्वप्ने सुक्ख जगत सब रचना भूल भरम नहिं परिये हो।
राम संत गुरु रीझै तेरा सोई कारज करिये हो॥ २॥
मन वैराग लाग गुरुचरना काया माया झूठी हो।
लेखै हरि अरपण अब करियै मनसा फेर अपूठी हो॥ ३॥
जन्म सफल सोई बडभागी रामनाम लिव लावै हो।
घालवाल सतगुरुके शरणै साचा हरिजस गावै हो॥ ४॥

पद ५

आचो मिलो भिल राम सनेही सतगुरु दरसण जाइये हो।
उदै अंकूर भक्ति उर उपजै राम अमीरस पाइये हो। टेर
जामण मरण दोष दोय मेटै कल्मष जीव मिटाइये हो।
गंगा अठसठ तीर्थ यात्रा गुरूधाम परसाइये हो॥ १॥
उधरण घाट सतगुरू आज्ञा हरि जल ज्ञान झुलाइये हो।
प्रेम प्रवाह गलै मन जब ही भरम अज्ञान नसाइये हो॥ २॥
अनत कोटि जनको नित न्हावण परा परायण एही हो।
घालवाल मौसर बड भागी साचे भाव सनेही हो॥ ३॥

पद ६

मौसर मिनखा देह मिल्यो है मत कोई गाफिल रहज्यो रे।
खूटा श्वास बहुरि नहिं आवै राम राम भज लीज्यो रे॥
जानत है शिर मोत खड़ी है चलणो सांझ सवेरो रे।
पांच पचीसूं बडे जोरावर लूटत है जिव डेरो रे॥ १॥
नर नारायण शहर मिल्यो है जामें सूंज अपारा रे।
राम कृपाकर तोहि बसायो यामें काज तुह्मारा रे॥ २॥
जन्म जन्म का खाता चूकै हुय मन रामसनेही रे।
रामदास सतगुरुके शरणै जन्म सफल कर लेही रे॥ ३॥

राग चरचरी।

पद ७

जाग रे बडभागि जीव साधु सूर ऊगो।
ज्ञान पंखि सुरत श्रवण शब्द आदि पूगो॥ टेर
संत पंथ चलत वृंद मोक्ष द्वार खूलो।
जगत अगत मेट स्वप्न स्वप्न दूर भूलो॥ १॥

निशा भूत जमका दूत मिटी राम माया ।
निशक दे प्रभात भयो राम नाम गाया ॥ २ ॥
आन चोर जोर भाग भरम जल्द नाहीं ।
कमल सबल उदयकार दरस परस माहीं ॥ ३ ॥
भजन काज कीजे आज जनम दरद जावे ।
परिपूरण परम तत्व रामदास गावे ॥ ४ ॥

पद ८

प्रकट निकट राम सत घट्स भरम भागो ।
नयन ज्योति रवि उद्योत चरण शरण लागो । टेर
दरश परश सरस नूर सूर साधु साईं ।
कमल उदित मुदित प्रशा खुल्त प्रेम थाइ ॥ १ ॥
सुगंधि भाव चित्त चाव अरथ आनंद पायो ।
सिमल विमल भेट मनकी अकल आप गायो ॥ २ ॥
शब्द रन्द होय परचै सुरत सरचे दरसै ।
अमर अजर अजर पीर जीर शीव परसै ॥ ३ ॥
कर कल्यान प्रान दान अचल ध्यान गुरता ।
रामदास यह विश्राम ताप मेट सुरता ॥ ४ ॥

पद ९

राखिये महाराज राज शरण राम तेरी ।
कली काल जिव बिहाल सार अबे मेरी ॥ टेर
मन असाध पच व्याध करत है घणेरी ।
भर्म जाळ कम काल ठगाम वसेरी ॥ १ ॥
काम क्रोध लह न बोध खुगल एक चेरी ।
मोह द्वार अधकार जडता जहेरी ॥ २ ॥
वस्यो यास काल ग्रास सास लेत वेरी ।
याल फरियाद राम साथ इच्छा आप केरी ॥ ३ ॥

पद १०

दीन हूं जी दीनबधु दीन को नहेरो ।
महरवान बिरदजान प्राण मेट घेरो ॥ टेर
यह पुकार निराधार दरद मेट मेरो ।
जन्म जन्म हार मार तार अब तेरो ॥ १ ॥
विषम घाट भव विराट वेग ही निवेरो ।
वुहो जात मैं अनाथ नाथ हाथ तेरो ॥ २ ॥

वारवार क्यों विसार द्यालवाल चेरो।
रामदास गुरु निवास मेट जन्म फेरो ॥ ३ ॥

पद ११

भुक्ति मुक्ति भक्ति दान शक्ति ब्रह्म दीजे।
श्रीदयाल गुरु निहाल आज कृपा कीजै ॥ टेर
साधु संग मनूं रंग उमंग प्रेम धारा।
भाव चाव जन उछाव गाव पीव प्यारा ॥ १ ॥
कुबुद्धि दुविधा अघ अज्ञान मेट माथो जिवका।
शील सांच उर संतोप नाम दीजै शिवका ॥ २ ॥
मन मनोज मोह रोज जनम ता सतायो।
दवक सवक डाकनीके भय तें दोर आयो ॥ ३ ॥
अभय राम जिव विश्राम रामदास सांई।
द्यालवाल रिच्छपाल कठिन काल मांई ॥ ४ ॥

रागकालेरो।

पद १२

सइयॉ म्हारी सतगुरु दरशण जासॉ ए। टेर
मन वैरी की एक न मानूं निज मन भाव वधासॉ ए ॥ १ ॥
सो दिन उदै जनम होय लेखै सनमुख शीस निवासाँ ए ॥ २ ॥
अष्ट अंग दंडोत वंदना परिक्रमा तिर जासॉ ए ॥ ३ ॥
पाय प्रसाद व्याध मिट तीनूं आनंद मंगल गासॉ ए ॥ ४ ॥
श्रीगुरुचरण परस होय निर्मल पातक दूर मिटासॉ ए ॥ ५ ॥
निद्रा दारी है वटपारी तिनसूं युद्ध करासॉ ए ॥ ६ ॥
श्रद्धा दीजो सतगुरु म्हारा करुणा विरह जगासॉ ए ॥ ७ ॥
सुमरण परचेकी अभिलापा प्रेम नेम वर पासॉ ए ॥ ८ ॥
द्यालवाल गुरु रामदास धिन आदि अंत निभजासॉ ए ॥ ९ ॥

पद १३

सजनी म्हारी रामसभा वलिहारी ए। टेर
रामसनेही परचै हरिजन चरणकमल वलिहारी ए ॥ १ ॥
तन मन धन निछरावल करसॉ अठसिधि नवनिधि सारी ए ॥ २ ॥
रचना ब्रहमंड सजूं सॅजीवन अरपूं वार हजारी ए ॥ ३ ॥
सतगुरुसें मै ऊरण नाहीं जिण दिया रामधन भारी ए ॥ ४ ॥
द्यालवाल नित लेऊं वलैया निभज्यो टेक हमारी ए ॥ ५ ॥

राग काफी ।

पद १४

म्हारे रामजना घर आया हो ।
बलिजाऊ देख दरस सुख पाया हो ॥ टेक
अनत उछाह भयो मन आनद परम पदारथ पाया हो ॥ १ ॥
हिरदो चौक पुराऊ सजनी चित चदन चरचाया हो ॥ २ ॥
भाव माट केसर रस घोरी महिमा सुगधि सुहाया हो ॥ ३ ॥
सूधो प्रीति रीति हरिजनकी ज्ञान गुलाल सुवाया हो ॥ ४ ॥
पिचकारी विरह प्रेम नीर भर नैन उमग झडलाया हो ॥ ५ ॥
आज बसत सत धिन दरसण सखियाँ मगल गाया हो ॥ ६ ॥
बालकाल बलि जाऊ वेला हरिजन राम मिलाया हो ॥ ७ ॥

राग कल्याण ।

पद १५

सनेहिया तुम आवो आवो राज महाराज ॥ टेर
निरधारा आधार गुसाँई चरण शरणकी लाज ॥ १ ॥
जन्म जन्मकी प्रीति पुरातन क्यों भूलत हो आज ॥ २ ॥
दीजे दरश दयानिधि माधव मेरे है सिध काज ॥ ३ ॥
बालकाल पर कृपा कीजे राम गरीबनिवाज ॥ ४ ॥

पद १६

रामइया शरणैकी प्रतिपाल । टेर
अवलग करी सोई अब कीजे अपने घरकी चाल ॥ १ ॥
जो सूरज परकासै नाहीं रात न कज विशाल ॥ २ ॥
शशि नहिं अमी द्रवै जो माधव तो निपजै केम रसाल ॥ ३ ॥
विरह कमोदनि जीवन सोई सब लालों सिर लाल ॥ ४ ॥
बालकालके समरथ स्वामी रामदास किरपाल ॥ ५ ॥

कामिनी सोरठ ।

पद १७

विरहनि कू दरशन दीजै, साहिब अपनी करलीजे । टेर
मैं राम पिया बलिहारी, प्रभु मेटो तपत हमारी ।
टुक दया दृष्टि भर देखो, जोवानै तारन लेखो ॥ १ ॥
जिव जन्म जन्मको झूरे, आशावत आशा पूरे ।
हरि आदू विरद विचारो, अब पलका पलक पधारो ॥ २ ॥

मोहि श्वास कल्प सम जावै, कब प्रीतम दरश दिखावै ।
जन घालवाल बलि जावै, कब राम पिया घर आवै ॥ ३ ॥

पद १८

पूरबली प्रीति विचारो, पिया अब क्यूं मोहि विसारो । टेर
धिन प्राण पुरुषोतम प्यारा, सब आपहि किया पसारा ।
कायासा महल वणाया, जिव माया मोह लुभाया ॥ १ ॥
धिन आदू सुरत संभारी, सो आयो शरण तुह्मारी ।
नित सहायक बिर्दा चारूं, यों भक्तवछलता सारू ॥ २ ॥
जिव निर्बल बल अब कांई, सब राम समर्थ शरणाई ।
अब आप आज्ञा सोइ कीजे, जन घालवाल जिव जीजे ॥ ३ ॥

पद १९

म्हारो वालो सदा सनेही, धिन प्रीति पूरबली एही । टेर
जिव जन्म धन्या नहिं भूलूं, एक सहायक शरणै झूलूं ।
धिन यो ठंभन जग माहीं, एक हरि बिन दूजा नाहीं ॥ १ ॥
एक चंद कमोद पियासी, जब देख्यां मन परकासी ।
तन मन पियाजी सांचा, बलिजाऊं मनसा वाचा ॥ २ ॥
अब घनहर प्रीतम आवो, विरह चातक टेक निभावो ।
संतां धिन सतगुरु गायो, जन घालवाल मन भायो ॥ ३ ॥

पद २०

पिया क्यों नहिं अबै पधारो, घर आदू रीति विचारो । टेर
है अबलाके बल साँई, धृक् जीव बिना देह कॉई ।
हो अबलाँ प्राण अधारा, बलिजाऊं प्रेम प्रियारा ॥ १ ॥
प्रथुरोमें सुधा मन भावे, इक नीर बिना मर जावे ।
धिन हरिजन दर्शण तेरा, याहीमें जीवन मेरा ॥ २ ॥
विरहनि मन वच क्रम प्यासी, पिया जीवन जीव जियासी ।
तुम घालवालके स्वामी, अब आवो अंतरयामी ॥ ३ ॥

राग देश ।

पद २१

बलिजाऊं सिंहथल सहर सुथान ।
हरियानंद आनंद के करता अनुभव प्रगट्यो भान । टेर
मान सरोज नगर सोइ दीवो मेटी निशा अज्ञान ॥ १ ॥

---

१ मछली ।

सर्व पदारथ सूझन लागा आतम पायो ज्ञान ॥ २ ॥
भर्म उलू कोचर मिट अविद्या निशिचर पखी हान ॥ ३ ॥
शिप चकवा दिल आनद उपज्यो प्रेमी कज विकसान ॥ ४ ॥
विमुख कमोदनि सोइ अमूझ्यो वकता चख हरखान ॥ ५ ॥
द्यालवाल गुरु तरणि एक रस विरदॉ भक्तिप्रधान ॥ ६ ॥

पद २२

ह्मानै प्यारो लागेछै जी मुरधर आज ।
रामभक्ति निज परगट कीन्ही रामदास महाराज ॥ टेर
चार वरणकू ज्ञान चतायो पावनपतित जहाज ॥ १ ॥
वडभागी जानै ओ मौसर मडली सत समाज ॥ २ ॥
दरशन परसन रामसनेही गुरु धम भाव सकाज ॥ ३ ॥
अनुभव छोला उरमे प्रगटे आनद करता साज ॥ ४ ॥
आन देवकी लाग मिटाइ अदल वधाई पाज ॥ ५ ॥
रसद वस्तु सुख सपति सारी रौरव काल न दाज ॥ ६ ॥
सदा सुभिक्ष दश में नवनिधि रामरायके राज ॥ ७ ॥
सतगुरु चरण शरण घर साचो द्यालवालकी लाज ॥ ८ ॥

मगल २३

हम परदेसी लोक एक दिन उठ चलै ।
कहियो रामहि राम वहुरि कवही मिलै ॥ टेक
वासो वसियो आय प्रभाते पथ परै ।
गोलू गोलू सग स्मास्म ही अरे ॥ १ ॥
डेरा है मैदान सराया वीच रे ।
जागत रहियो वीर धाड वहु मीच रे ॥ २ ॥
राव रक सुलतान खौसिया भूपती ।
काल महा वलवान सास अति सोखती ॥ ३ ॥
सूरवीर केतान गया सव लोग रे ।
वारो वार विहाय सुपन को जोग रे ॥ ४ ॥
आया एक ही एक एक ही जावणा ।
किणसू हप न शोक यही मन लावणा ॥ ५ ॥
रामा राम पुकार सत्चगुरुसग रे ।
निमय रमिया सत ज्ञान अणभग रे ॥ ६ ॥

इति ।



Sri Dayalu Dasji Maharaj
(Khedapa)

थमे विचालू तत्तकालू निरद पालू जाम प।
ऐसा गोविंदू० ॥ ४ ॥
नक्खा विदारे उदर फारे असुर मारे आप प।
भक्तीवधारे सत सारे दु ग हारे काप प।
केतान तारे यों उवारे सबथारे काम प।
ऐसा गोविंदू० ॥ ५ ॥

(प्रल्हादजी की कथा)

भक्त प्रह्लादने "नहि छाड़ बाबा राम नाम" गाया तब असुर हिरण्यकशिपु सुनकर जला और बहुत रिसाया, प्रह्लाद को मारने के वास्ते सर्पों से खुवाया, जहर पाया, पहाड़ से गुडाया, अग्निमें जलाया, और उनपर हाथी छुडाया, समुद्रमें वहाया, पर जहा तहा उसी नाम ने प्रह्लादजीको जिवाया। तब वह अधा जाती हिरण्यकशिपु अत्यत कुपित होकर बोला कि इस बालकको बाधलो। तब प्रह्लादजीने कहा नि–दयालु गोपाल परमात्मा सबमें व्यापक हैं। उस समय उसने प्रतिज्ञा की कि तुझ अभी मार डालता हू तब तत्काल थमे के बीचमें से विरदवहारू (भक्तका वाना वधारणे वाले) नृसिंह भगवान् प्रगट होकर असुर (हिरण्यकशिपु) के उदरको नखोंसे चीर फाडके उसे मार दिया। जब इस प्रकार भक्ति को वधार सतों के काम सारे तब तो हेप्रभो! मेरे दु ख को भी काटो। क्योंकि आपने कितने ही को तार और कितने ही को यों उबारे ये सब आप ही के काम हे ॥ ५ ॥

सवैया।

अरतपाल कृपाल जो राम जहा सुमिरे तेहिको तहँ ठाडे।
नाम प्रताप महा महिमा अकरे किय छाटेउ खोटेउ बाडे ॥
सेवक एक ते एक अनेक भये तुलसी तिहुँ ताप न डाढे।
प्रेम वदों प्रह्लादहि को जिन पाहन ते परमेश्वर काढे ॥ १ ॥ (भक्तमाल)

देखो अरुण पा गिरि दवा मनी मग सिद्द प।
करनाद रक्खू किये नक्खू नैन अक्खू तद प।
"इक गिद्द गाधू किये साधू नीच आदू धाम प।"
ऐसा

---

१ आवे। २ है।

सवैया।

दीन मलीन अधीन है अंग विहग परेउ छिति खिन्न दुखारी।
"राघव" दीन दयाउ कृपाउ को देखि दुखी करुणा भइ भारी।
गीध को गोद में राखि कृपानिधि नन सरोजन में भरि वारी।
बारहि बार सुधारत पंख "जटायु" की धूरि जटानसों झारी॥ १॥

दोहा।

मुये मरत मरि हैं सकल घरी पहर के बीच।
लही न काहू आज लौं गीधराज की मीच॥ १॥
रामविरह तन परिहरे सत्य प्रेम अवधेश।
वैसहीं प्रिय हित तनु तजे सत्य सखा खगेश॥ २॥ (भक्तमाल)

"शबरी सदाई भक्ति भाई ऋषि नवाई शीस पे"।
"शिला तिराई नारि धाई नाव माँइ वीस पे"।
"सूआ पढाई पाप दाई गती चाई धाम पे"।
ऐसा गोविंद॰॥ ७॥

(बाई शबरी की कथा)

(१) शबरीबाईकी भक्ति सदैव हो भगवान् के मनभाई निन शबरीबाई को ऋषियों ने मस्तक नमाया।

"बाइ रघुराज रघुराज ऐसा कानन में पूछत फिरत कहो कहाँ मेरी शबरी"

कवित्त।

सवैया ।

प्रभु चाहत हैं निह केवल भक्ति न चाहत रूप कुलै बल हैं ।
रसरप्रमणी चलि भीलिनको निज मातु समान मिले कल हैं ॥
रघुनन्दन भाव सु भूख भरे फल खाय अघाय पिये जल हैं ।
शवरी के सुप्रेम पगे भल ये फल हैं कि चहूँ फल के फल हैं ॥ १ ॥

दोहा ।

प्रेम पगे चखि चार फल, कौशल्या के लाल ।
भक्तन की कवरीमणी, शवरी करी कृपाल ॥ १ ॥
अधिक वढावत आपते, जन महिमा रघुवीर ।
शवरी पद रज परसिकै, शुद्ध भयो सरनीर ॥ २ ॥ (भक्तमाल)

(अहिल्याजी की कथा)

(२) जो अहिल्या शापवशात् शिला होगई थी वह भगवच्चरणरज के प्रभा से तिरकर उत्तम तपोमूर्ति स्त्री होकर पतिलोक को प्राप्त हुई ।

(३) केवट ने एक नौका से ही अपने वीसों ही कुटुम्वियों का उद्धा कर लिया ।

छन्द ।

पद कमल धोइ चढाइ नाव न नाथ उतराई चहौं ।
मोहि राम ! राउरि आन दशरथ शपथ सव साची कहौं ॥
वरु तीर मारहि लखन पै जव लगि न पाव पखारिहौं ।
तव लगि न तुलसीदास नाथ कृपालु पार उतारिहौं ॥ १ ॥

कवित्त ।

प्रभु रुख पाइकै वुलाइ वालक घरनि, वदि कै चरण चहुंदिशि वैठे घेरि घेरि ।
छोटो सो कठौता भरि आनि पानी गगाजू को, धोय पायँ पियत पुनीत वारि फेरिफेरि ॥
तुलसी सराहैं ताको भाग सानुराग सुर, वरपि सुमन जय जय कहैं टेरि टेरि ।
विवुध सनेहसानी वानी असयानी सुनि, हँसे राघौ जानकी लखन तन हेरिहेरि ॥१॥

दोहा ।

पद पखारि जल पान करि, आपु सहित परिवार ।
पितर पारकरि प्रभुहिं पुनि, मुदित गयउ लै पार ॥ १ ॥ (भक्तमाल)

(गणिका की कथा)

(४) पापरूप गनिकाने सूवेको पढाया तिससे वह भी गति को प्राप्त होगई ॥ ७ ॥

सवैया ।

दीन मलीन अधीन है अग विहग परेउ क्षिति खिन्न दुखारी ।
राघव" दीन दयालु कृपालु को देखि दुखी करुणा भइ भारी ।
गीध को गोद में राखि कृपानिधि नन सरोजन में भरि वारी ।
बारहि बार सुधारत पख जटायु ' की धूरि जटानसों झारी ॥ १ ॥

दोहा।

मुये मरत मरि हैं सकल घरी पहर के बीच ।
न्ही न काहू आज ला गीधराज सी मीच ॥ १ ॥
रामविरह तन परिहरे सत्य प्रेम अवधेश ।
तैसहिं सिय हित तनु तजे सत्य सखा गृद्धेश ॥ २ ॥ (भक्तमाल

"शबरी सदाई भक्ति भाई ऋषि नवाई शीस प" ।
"शिला तिराई नारि धाई नाव मांई बीस प" ।
"सूरा पढाई पाप दाई गती वाई पास प" ।
ऐसा गोविंद० ॥ ७ ॥

(बाई शबरी की कथा)

(१) शबरीबाईकी भक्ति सदैव ही भगवान् के मनभाई जिन शबरीबा को ऋषियों न मस्तक नवाया ।

"सोइ रघुराज रघुराज पपा कानन में पूछत फिरत कहो कहाँ मेरी शबरी '

कवित्त ।

आगू चले राम आइ आगू लेन शबरी हू चरण परत धाइ मिलन को धाये हैं ।
गिरि दड ही सो भुज दड सो उठाय ल्इ फेर क गिरी सो पुनि भुज पसराये हैं ॥
प्रेमदसा कही नहीं जात रघुराज दोउ तनमन वचन की सुधि बिसराये हैं ।
भले आप मिले मोहि भली मिली वेहू यह कहत दुहून के भकारे भरि आये हैं ॥ १ ।
बेर बेर बेरले सराहै जनि बरबेर रसिकविहारी देत बधु कहँ फेर फेर ।
चाख चाख भाखे यह वाहूते महान मीठो लेहुतो लखन यों बखानत हैं हेर हेर ॥
बेरबेर देवे बेर शबरी सुबेरबेर तोउ रघुवीर बेर बेर तोह टेर टेर ।
बेर जनि लावो बेर बेर जनि लावो बेर बेर जनि लावो बेर लावो कहैं बेर बेर ॥ २ ॥
ब्रह्मके उपासी तपरासी वनवासी वर विपुल मुनीशन के आश्रम सिधायो मैं ।
कीन्हे सनमान विन सहित विधान तऊ काहू ठोर कबहू न पेट भरि खायो मैं ॥
अमृत समान शबरी के इन बेरन में रसिक विहारी मन भायो स्वाद पायो मैं ।
विहाय वन आयो जबत हौं बधु तबते बिचारो सत्य आजही अघायो म ॥ ३ ॥

छन्दमें चार कथाएँ हैं ।

सवैया।

प्रभु चाहत हैं निह केवल भक्ति न चाहत रूप कुलै वल हैं।
रसरश्मणी चलि मीलिनको निज मातु समान मिले कल हैं॥
रघुनन्दन भाव सु भूख भरे फल खाय अघाय पिये जल हैं।
शबरी के सुप्रेम पगे भल ये फल हैं कि चहूँ फल के फल हैं॥ १॥

दोहा।

प्रेम पगे चखि चार फल, कौशल्या के लाल।
भक्तन की क्वरीमणी, शबरी करी कृपाल॥ १॥
अधिक बढावत आपते, जन महिमा रघुवीर।
शवरी पद रज परसिकै, शुद्ध भयो सरनीर॥ २॥ (भक्तमाल)

(अहिल्याजी की कथा)

(२) जो अहिल्या शापवशात् शिला होगई थी वह भगवच्चरणरज के प्रभाव से तिरकर उत्तम तपोमूर्ति स्त्री होकर पतिलोक को प्राप्त हुई।

(३) केवट ने एक नौका से ही अपने वीसों ही कुटुम्बियों का उद्धार कर लिया।

छन्द।

पद कमल धोइ चढाइ नाव न नाथ उतराई चहौं।
मोहि राम! राउरि आन दशरथ शपथ सब साची कहौं॥
वरु तीर मारहिं लखन पै जब लगि न पाव पखारिहौं।
तब लगि न तुलसीदास नाथ कृपालु पार उतारिहौं॥ १॥

कवित्त।

प्रभु रुख पाइकै बुलाइ बालक घरनि, वंदि कै चरण चहुदिशि वैठे घेरि घेरि।
छोटो सो कठौता भरि आनि पानी गंगाजू को, धोय पायँ पियत पुनीत वारि फेरिफेरि॥
तुलसी सराहैं ताको भाग सानुराग सुर, बरषि सुमन जय जय कहैं टेरि टेरि।
बिबुध सनेहसानी बानी असयानी सुनि, हँसे राघौ जानकी लखन तन हेरिहेरि॥१॥

दोहा।

पद पखारि जल पान करि, आपु सहित परिवार।
पितर पारकरि प्रभुहिं पुनि, मुदित गयउ लै पार॥ १॥ (भक्तमाल)

(गणिका की कथा)

(४) पापरूप गनिकाने सूवेको पढाया तिससे वह भी गति को प्राप्त होगई॥ ७॥

एक गनिका ने सूवे को राम राम पढाना शुरू किया। एक समय रात्रि में पींजरा खुला रहने से सूवे का तो निन्दी लेगइ और वहाँ एक सर्प घस गया। वेगम गनिका ने अंधेरे में ही पींजरे में हाथ डाल सूवे को पढाना चाहा इतने ही में साप उसे डसगया। गनिका ने कहा सूवा राम राम कह इस प्रकार कहते कहते साप के जहर से वह गनिका मरकर नामके प्रताप से सद्गति को प्राप्त होगइ। इति।

इक असुर यइयुँ शरण लइयुँ चिरजइयुँ भाख ए।
ता सुख्ख दइयुँ मोख भइयुँ दोष नइयुँ साख ए।
"भृत कीश कइयुँ" "भालु सइयुँ प्रीति पइयुँ जामें ए"।
वेसा गोविंद॰ ॥ ८॥

(विभीषणजी की कथा)

(१) एक असुर विभीषण ने रावण से भयभीत होकर रामजी की शरण ली। तब भगवान् उसे "चिरजीवी हो" इस प्रकार कहकर, अभयदानरूपी सुख दिया। बाली के दोषों के समान होते हुए भी उसके दोषों को न देखते हुए भगवान् ने अंत में उसे मोक्ष का भागी बना दिया। वाल्मीकि आदि ग्रंथों में ऐसी साक्षी है ॥

कवित्त।

पाऊँगो हमेश अंग वसन उतारे सबै दीन जानि अधिक कृपालु मन भाऊँगो।
भाऊँगो अहेर संग धाऊँगो वताऊँ पथ दुरभ पुनीत नित झँठनको खाऊँगो॥
खाऊँगो प्रसाद दास रामको कहाऊँ भयो रसिकविहारी तजि अनत न जाऊँगो।
जाऊँगो अवध निज जनम गमाऊँ तहाँ गाऊँगो सु कीरति परमपद पाऊँगा ॥ १ ॥

छंद मत्तगयंद।

पोढन कू नृप के पलरे अरु ओढन को पट है बकलीके।
भोजन याम मिटै कबहू कबहूक भख फल है कदलीके॥
संपति को परवस्य यहै स महातुल देह विदेहलीके।
तादिन लंक दइ जो विभीषण हाथ बढ़ा रघुनाथ बलीके ॥ १ ॥
वेद विरुद्ध महामुनि सिद्ध सशोक सुरासुर लोक उजार्यो।
आर कहाकहु सीय हरी तबहू करुणानिधि कोप निवार्यो॥
सेवक क्षोभ ते छाडि छमा तुलसी लख्यो राम सुभाव तुझार्यो।
तौलों न दावि दल्यो दशकधर जोलों विभीषण लात न मार्यो ॥ १ ॥

---

१ इस छन्दमें तीन कथाएँ हैं। २ वी=भय। ३ जायवत।

मातको मोह न द्रोह कुमातको तातको सोच न गात दहेको।
राजको लोभ न प्रानको क्षोभ न वंधु विछोह न ओधि रहेको॥
नेक न जीवमें आवत केशव सोच न लंकमें सीय रहेको।
ता रन भूमिमें राम कहै मोहिं सोच विभीषण भूप कहेको॥ २॥

(भक्तमाल)

(हनुमानजी की कथा)

(२) हनुमानजी को प्रभु ने निज का दास वनाया। भक्तवत्सल श्रीरामचंद्र स्वामी ने निज मुख से फरमाया कि हे हनुमान्! तू मेरा सच्चा पायक है।

"तू म्हारो खरोरे सिपाई रे हनुमंता तू म्हारो खरो रे सिपाई"
"गिरिजा जासु प्रीति सेवकाई। वार वार प्रभु निज मुख गाई"

सोरठा।

सेइय श्रीहनुमान, भुक्ति मुक्ति हरिभक्ति प्रद॥
जनरक्षक भगवान, वीर धीर करुणायतन॥ १॥ (भक्तमाल)

(जाँबवन्तजी की कथा)

(३) जांववानजी भालू थे परन्तु उनकी भगवान् में सच्ची प्रीति पाई गई।

दोहा।

वलि वाँधत प्रभु वाढेउ, सो तनु वरणि न जाइ।
उभय घरीमें दीन्ह मैं, सात प्रदक्षिण धाइ॥ १॥ (भक्तमाल)

"दुष्टी अशानूँ[२] वेद छिन्नू वहु रुदन्नू अज्ज ए"।
हा हा विपनूँ[३] हुय प्रसन्नू धारि तन्नू कज्जँ[४] ए।
"मच्छा हग्रीवूँ[५] भक्ति सीवूँ निगम कीवूँ ठाम ए"।
ऐसा गोविंदू० ॥ ९॥

(हयग्रीवावतार की कथा)

(१) दुष्ट शंखासुर ब्रह्माजी से वेद छीनकर लेगया। जव ब्रह्माजी ने हाहाकार कर वहुत रुदन किया तव भक्तिके सीम विष्णुनारायण प्रसन्न हो उनके कार्य के वास्ते हयग्रीव अवतार धारण कर वेदों को पीछा ला ब्रह्माजी के सुपुर्द किये।

---

१ इस छन्दमें दो कथाएँ हैं। २ अशन=भोजन। ३ विष्णु। ४ काज=कार्य। ५ हयग्रीव।

(मच्छावतार की कथा)

(२) इसी प्रकार किसी कल्प में मच्छावतार धारण कर राजा सत्यव्रत को उपदेश दे वेदों को ला ब्रह्माजी को सौंपे ॥ ९ ॥

(श्रीमद्भागवतस्कंध ८ अध्याय २४)

वरदान पाए शिव रिझाए भस्म भाए विकरू।
महा कष्ट पाए ऊठ धाए दीन थाए शंकरू।
शिवा सवाए आप आए हत्यो ताए छामें ए।
ऐसा गोविंदू० ॥ १० ॥

(महादेवजी और भस्मासुरकी कथा)

भस्मासुर नामक असुर ने महादेवजी को रिझा कर मनभावता विकराल वरदान प्राप्त किया। बाद में शंकर उस भस्मासुर से महाकष्ट पाकर दीन हो उठ भागे तब भगवान् आप आकर पार्वतीका रूप बना उसे छल तत्क्षण उस दुष्ट को मारडाला।

शकुनीके पुत्र वृकासुर उपनाम भस्मासुरने नारदजी के कहने से शरीर को अग्निमें होम आशुतोष महादेवको प्रसन्न कर क्रूर वरदान मांगा कि जिसके शिरपर हाथ धरू वही भस्म होजाय। भोलेनाथने कह दिया तथास्तु। तब तो उस दुष्टने शिव ही पर हाथ फेरना चाहा। वरकी परीक्षा होजाय और पार्वती भी हाथ लग जाय। अब तो भगे कैलासपति वह भी लगा पीछे। इस तरह से शंकरको दुखित देख भगवान् पार्वतीका रूप धारण कर बोले प्यारे वृक! कहा जारहाहै ? मैं तो कबकी तेरी इंतजारीमें खडी हू। वह मोहित हो हाथ ऊँचा कर नाचने लगा। हाथ शिरपर आते ही बस मुआमिला खातमा उसके भस्म होने से महादेव प्रसन्न हुए। प्रभु ने कहा हेभोलेशंभो! ऐसा वरदान दुष्टों को मत दिया करो। इति।

क्रीडा समर्दू[4] गज्ज अदू ग्राह फदू रच्च ए।
करप्यो गयदू हून जिंदू द्दूड मर्दू[6] सच्च ए।
ररो कहदू हरि हरदू भेटि द्दू ग्राम ए।
एसा गोविंदू० ॥ ११ ॥

---

१ विकराल=भयानक। २ पार्वती। ३ छिन=क्षण। ४ समुद्र। ५ जिंद=शरीर। ६ मध्य। ७ दुःख।

(गजेन्द्र की कथा)

जब गजेंद्रनें क्रीडार्थ समुद्रमें प्रवेश किया तब ही ग्राहने फंदा रचकर गजेंद्र को अंदर खींचा। शरीर डूब गया। केवल शूडमें ही सचाई रही। उस समय गजेंद्र ने ररररर ऐसा पुकारा। पुकार सुनते ही हरि अवतार धारण कर उसके कष्ट को हर लिया और गजग्राह के परस्पर का क्लेश मिटाकर दोनों को परम धाम दिया।

कवित्त।

पोढे निज भौन में सुथान में कृपानिधान एवे गज दीन वानि परी आन कान में।
कठत ही अचान कमला हू न पाए जान एक पानि चक्र उपधान एक पान में॥
ताही अवसान तजे तारक पयान में स दौरिबे अपान प्रेन्यो चक्र कौं अगानमें।
ग्राह गज तान में न कीनी ढील थान में हकारभो सुवान में रकार भो विमानमें॥ १॥

दोहा।

हरे चरैं तापहि बरे, फरे पसारहिं हाथ।
तुलसी स्वारथ मीत जग, परमारथ रघुनाथ॥ १॥
बडे दीनको दुख सुनत, देत दया उर आन।
हरि हाथी सूं कब हुती, कहु रहीम पहिचान॥ २॥ (भक्तमाल)

द्विज भयो वेलूं[1] अजामेलू कामकेलू वाम ए।
जमदूत खेलू काल वेलूं[2] कंठ मेलू ग्रामं[3] ए।
सुत हेत हेलू नामलेलू कर उवेलूं[4] साम[5] ए।
ऐसा गोविंदू० ॥ १२॥

(अजामिल की कथा)

एक अजामिल नामक ब्राह्मण वेश्या के साथ काम क्रीड़ा में वडा विह्वल होगया था। जब अंत के समय में जमदूतों ने आकर अपना खेल खेला ही। तब कंठ के मिलते हुए ग्राम से अर्थात् दवे कंठ से पुत्रके वास्ते हे राम नारायण! ऐसा नाम लेकर हेला किया तब राम महाराजने उसको जमदूतों से बचाकर परमधाम दिया।

कवित्त।

कीटन पै भृंग जैसे भृंग पै विहंग जैसे विपुल विहंग पै ज्यों वाज जोरवार है।
वाजपै ज्यों मारजार मारजार पै ज्यों स्वान स्वान पै तेंखु तापै गज मतवार है॥

---

१ विह्वल। २ वेला=समय। ३ स्वर। ४ उवारना। ५ जरख।

गज पर सिंह जैसे सिंह हू पै सारदूल सारदूल हू पै जैसे सरभ उदार है।
सरभ पै जसे नरसिंह भाखे खगराज पापन पै तैसे हरिनामको उचार है ॥ १ ॥

दोहा।

शक्ति जिती हरिनाम में, पापदहन की होय।
तेती पातक पातकी, करि न सकत जग कोय ॥ १ ॥ (भक्तमाल)

लाखा गृहाए जाल्दाए पाडुमाए राख ए।
द्रोही खपाए समर साए विजैताए भाख ए॥
दोषण मिटाए पुराण गाए सखा खाए भामें ए।
ऐसा गोविंद० ॥ १३ ॥

(पांडवों की कथा)

दुर्योधन ने पाडवों को लाखागृह के अंदर जलादेने में बड़ी कोशिश की, परंतु जिन श्रीकृष्ण ने माता सहित पाडवों की रक्षा की और समर में स्वय सहायक हो शत्रुओं को खपाकर विजय करवाई, और कुष्ट गोल्क आदि दोषण मिटा जिन पाडवों की कीर्ति पुराणों में विख्यात की। देखो जिन कृष्ण महाराज की कृपालुता कि अर्जुन सखा तो था ही, परतु इसके सिवाय आपने अजुन को अपनी बहन सुभद्रा परणाकर अपना बहनोई[१] भी बना लिया। धन्य है प्रभु धन्य है आपकी दयालुता को।

(भक्तमाल)

सभ्भा मँझारी दुष्ट ख्वारी कर उघारी काज ए।
हा हा पुकारी पाडु नारी लाज म्हारी आज ए।
अम्बर[२] वधारी प्रीति पारी कष्ट टारी वाम ए।
ऐसा गोविंद० ॥ १४ ॥

(द्रौपदीजी की कथा)

सभा के बीच दुष्ट दुःशासन ने द्रौपदी को बेइज्जती के साथ उघाडी करना चाहा, उस समय आर्त नाद से द्रौपदी ने पुकारा (अर्जी स्वीकारो स्नेही सावरिया करुणासिंधु मुरारी) हे प्रभो! मेरी लाज आज की ही है अर्थात् आज लाज चली जायगी। तब आर्तहरण दीनदयालु ने प्रीति पालने के लिये वस्त्र वधार कर द्रौपदी का कष्ट टाला।

---

१ बहिनोई। २ वस्त्र।

कवित्त।

कोई ना सगैया कोई बात ना कहैया कोई गति ना पुछैया ओरहू को ना तकैया है।
बादि मे सहैया हाय दैया न गोसैंया कोई मुखको देखैया नहीं सीखको दिवैया है॥
द्रौपदी विचारै रघुराज आज जाती लाज सब है खरैया पै न टेर को सुनैया है।
बिपति हरैया मेरी पतिको रखैया एक द्वारिका बसैया बलभद्रजीको भैया है॥ १॥

सवैया।

एकहि आश भरोस है एकहि एकहि है बल विक्रम मेरे।
एकहि जोग संजोग है एकहि और कुरोग कुजोग घनेरे॥
त्रास को नास को सोच कछू नहिं एकहि सोच लगै हिय हेरे।
संकट में रघुराज दयानिधि आये नहीं हरि द्रौपदि टेरे॥ १॥
कैधों पुकार गई उतलौं नहिं कैधों विचार्‌यो नहीं निज दासी।
सेवक की सरनाई तजी किधौं की करुनाई ते ह्वैगे निरासी॥
हाय हरी तुम कैसे भये निठुराइ कहां यह पाइ है खासी।
द्वारका वासि सुनो रघुराज न लागति लाज जो होयगि हासी॥ २॥

कवित्त।

गिरिगई गरुई गदा धों गिरिधारीजू की कैधों कौनौ जंगमें सरंग कहूं लै गयो।
कुंठित भयो है खड्ग मोथरा कै चक्रभयो कैधों गरुडासनको गरुडहू ख्वैगयो॥
एरे दई कैसी भई दया धों विसारी दई मेरी ना पुकार गई नाथ काह ज्वैगयो।
रघुराज कैधों आज द्वारिका विलासीजूको विरद बखान हाय हासी हेत ह्वैगयो॥ २॥

दोहा।

अस विचारि मन में विलखि, दोऊँ हाथ उठाय।
कृष्णा कृष्ण पुकारती, कहाँ गये हरि हाय॥ १॥

कवित्त।

जानतीहूं जियमें जरूर मशहूर यह कुरु कुल संतति विशेष वधि जावैगी।
परम प्रचंड चक्र चपल चलाइ जीति देहौ सब राजि धर्मराज की कहावैगी॥
ऐहो दोरि द्वारिका ते द्वारिका विलासी वेगि रघुराज पांडुपुत्र कीर्ति छिति छावैगी।
फेरि पछितैहो मोहि बहुत बुझैहो जदुराज लाज गए पुनि लाज नहिं आवैगी॥ ३॥
"जायगी लाज तुम्हारी रे नाथ मेरो क्या विगरैगो"।

कवित्त।

दुर्जन दुशासन दुकूल गह्यो दीनबंधु दीन ह्वैकै द्रुपददुलारी यों पुकारी है।
छाँडे पुरुषारथको ठाढ़े पति पारथ से भीम महा भीम ग्रीवा नीचे करिडारी है॥
अम्बर ज्यों अम्बर अपार कियो वंशीधर भीषम कर्ण द्रोण शोभा यों निहारी है।
सारी मध्य नारी है कि नारी मध्य सारी है कि सारी है कि नारी है कि सारीही की नारीहै॥४॥

कबै आप गयेथे बिसाइन बजार बीच कबै बोलि जुलाहा बनाये दर पटसे ।
नदजी की कामरी न काहू वसुदेवजू की तीन हाथ पटुका लपेटे रहे कट से ॥
मोहन भनत यामें रावरी बड़ाई कहा राखलीनी आन बान ऐसे नटखट से ।
गोपिनके लीने तब चीर चोरि चोरि अब जोरि जोरि देन लागे द्रौपदीके पटसे ॥ ५ ॥

दोहा।

ग्राहि तीनि कहि द्रौपदी ऊँच उठायो हाथ ।
तुलसी कियो इग्यारहों बसन वेष यदुनाथ ॥ २ ॥
कहा करै बैरी प्रबल जो सहाय रघुवीर ।
दश हजार गज बल दृव्यो घट्यो न दशगज चीर ॥ ३ ॥ (भक्तमाल)

ईक छिज्ज दीनू रोरभीनू प्रीति कीनू कान प ।
मन वाछ लीनू पुर नवीनू अभय दीनू दान प ।
"धिन सुरतदेवू भक्तिमेवू सिद्ध सेवू काम प" ।
ऐसा गोविंदू० ॥ १५ ॥

(सुदामाजी की कथा)

(१) एक सुदामा नामक दीन दरिद्र ब्राह्मण ने श्रीकृष्णचन्द्र महाराज से प्रीति कर मनवाछित वस्तु पाई और जिन दयालु ने अपने मित्र के लिये सुदामा नामक नवीन पुरी देकर अभय दान दिया ।

कवित्त।

आवति है लाज भारी जात ब्रजराजजू पै बसन समाज देखि खरो मरजाइये ।
एकही पिछोरी सोतो ठोर ठोर फाटि रही ओढ़िये निशा कों जामें प्रात उठ न्हाइये ॥
मेट ऐसी नाहिं जो लेजैये भगवतजू पै अन्तक भई है नारि कोलों समझाइये ।
देह पर मांस जोलों नासिकामें श्वांस तोलों वही उपहास माँगि मित न सताइये ॥ १ ॥

सवैया।

हे करतार हों तोवां कहों कबहू नहिं दीजिये काहुके टोटो ।
और लिखो जनि काहुके भागमें मित्रके काज महीप निपोटो ॥
वहू तो जानत है अपने जिय मागिवेतें कछु और न खोटो ।
जो गयो मांगन तू बलिद्वारपें याहितें हैगयो बावन छोटो ॥ १ ॥
'मति मांगि मति मांगि जाको नाम मांगना'

---

१ इस छन्दमें दो कथा एँ हैं। २ दुःख, दरिद्र ।

सिसिर के पाला को न व्यापत कसाला तिन्हें जिनके अधीन एते उदित मसाला हैं।
तान तुक ताला हैं विनोदके रसाला हैं सुबाला हैं दुसाला ओ बिसाला चित्रसाला हैं॥६॥)

"मदिर देख डरे हो सुदामा मदिर देख डरे हो"

कवित्त।

याहीते जनमभरि गयो नहि श्यामजू पै पन्हइनि मेरो कह्यो वाक्य नहिं माने हो।
जाहु जाहु ले रही न मानती अनाज खाय ऐंडी मेंडी बात मेंतो गोविंदकी जाने हो॥
द्रौपदीको चीर दिये गोपिन के छीन लिये ग्राह ते बचायो गज रंगभूमि भाने हो।
ब्राह्मणी समेत कहू खेत तें उपान्यो घर यात हू बचायो वाको कह्यो मैं न माने हो॥७॥
रह्यो याहि ठाउं मेरो गांउ नाउ मेरेही को तीन्हों को निकार मेरे निकट बसैयाको।
हाय कोइ आइ इते पापी क्षितिराइ लूटि लीनो मेरो ग्राम जाय तापी है मडैयाको॥
बिरचि निकेत इते साहिबी समेत बसो कहाँ गइ छइहै कैसे पाऊं म छुगैयाको।
कौन फरियाद सुने कौन मेरी याद करे कैसे गोहराऊं दूर द्वारका कन्हैयाको॥८॥
चौंतरा उजारि काहू चामीकर[1] धाम कीनों छानतो छवाय डारी छाइ चित्रसारीजू।
जो हों होतो घर तोपै काहेको नचन देतो होनहार ऐसी खोटी दसाही हमारीजू॥
होंतो होतो काहल हलाहल दिखाय करि जाहुन उठाइ देतो देइ मुख गारीजू।
लोभकी सवारी दुख भूखकी दलनहारी भैया बनवारी काहू सोऊ मार डारीजू॥९॥
आलिन के यूथ ज्यों ज्यों आदर से बोले आय त्यों त्यों डरपाय पग आगेको न देत है।
पंडित न ज्योतिषि न वैद्य वा न कौतुकी हू रानी जो बुलावति है कहो कौन हेत है॥
द्वारिका के राजासे मिलेतें घर छीनोगयो रानी कहा छीनेगी कह्यो न मेरो खेत है।
मोसो कहा नातो तुम जाइ कहो वार्ते मोहिं भूलि न सुदातो कोऊ ऐसे परलेत है॥१०॥

दोहा।

भौन द्वारते निकसिके, आइ तिय पिय पास।
फैल रह्यो दसहू दिशन, कोटिन चंद्र प्रकास॥२॥ (भक्तमाल)

(श्रुतदेवजी की कथा)

(२) भक्ति के मर्म को जाननेवाला धन्य है श्रुतदेव कि जिसने भगवत सेवा कर अपना मनोरथ सिद्ध किया।

(भक्तमाल)

विदुर सदाई प्रेममाई भक्तिभाई शुद्ध ए।
छिलका खवाई धाह लुगाई प्रसन्नताई तद्रूप।
राजा भुँजाई तजी साँई यहाँ न लाइ दाम ए।
ऐसा गोविंद०॥१६॥

---

1 चामीकर=सुवर्ण

(विदुरजी की कथा)

विदुरजी सदैव प्रेम में मग्न होकर शुद्ध भक्ति किया करते थे। उनकी स्त्री विदुरानीजी ने भगवान को केलों के छिलकों का भोजन करवाया, तब प्रसन्न हो विदुरजी की स्त्री के ताई वाह लुगाई अर्थात् धन्य है तू इस प्रकार आपने प्रसन्नता दी। आहा हा जिन प्रभु ने राजा दुर्योधन के यहां छप्पन प्रकार के अमूल्य पकवानों को छोडा और विदुर के घर छदाम की कोडी भी न लगाकर छिलकों का भोजन किया।

दोहा।

अहह ! भइउँ मै बावरी, रही न तनु सुधि नेक।
ऐसी सुधि भूली कि नहिं, छिलका सार विवेक ॥ १ ॥
कह्यो विदुर सों तब हरी, ये छप्पन पकवान।
मिष्ट मोहि लागत नहीं, वे छिलका न समान ॥ २ ॥
ततवेत्ता तिहुँलोक में, भोजन किये अपार।
कै शबरी कै विदुर घर, रुच पाये दोय बार ॥ ३ ॥

कवित्त।

ठानी मिझमानी जब दुर्योधन माधव की बाजी गजराज निजराने को बने रहे।
पालक पिछोने रचे मोति मनिमाल खचे चौकन मे चंदसे वितान हू तने रहे ॥
नारी छत्रधारिन की गारी तहा गायवे कूं आई दर्शकाज नृप चाहत घने रहे।
छोड पाक घीके प्रभु राजी शाक हीके जीके विदुर घरनीके नीके नेहमें सने रहे ॥ १ ॥
आपनी विभूति को दिखावे दूनो दोर शोर गाजे और बाजे सहसाजे गजबाजी कौं।
गुलके गलीचे बिछे अतर सुगंधि सिंचे शालिग बगीचे बनवाये जो मिजाजी कौं ॥
चारि विधि पाक रचि नोंते कृष्णचन्द्रजू कॉ तौपै दुर्योधन की देखि दगाबाजी कौं।
त्यारी तजि ताजी तर विदुर पधारे घर भूरि भये राजी यदुराज भखि भाजी कौं ॥ २ ॥

दोहा।

भावंते की लात भलि, अण भावत को नेह।
कोने काम कमालिया, फागण वूठो मेह ॥ ४ ॥
मान सहित मरिबो भलो, जो विष देत बुलाय।
अहमद अमी न पीजिये, आदर विना अघाय ॥ ५ ॥
दादू आदर भाव का, मीठा लागै मोठ।
विन आदर व्यंजन बुरा, जीमण वाला ठोठ ॥ ६ ॥ (भक्तमाल)

भीष्म सखंत्तू अडिग मत्तू गही अत्तू रास्र प।
आयुद्धं हत्तू भक्तपत्तू दर्शदत्तू पास्र प।
मेले मुकत्तू रामरत्तू गोपगत्तू गाम प।
ऐसा गोविन्दू० ॥ १७ ॥

(भीष्म पितामह की कथा)

जो भीष्मजी ने दृढ अचल प्रतिज्ञा की थी वह अंत में रखली । उनकी प्रतिज्ञा सत्य रखने को भक्तपति भगवान ने शस्त्र हाथ में धारण कर समीप में जा दर्शन दिया। और रामरतभक्त जिस गोप्यगति (मुक्ति) में प्राप्त होते हैं तिस मुक्ति में भीष्मजी को भेजे।

पद।

जो न सुरसुरि सुवन कहाऊँ तौ प्रण सभा मध्य अस गाऊँ ॥
कौरव पांडव बीच दुहू दल हरि पूजन अस ठाऊँ ॥ १ ॥
शोणित कणन न्हवाय नाथ कौं रण रज बसन उढाऊँ ॥
पांडव सेन मारि गोबिंद अंग चदन कोप चढाऊँ ॥ २ ॥
विविधि वरन को विपुल विकासित विशिख माल पहिराऊँ ॥
सनमुख शत्रु सघारि सहस्रन कीरति सुरभि सुँघाऊँ ॥ ३ ॥
तबहि निविक्रम को तुरंत तहँ विक्रम दीप दिखाऊँ ॥
पारथ सखा समीप जायके प्राण निवेद लगाऊँ ॥ ४ ॥
सकल जगत तें खैंचि प्रीति की बीरी आजु खवाऊँ ॥
विजय बात चलवाय समर महँ जय दक्षिणा दिवाऊँ ॥ ५ ॥
रथसों रथ मिलाय माधव को ध्वज चामरहिं चलाऊँ ॥
नख सिख निरखत रूप अनूपम नैन निरांजन लाऊँ ॥ ६ ॥
बार बार ध्वनि दृढ प्रत्यचा धनुपहि बाज बजाऊँ ॥
रथ मडल करि दे परदक्षिण उर आनद उपजाऊँ ॥ ७ ॥
जदुवर कर सों आज अवशि मैं चक्र प्रसादहि पाऊँ ॥
अर्जुन सर पजर जजर ह्वै गिरि सनमुख शिर नाऊँ ॥ ८ ॥
यहि विधि रण प्रभुको करि पूजन त्रिभुवन में जस छाऊँ ॥
श्रीरघुराज कृपा हरि की लहि बरबस हरिपुर जाऊं ॥ ९ ॥

पद।

जदुपति फिरि फिरि हस्त पसारी ।
बार बार अर्जुनहि डोलावत मारत वदन उचारी ॥

१ सख्त । २ आयुध=शस्त्र ।

धा मरि गये किधौ जीवत हो बोलहु आंख उघारी।
कहत रहे अस वचन सभामहँ मैं गांडीवहि धारी॥
दंड द्वैक महँ कौरव दल को करिहों अवसि सँहारी।
सो प्रण की सुधि भूलि गये अब कत दीन्हो धनु डारी॥
उठहु उठहु अब चेत करहु तन तेरी बहु बडवारी।
आजु पाडव कुलकी मरजादा लगी तोहि महँ सारी॥
धर्म भूप तव बल चढ़ि आयो दै दुंदुभि प्रचारी।
होत शिथिल अब तोहि समर महँ को करिहैं रखवारी॥
कादर सरिस शिथिल निरखत तोहि विलखत बुद्धि हमारी।
कैसे के अस विक्रम महँ जग कीरति चली तिहारी॥
सखा साँच हमसों तुम भाखहु भलकै मनहि बिचारी।
किधौं बिजै अभिलाख अहै कछु किधौ मानि लिय हारी॥
जामें जीत होइगी तुम्हरी सोइ मति करन हमारी।
श्रीरघुराज तोहि सम मेरे कौन मीत हितकारी॥

पद।

धावत आवत सन्मुख हरिको भीषम निरख परम सुख पाग्यो।
तजिवो विशिख बंध कर दीन्हो, अनिमिष सुषमा निरखन लाग्यो॥
दोउ कर जोरि हुलस करि बोल्यो मुख, धन्य धरा मँह मोहि करदीनो।
निज जन जानि दयानिधि निज प्रन टारि मोर प्रण पूरण कीनो॥
आवहु आवहु अब न रुको कहुँ मारहु चक्र अवसि मोहि काहीं।
विते सातसे संवत जग में अस अवसर हौं पावों नाहीं॥
समर मरण अस पुनि तव सन्मुख पुनि तव चक्रहितें जो पाऊं।
तो सुर असुर चराचर देखत हौं वैकुठ निसान वजाऊ॥

श्लोक।

एह्येहि देवेश जगन्निवास नमोस्तु ते शार्ङ्गगदासिपाणे।
प्रसह्य मां पातय लोकनाथ रथादुदग्राद्भुतशौर्य सख्ये॥ १॥
स्वनिगममपहाय मत्प्रतिज्ञामृतमधिकर्तुमवप्लुतो रथस्थः।
धृतरथचरणोऽभ्ययाचलद्गुर्हरिरिव हंतुमिभं गतोत्तरीय.॥ २॥

कवित्त।

करीही प्रतिज्ञा अश्वप्रेरक प्रतोद विना लोहक छुऊं न युद्ध आदि की कहानी है।
ताहि को विसार चक्र संदन को धारि चले भीषम पै ताहीवार रसा अकुलानी है॥

ताहि समुझायवेकू कहिवें खुल्यो है पद धूज मत दास की प्रतिज्ञा उर आनी है।
पटको यो अभिप्राय बडे लोग झूठ बोलै ताको सग छोडि देवो नीतिकी निसानी है ॥ १ ॥
(भक्तमाल)

आँवा न झालू अस्सरालू बीच वालू मिंध ए।
राख्या दयालू "मृगवालू अरी कालू दृघ ए"।
"खेचर करालू समर जालू रखे वालू जाम ए"।
ऐसा गोविंदू० ॥ १८ ॥

(सिरियादे की कथा)

(१) आवेके बीचमें मिन्नीके बचोंको जिस दयालुने रखलिये कराल ताप उन को बिलकुल न लगने दी।

दैत्य हिरण्यकशिपुके नगरमें रामनाममें टेक वाली सिरियादे नामक एक कुलाल की स्त्री रहती थी उसके बिल्ली के हुए बावडे में मजारी ने बचे देदिये, और यह भी अज्ञात थोक में अग्नि लगादी तब तो अग्नि की ज्वाला से बिल्लीका तड़फड़ाट व बचों का बिलबिलाट देख आँवे के चौतरफ रामनाम की कार लगादी इस वार्ता को प्रह्लादजी देख रहे थे आँवा के ठंडे होते हुए देखते हैं तो बचे खेल कर रहे हैं। बस प्रह्लादजी को वही रंग लग गया। और वह सिरियादे विश्वासु रामभक्तों में अग्रगण्य हुई। इति।

(मृगवाल की कथा)

(२) मृग के बचों को बचाने के लिये शत्रुरूपी काल को जिन परमात्मा ने नाश कर दिया।

छोटे छोटे मृगबालकोंपर एक व्याध ने बडी घात विचारी एक तरफ तो फाँसी बिछादी दूजी तरफ श्वान छुकादिये तीसरी बाजू अग्नि लगादी चौथी दिशमें आप धनुष पर बाण चढाके बैठ गया। इस समय में उन अनाथ बचों के दीनदयाल प्रभु के सिवाय कोन रक्षक हैं बालकों की विनय सुनते ही जगपिता ने अग्नि से तो फासी जलादी और वर्षा से अग्नि बुझा दी इधर सर्प के डसने से व्याध मरगया मरते हुए व्याध की मुट्ठी खुलने से बाण छूटा उस से कुत्ते हतोराम बस मृगबाल निर्भय होगये। वाह वाह धन्य है कसी भगवत ने रक्षा की है। इति।

(टीटोडी की कथा)

(३) महाभारत के कराल समर जाल में टीटोडी की "विट्टिट्टि किटीवीटी टिवी टिभ" ऐसी पुकार सुन तत्क्षण गजघट डार उस के बचों को *जिस जगपिता* ने बचालिये। इति।

---

१ इसछन्दमें तीन कथाएँ हैं।

आरत्ति हरणू अभय करणू नमो शरणू सत्त ए।
ऐसा अकरणू अतिरतिरणू वेद वरणू नित्त ए।
हम व्याधि जरणू धरा धरणू वचन फुरणू[1] काम ए।
ऐसा गोविंदू० ॥ १९ ॥
नमो नमामी अँतर्यामी सर्व स्वामी सृष्टि ए।
वंदौं सदाई सुख्खदाई चित्त आई इष्ट ए।
अनाथनाथाँ सदा साथाँ तोहि हाथाँ हामँ ए।
ऐसा गोविंदू० ॥ २० ॥

हे आर्तिहर! हे निर्भय करनेवाले!! हे सत्य शरण!!! आपको नमस्कार हो। आप अकर्ता हैं। और अधम उधार हैं। ऐसा आपका नित्य वेद वर्णन करते हैं। हे धराधर! मैं व्याधि से जलरहा हू। तिस व्याधि के निवृत्तिरूपी कार्य में आपका वचन सत्य हो। हे अतर्यामी! हे सर्वसृष्टि के स्वामी! आपको वारवार नमस्कार हो। मैं सदैव आपकी वदना करता हूं। आप सुखदायक हैं। मेरे चित्तमें यही प्रिय है। हे अनाथो के नाथ! सदैव आप मेरे साथ हैं मेरी उमग आपके हाथ है।

दोहा।

जैसे सूतर पूतली, चित्रकार चित्राम।
मैं अनाथ ऐसे सदा, तुम इच्छा सोइ राम ॥ १ ॥

जैसे कठपुतली डोरी के आधीन है, जैसे चित्र चित्रकार के आधीन है तैसे सदैव मैं अनाथ आपके आधीन हू। हे रामजी! जैसी आपकी इच्छा हो वही करैं।

खलखायक साहिक जना, दीनवंधु देवाधि।
बालवाल शरणागती, तुमसे पति हम व्याधि ॥ २ ॥

हे खलभक्षक! हे जनरक्षक दीनवधु!! देवाधिदेव!!! यह बालवाल आपके शरणागत है। आप जैसे तो पति और मैं व्याधिग्रसित भला यह कैसे हो सकता है।

सहायक विश्वावीस हरि, गायक वेद पुरान।
लायक पायक[2] शरण सुख, यह तव नीति निधान ॥ ३ ॥

वेद पुरान गाते हैं कि लायक जो पायक कहिये सेवक है उसकी वीसही विश्वा पूर्णरीति से हरी सहायता करनेवाले है। शरणागत को सुख देना यह आपकी नीति है। क्यो कि सव के आप आश्रय हैं।

---

१ फुर=सत्य। २ दास।

जुग जुग योही आसरो, तुम रक्षक महाराज।
तारण विरद अनादि तव, यह मेरो अब काज ॥ ४ ॥

जुग जुग में यह एक आपका ही आश्रय है। हे महाराज! आप रक्षक हैं। भक्तजनों को तारणा यह एक आपका अनादि विरद है तो अब मेरा यह कार्य है क्यों ढील करते हैं।

छंद सारसी।

काज मेरो तुमे चेरो मेटि झेरो दरद ए।
करि है न हेरो शरण केरो सदा तेरो विरद ए।
"नामा न घेरो सदँन फेरो गउ उबेरो साज ए।"
भक्ती वधारू विरद वारू सत सारू काज ए ॥ जी सत० ॥ १ ॥

मेरा कार्य है और मैं आपका दास हूं। नेत्रों के दरद करके जो मैं कायल होगया हूं सो इस दरद को मिटाओ। प्रभो! मेरा हेरा (पीड़ा) मत करो अर्थात् मेरी करणी मत देखो (मति देखो करणी हमारी राज छेखो विरद मुरारी) सिवाय आपके मेरे दूसरा किसका शरण है¹ मेरे तो सदैव आपही का विरद (बाना) है।

(नामदेवजी की कथा)

नामदेवजी को नहीं घुमाया किन्तु मंदिर को फर दिया और उनके लिये गऊ को उबारा इत्यादि आपने भक्त की विजय करवाई, क्योंकि आप भक्ति के वधारनेवाले हो। विरद की बार (सहायता) करनेवाले हो और संतों के काम सारनेवाले हो। (भक्तमाल)

जमुना गँहीरू झड़ जँजीरू झाल खीरू ना जले।
बालद वहीरू घर शरीरू नीर नीरू हरि मिले।
निर्भय कबीरू ब्रह्मधीरू शब्दसीरू गाज ए।
भक्ती वधारू० ॥ २ ॥

(कबीर साहबकी कथा)

जिन कबीर साहब के गहरी जमुनाजी के बीच में जंजीरें झडगईं, तथा

---

१ जीव जीव के आसरे, जीव करत है राज।
तुलसी रघुवर आसरे क्यों बिगड़ेगो काज ॥ १ ॥

२ इसछन्दमें दो कथाएँ हैं। ३ झेर=कायर। ४ घर। ५ गहरी। ६ शब्दसी र=बाणी।

खीरों की झाल में नहिं जले, तथा उन कवीर साहव के लिए आपने शरीर को धारण कर वालद वहीर (विदा) करदी, वह कवीर साहव अंतमें नीरमें नीर मिलै ऐसे हरि में मिलगए। ब्रह्ममें स्थिर ऐसे जो निर्भय कवीर ताकी जो शब्द सीर (वाणी) वह आजपर्यंत गर्जना कर रही है।

साखी।

कबीर राम नाम के पटंतरै, देवा कूं कुछ नाहिं।
क्या लै गुरु संतोषिये, हौंस रही मन माहि॥ १॥
कबीर राम नाम छाडूं नहीं, सद्गुरु सीख दईह।
अविनाशी कूं याद करि, आतम अमर भईह॥ २॥
कबीर सत्यनाम तिहुँलोक में, रामनाम ततसार।
सो विचार हिरदै धऱ्या, शोभा अनंत अपार॥ ३॥
कहै कबीरा मैं कथा, ब्रह्मा विष्णु महेश।
राम नाम निज मंत्र है, सबका यह उपदेश॥ ४॥
कबीर कहताहूं कह जातहूं, सुणता है सब कोय।
राम कहे भल होयगा, नहिंतर भला न होय॥ ५॥
कबीर आपण राम कह, औरां राम कहाय।
जा मुख राम न संचरे, ता मुख लोह जड़ाय॥ ६॥
कबीर लूट सके तो लूटि ले, राम नाम की लूट।
पीछे ही पछिताहिगो, जब तन जासी छूट॥ ७॥
कबीर सुपने ही बरड़ायके, जे मुख कहै जो राम।
वाके पग की पानही, मेरे तन को चाम॥ ८॥
कबीर आंखड़ियां झाईं पड़ी, पंथ निहार निहार।
जीभड़ियां छाला पड़या, राम पुकार पुकार॥ ९॥
कबीर आंख्यां प्रेमक सॉइयां, जण कह दूखड़ियांह।
रामस्नेही कारणै, रो रो रातड़ियाह॥ १०॥
कबीर हम तुम पें ढूंढत फिरूं, काहे मिलो न राम।
हिरदा भीतर तूं बसे, सकल तुम्हारा काम॥ ११॥
कबीर सुमरण मारग सहज का, सद्गुरु दिया बताय।
सास सांस संभारतां, इक दिन मिलसी आय॥ १२॥
कबीर सुमरण सार है, और सकल जंजाल।
आदि अंत सब सोधिया, दूजा दीसै काल॥ १३॥
कबीर ज्ञान कथे कथि मैरे, काहे करै उपाय।

जुग जुग योही आसरो, तुम रक्षक महाराज।
तारण विरद अनादि तव, यह मेरो अव काज ॥ ४ ॥

जुग जुग में यह एक आपका ही आश्रय है। हे महाराज! आप रक्षक हैं। भक्तजनों को तारणा यह एक आपका अनादि विरद है तो अब मेरा यह काय है क्यों ढील करते हैं।

छंद सारसी।

कांज मेरो तुमे चेरो मेटि झेरो दरद ए।
करि है न हेरो शरण केरो सदा तेरो विरद ए।
"नामा न घेरो सदंन फेरो गउ उबेरो साज ए।"
भक्ती वधारू विरद धारू सत सारू काज ए॥ जी सत०॥१॥

मेरा काय है और मैं आपका दास हू। नेत्रों के दरद करके जो मैं कायल होगया हू सो इस दरद को मिटाओ। प्रभो! मेरा हेरा (पीछा) मत करो अथात् मेरी करणी मत देखो (मति देखो करणी हमारी राज लेखो विरद मुरारी) सिवाय आपके मेरे दूसरा किसका शरण है? मेरे तो सदैव आपही का विरद (वाना) है।

(नामदेवजी की कथा)

नामदेवजी को नहीं घुमाया किन्तु मदिर का फेर दिया और उनके लिये गऊ को उबारा इत्यादि आपने भक्त की विजय करवाई, क्योंकि आप भक्ति के वधारनेवाले हो। विरद की धार (सहायता) करनेवाले हो और सतों के काम सारनेवाले हो। (भक्तमाळ)

जमुना गेंदीरू झड़ जॅजीरू झाल खीरू ना जले।
बालद वहीरू घर शरीरू नीर नीरू हरि मिले।
निर्भय कबीरू ब्रह्मधीरू शब्दसीरू गाज ए।
भक्ती वधारू० ॥ २ ॥

(कबीर साहबकी कथा)

जिन कबीर साहब के गहरी जमुनाजी के बीच में जजीरें झडगई, तथा

---

१ जीव जीव के आसरे जीव करत है राज।
तुलसी रघुवर आसरे, क्यों बिगड़गो काज ॥ १ ॥

२ इसछन्दमें दो कथाएँ हैं। ३ झेर=कायर। ४ घर। ५ गहरी। ६ शब्दसीर=वाणी।

"सहस बात की एक बात है, आदि रु अंत विचारी।
भज रमतीत राम भव पारा, कहा पुरुष कहा नारी ॥"

साखी।

कबीर जाके हिरदै हरि नहीं, सिख साखा की भूख।
से नर उभा सूखसी, ज्यों दाहे दाघा रूंख ॥ १९ ॥
कबीर बात बनाय रु जग ठग्या, मन पर बोध्या नाहिं।
वाको स्वारथ लेगया, फिर चौरासी माहिं ॥ २० ॥
कबीर कहते सो करते नहीं, मुह के बडे लबार।
काला मुंहडा होयगा, साई के दरबार ॥ २१ ॥
कबीर कथनी मीठी खाडसी, करनी विषकी लोय।
कथनी कथ करनी करै, सब विष अमृत होय ॥ २२ ॥
कबीर करनी की किरकी नहीं, कथनी कथै अपार।
या बाता क्यों पाइये, साहिब को दीदार ॥ २३ ॥
कबीर करणी बिन कथनी कथै, अज्ञानी दिन रात।
कूकर ज्यों भोंकत फिरै, सुनी सुनाई बात ॥ २४ ॥
कबीर एकोहं आपुहिं भयो, द्वितिया दीन्हों कॉट।
एकोह कासों कहै, महापुरुष की ठॉटे ॥ २५ ॥ इति।

कोपे दुर्वासा अहं ख्वासा हतूं दासा राज ए।
सुदर्श जासा प्राण ग्रासा कंप व्यासा भाज ए।
सुरदेव पासा भई हासा जन निवासा बाज ए।
भक्ती वधारू० ॥ ३ ॥

(दुर्वासाजी की कथा)

बडे अहंकारी ऋषि दुर्वासा कुपित हो बोले कि मैं इस दास अंबरीष राजा को मारडालूंगा, तब जिन का दास अवरीष है उन्हीं भगवान का सुदर्शन चक्र मुनि के प्राण का ग्राहक हुवा। जब तो व्यास (दुर्वासा) कंपायमान हो भागने लगे और उनकी तीनों देवताओं के पास बडी हांसी हुई, तब पीछा भक्त अंबरीष के निवासस्थान में ही आ बाजे अर्थात् जहां भक्त का निवास स्थान था वहां ही आकर विराजे। (भक्तमाल)

---

१ पाठान्तर टकार के स्थान में चवर्गका चतुर्थाक्षर है। २ ख्वाहिश=इच्छा। ३ सुदर्शन चक्र। ४ तीन।

सद्गुरु हमकों यों कह्या, सुमरण करै सहाय ॥ १४ ॥
कबीर प्रेम विना धीरज नहीं, विरह विना वैराग ।
नाम विना पावे नहीं, मन मनसा को थाग ॥ १५ ॥
कबीर सोझी विन सुमरण नहीं, भय विन भजन न कोय ।
पारस बिच पड़दा रह्या लोह न कंचन होय ॥ १६ ॥
कबीर कठिनाइ खरी सुमरंता हरि नाम ।
शूली ऊपर नट विद्या, गिरू तो नाहीं ठाम ॥ १७ ॥

चरण ।

'जे कोइ चाहै परमधाम को, सुणज्यो शब्द हमारा ।
दोय अछरसे करो दोस्ती, तब उतरो भव पारा ॥"
'ररकार से सुरत विलंबी, कोटिक सुन्य दिखाइ ।
या विन शब्द विशेष बतावै, ताकी मूड़ माइ" ॥
'कह कबीर सुणो हो साधो प्रगट कहू बजाइ ।
रामनाम सो सार शब्द है और कथन सब वाइ" ॥
'रामनाम सब कोइ भाखै, ता बिच बहुत विधाना ।
भज रमतीत राम सरबंगी, बेहद ब्रह्म समाना' ॥
'घरिघरि भेख ज्ञान महँ थासी, धरसी छाप हमारी ।
सत गुरु सम हुइ हुइ परमोधै, कहा पुरुष कहा नारी ॥
घर घर ज्ञान ध्यान घण होसी घटघट वादविवाद् ।
कण कू छाड भखेगा कूकस विरला बीज अराधू ॥'
राम नाम सतबीज शब्द है, याकू पूठ न दीजो ।
जे कोइ वाद बकै बहुतेरा, समझबूझ धुपरीजो ॥
वेदमान बहुतेरा होसी राजा पंडित ज्ञानी ।
जागत सोसी जन्म विगोसी, सब परजा अभिमानी ॥
वीत राग विरळा जन होसी दर्शन परसन कारी ।
सार शब्द कू पेल चलैगा, कलिजुग भेख विकारी ॥
विन दरस्यां परस्यां विन बहुता होसी ब्रह्म गियानी ।
बीज विनां बहु ज्ञान कथेगा, धोखे की नीसानी ॥
परजा पख दूतन की करसी, सारपखी जन कोइ ।
तज जग भाव निरंतर वासा, रामस मिलेगा सोइ ॥
कर्द्दम उपासी करम बिनासी, सो जासी जम द्वारा ।
हम करता भज करता हूवा और न को उपकारा ॥
राम कहेगा सो निबहैगा उरझि रहे जो गाढा ।
धकाधूम बहुतेरा हैगा, रामभजन के आडा ॥

"सहस बात की एक बात है, आदि रु अंत विचारी ।
भज रमतीत राम भव पारा, कहा पुरुष कहा नारी ॥"

साखी ।

कबीर जाके हिरदै हरि नहीं, सिस साखा की भूख ।
से नर उभा सूखसी, ज्यों दाहे दाधा रूख ॥ १९ ॥
कबीर बात बनाय रु जग ठग्या, मन पर बोध्या नाहिं ।
वाको स्वारथ लेगया, फिर चौरासी माहिं ॥ २० ॥
कबीर कहते सो करते नहीं, मुह के बडे लबार ।
काला मुहडा होयगा, साईं के दरबार ॥ २१ ॥
कबीर कथनी मीठी खाण्डसी, करनी विषकी लोय ।
कथनी कथ करनी करै, सब विष अमृत होय ॥ २२ ॥
कबीर करनी की किरकी नहीं, कथनी कथै अपार ।
या वातां क्यों पाइये, साहिब को दीदार ॥ २३ ॥
कबीर करणी विन कथनी कथै, अज्ञानी दिन रात ।
कूकर ज्यों भोंकत फिरै, सुनी सुनाई बात ॥ २४ ॥
कबीर एकोहं आपुहिं भयो, द्वितिया दीन्हों कॉंट ।
एकोहं कासों कहै, महापुरुष की टॉंटें ॥ २५ ॥ इति ।

कोपे दुर्वासा अहं ख्वासा हतूं दासा राज ए ।
सुदर्श जासा प्राण ग्रासा कंप व्यासा भाज ए ।
सुरदेव पासा भई हासा जन निवासा वाज ए ।
भक्ती वधारू० ॥ ३ ॥

(दुर्वासाजी की कथा)

बडे अहंकारी ऋषि दुर्वासा कुपित हो बोले कि मैं इस दास अंबरीष राजा को मारडालुंगा, तब जिन का दास अंबरीष है उन्हीं भगवान का सुदर्शन चक्र मुनि के प्राण का ग्राहक हुवा । जब तो व्यास (दुर्वासा) कंपायमान हो भागने लगे और उनकी तीनों देवताओं के पास बडी हासी हुई, तब पीछा भक्त अंबरीष के निवासस्थान में ही आ वाजे अर्थात् जहां भक्त का निवास स्थान था वहां ही आकर विराजे । (भक्तमाल)

---

१ पाठान्तर टकार के स्थान में चवर्गका चतुर्थाक्षर है । २ ख्वाहिश=इच्छा । ३ सुदर्शन चक्र । ४ तीन ।

करि यज्ञ राजू ऋषि समाजू वेद गाजू गाव ए।
नहिं शख बाजू पाडुकाजू सतराजू आव ए।
ले पच कौजू भई बाजू भ्रम्म भाजू राज ए।
भक्ती वधारू० ॥ ४ ॥

(वाल्मीकजी की कथा)

गजना के साथ वेदोंको गानेवाले अर्थात् सामग ऋषिसमाजने राजसूय यज्ञ
बाया तो भी यज्ञ पूर्ति का शख नहीं बजा, तब तो पाडवों के काय सिद्धि के
सतराज (वाल्मीकि) आते भये, जिनके पाच ग्रास लेते ही शख की
आवाज होने से राजा युधिष्ठिर का भ्रम दूर होगया।

शख नहीं बाज्यो ताको कारण यही है भूप
आयो ना अनन्य दास एक वो हमारो है।"

कवित्त।

चाकर तिहारो हारै भवन तिहारो रोज नगर निवासी है तिहारो चिरकालको।
यथा लाभ तोषी तन रोषित न काहू पै है अदोषित अनाथ भक्त लागे जगजाल
साधुन को झूट खात खातमें विमल बुद्धि, नेही नहीं देह गेह बालक हू बालको।
जाति को श्वपच महिपाल वाल्मीक नाम, मोहि प्राणप्यारो तुम्हें कारक निहालको॥

दोहा

विप्र द्वादश कोटिको, सबको मान्यो मान।
शख बजायो शरकरै, कोइ न काढ्यो कान ॥ १ ॥

(भक्तमाल

प्रतिमा बुलाई सॉच पाई गग आई भवन ए।
तन में दिखाई नौगुणाई जद साई सवन ए।
रैदास साई देह थाइ जीम जाई ब्राज ए।
भक्ती वधारू० ॥ ५ ॥

(रैदासजी की कथा)

जब रैदासजी ने प्रतिमा को अपने पास बुलाली तब ब्राह्मणों को
पाया। तथा जिन रैदासजी के भवन में गगा आई, और जब रैदासज
नवगुणाई (यज्ञोपवीत) अपने शरीर में दिखाई तब तो पीताबर पहन
जितने ब्राह्मण आये थे वे तमामही नमन करने लगे, तथा भोजन

१ गर्जना। २ सतराज=वाल्मीकजी। ३ कवा=ग्रास। ४ यज्ञोपवीत।

समयमें रैदासजी के प्रभाव से जिन ब्राह्मणों की देह रैदास साई होकर अर्थात् रैदास का ही स्वरूप बनकर बैठ बैठकर भोजन करगये।

(भक्तमाल)

पीपा समर्तू अगम गत्तू भक्त चरितू नैक ए।
इच्छा फिरत्तू सोइ सत्तू आप रत्तू एक ए।
मृगराज कामी शिष्य स्वामी मुक्तिगामी जाज ए।
भक्ती वधारू० ॥ ६ ॥

(पीपाजी की कथा)

अगम है गति जिनकी एसे समर्थ पीपाजी के अनेक चरित्र हैं। भक्त पीपाजी की जो इच्छा फुरती वही सत्य हो जाती और आप निज स्वरूप में रत रहते थे। देखो उत्तम कामनावाला मृगराज (सिंह) जिन स्वामी पीपाजी का शिष्य हुवा, तथा मुक्ति जानेवालों के लिये तो वह साक्षात् जहाज रूप थे।

(भक्तमाल)

गायाँ चराई भातखाई रामराई रम्म ए।
खेती निपाई पात्र माई विना वाई श्रम्म ए।
धन्नो धनाई प्रभूताई जना गाई छाज ए।
भक्ती वधारू० ॥ ७ ॥

(धनाभक्त की कथा)

जिन धनाभक्तके लिये रामराय ने भातका भोजन कर प्रसन्न हो गौवें चराकर खेल किया, तथा जिनके लिए श्यामने विना ही बोई हुई उनके पात्र में खेती निपजायदी, उन धनेजी की धन्यता व प्रभुता भक्तोंकरके गाई हुई आज दिन संसार में कैसी शोभित हो रही है। (भक्तमाल)

सूतर खड्ग्गू सार लग्गू जन प्रतग्गू राख ए।
"कर माँग दग्गू जिये जग्गू दुष्ट अग्गू साख ए"।
"फिर अश्व अग्गू" "चढे सग्गू समर लग्गू वाज ए।"
भक्ती वधारू० ॥ ८ ॥

---

१ कथा थाल अन अर्थ है, घृत्त प्रसंग मिलाय।
रजब ऐसी भाँतिसे, चारों वरण जिमाय ॥ १ ॥

२ कामना। ३ श्याम। ४ सूत्र=काष्ठ। ५ मार्ग। ६ वाजी=घोड़ा।

---

1 इसछन्दमें चार कथाएँ हैं।

(चौहान भुवनजी की कथा)

(१) चौहान भुवनजी काष्ठ की तलवार रखते थे। जब रानाजी ने परीक्षा ली तब परीक्षा के समय में म्यान के निकलते ही जिनकी तलवार बीजलसार के समान हो गई इस प्रकार प्रभु ने भक्त की प्रतिज्ञा रखी।

(अरिल्ल)

"भइ तलाया गोठ, जुरे जहँ चक्कवै।
परचौ निज है आजु खाय है लक्खवै॥
परमेश्वर पति राखि बात नहिं कहनकी।
बिजुरी ज्यों तरवार चमकी भुवन की'॥ (भक्तमाल)

(हरिभक्त ब्राह्मण की कथा)

(२) एक हरिभक्त ब्राह्मण से दुष्टों ने मार्ग में दगा किया। ब्राह्मण तो भगवत् कृपा से उसी जगह् जी गया और दुष्टों के शरीर की खाख होगई।

(भक्तमाल)

(घाटम जी की कथा)

(३) घाटम भक्त के वास्ते राममहाराजने अश्व के अग का रंग पलटा दिया। (भक्तमाल)

(जैमलजी की कथा)

(४) जैमलजी के वास्ते स्वय आप भगवान् फौज के सग राजाके घोडे पर चढ कर समर (युद्ध) को उल्लघन करते भये अथात् शत्रुओं वो भगाकर जैमलजी की जीत करवादी। (भक्तमाल)

नृप दुष्ट खख्खी गरल दख्खी इष्ट पख्खी सो लए।
धिन प्रेम छकी राम रख्खी निर्भै थकी बोल ए।
मीरा सरख्खी गोपि अख्खी जगत नरखी लाज ए।
भक्ती बधारू० ॥ ९ ॥

(मीरांबाई की कथा)

दुष्ट राणे ने भङकरी के साथ विषको चरणामृत कहलाकर भिजवाया तब इष्ट का है पक्ष जिनके ऐसी मीराबाइ ने उस विष को चरणामृत समझकर ले लिया धन्य है, प्रेम में छकी निभयथकी मीराबाई बोलती भई कि मेरे राम रक्षक हैं।

---

१ भजाकी।

कहते हैं कि मीरांबाई गोपीके समान थी जभी तो उसने जगत लाज को छोडदी ।

(मीरांबाई की सासू ने कहा कुलदेवी को शीस नवाओ)

सवैया ।

पल काटो सही इन नैनन के गिरधारि विना पल अन्त निहारै ।
जीभ कटै न भजै नँदनदन बुद्धि कटै हरि नाम विसारै ॥
मीराँ कहै जरि जाहु हियो पदकंज विना पल अंतर धारै ।
शीश विना व्रजराज नवै वह शीशहिं काटि कुवां किन डारै ॥ १ ॥

दोहा ।

मीरां सुत जनम्यो नहीं, सिख्ख न मूंड्यो कोय ।
नाम रहैगा नाम से, सुणो सयाने लोय ॥ १ ॥ (भक्तमाल)

हुंडी माहेरो करि घणेरो सुतन केरो व्याव ए ।
सभ्भा मँझारी भूप नारी लियाँ झारी आव ए ।
नरसी सदारी माल थारी नीर प्यारी पा जए ।
भक्ती वधारू० ॥ १० ॥

(नरसीजी की कथा)

प्रभुने नरसीजीके लिए हुंडी सिकारी, तथा उन की दोहिती के विवाह में जिन राममहाराज ने घणा (बहुत) कर माहेरा भरा, तथा स्वयं भगवान् राजा की प्यारी राणी वनकर जल की झारी ले सभा के वीच में आकर कहने लगे कि, हे नरसी ! सदाकाल से यह माला तुम्हारी ही है लो पहिनो ऐसे कह जल पा गए ।

दोहा ।

नरसिहिं वीन्ही रीझिकै, माला नंदकुमार ।
राखि लियो अपनी शरण, विमुखनि मुख दै छार ॥ (भक्तमाल)

हाथी चुवाए पर्‍यो पाए असुर थाए दास ए ।
पाती फिराए दरश धाए साँच आए जास ए ।
दादू दयालू हुय कृपालू जीव जालू भाज ए ।
भक्ती वधारू० ॥ ११ ॥

(दादू दयाल की कथा)

महात्मा दादूजी के सन्मुख हाथी छोडने पर परचा होने से पातशाह चरणों में पडकर दास होता भया । "दादू दर्शन जो कोइ जावै तो सातै भींडी एक भरावै" इस लेख पत्र के (काई शब्द) के स्थान में (नहीं शब्द) होगया । जब इस प्रकार लेख फिरने से हजारों पुरुष दर्शन के लिए गए तब तो पातशाह को पूरा ही सौंच आगया । ऐसे दादू दयाल कृपालु होकर अनंत जीवों के जाल को तोडते भए ।

स० १६०१ को गुजरात अहमदाबाद में आपने जन्म लिया । ईश्वरस्वरूप महात्माओं के कुल का कोइ कारण नहीं होता । ईश्वरने भी तो यहाँतक हद करदी कि मच्छ कच्छ वराह शरीर भी धारे । परंतु दादूजी महाराज ने तो उत्तम ब्राह्मणकुलमें ही शरीर धारण किया । परम दयालु परमात्मा ने बूढणरूप धारणकर सिरफ ग्यारह वर्ष की अवस्था में दादूजी को दर्शन पान प्रसाद दे अंतर्द्धान हुए तबतो ऐसी अद्भुत अनोखी झांकी को देख आपका मन मुग्ध होगया । उस दर्शन की चाट में विह्वल हो पद गाने लगे । (आव सलौना मोहि देखन देरे पल पल में बलिहारी तेरे) आपने पंजाबी भाषामें एक पद बहुतही अच्छा विरहका वर्णन किया है ।

पद ।

आवरे सजणां आव सिरपर धरि पाँव ।
जानी मैंडा जिंद असाडे ।
तू रावैं दा राव वे सजणा आव ॥
इत्थाँ उत्थाँ जित्थाँ कित्थाँ हाँ जीवा तो नाल वे ।
मीयाँ मैंडा आव असाडे ।
तू लालों सिर लाल वे सजणाँ आव ॥
तन भी डेवाँ मन भी डेवाँ डेवाँ प्यंड पराण वे ।
सचा साइ मिलि इत्थाई ।
जिन्दा करौं कुरबाण वे सजणाँ आव ॥
तू पाकां सिर पाक वे सजणाँ तू खूबाँ सिर खूब ।
दादू भावै सजणा आवै ।
तू मीठा महबूब वे सजणाँ आव ॥ इति ।

इत्यादि विरह वाणी का वर्णन करतेहुए खाना पीना सब छोड उस सांवली सूरत के लिये तडफने लगे, उससमय प्रेमाधीन प्रभु ने उनकी अत्यंत आतता देख अपना वही सलोना रूप दिखा और आकाश वाणी से कहा कि हे दादू ! तू यह स्थान छोड दे, कारण इस स्थान कू ज्यों ज्यों देखता है त्यों त्यों तेरे विरहसमुद्र उछलता है । अब तू

सांभर चला जा वहां भजन कर मेरी आज्ञा है। तब तो दादू दयाल भगवद् आज्ञा से अहमदाबाद छोड सांभर आय विराजे और भजन करने लगे। यहा पर अनेक परचे हुए उन परचों का परिचय दादूजी महाराज की परची में हैं। फिर बखनाजी की प्रार्थना से आप नराना ग्राम में पधार गए। गरीबदासजी अधिकारी शिष्य हुए यह आपके औरस पुत्र थे। सं० १६३२ में इन का जन्म हुवा था। और दासजी, तथा सुंदरदासजी, मोहनदासजी, जनगोपालजी, रज्जबजी, बखनोजी, साहुसेनजी, बाजींदजी और काजीमहम्मद आदि बडे बडे पहुचे हुए शिष्य हुए जिनकी वाणी बहुत ही सार-गर्भित और वैराग्योत्पादक है। आजकल इस पंथके तुल्य सिवाय कबीर और नानक पंथ के दूसरा बृहत् कोई पंथ नहीं है। सांभर के निकट भराना मे सं० १६६० को शरीर छोड आप परम धाम पधारे।

साखी।

आपा मेटै हरि भजै, तन मन तजै विकार।
सब ही सूं निर्वैरता, दादू यो मत सार ॥ १ ॥
एक राम के नाम बिन, जिवकी जरनि न जाय।
दादू केते पचि मरे, करि करि बहुत उपाय ॥ २ ॥
राम नाम गुरु शब्द से, रे मन पेल भरम्म।
निह करमी से मन मिल्या, दादू काट करम्म ॥ ३ ॥
दादू देख दयालु कों, सकल रहा भरपूर।
रोम रोम में रमि रहा, तू जनि जाने दूर ॥ ४ ॥
जब मन लागे रामसों, तब अनत काहे को जाय।
दादू पाणी लूण ज्यूं, ऐसे रहे समाय ॥ ५ ॥
घीव दूधमें रमि रह्या, व्यापक सबही ठौर।
दादू वक्ता बहुत है, मथि काढे ते और ॥ ६ ॥
केते पारिख पचि मुये, किमत कही न जाइ।
दादू सब हैरान हैं, गूंगे को गुड़ खाइ ॥ ७ ॥

वाली[1] सवाई तुले ताई प्रीति भाई दास प।
"भैस्याँ मँगाई और थाई व्याज मांई छाँस प।"
"बलदाँ जिसाई जसू बाँई राम राई न्वाज प।"
भक्ती बधारू० ॥ १२ ॥

---

१ नाक में पहरने की।

---

1. इसछन्दमें तीन कथाएँ हैं।

रामराय सदैव प्रति संतों के सहायक है। अथवा संतों की सहायता करनी यह रामरायकी सदा प्रतिज्ञा है। वह समर्थ सदैव रक्षा में ही हैं। उन दयालुको छोड किसके पास भागें। अथात् जिसके पास जावें उसके भी तो राम रक्षक है। जिनके राम रक्षक हैं उनका क्या तीन लोक में नाश हो सकता है! उसके लिए सब प्राणी मा जाये भाइ हैं।

साखी।

पूंठे समर्थ सतगुरू, आगे राम सहाय।
अनतकोटि सँत शीस पर, रामा विघ्न न काय ॥ १ ॥
अवर दूजी भूत कमावै, कह्या वचन गुरु देव।
रामदास सासो तजो, कर सतनकी सेव ॥ २ ॥
रिधि सिधि दासी रामदास, चरण रही लपटाय।
धावै जावै सहज में रहो राम लिवलाय ॥ ३ ॥

कहा देश देश रु प्रदेश है परमेश सग ए।
दुष्टी विचेस करि अनेस खोंस लेस कग ए।
सोई मरेस जन निर्भेस सुखावेस आज ए।
भक्ती वधारू० ॥ १७ ॥

देश प्रदेश विदेश कहा ही रहो, परमेश्वर सग में है। रामदासजी महाराज के वास्ते एक दुष्ट धाडवी ने बुरी नजर से देखा कि कहाँ चले गये इन को रास्तेके बीच ही खोस लेऊगा, अथवा इनके कग कहिये आभूषण उनको खोस लेऊगा, अथवा इनको खास क कहिये मस्तक काट लेऊगा, वे मेरे हाथ से बच नहीं सकते हैं। इसप्रकार विचार करता हुआ वह दुष्ट तीन ही दिनमें एक स्त्री के हाथ से मारा गया। रामदासजी महाराज निर्भय हो सुखपूर्वक पीछे स्थान को पधार जाते भए।

साखी।

काहूके तो राजबळ काहू के बल देव।
रामदास के रामबळ, एक तुम्हारी सेव ॥ इति।

कहा धाट वैद्दू सुख्ख ठाट्टू मुज वेराट्टू राम ए।
गुरु रामदास चरित गास नित निवास नाम ए।
लज्जा सदास आदि आस कली कास राज ए।
भक्ती वधारू० ॥ १८ ॥

---

१ बुरा भाव। २ काट=रक्षा।

श्रीदयालजी महाराज फरमाते हैं कि रामजी के विगट रूप होने से क्या घाट क्या वाट! मेरे लिए तो सब सुख का ठाट है। मै तो गुरु रामदासजी महाराज के चरित गाऊंगा, क्योंकि मेरे तो नित्य उनके नामका ही निवास है। सदैव से आपही के हाथ मेरी लाज है। और आदि अनादि से राज ही की आशा है तो फिर कली कैसा अर्थात् कलियुग मेरा करही क्या सकता है।

सोरठा।

श्री गुरु समर्थ आप, एक भरोसो आसरो।
राममंत्र जप जाप, यालवाल एके मही ॥ १ ॥

दोहा।

सदाकाल समर्थ धणी, रक्षक राम दयाल।
कठिन कली कारण कृपा, हरिविन कौन सँभाल ॥ १ ॥

मेरे तो वे दयालु राम महाराज सदैवकाल के समर्थ धणी हैं और वही रक्षक हैं। इस कठिन कलिकाल मे विना ही कारण कृपा करनेवाले हरि के विना दूसरा कौन संभाल करनेवाला है।

दोहा।

नमो नमामी नाथ तू, निर्धारां आधार।
लज्जा राखण रामजी, आनँद अगम अपार ॥ २ ॥

हे नाथ! आप के अर्थ नमस्कार हो! नमस्कार हो!! आप निराधारों के आधार हैं। हे रामजी! आप लाज को रखनेवाले हैं। आप आनदस्वरूप हैं। अगम हैं और अपार हैं।

प्रसन्न जना अपवर्ग सुख, शरणे प्रति पालंत।
यालवाल शरणागती, क्यों नहिं अरि जालंत ॥ ३ ॥

शरणागत की प्रतिपाल करने मे ही भक्तों की प्रसन्नता है और वही उनके लिए मोक्ष सुख है, तो यालवाल आप के शरणागत है इस शरणागत के व्याधिरूप शत्रु को क्यों नही जलाते हैं [1] ॥

कर्म वडा कि हरि वडा, यह अचरज मोहिं आय।
हरि तो लेख अलेख है, साधु वचन यों जाय ॥ ४ ॥
[2]नारि पलट नर तनु भयो, जन तुरसी के हेत।
अकरण करण दयालु धिन, अपना को सुख देत ॥ ५ ॥

---

१ मोक्ष। २ कई महात्मागण यह कथा जन तुरसीजीकी वतलाते हैं।

(गोस्वामी तुलसीदासजी की कथा)

कम बडे हैं कि हरि बडे हैं इस में मेरे को आश्चर्य आता है। इस विवाद में साधुओंक वचन तो यों प्रमाण देते हैं, कि हरि तो लेख को भी अलेख कर देते हैं जैसे गोस्वामी तुलसीदासजीके वास्ते नारीरूप पलट कर नरतनु हो गया ऐसे अकरण करण दयालु हैं। धन्य है आप अपने जनको सुख देते हैं।

कवित्त।

वे.न की सार काव्य भेदन की सार चारु, चातुरी चमतकार सार रस सानी में।
प्रेम की पढावनी वढावनी विरति ज्ञान, अन्तमें चढावनी श्रीराम रजधानी में॥
भानी भालक कुअंक हाल रंक राज दानी कहै रसरंगमणी मोदता मि‍ानी में।
पाइ है न प्रानी राम भक्ति सुखखानी मति जो न रति मानी बसी तुलसी की वानीमें ॥१॥
व्यासने पुराण गायो कपिल सुझायो साख्य गौतमने गायो न्याय तर्क जहा ताँई के।
जैमिनि करमकाड योग को पतजलिने, साडिल्यहू भक्ति भने साधन सुहाँई के॥
शकर वेदान्त भाखें मध्वाचार्य द्वैत चाखे ऐसे रसरग मत वाद सब ठाँई के।
रामाकार काव्य कन्यो जग भक्तिभाव भन्यो राम प्रेम पाले पन्यो तुलसी गोसाईके ॥२॥

श्लोक।

श्रीप्राचेतसरूपिणे सुकवये कोदण्डमुद्रापिने।
भाषाकाव्यविधायिने स्वजनताआव्यौघविध्वंसिने॥
श्रीरामामृतवर्षिणे जनकजाप्रेष्ठानुरागाश्रये।
तस्मै श्रीगुरवे नमोस्तु तुलसीदासाय गोस्वामिने ॥ १ ॥

(रामायणमाहात्म्य)

जुग जुग पालत जन पखो, साचा करण सवाल।
सो निवल या जगतमें, जाके वल गोपाल ॥ ६॥

"(परित्राणाय साधूना") ऐसा जो आपका वचन है उसको सत्य करने के वास्ते जुग जुग में भक्तजनों की पक्ष पालते हैं। इस जगत में जिसके गोपाल का बल है सो क्या निबल है ?

राम सदा सुख रजना, भय भजन भरतार।
करुणामय कारणकरण, धारक वारण वार ॥ ७॥

हे राममहाराज! आप सदा सुखरूप हैं चित्त के रजन कर्ता हैं और भव भय के भजन कर्ता हैं, तथा जगत को भरण पोषण कर आप ही तारते हैं और आपही जगत् के कारण जो पृथिव्यादि पचमहाभूत तिन के करणेवाले हैं। हे प्रभो! आप करुणामय हैं तभी तो वारण जो गजद्र तिसके वार कहिये समय

में आपने हरि अवतार धार उस गजेंद्र की वारक कहिये वार की अर्थात् सहायता की। तथा वारक कहिये कष्ट स्थानमें उस गजेंद्रकी वार की।

बुहो जात भवसिंधु में, मोहादिक जल पार।
व्याधि ग्राह मोकूं गह्यो, अब हरि करण उधार॥ ८॥

ससाररूपी समुद्रविषै मोहादिक जलकी तरगों में वहा जा रहा हू। व्याधिरूप ग्राहने मेरेको पकड लिया है, सो हे हरे! मेरा अब आप ही उद्धार करनेवाले हे।

हूं संतों के शरण को, तूं संतों आधीन।
लायक पायक सोंच तब, दीन सहायक दीन॥ ९॥

मैं किन सतों के शरण हू कि जिन सतो के आप आधीन हो रहे हैं। क्योंकि सच्चा जो आपका पायक कहिये सेवक है वह आपके लायक है सो हे दीनबधो! आप दीन सहायक हैं और मै दीन हू अब देरी काहेकी हे?।

माधोदास दयालु के, प्रसन्न भये धिन राम।
क्यों नहिं वंद्त जगत यश, भैरव सेवक ताम॥ १०॥

(मैदानी माधोदासजी की कथा)

हे राम दयालु! मैदानी माधोदासजी के वास्ते आप प्रसन्न होते भये। धन्य है जिनका सेवक भैरव है। तिनका यश जगत मे क्यो न वदनीय हो?।

जैसलमेर के राज्यातर्गत वारू ग्राम मे माधोसिंहजी नामक जाति के चोहान एक राजपूत रहा करते थे। वह वीसों आदमियो के सग पूगल तथा वीसलपुर के बीच के जंगल में डेरा डाल सिंध की वार (उजाड़) मे धाड़ा दोड़ कतारें लूट लिया करते थे। इस वजह से इनका वडा धाका पड़ता था। एक समय यहा दुष्काल पड़ने के वजह सिंध से नाज की लदी हुई कतार चली आरही थी, जहा इन धाड़वियों का डेरा था उनके पास ही जगल मे एक कुआ बना हुवा था उसपर कतार का पड़ाव अकसर हुवा करता था। विचारे उन लोगों ने भी वहां रात्रि में कतार डाल दी, और रोटी बाटी बनाते हुए फिकर करने लगे कि भाई! ऐसा न होजाय कि माधोसिंह आकर अपने को लूट ले। यदि ऐसा होगया तो घर मे वाल वचे और अपने सब मारे भूख के मरजायेंगे। इनकी वातों को पास मे ही माधोसिहजी सुन रहे थे। आप के हृदय में दया आगई तुरत उनके पास गये। माधोसिहजी को देखते ही यह लो यह आगये यों कह सब रोने लगे तब तो आपने दिलासा दी कि रोओ मत मैं नहीं लूटूंगा। तुम फोरन लदकर चले जाओ। ऐसा न हो कि मेरे साथवाले तुम को लूट लें ऐसा कह बंदूक तलवार आदि जितने आपके शस्त्र थे वह सब तोड़ तुड़ाय लंगोटी लगाय उसी जगह धूणी पर बैठ सगवालों को बिलमाने के लिये रात भर लकड़िये जलाकर प्रकाश करते रहे। लकड़ियों के खूट जाने से कपड़े जला जला

तड़का कर दिया। प्रात काल सगवाले हेरू इकट्ठे हुए। पूछनेपर उन लोगों से आपने कहा कि, बस अपना सीर आजसे टऊगया है। अब मेरा सीर तुम से नहीं है किंतु इश्वर से है। यों कह उस जगल में वहीं भजन करने लगे। बारह वर्ष व्यतीत होने पर आकाशवाणी हुइ कि जायल के महत वैष्णव मोहनदासजी उज्जन अगपात घाट पर निवास करते है उनको गुरु करो जाओ। तब उज्जैन आए भगवतकी आज्ञानुसार मोहनदासजी के शिष्य हुए। गुरुने मैदानी माधोदासजी आपका नाम रखा। कइ दिन वहां निवास कर पीछे आए। बीकानेर से पश्चिम सात कोस केम्म देसर तालाबपर क्षेत्रपाल भैरव के पास ही धूनी लगाकर बैठ गए। रात्री में भैरव ने कहा ए साधु! यहा से हट कर दूर बैठ जा। आपने चद्दर बिछा जगती हुई धूनी उसमें उठा भैरव से कहा यह थोड़ी मेरी खड़ाऊ तो वहां तक पहुँचा दे। जब भैरव उठाने लगा तो भैरव का हाथ खड़ाऊ से दब गया तब तो लगा चिल्लाने और बोला कसूर माफ करो मैं आपका दास हूँ, मुझे बचा के आप का शिष्य बनालो। एसी विनय सुन आपने दया कर उसको सुखी किया और शिष्य बनाकर खेमदास नाम रखा। उसका मलीन खाना पीना सब छुडवा दिया। अब तो भैरव तन मन से सेवा करने लगा। यों करते कइ दिन चले गये तब तो माधोदासजी की सिद्धाइ देखने के लिये दसहजार साधुओंकी जमात रात्रि में आइ और बोले गुरुभाई माधोदास! सूर्यादय होते ही अतीतों के लिये भोजन तुम्हारे यहां ही होगा। यों कह जहाँ तहाँ आसन डेरे लगादिए। अधरात्रि के समय भैरव गुरुमहाराजकी आज्ञासे मुलतान सहर में बनिये के यहा चीरे का कड़ाव रंधा हुवा पड़ा था उठा लाया। भगवद्भोग लगाकर महात्माओं को भोजन कराना शुरू किया। तीन दिन तक लगेतार सत भोजन करते रहे परंतु कढाव तो नहीं खुटा तब तो माधोदासजी से माफी माग सतोंने अपना अपना रस्ता लिया। तब माधोदास जी महाराज ने कहा भैरव! मैं प्रसन्न हुवा कुछ माग। भैरव ने कहा मेरे को तो मेरे ही खान पान की बायद आरही है। छुटी मिल्जाय। आपकी टहल करने को एक चेला ला दूगा। महाराज ने कहा तेरा प्रारब्ध ही मद है मैं क्या करू? तू जाने। भैरव तुरंत मुल्तान गया। जिस सेठ का कड़ाव लाया था उसीके लड़के को उठालाया। महाराज का टहलवा कर दिया। कइ दिन के बाद यात्रा के लिए मुल्तान से सेठ कोडमदेसर आया, देखता है तो कढाव पर अपना और पिताका नाम खुदा हुवा है। इतने में लड़के की तरफ देखता है तो अपना ही माल्म होता है। चकित होके बोला मामला क्या है? तब भैरव ने कहा यह कढाव और लड़का तुम्हारा ही है। माधोदासजी महाराज की सेवा के लिए मैं लाया हू। यह सुन वह सेठ अपना अहो भाग्य समझ राजी खुशी के साथ उस लड़के को महाराज के चढाकर पीछा चलागया। माधोदासजी महाराज ने शिष्य बना उसका नाम सुदरदासजी रखा। महाराज के धाम पधारनेपर सुदरदासजी गद्दीधर हुए। माधोदासजी महाराज के अनेक परचे हुए हैं।

एक समय माधोदासजी महाराजके दर्शन करने को बीकानेरके राजा कोडमदेसर आए। महाराज को तिजारी चढ रही थी। आपने वह तिजारी गूदड़ी को भुलाकर दरवार से वात चीत करनी शुरू की। पासमे पड़ी हुई गूदडी थरथर धूज रही है। राजा के पूछनेपर तिजारी का सब वृत्तान्त कह सुनाया तब तो राजाने अपना अहोभाग्य समझा कि मेरे राज्य में ऐसे सिद्ध महात्मा विराजते हैं। यह वृत्तान्त बीकानेर पुरानी ख्यात मे लिखा हुवा है।

कोडमदेसर की गद्दी सिंहथल गद्दीकी दादागुरु गद्दी है। इति।

जर नरहरियानंद के, कर दुर्गा आधीन।
नितका ढोया ईंधंणा, अकरण करण नवीन ॥ ११ ॥

(नरहरियानंदजीकी कथा)

भक्त नरहरियानंदजीके लिये आपने दुर्गाको आधीन करदी। विचारी दुर्गाने नित्य लकडियों की भारी ढ़ोई जिस अकरण ने यह नवीन करण किया।

(भक्तमाल)

चंद्रहास को राखियो, केती कष्ट दयाल।
मात आदि चरणा परी, महिपति भक्त विशाल ॥ १२ ॥

(चंद्रहासजीकी कथा)

जिस दयालु ने कितने ही कष्टों से चंद्रहास को रखलिया। मातादि जोगिणियें भी जिस चंद्रहास राजाके चरणों में पड़ी वह चंद्रहास एक विशाल भक्त होता भया।

श्लोक।

विषमस्मै प्रदातव्यं त्वया मदनशत्रवे।
कार्याकार्यं न कर्तव्यं कर्तव्यं किल मत्प्रियम् ॥ १ ॥ (भक्तमाल)

नंददास के हेत जो, गऊ जिवाई राम।
भये खिसाने विप्र सब, जनके सारे काम ॥ १३ ॥

(नंददासजीकी कथा)

जिन राम महाराज ने नंददासजी के वास्ते गऊ को जिवादी। सब ब्राह्मण जिनके ऊपर नाराज हो गये थे तो भी भगवानने भक्त का काम तो सिद्ध करही दिया। (भक्तमाल)

दग्ध देह कमध्वज तणी, किवी पारषद आन।
चारु चलावो शरण सुख, जन महिमा भगवान ॥ १४ ॥

---

१ ईंधण=काष्ठ।

(कमध्वजजीकी कथा)

भगवान के पारषद हनुमानजीने आकर भक्त कामध्वजके मृतक शरीरको जलाया। शरणागतको जीतेजी सुख दिया और अंतमें उसका अच्छा हलावा चलावा किया। इस प्रकार भगवानने भक्त की महिमा बढाई। (भक्तमाल)

हरि पुर से आये जना, पाय गये परसाद।
लालाचारज प्रसिद्ध जग, चकित रहे असाद॥ १५॥

(लालाचार्यजीकी कथा)

वैकुंठ से हरिजन आकर लालाचार्य के यहां प्रसाद पा गये। इस प्रकार लालाचार्यकी आपने जगत में प्रसिद्धि करवाई। इस वाता को देखकर दुष्ट तो हक्के बक्के से रहगए। (भक्तमाल)

करमाबाई के सदन, भाव भई परसाद।
नाम उगाई प्रगट जग, अकरण करण अगाद॥ १६॥

(करमाबाईकी कथा)

करमाबाई के घर में जिन भगवानने भावमय प्रसादका भोग लगाया। करमांबाई जाति की जाटणी एक साधारण स्त्री थी परतु उनका नाम जगत में प्रगट कर दिया। ऐसे वे भगवान अकरण करण में गंभीर है।

नहिं विद्या कुल जाति अचारा।
रामहिं केवल प्रेम पियारा॥"
धावल ओट खीचड़ो घलके।
अपणा दे कपड़ा ओनाय॥" (भक्तमाल)

कहॉं लों वरणूं सत जश, गति अगाध परमेश।
मो बल यो ही आसरो निभय गुरु उपदेश॥ १७॥

सतों का यश कहाँ तक वणन करू? क्योंकि परमेश्वर की गति अगाध है। मैं तो गुरु महाराजके उपदेश से निभय हू। मेरे यही बल है और यही आश्रय है।

नवग्रह चौंसठ जोगिणी, बावन बीर पर्जत।
काल भक्ष सबको करै, हरि शरणै डरपत॥ १८॥
ताकी दासी तापत्रय, मो घट व्याधि जराय।
जैनराय जानो सबै, यह विरद केरो जाय॥ १९॥
तुम पालक सागे सदा, आगे बचे अनल।
कर्म विडारण तारणा, नमस्कार भगवत॥ २०॥

---

१ जानकारों में श्रेष्ठ।

नवग्रह चौंसठ जोगिनी से लेकर बावन वीर पर्यंत काल सबको भक्षण करता है वह काल भी भगवद्भक्तों से डरता है। तिसकाल की दासी जो ताप-त्रय रूपी व्याधि सो मेरे घट को जला रही है, हे जानराय! आप सब जानते हो कि ये विरद किसका जा रहा है। आप वही पालक है कि जिन्हों ने पहिले सदैव रक्षा की और कर रहे है और करेंगे। हे कर्मो को विडारणे वाले जगत को तारणेवाले भगवत! आपको नमस्कार हो।

व्याध एक मार्‍यो मिरग, व्याल[1] डस्यो तरु छॉय।
तृपा मरत शुक सुनि गिरा, नाम प्रगट उरमॉय ॥ २१ ॥
उभय वार श्रवणा सुणे, उभय वार मुख गाय।
अंतकाल ऐसो भयो, ततछिन भए सहाय ॥ २२ ॥
जमकिंकर[2] बंधे महा, बंध छुडाई ताय।
हरिपुरवासी आयके, लेखै न्याव चुकाय ॥ २३ ॥
एके चेलै[3] अघ सबै, एके चेलै नाम।
ऐसी विधि भव तारणा, निर्भय दीधो धाम ॥ २४ ॥

(एक व्याध की कथा)

एक व्याध मृग को मारकर वृक्ष की छाया मे आके बैठा। बैठते ही सॉप ने उसे डस लिया। उस समय प्यासे मरते हुए उस व्याधने एक सुवे की गिरा सुनी, सुनते ही उसके हृदय में नाम प्रगट आया। दो बार तो नाम को कानों से श्रवण किया और दो बार ही मुख से नाम लिया तो उसका अतकाल ऐसा हुवा कि तत्क्षण भगवान् उसके सहायक होगये। जमदूतो ने उसको बंडे बधनों से बाध दिया था तो भी भगवत्पारपदो ने आकर उसके बध छुडा दिये और हिसाब कर उसका इन्साफ चुकाया। तकडीके एक पलडे मे तो उसके सब पाप रक्खे और एक पलडे में भगवन्नाम रक्खा तो पापवाला पलडा हलका होगया, इस प्रकार भवतारकने उस व्याधको निर्भय धाम दिया।

मेरी विरियां कहा भयो, दीनबंधु दातार।
करहु कृपा अब औरसी, बिगरत कौन बुहार[4] ॥ २५ ॥

हे दीनबधु दानी! अब मेरे वक्त क्या हो गया। औरोंपर जैसी कृपा करी है वैसी कृपा मेरेपर भी करो, अथवा औरसी कहिये खास अत·करणसे कृपा करो, क्योंकि यह व्यवहार अब किसका बिगड रहा है?।

---

१ सर्प। २ दूत, नौकर। ३ चेला=पलडा। ४ व्यवहार।

सोरठा।

उल्टा समझे राम, ओखाणो साचो कर्यो।
शरणागत दुख ताम, यह कारण अवही भयो ॥ १ ॥
आगे अवै न कोय, अजहूँ मैं नाहीं सुन्यो।
यह तो कदे न होय, रार गमावण रामजी ॥ २ ॥

हे रामजी महाराज ! आप समझे तो सही परतु उल्टा समझ गए।

ताप फकीर को दृष्टांत-एक फकीर रास्ते २ जा रहा था उसने चाहा कि अगरचे खुदा चलनेके लिए मुझे एक घोड़ा देदे तो कैसा अच्छा हो। ऐसा सकल्प कर आगे को बढा तो क्या आश्चर्य देखता है कि एक राजपूत के चढ़नेको घोडी थी उसने वछेरा देदिया। राजपूत नगर में रास्त पै खड़ा विचार करता है कि कोइ मजदूर मिलजाय तो बछेरे को उठाले। अकस्मात् फकीरपर निगाह पड़ी और कहा कि फकीर साहब! बछेरे को उठाओ बलात्कार उठा कर चले। अब चलते चलते फकीर साहब विचारते है कि खुदा ने घोड़ा तो दिया पर उलटे समझ गये। मैंने घोड़े पर चढना चाहा था पर उलटा घोड़ा मुझपर चढ गया।

इसी प्रकार श्रीदयालजी महाराज फरमाते हैं कि, आप मेरी विनय को समझे तो सही पर उलटे समझ गए। मैं तो जन्ममरणरूप व्याधि को मेटना चाहता था परतु वो तो कहीं रही उलटी नेत्रों की व्याधि आ लगी।

तथा हे प्रभो! चोबे वाला आख्यान आपने साचा कर दिखाया।

('इक चोबे हुते छबे होने चले तहां होय दुबे द्वै गाठ के खोये') एक चोबे थे उनको यह खबर मिली कि अमुक देश में चोबेको छब्बे कहते हैं। आप खुद छब्बे होने को निकले सो चलते चलते एक और ही जगह पहुचे तो वहां सुना कि चोबे को दुब्बे ही कहते हैं। अब वह चोबा वहां विचार करता है कि मैं अपने देशमें चौबे कहलाता था। छब्बे होने को रवाना हुवा परतु उलटे यहाँ आकर दो गाठ के खो दुब्बे ही बन बैठा।

इस प्रकार श्रीदयालजी महाराज फरमाते हैं कि हे प्रभो! मैं अपने समय को सुखपूर्वक विता रहा था तब मैंने चाहा कि भगवत् भजन कर जन्म मरणरूपी रोग को मिटादू ऐसा निश्चय कर प्रयत्न किया तो करते ही नैरोग्यावस्था से रहित हो नेत्रों की पीडा से पीडित होगया, किन्तु आरोग्य अवस्था को गांठसे गमा दु खी बन बैठा, सो यह आख्यान सचाही आपने कर दिखाया क्या ? । प्रभो ! शरणागत को दु ख होना यह कारण तो अब ही हुआ है ऐसा न तो कभी आगे होगा और न अन्यत्र कहीं ऐसा है और न अबतक मैं ने सुना, यह तो कदापि न हो कि रामजी महाराज नेत्रों को गमा दें।

१ आख्यान। २ नेत्र तकरार, लडाई। ३ यह आर्त वचन हैं।

वोल न जाणूं कोय, अल्प बुद्धि मन वेग तें।
नहिं जाके हरि होय, यातो मैं जाणूँ सदा ॥ ३ ॥

हे महाराज! अल्पबुद्धि होने से मैं बोलना कोई नहीं जानता केवल मन के वेग से आल वाल कर रहा हूँ। जिसके कोई नहीं उसके हरि होवें हैं यह तो मैं सदैव से जानता हू, और बस इसीपर मैं निर्भर हूँ।

तब जन शरणै आय, हनूवँश इक डांवरो।
नाभा नाम सहाय, चखमा खुल संजय सही ॥ ४ ॥
जन पद पंकज धूर, चख उर मन मंजन कऱ्यो।
राम शब्द भरपूर, ताहि नेत्र ऐसे खुले ॥ ५ ॥
मुरवेला सूझंत, अद्भुत वरण्यो ब्रह्म पद।
हरि शरणै जूझंत, वालवाल यह आसरो ॥ ६ ॥

(नाभाजी की कथा)

हनुवश का एक नाभा नाम वालक भक्त आपके शरण आया उस नाभे की आपने सहायता की, उसके हृदय के नेत्र खोल उनको सचा सजय बना दिया। जिस नाभाजी ने महात्माओं के चरणकमल की धूली से नेत्र, हृदय और मन को मंजन किया और राम शब्द की भरपूर ध्वनि की तो उनके नेत्र ऐसे खुल गए कि तीनकाल (भूत भविष्यत वर्तमान) की वार्ता सूझने लग गई, तब उन ने अद्भुत ब्रह्मपद का वर्णन किया इस प्रकार मैं भी तो हरि शरणै जूझ रहा हूं, क्यों कि यही आसरा वालवाल के है।

"श्री नाभा नभ उदित शशि, भक्तमाल सो जान।
रसिक अनन्य चकोर है, पान करै रस सान ॥" (भक्तमाल)

पावन पतित अनेक, समरथ याही चोज[3] है।
पापी हुलॅस विशेष, अवकी वेर उवारियै ॥ ७ ॥

अनेक पापियों को पवित्र करना समर्थवानों के तो एक चोज है और इस वात का पापियों को विशेप हर्ष है तब तो मेरी यह प्रार्थना है कि अब की वेर इस पापी को भी उवार लें।

"भक्तवछल को विरद सुनि, रज्जव दीन्हो रोय।
जब सुनियो पावन पतित, रह्यो नचीतो सोय ॥ १ ॥"

यह जानत महाराज, शरणागत मेटण अँदा[5]।
राम गरीबनिवाज, विघ्नहरण मंगल सदा ॥ ८ ॥

१ लबरा। २ नेत्र। ३ चमत्कारपूर्ण उक्ति। ४ आनंद की उमग। ५ कष्ट, मनकी व्याधि।

यह मैं जानता हू कि राम महाराज शरणागत के दु ख को मेटणेवाले हैं, गरीब निवाज हैं, विघ्न हरता है और सदैव मगल करता हैं।

दोहा।

भक्तिरस जामें सकल, छद सारसी जान।
हरि सरवर हसा जना, मुक्ता नाम निधान ॥ १ ॥
भाव नीर निरमल सदा, परिमल भवसिंधु पार।
रामदास जन रमरह्या, ल्हा अखे सुख सार ॥ २ ॥

करुणासागररूपी दिव्य सरोवर में भक्ति के सारे रहस्य समाए हुए हैं, जिसमें छद सारस है, भक्त हस है, नाम मोतियों की निधि है, भाव निर्मल जल है, भवसिंधु से पार होना ही मधुर सुगध है ऐसे सरोवर में जो रामभक्त समुदाय रमण करते हैं वे मोक्ष सुख को प्राप्त होते हैं।

मन कलियो मोह सिंधु में, काल ग्राह अघ तत।
अब लायक स्हायक सदा, नमस्कार भगवत ॥ ३ ॥

मोहरूपी समुद्रमें करीना हुवा जो मनरूपी हाथी तिसको पापरूपी ततु डालकर कालरूपी ग्राह खच रहा है, अब उनकी सहायता करने में आपही समर्थ हो, हे भगवत! आपको सदैव नमस्कार हो।

छद रोमकदी।

नमो भगवत सभारण कारण गति अपार न कोण लही।
भव दु ख विडारण काज सुधारण पार उतारण एक सही ॥
वल बॉह वधारण अघ निवारण जाव जिवारण वप्पु धरो।
भव के दुख टार उधार अपपर पार गजेंदर जेम करो ॥ हरि० ॥ १ ॥

रक्षा करणेवाले हे भगवत! आपको नमस्कार हो, आपकी अपार गती का किसने पार पाया?।

ससार के दु खों को दूर करनेवाले, काय को सुधारनेवाले, पार उतारनेवाले एक सत्यस्वरूप आप ही हैं।

हे बाह के बल को बधारणेवाले! हे पापों को निवारण करनेवाले प्रभो! आप तो केवल जीवो को जिलाने के वास्ते अवतार धारण करते हैं।

हे हरे! ससारके अपार दु ख को टार जिस प्रकार जल में डूबत हुए गजेंद्र का उद्धार किया तैसे ही मेरे को पार करो ॥

---

१ रहस्य। २ उत्तम गत। ३ काय। ४ गति=लीला, माया। ५ अघ=पाप। ६ वपु=शरीर। ७ जलमें पडा हुवा। ८ जिमि=जैसे।

महा मत्त मनंगय रत्त अनंगय अंध कुसंगय में मतयूं।
ता पंच प्रसंगय वाम भुवंगय काम कमंगय से हत यूं॥
विष अंग तरंगय ग्रीषम अंगय मोह सुरंगय होय गरो।
भवके दुख टार० ॥ २ ॥

महा उनमत्त मनरूपी हाथी कामदेव में रत होकर अंधा हुवा कुसंगति में मस्त होगया।

इसीलिए वह मन पच प्रसंगोंसे अर्थात् शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गध से, स्त्रीरूपी सर्पिणी से, और काम के बाणों से मारा गया।

विषय के आँठ अंग हैं वही मानो विष की लहरें जिस मनके अंग मे उठ रही हैं, और काम करके तपायमान जो स्त्री का अग है वही मानो ग्रीष्म ऋतु है, तिस करके तप्त हो रहा है। अब वह मन स्त्रीसबधी मोह रंग में रंगीज कर गर रूप होगया है अतएव हे नाथ! अब आप इससें उबारो।

प्रकृत्ति पँचीस तेतीस प्रचंडय मंड स मंडय पिंड इता।
हुय थंड[10] विहंडय[11] जीव स डंडय सूर प्रचंडय मन्न मता॥
तत्काल विकराल विह्वाल स झंपंण[12] व्याधि गिराह[13] सनाह[14] बुरो।
भवके दुख टार० ॥ ३ ॥

पचीस प्रकृति, अन्नमयादि[15] पचकोष, और तीन[16] गुण ये सब मिल कर तेतीस होते हैं इन्हीं से बडा प्रचंड ब्रह्मांड बन गया और यही पिंड में है (पिंडेषु ब्रह्माण्डे)

उक्त प्रकृति आदि समूह विचल होकर जीवों को सुखदुःखरूपी दंड देरहा है। तिस समूह में मत्त जो मन है सो प्रचंड शूरवीर है।

इतने ही में उछल कर विकराल व्याधिरूप ग्राह ने तो तत्काल विह्वलही करदिया, इसका बंधन बहुत बुरा है, हे प्रभो! इस दुःख से आप पार करें।

---

१ मन। २ हस्ती। ३ अनग=कामदेव। ४ बाण। ५ गर=एक प्रकार का बहुत कडुवा और मादक रस जिसका व्यवहार प्राचीन कालमें होताथा। ६ स्त्रीका स्मरण, कीर्तन, परिहास, निरीक्षण, गुप्तभाषण, भोगनेका सकल्प, भोगनेका दृढ़ निश्चय, और आठवां स्त्रीसग अर्थात् दृढ निश्चय कीहुई क्रियाकी सिद्धि। ७ प्रकृति, महत्तत्त्व, अहंकार, शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गंध, पांचज्ञानेद्रि पाचकर्मेंद्रि, मन, पृथ्वी, जल, तेज, वायु, आकाश, जीवात्मा। ८ ब्रह्मांड। ९ शरीर। १० समूह। ११ विहंड=विचलना। १२ उछलना। १३ ग्राह। १४ बंधन। १५ अन्नमय प्राणमय मनोमय विज्ञानमय आनंदमय। १६ सत्व रज तम।

जग जाल अंसराल सँभाल छले इन भक्ख सदा भवसिंधु मही।
नँभ नाल तँताल धरोल मिले त्रयलोक सुँरप्पति विँदि सही॥
कइ रस्स डाढ़ाल ढींचाल उंगालण होय अभे खल खाण नरो।
भवके दुख टार० ॥ ४ ॥

इस काल ने ससाररूपी समुद्र में इस जगत जाल को लगातार सदा सँभाल सँभाल कर छला।

नभचर, जलचर, थल्चर, इन सहित तीनलोक, तथा इन्द्र, ब्रह्मा आदि तथा दाढोंवाले, बडे बडे शरीरवाले, तथा मनुष्यों को खानेवाले राक्षस आदि ये सब जिसकाल के अनेक रसवाले ग्रास हो चुके हैं उस काल से हे राम महाराज ! आप अभय करो।

जग जंतु जनम्म अनंत कष्टय महा टुंपट्टय हाल हुआ।
जिव अघ करष्पय मृत्यु हरष्पय पूर वरष्पय आयु हुआ॥
अंत नाडि तटक्कय प्राण सटक्कय छोडि घटक्कय सीर टरो।
भवके दुख टार० ॥ ५ ॥

प्रथम तो जगत जीवों के जन्म में अनंत कष्ट हैं फिर इस जीव के खोट हाल होते हैं।

इस जीव को पाप तो अपने तरफ खाचते हैं। मृत्यु अलहदी खुशी मनाती है। और आयुके वर्ष पूरे होनेतक दवा दारू देकर वैद्य न्यारे ही विचारे गरीबों को ठग ठग कर मनमें राजी होते हैं।

जब अंतमें नाडी तटकती है, घटकों छोड प्राण सटकते हैं, तब इस प्राणी का सब से सीर टल जाता है, उस समय में उस प्राणी को संसार से पार उतारनेवाले एक आप ही हैं।

इम श्वास दमोदम दुःख हमोहम राम रमोरम जान सबे।
मँह माह गमोगम जीव भमोभम एक तमोतम ओर नवे॥
यह दीन सँमो राम क्यों न करो किमु राज नमोनम धीर धरो।
भवके दुख टार० ॥ ६ ॥

इस प्रकार श्वास तो दम दम में घट रहा है। दुःख का हमला पर हमला हो रहा है। हे रमतीतरामजी ! तिसको आप सब जानते हैं।

---

१ निरंतर। २ भक्षक=काल। ३ नभचर। ४ जलचर। ५ स्थलचर। ६ सुरपति इन्द्र। ७ विधि=ब्रह्मा। ८ रस=स्वाद। ९ डाढोंवाले। १० बडेशरीरवाले। ११ चबाना। १२ अभय। १३ दुष्ट=बुरा। १४ दवा=औषधि। १५ रमतीतराम। १६ मह मह की प्रति। १७ समय। १८ शांति।

शरीररूपी गृहगृह के प्रति गमन करते हुए जीव वारंवार संसार मे भ्रमण कर रहे हैं, सो उन जीवों की रक्षा करनेवाले हे प्रभो ! एक आप ही आप है, (न वे) किंतु वे शरीर रक्षा नही कर सकते है।

यह दीन का समय है, इस दीन के चित्त को स्थिर क्यों नही करते हैं ? इस समय आप किस प्रकार धीरज धारण कर रहे हैं ? आपको नमस्कार हो नमस्कार हो।

> परिवार न वॅरण[1] सार संभारण तारण कारण आय लियो ;
> आरोह खॅगारण[2] धाय धॅरारण[3] चक्र चलारण काज कियो ॥
> धिन आप अपारण सोइ विचारण टेर उचारण एक ररो।
> भवके दुख टार० ॥ ७ ॥

परिवार ने जिस गजेंद्र की सार संभार न ली तब उस को तारने के लिए अवतार धारण कर गरुड़पर चढकर चले, फिर पृथ्वी पर दोडे, तब भी जल्दी न पहुंचने पर चक्र चलाकर गजेद्र का कार्य सिद्ध किया।

एक र र र इस प्रकार की टेर उच्चारण से ही जिस गजेद्र का उद्धार कर दिया ऐसे आप को धन्य है, आप अपार हैं, आप का विचार भी अपार है।

> गोविंद आनंद नमो चँद वंद पुँरंद[4] सुखंद समंद सदा।
> मो मंद[5] मनंद[6] गँमो[7] सिध[8] तह लंयंद[9] शंयंद[10] उँरंद[11] मुंदा[12] ॥
> हँद[13] जिंद[14] निकंद[15] सँकंद[16] सँदोगति[17] अंद[18] समंद दुंरद[19] हरो।
> भव के दुख टार० ॥ ८ ॥

आनंदस्वरूप हे गोविंद ! आपको नमस्कार हो। कैसे हैं आप ? चद्र तथा इद्र करके वंदित हैं, और सदा सुखसमुद्र हैं।

आप प्रसन्नता के साथ हृदयकमल मे शयन कर रहे हैं, उनकी गम लेने के वास्ते मेरा मन वडा सुस्त है, उनकी गम तो सिद्ध पुरुप ही लेते हैं।

जो हद के शरीर हैं वे सब नाशवत हैं। हद के अदर जितने जीव हैं उनके लिये तो वह (हद) अपार समुद्र है, इसलिये हे मोक्षमूल ! उस अतिम अवधि रूप हद का हरण करो।

---

१ गजेन्द्र। २ गरुड़। ३ पृथ्वी। ४ पुरंदर=इंद्र। ५ सुस्त, मूर्ख, खल। ६ मन। ७ गम=खोज। ८ सिद्ध=महात्मापुरुष। ९ लेना। १० शयन करना। ११ उर=हृदय। १२ प्रसन्नता। १३ अवधि। १४ शरीर। १५ नाश। १६ स्कंध=मूल १७ सद्गति=मोक्ष। १८ अंदर=भीतर। १९ दुरद=अपार।

छंद छप्पय ।

द्वंद हरण गोविंद तरण भवसिंधु विश्वंभर।
नमस्कार आधार भूल नहिं परत निशंभर ॥
थाह दुखाह अथाह अबै शरणागति तेरी ।
दीनबंधु आनंद टेर यह सुनिये मेरी ॥
निराधार आधार हरि पारावार पावन पतित ।
चालवाल शरणागती केंरी सेंरी सो मुनि कथित ॥ १ ॥

हरष शोक को हरणेवाले हे गोविंद ! हे संसाररूपी समुद्र से तारणेवाले ! हे विश्वंभर ! आपको नमस्कार हो । हे प्राणों के आधार दिनरात मेरे से आप भुलाए नहीं जाते हो । अथाह दुख ने मेरे को ग्रहण कर लिया है । अब आपकी ही शरण है ।

हे दीनबंधु आनंद रूप ! मेरी यह टेर सुनिए । हे पतितपावन हे हर ! संसाररूपी समुद्र में निराधारों के एक आपही का आधार है । यह चालवाल आपकी शरणागत है । मुनिलोग कहते हैं कि गजेंद्र की वेळा सरगई तो हे प्रभो ! क्या मुझ चालवाळ की वेला नहीं सरेगी ?

दोहा ।

नाहिं न दूजो आसरो यह दुख मेटण आप ।
दाझत जग माया दुखद तीन लोक त्रय ताप ॥ १ ॥

तीन लोक को दुःख देनेवाले जो तीन ताप इन से माया जगत को जला रही है । सिवाय आप के दूजा कोइ आश्रय नहीं है । हे राम ! इस दुख को मेटनेवाले आप ही हैं ।

छंद रोमकंदी ।

त्रय ताप सँताप दुखाप दुखंकर पाप कियंकर लार लगा ।
जिय छाप कलाप विलाप भयंकर थाक हुलंकर मृत्यु अगा ॥
मन सॉप शराप विशेप कायापर मोह मया धर वेश तरै ।
मनते सिंध सार अधार रमारम आप विना कुण ताप हरै । जी ॥ १ ॥

तीन ताप के संताप से सब प्राणी दुख को प्राप्त हो रहे हैं । वह तीन ताप

---

१ द्वंद्व=युग्म । २ निशिभर अर्थात् रातदिन । ३ पारावार=समुद्र आरपार अपरंपार अनंत । ४ हस्ती । ५ विदहुए । ६ तीन ताप=दैहिक दैविक और भौतिक व आध्यात्मिक, आधिदैविक, आधिभौतिक । ७ इस छंद में उदाहरण सहित तीन तापों का वर्णन है । ८ किंकर=नोकर । ९ अग्नि । १० सजावट । ११ विष्णु नारायण ।

यह हैं—जैसे अघासुर, धेनुकासुर आदि कंस के किंकरों ने लारे लगकर जिस प्रकार ब्रजवासियों को दुखी किये इस का नाम अधिभूत ताप है और यह तन की है।

कालीदह में निवास करनेवाला जो काली नाग जिस की विषाग्नि से मृत्यु भी अगा कहिये अगाऊ दूर हट रही है इस प्रकारकी छाप जिन ब्रजवासियों के आत्मा में लगने से जो भयंकर विलाप कलाप करना है इसका नाम अध्यात्म ताप है और यह वचन की है।

जिस महाजहरीले काली नागके लिये ब्रजवासियों का मनसे धिक्कार देना है, और विषसे मृतक बालकों के शरीर पर मोह उत्पन्न होना है इसका नाम अधिदैव ताप है और यह मन की है।

उस समय में आपने नटवर वेषधार काली को दमन कर ब्रजवासियों का दुख टाला इसी प्रकार मेरे पर भी दया कर ऐसा वेष धरो जिस से मेराभी दुःख टल जाय।

हे नारायण! हे प्राणों के आधार! मेरे काम को मनसे सिद्ध करो, विना आपके मेरा कौन ताप हरेगा?

अँतकाल[1] अकाल भूताल स डाकण मूठ स नाखण प्राण लिया।
कुवै खाल जुंराल[2] खोगाल फसावण मारग जावण मार विया[3]॥
अधिभूत जँरावण[4] तामस खावण[5] और न आवण जोणि धरै।
मनतें सिध सार० ॥ २ ॥

अकाल मृत्यु होजाना जैसे भूत लगना, डाकन लेलेना, अथवा प्रान के लेने वाली मूठ का चलाना, कुए में गिरजाना, खाल में उतर जाना, ऊंडी खोगाल में फँसजाना, मारग चलते भयसे मरजाना, यह अधिभूत ताप हैं, तमोगुण इसकी खानि है। सो हे प्रभो! ऐसी कृपा करो कि फिर आकर किसी भी प्रकार की योनी को न धारें।

ज्वर[6] व्याधि असाध्य नारु तन दूखण डैरु सहूकण रोग किता।
कफजादि रजादि कियादि स सूकण वायु गंढ़गण[7] भोग जिता॥
यह जासु रजोगण दाँझ अध्यातम लाज प्रमातम[8] काज करै।
मनतें सिध सार० ॥ ३ ॥

---

१ इस छंद में अधिभूत ताप का वर्णन है। २ गहरी। ३ भय। ४ ताप। ५ खानी। ६ इस छंद में अध्यात्म ताप का वर्णन है। ७ ताप। ८ परमात्मा।

आठ प्रकार का ज्वर होना, असाध्य व्याधियों का होना, बाला निकलना, तथा शरीर में गडगूमड होना, गोडे में डहरवा नामक रोग होना, तथा गुजरती आदि जितने ही होनेवाले रोग तथा कफ पित्त वात से होनेवाले रोग, प्रदर रोग, प्रमेहरोग, और यकृत् (लीवर) प्लीहादि उदररोग, तथा शोषरोग, गठिया वायुसे आदि लगाकर वायु के रोग आदि शिरोरोग, मुखरोग, नेत्ररोग करके जिसके जितने भोग भोगन हैं यह अध्यात्म ताप है । रजोगुण इसकी खानि है । हे परमात्मन्! अब लाज आपही के हाथ है, इसदास का काय सिद्ध करें।

वैयाल सियाल उनाल वर्षाकुल वारि वर्षाल खुंधाल सयू।
वनाल विचाल गिराल असाकल ज्वाले मयाल सखाल लयू॥
सुराल विचाल झपट्ट सतोगुण यह अधिदेव से बाल टरे।
मनतें सिध सार० ॥ ४॥

बडी जोरदार काली पीली आँधीसे, शीतकाल से, उष्णकाल से, जलके तूफान से, वर्षाकाल से, क्षुधाकाल से वनके मध्यमें पवत के मस्तक में खड पर खड में बिजली के उत्पात से, नाल खाल से, तथा देवताओं की झपट से, जो ताप है वो अधिदैव ताप है। सतोगुण इस की खानि हैं। हे प्रभो! ऐसी कृपा करो कि इस ताप से आपका बाल बाल टल जाय।

क्रियमाण मिलान भोगान सचित्तय प्राणि वखान सुथान जका।
तपतीन विधान समान दसंचिय मान अज्ञान सुंज्ञान धका॥
तब आन अचानक हानि करे जिव बानक एक भगवान सरे।
मनतें सिध सार० ॥ ५॥

जिन जिन स्थानों में प्राणियों का निवास है वहाँ वहाँ ही तीन तापों के रीति अनुसार क्रियमाण प्रारब्ध और सचित इन तीन प्रकारके कर्मोंका डर है। जब अज्ञानी अथवा ज्ञानी दोनों ही इस क्रियमाण कर्म करके धकायमान होते हैं तब आन कहिये दूसरे प्रारब्ध और सचित ये अकस्मात् हानि करते हैं । उस समय में जीव का बानक एक भगवानसे ही सरता है अर्थात् भगवान् ही उसके काय को सिद्ध करते हैं।

---

१ वायु। २ इस छंद में अधिदैव ताप का वर्णन है। ३ शीतकाल। ४ व्याकुल। ५ क्षुधाकाल। ६ वन। ७ गिरि=पवत। ८ खड। ९ ज्वालमाला=विद्युत्। १० देवता। ११ इस छंदमें सचित, प्रारब्ध, क्रियमाण इन तीन् कर्मोंका वर्णन है। १२ मिलानभोगान=प्रारब्ध। १३ दहशत=खौफ। १४ ज्ञानी चतुर। १५ वेष।

उर चाय उपाय भमाय सवै घट लाय अथाय जलाय दिया।
मुरझाय दिखाय जमाय तवै शठ ताय वंधाय धकाय लिया॥
कइ खायँ सिराय पचाय जठागनि दाय सहाय सवाय मरै।
मनतें सिधसार० ॥ ६ ॥

जव प्राणी के हृदय में चाह उत्पन्न होती है तव वह उसको बडा भटकाती है, जिस चाहरूप अगाध दावाग्नि ने संपूर्ण प्राणियों के घट जला दिए।

चाह से जला हुवा पुरुष पहिले तो कुछ कर सकता नहीं। जब अंतकाल आता है तव वह मूर्ख यमदूतों को देखते ही मुरझाय जाता है, उसको वे यम-दूत बाँध धक्का देकर यमलोक ले जाते हैं।

उस यमलोकमें कितनेक प्राणियों को तो खाकर खुटादेते हैं, और कितनोंको जठराग्नि करके पचाय जाते हैं, और कोई दयाकर उन जीवों की सहायता करता है तो वे जीव सवाये मारे जाते हैं।

(ऐसी दशामें श्री गुरुदेवजी सहायक हैं)

गुरु ज्ञान घटा वरसान सदा संग दूरि अँदा उन प्राणि मिटे।
उर आन मिटा हरि ध्यान सदा रंग नूर तदा तनु जाँन छुटे॥
उर जाल सेवाल मिटायके उज्वल प्रेम सुखाल अमिट्ट झरै।
मनतें सिधसार० ॥ ७ ॥

जिन्हों ने ज्ञान घटा वरसानेवाले श्रीगुरुदेवजी का सतसग किया उन प्राणियों के दुःख दूरसे ही मिट गये।

और उस सतसगति से हृदयमें आन उपासनादि भ्रम मिटकर जिस समय भगवत् ध्यान में निरतर जिन लोगों के नूर रंगे गये हैं उस समय वे लोग अपने शरीर की सुध बुध भूल गए हैं।

जिन गुरुमहाराज ने सतसंगद्वारा भ्रमरूप जाल मलीनतारूप सेवाल मिटा-कर जिनके हृदय उज्वल कर दिए हैं उन हृदयों में से प्रेमरूप सुदर झरणे निरंतर झरने लग गये हैं।

दयाल कृपाल संभाल करे जिव झाल कराल विचाल रखे।
जठराल उधाल खुधाल मरे नभ नाभिनभाल रसाल भखे॥

---

१ चाह। २ अथाह। ३ यमदूत। ४ व्यतीत करना। ५ दया। ६ दुःख। ७ ज्ञान। ८ अमिट=निरंतर। ९ जठर=उदर। १० ऊंधा। ११ क्षुधा। १२ छिद्र, आकाश। १३ नाड़ी। १४ रस।

जनमाल धुराल दुधाल सिरजत कालमे क्यों न गँवाल करै।
मनत सिधसार० ॥ ८ ॥

वही दयालु राममहाराज कृपालु होकर जीवों की सभाल करते हैं और वही काल की कराल झाल में स जीवों को बचाते हैं।

जब यह जीव माता के उदर में ऊंधे मुख होकर भूखे मरता है तब जिस नाभि के छिद्र है उस नाभि के नाडीद्वारा यह जीव रस को भक्षण करता है।

देखो उन कृपालु की दयालुता जन्म के पहिले ही दूध उत्पन्न करदिया तो वह राम महाराज इस काल में क्यों नहि रक्षा करेंगे ?

छप्पय।

काल दुकाल सँभाल करै करुणा के सागर।
झाल असराल निकाल टरै हरि जासु कृपा कर ॥
जन्माजन्म अनत कहा वरणत दुख जीवस।
अब स्हायक महाराज राज तारण धिन धीवस ॥
राम इद हरिजन घटा यह वर्षा अब कीजियै।
बालबाल शरणागती अपनो करिके लीजियै ॥ १ ॥

काल में दुकाल में वही सभाल करते हैं जो करुणा के सागर हैं। हरि जिस पर कृपा करते है वह प्राणी तीनों ही समय में निरतर काल की झालसे टल जाता है। जन्म से मरणपर्यंत जीवों को अनत दुःख होते हैं उन दुखों का कहा तक वर्णन करें ? सो हे राम महाराज ! इस जीव के अब आपही सहायक हैं। राज हो तारनेवाले है और राज ही धणी है धन्य हैं। हे इंद्ररूपी राम महाराज ! हरिजनरूपी घटा से अब वह वर्षा कराओ कि जिससे करुणाका सागर पूर्ण हो जाय। बालबाल आपका शरणागती है इस शरणागत को आप अपणाय लें।

(एक बेर कहो कृपालु तुलसीदास मेरा)

॥ इति श्रीग्रंथकरुणासागरसपूर्णम् ॥

इत्यपूर्णम्

---

१ जन्म। २ प्रथम। ३ दुग्ध। ४ समय। ५ रक्षा। ६ दुष्काल। ७ असराल= निरंतर। ८ जन्म से लेक जिंदगी भर। ९ गुरु प्रकरण भक्तमाल परची कवितबद्ध अणबद्ध आदि समस्तवाणी अंक मेधा २५०००।

पद राग काफी।

कोण हरै म्हारी पीर रे इक करुणासागर विन । टेर ।
या कलि में मेरो नहिं कोई, कोण बंधावै धीर है कोई वीर हमारो ॥ १ ॥
द्रुपदी की टेर सुणी जब श्रवणा, अनंत वधायो चीर रे हरि लाज रखी जब ॥ २ ॥
जल डूवत गजराज उवार्‍यो, कर गहि काढ्यो तीर रे तार्‍यो कीर कुटुंब सब ॥ ३ ॥
भारत में भीषम प्रण राख्यो, धाया होय वजीररे अपणेजन के हित ॥ ४ ॥
वलि औ विभीषण भया चिरजिव कियो सिथर शरीर रे रघुवीर विरदपति ॥ ५ ॥
जन पूरण पर फिर कृपा कीजै, समरथ श्याम सधीर रे प्रभु लाज हमारी ॥ ६ ॥

पद

कोण सुणै गोहार रे करुणासागर विन । टेर ।
अगुरी दई श्रवण विच काई, दीन्हो विरद विसार रे गजराज तारकर ॥ १ ॥
विगरै कहा गुसाँई मेरो, लाजैगो विरद तिहार रे हंसै जग दे कर तारी ॥ २ ॥
जन पूरण की सुनो वीनती, मार भावै चाहै ताररे पर्‍यो शरणागत तेरी ॥ ३ ॥

अथ श्रीपूरणदासजी महाराज के छुटकर शब्द ।

साखी ।

नमस्कार हरिगुरु जना, आदि अंत मध ताम ।
तिनहीको नित करत है, पूरणदास प्रणाम ॥ १ ॥

छंद चित्तइलोल ।

संप्रदा मुख चार माहीं, प्रकट रामानन्द ।
कठिण कलियुग माहिं कीनी, भक्ति पूरणचंद ।
तो सुखकंदजी सुखकंद, सब सुखसारको सुखकंद ॥ १ ॥
नमो अनंतानन्द स्वामी, अनँत हरिगुन गाय ।
संत परचै भया सारा, प्रगट परचो ताय ।
तो गुणरायजी गुणराय, जन जस गावणो गुण राय ॥ २ ॥
दास कर्मचंद करण कारण, किये कर्म सब दूर ।
ताप त्रिविधा मेट तनकी, पंच कर चकचूर ।
तो भरपूरजी भरपूर, भक्ती भावसे भरपूर ॥ ३ ॥
अवनि दुतिये जन दिवाकर, भरम निशि चकचूर ।
अखंड जोत उद्योत अविचल, काल तस्कर दूर ।
तो भलसूरजी भलसूर, मँडमें ऊगिया भलसूर ॥ ४ ॥

दास पूरण माल्वी, धिन किये पूरण काम ।
त्यान जगकी मेट शंका, लियो मन विसराम ।
तो सतनामजी सतनाम, पूरणदास है सतनाम ॥ ५ ॥
दामोदर कर दमन इंद्रिय, पंच वश करलीन ।
शील साच संतोष शम दम, दास पदको चीन ।
तो परवीनजी परवीन, हरिरस भजनमें परवीन ॥ ६ ॥
दास नारायण नाम नीको, लियो द्विज अवतार ।
सकल प्रायश्चित भये छिनम, कियो पेलेपार ।
तो वलिहारजी वलिहार, नारायणनामकी वलिहार ॥ ७ ॥
दास मोहन मोह माया, दई सकल निवार ।
ध्याय अपणो धणी निश्चय लियो उरमें धार ।
तो सिधसारजी सिधसार, सारी बात कर सिधसार ॥ ८ ॥
ध्यान माधवदास धार्‍यो, मँडे आय मैदान ।
आकाश ओढण भूमि पोढण दशों दिश बखान ।
तो परवानजी परवान, त्याग वैरागमें परवान ॥ ९ ॥
किये नख सिख सब सुन्दर, ध्यान सुन्दर धार ।
बाद निरोध विकार परिहर, दिये द्वंदमार ।
तो चितचारजी चितचार, निरमल कियो मन चितचार ॥१०॥
चरणदास विचार बाणी, राम चरणा चित्त ।
अल्प सुख संसारको, निजनाम साचो वित्त ।
तो वड कृत्तजी वडकृत्त, सतोंचरणकी वडकृत्त ॥ ११ ॥
नमो जैमलदास स्वामी, बडे धीर गंभीर ।
धार जन अवतार अवनी, मेटणा परपीर ।
तो सुखसीरजी सुखसीर अमृत धारकी सुखसीर ॥ १२ ॥
दास ज्यू कबीर चकवे, लियो निर्गुण नाम ।
कियो निरणय नीरक्षीर, हंस ज्यू हरिराम ।
तो विश्रामजी विश्राम जीवा कारणे विश्राम ॥ १३ ॥
दास बिहारी विमल्वाणी, जासु शिष्य हरदेव ।
तासु मोतीराम धिन, रघुनाथ सतगुरु सेव ।
तो निज भेवजी निजभेव, पायो भक्ति को निजभेव ॥ १४ ॥
हरिराम शिष धिन रामदासजु आर नहिं कोइ आज ।
निरख सब निरताय निरणय, करण जीवा काज ।
तो महाराजजी महाराज मंडमें अवतरे महाराज ॥ १५ ॥

तासु गादी आन ब्राजे, प्रगट दूजेद्याल ।
वोल अनुभव गिरा वाणी, व्यास जेम विशाल ।
तो किरपालजी किरपाल जीवां ऊपरै किरपाल ॥ १६ ॥
शरण आयां स्याह कीजे, दरश दीजे द्याल ।
लाज पूरणदासकी अब, काटिये कर्मजाल ।
तो रिछपालजी रिछपाल अपने जीवकी रिछपाल ॥ १७ ॥

॥ इति ॥

जन्मलीला ।

(पृष्ठ ३०)

अथ श्रीअर्जुनदासजी महाराज के छुटकर शब्द ।

साखी ।

श्रीहरि गुरु हरिराम थिन, रामदास मुझ साम ।
द्यालपुरुप पूरण प्रती, अर्जुन की परणाम ॥ १ ॥

छप्पय ।

प्रथम करों परणाम, रामदासं गुरु स्वामी ।
दूसर श्री गुरु द्याल, अनंत जीवां हंसनामी ॥
तीसर श्री गुरुदेव, ब्रह्म पूरण गुरु पूरा ।
वानी विमल रसाल, भरम कर्म चकचूरा ॥
संध्या मध्य प्रभात रट, जीव परमपद पाय है ।
अर्जुनदासजु रावरे, चरण कमल चितलाय है ॥ २ ॥

अथ पूर्वजन्मप्रारंभः ।

दोहा ।

प्रथम राम गुरु वन्दना, पुनि सब सन्त प्रणाम ।
हुइ प्रसन्न आज्ञा करहु, ग्रन्थ उचारण ताम ॥ १ ॥
मेरे मन उपज्यो हर्ष, टीका करण उचार ।
पूर्ण बुधि दीजै सरस, तो मैं पाऊं पार ॥ २ ॥
ग्रन्थ समुद्रहि रूप है, महान गुरू सोइ पोत ।
मम गुरु केवट खेवसी, सहज पार जब होत ॥ ३ ॥

चौपाई।

पूरबसे पाताल सिधाया। पछिम घाट हुइ मेरु चढ़ाया॥
आकाशा सुख रहा लुभाई। सुरति शब्द मिल केलि कराई॥ १॥
मच्छी सात समँद तजि दीया। ब्रह्म वृक्ष चढ़ि सो रस पीया॥
वृक्ष अदृष्ट दृष्टि नहिं आई। मूल न डाल न पात न छाई॥ २॥
मुक्ती फल आगै अछूता। चाख्या तिके अमर अवधूता॥
माया के गुण रहे जु लारे। सुरति शब्द गत दशमें द्वारे॥ ३॥
इडा पिंगला सुषुमन मेला। त्रिकुटी सन्त करे नित केला।
ररंकार ध्वनि शून्य समानी। पच तीन चत सत्त बखानी॥ ४॥
महमाया ज्योती प्रवृत्त। सुन आतम इच्छा परस्सत॥
भाव अभाव निकेवल हुआ। जोगी जन्म मरण से जूआ॥ ५॥
मिली बूंद सायर के माहीं। लौन पूतली गत मिल्ताहीं।
हद बेहद द्वै भेद न रहिया। बरण ताहि वर्ण किमि कहिया॥ ६॥

दोहा।

सद्गुरु अविरल वचन सुनि, उर धरि सो विधि कीन्ह।
घट बिच औघट प्रकट हुइ, त्व ततजि असि चीन्ह॥ ११॥

छन्द पद्धरी।

इक दिवस गुफा मध विराजमान। सुर पठइ अप्सरा छलन जान॥
तिन हाव भाव अति करे आय। नहिं दृष्टि खोल देखी जु ताय॥ १॥
फिर भैंट धरी बहु सिष्ट चीज। नहिं सन्त वस्तु उन हाथ लीज॥
इमि अडिग भक्ति देखे दयाल। करि नमस्कार चाली सकाल॥ २॥
जन भयो ज्ञान केवल प्रकास। पर आप ओर के जन्म तास॥
सूझत सब करकी रेख तेम। गुरु पास उचारे वचन एम॥ ३॥
वहँ वृथा पडी धुर आथ सोइ। यहँ सदावर्त्त करि सुफल होइ॥
श्रीस्वामी उचरे सुनो दास। तुम सूझत कैसे सो प्रकास॥ ४॥
श्रीराम भजन अरु कृपा आप। तो काहे कीजै दुख सन्ताप॥
जिन दियो जन्म सो करै सँभाल। कण कीडी कुंजर मणटि आल॥ ५॥
विश्वास नाहि तिन दुख अपार। सुनि वचन दास मन समझिधार॥
सो प्रसिद्ध भई केदिवस पाइ। गुनरधर पावन करी जाइ॥ ६॥

दोहा।

सम्वत् अठारहसे प्रसिध, वर्ष तैंयास्यो मान।
मिंगसर वदी त्रयोदशी, रामत करी निधान॥ १२॥

छन्द पद्धरी ।

पूरण सुत राखे राम धाम । तन व्याधि भई नहिं संग स्वाम ॥
गुरु सहर बड़ोदे पहुँच जाय । वहाँ द्विज पति पत्नी पद सुनाय ॥ १ ॥
सो रामकृष्ण के शब्द जानि । आगूं झड़ उचरे आप वानि ॥
इक दिवस शिष्य तन कष्ट जान । चिन्ता कर सुमरे परम प्रान ॥ २ ॥
जब दंडी दीन्हो दर्श आइ । क्यों सोचत हरिशंकर सुखाइ ॥
सुनि वचन भयो आनँद अपार । सब शिष्यांप्रति कहि दुख निवार ॥
तिहि दिवस प्रसिद्धी भई एह । सो हम वरणी जो सुनी तेह ॥
हम हैं अति बालक बुद्धिहीन । गुरु चरित अमित कुन लहहि चीन ॥

सोरठा ।

विराजे दीनदयाल, गुर्जरधर पावन करन ।
पाछी सुरति सँभाल, फागण शुदि पूनम सरस ॥ १ ॥

दोहा ।

जो अधिकी ओछी बनी, झड़ कहुँ अक्षर मात ।
अर्जुनदास गुलाम तव क्षमा करहु तुम तात ॥ १३ ॥

इति पूर्वजन्म ।

विरक्तशाखाप्रवर्तक–

श्रीपरसरामजीमहाराजका गुरुशिष्यसंवाद ।

साखी ।

नितप्रति गुरु वंदन करूं, पूरण ब्रह्म प्रणंत ।
परसराम कर वंदना, आदि अन्त मध संत ॥ १ ॥
परसराम शुध आतमा, प्रश्न करै गुरु पास ।
भवसागर क्योंकर तिरूं, किम छूटै जमत्रास ॥ १ ॥
जन्म मरण वेदन कटै, चौरासी मिटजाय ।
शिख पूछै सतगुरु प्रती, सो मम भेद बताय ॥ २ ॥
नर्क कुंड में ना पडूं, जीतूं मन जोधार ।
ऐसो मुझ उपदेश दो, सतगुरु कर उपकार ॥ ३ ॥
मुक्ति होय इन जीवकी, अवगुण मिटै अनंत ।
ऐसी युक्ति बताइये, सतगुरु संत महंत ॥ ४ ॥

श्रीगुरुवचन ।

परसराम सतगुरु कहै, सुन शिष ज्ञान विचार ।
कारज चाहै जीवको तो, कह्यू सो हिरदै धार ॥ ५ ॥
प्रथम शब्द सुन साधुका, वेद पुराण विचार ।
सतसगति नित कीजिये, कुलकी काण निवार ॥ ६ ॥
पूरा सतगुरु परखकर, ताकी शरण सभाय ।
राम नाम उर इष्ट धर, आनइष्ट छिट काय ॥ ७ ॥
रामराम मुख जापजप, करसे कर कछु धर्म ।
उत्तम करतब आदरो, छोडो नीचा कर्म ॥ ८ ॥
झूठ कपट निन्दा तजो, काम क्रोध अहंकार ।
दुरमति दुविधा परहरो, तृष्णा तामस टार ॥ ९ ॥
राग दोष तज मछरता, कलह कलपना त्याग ।
सकलप विकलप मेट कर, साचे मारग लाग ॥ १० ॥
मान बडाई इरषा, तजो दंभ पाषड ।
सुमरो सिरजन हारको, जारी माडी मड ॥ ११ ॥
दुनिया घडिया देवता, परहर ताकी पूज ।
अणघड देव अराधिये, मेटो मनकी दूज ॥ १२ ॥
प्रतिपालण पोषण भरण, सबमें करै प्रकास ।
निशिदिन ताको ध्याइये, ज्यों छूटै जम त्रास ॥ १३ ॥
राम नाम नौका करो, सतगुरु खेवण हार ।
विरदमाण कर भावको, यें भव जल हुय पार ॥ १४ ॥
राम राम अम्मर जडी, सतगुरु वेद्य सुजाण ।
जन्म मरण वेदन कटै, पावै पद निर्वाण ॥ १५ ॥
जगसे चित उलटाय कर, हरि चरणा लपटाय ।
लख चौरासी जोनिमें, जन्म न धारो जाय ॥ १६ ॥
मनसा वाचा कमना, रटो रैण दिन राम ।
नर्क कुडमें ना परो, पावो मुक्ति मुकाम ॥ १७ ॥
पाँचो इन्द्री पालकर, पच विषय रस मेट ।
या विधि मनकों जीतकर, पिय परमानद भेट ॥ १८ ॥

इति ।

अथ परमहंसावतंस श्रीसेवगरामजी महाराजका
झूलणा छंद ।

नर जाग जगावत सत्तगुरू, अब सोय रह्या कैसे सझिये रे, ।
शठ आग गृहै माहिं काहिं जरै, चल साधु संगत्ति में रजिये रे ॥
नित लागरह्यो निजनाम सेती, संग विपयनका तजिये रे ।
तेरा भाग वडा भगवंत भजो, कहै सेवगराम समझिये रे ॥ १ ॥
नर नाम निजकण छांड दिया, कण कूकस कूटयां न पायगा रे ।
फिर सांइकी सेव विसार धरी, सेवै संवल हाथ क्या आयगा रे ॥
मुख अमी अचम्मन नाहिं किया, नीर ओसहु नाहिं अघायगा रे ।
कहै सेवगराम समझ्झ विना, नर वार वीतां पछितायगा रे ॥ २ ॥
इन देखि दया मोहि आवतु है, नर मार मुगद्दर खायगा रे ।
यहां किये है कर्म न शंक मानी, वहां जाव कछू नहिं आयगा रे ॥
हक पुछै हिसाब हजूर माहीं, जब लेखा दिया नहिं जायगा रे ।
कहै सेवगराम साह चोरभया, नरजम्मके हाथ विकायगा रे ॥ ३ ॥
देखो देखो दुनियनकी दोस्ति रे, मोहि देख अचंभा हि आतहै रे ।
कछु सार असार विचार नहीं, शठ छांड अमी विप खातहै रे ॥
नित भोगत भोग अघाय नहीं, फिर वेहि दिना वेहि रातहै रे ।
सुन सेवगराम हैरान भया, कछु वात कही नहीं जातहै रे ॥ ४ ॥
धिक धिक्क जनों हंदा जीविया है, सोइ आतम राम विसार सोया ।
मन तन्न इन्द्री सुख चित्त दिया, दिन रैन विपय रस माहिं भोया ॥
शठ मोह माया माहिं राचि रह्या, देख नैन नारी हंदै रूप मोह्या ।
कहै सेवगराम समझ्झ विना, नरतन्न रतन्न अमोल खोया ॥ ५ ॥
कोऊ जात न पांति कुडुम्व तेरा, धर धाम धन्या रहि जायगा रे ।
अरु मात न तात न भ्रात संगी, सब सुत्त दारा न्यारा थायगा रे ॥
जब जम्म जोरावर आय घेरै, तब आडा कोऊ नहिं आयगा रे ।
कहै सेवगराम संभार सांई, पैतो जीव अकेलाहि जायगा रे ॥ ६ ॥
यहु रूप जोवन्न तो थिर नहीं, दिन चारकि वार वजायगा रे ।
इक रंग पतंग सुरंग वन्या सब, देखतही उड जायगा रे ॥
तृण ओसका नीर केतीक वेरां, उदे सूर हुवा शुप जायगा रे ।
कहै सेवगराम संभार साँई, एसे जिंद तेरी चल जायगा रे ॥ ७ ॥
नर करणा होय सो करलेवो, यहु मोसर जाण न दीजियै रे ।
तुम सांझ करत्त सवेर करौ, दिन माहिं करौ जाम कीजियै रे ॥
महुरत्त करत घटीजु करौ, पलछिन्न माहीं करलीजियै रे ।
कहै सेवग कीयां न ढील वनै, एतो सास उसासहि छीजियै रे ॥ ८ ॥

इति द्वितीय परिच्छेदः ।

अथ तृतीय परिच्छेद ।

रामरक्षा ।

ॐ अखंड मंडलाकारं व्याप्तं येन चराचरम् ।
तत्पदं दर्शितं येन तस्मै श्रीगुरवे नमः ॥ १ ॥

आत्मगुरुभ्यो नमः । परमात्मगुरुभ्यो नमः । आदि गुरुदेव अन्त गुरुदेव शरण गुरुदेव के चरणारविन्द पादुका नमोस्तु ते हरन्ते सर्व व्याधि सकल सन्ताप दुःख दारिद्र रोगपीड़ा कलह कल्पना सकल विघ्न खंड खंडा ।

ॐ तस्मै श्रीरामरक्षा ररकारवाणी । अनुभव तत्व निर्भय मुक्ति जाणी ॥ बाधिया मूल देखिया स्थूल गगन गर्जन्त धुनि ध्यान लागा । रहित तीनूं गुणा शील सन्तोषमें रामरक्षा हिये आकार जागा ॥ पंच तत्व पचीस प्रकृति पंच भूतात्मा पंचवाई । समदृष्टि साम घर आणि प्राण अपान उदान व्यान समान अनहद शब्द मिल खबर पाई ॥ उलटिया सूर ग्रह डंक छेदन किया पोखिया चन्द्र तहाँ कला सारी । अग्नि प्रगट भई जरा वेदन टरी डाकिनी शाकिनी घेर मारी ॥ धरणि अम्बर बिचै पंथ वहता रहैं प्रेत अरु भूत दानव सहारा । वज्रकी कोटडी वज्रका दड़ले वज्रका खड्गले काल मारा ॥ गरुड पक्षी उड्या नाग नागिनी डस्या विष की ल्हैर निद्रा न झाँपै । पिंड निर्मल भया पींजरै पढ़त सूवा रोग मथवाय पीडा न व्यापै ॥ रोम रोम ररकार उचरन्त वाणी श्रवण सुणत कर चित्त मेला । झिलमिलै ज्योति झण कार झणकत रहैं नाद विन्दे मिल्या रंग रेला ॥ शून्यके नेहरे शून्य सजता रहैं आपसे आप मिल आप लागा । शरीरसे शरीर मिल शरीर निरखत रहैं जीवसे शीव मिल ब्रह्म जागा ॥ नैनसे नैन मिल नैन निरखत रहैं मुखसे मुख मिल बोल बोला । श्रवणसे श्रवण मिल नाद सजता रहैं शब्दसे शब्द मिल शब्द खोला ॥ निरतसे निरत मिल निरत लागी रहे सुरतसे सुरत मिल सुरत आवै ॥ ध्यान से मिल दम सजतारहैं रंगसे रंग मिल रंग गावै । ज्ञानसे ज्ञान नसे ध्यान मिल जाप अजपा जपै सोऽहं दम जाय सो लाय । चित्तसे चित्त मिल चित्त चेतन भया उन्मनी दृष्टिमें भाव है ॥ द्वारसे द्वार मिल शीशसे शीश मिल देह विदेह मिल भेद

भेदा। तिहुँ लोकमें घोर अंधार सब मिट गया श्वेत ही स्फटिकमणि हीर वेधा॥ उघरे नैन उचरे बैन चन्द्र अरु सूर राखिया थीर थीरं। हनुमत हुँकार मचती रहै यों सोखिया पकड़ बावन वीरं॥ गंग उलटी चलै भानु पश्चिम मिलै निकसिया बिम्ब प्रकाश कीया। आत्म माहिं दीदार देखत रहै यों अजर अमर हुइ आप जीया॥ खुणखणी रुणझुणी नादरी नाद नादं सुषुम्ना का छकै स्वाद स्वादं। चाचरी भूचरी खेचरी अगोचरी उन्मनी पंच मुद्रा साधन्ते सिद्धा योगेन्द्रा डरे डूंगरे जले थले घाटे अवघटे तसै श्रीरामरक्षा करै बाघ बाघणीका क्रोध जाला। चौंसठ योगिनी का काटकुटका करों खेचरा भूचरा क्षेत्रपाला॥ नवग्रह दूत पाखंड टारों, दुहाई फिरती रहै अलख निरंजन निराकार की, चक्र फिरिवो करै वाटमें घाटमें पंथमे घोरमें शोरमे देश विदेशमें राज का तेजमें सांकड़े पैसतॉ तसै श्रीरामरक्षा करै। जागतां सोवतॉ खेलताँ मालताँ सन्तका शीश पर हस्त फिरिवो करै॥ चक्र लीयॉ रहै आप रक्षा करै गुप्तका जाप ले गुप्त सेवा। चन्द अरु सूर घर एक रहिवो करै जीतिया संग्राम देवाधि देवा॥ फेर सूधा किया उलट अमृत पिया विष का जहर सब दूर भागा। कमल दल कमल दल ज्योति ज्वाला जगै भँवर गुंजार आकाश लागा॥ रमत सार सोखन्त रुधिर विन्दु रोम नाड़ी गरजन्त गगन बाजन्त वेणु शंख शब्द ध्वनि त्रिकुटि दास रामानन्द ब्रह्म चीन्हन्ते ब्रह्मज्ञानी। रामरक्षा भणन्ते उद्धरे प्रानी॥ लागिया विचार पारंगता पन्थे घोरे राजद्वारे संग्रामे संकटे सन्ध्याकाले मध्याह्ने श्रीरामरक्षा उचरन्ते उद्धरे प्रानी पापे न लिपन्ते पुण्ये न हारन्ते जे जपन्ते जनार्दनं मोक्ष मुक्ति फल पावन्ते॥

रेखता।

नाम परतापते कालकंटक टलै नाम परतापते कर्म खोया।
नाम परताप डर डाकणी ना डसै नाम परताप मन मैल धोया॥
नाम परतापते ताप त्रिविधा गई नाम परताप ग्रह नाहिं ग्रासै।
नाम परताप भव भर्म भागा सबै नाम परताप दुख दूर नासै॥
नाम परताप जल जोगिनी चंडिका भैरवा भूत छल छिद्र नाहीं।
नाम परतापते विघ्न व्यापे नहीं नाम परताप तिहुँ लोक माहीं॥
नाम परताप की सन्त महिमा करै विष्णु शिव शेष ब्रह्मादि सारा।
दास हरिराम कहै नाम परतापते जगत जल माहिं जन होइ पारा॥ १॥
नाम निज औषधी भव व्यथा कर्मको शब्द का ध्यान इमान धारै।
साधु सधीर को विघ्न व्यापै नहीं प्रेमका पथ्य दे कुपथ्य गारै॥

वायु गभीर विष रोग हरजाहिंगे पित्त परिवार सब दूर पीरा।
कफ तनु काम अरु स्वास आधो फिरे उदरवा नहरवा ज्वर जाहिं तीरा॥
ताव तनु तप वेलाज एकान्तरो पद्म गड गूर गोहान फोडी।
दास हरिराम कहै वात ऐसी वणी तत्त के नाम वेदन तोडी॥ २॥

राम रिछक नवखण्ड सप्त द्वीपों डर नाहीं।
राम रिछक तिहुँलोक भवन चवदं सुरज थाहीं॥
राम रिछक तनुमाहि गेह क्या वनर्म धारे।
राम रिछक तिहुँलोक कहो कुण जन को मारे॥
राम रिछक छल छिद्र भूत डाकण डर नाहीं।
राम रिछक परताप तेजरो तनुते जाही॥
राम रिछक ते काल दूरि सेती कर जोडे।
राम रिछक तिहुँलोक वचन कुण पूठा मोडै॥
राम रिछक नवदेव साधुका रक्षक होइ।
राम रिछक तेतीस साधुको वन्दै सोई॥
राम रिछक ऋधि सिद्धि साधु के चरणों दासी।
राम रिछक परताप पडे नहि जम की पासी॥
राम रिछक गुरुदेव सन्त सो शीश निराजै।
राम रिछक परताप अगम जहँ बाजा बाजै॥
राम रिछक परतापसे सन्त सुमरि निभय भया।
रामदास रट राम को अगम देश आघा गया॥ १॥
राम रिछक परताप काल दूरे ही भागे।
राम रिछक परताप जम्मका दूत न लागे॥
राम रिछक परताप जक्ष जोगण डर नाहीं।
राम रिछक परताप सत निर्भय जग माहीं॥
राम रिछक परताप मूठ छल छिद्र न लागे।
राम रिछक परताप विघ्न दूरे ही भागे॥
राम रिछक परताप भैरवा भूत नसावै।
राम रिछक परताप वीर वेताल न आवै॥
राम रिछक परताप ताप तनु व्यापै नाहीं।
राम रिछक परताप रोग दुख दूर नसाहीं॥
राम रिछक परताप नवग्रह निकट न आवै।
राम रिछक परताप इन्द्र पूजा ले धावै॥

राम रिछक परताप चोकियाँ चारों जीता ।
राम रिछक परताप जगतमें भया वदीता ॥
राम रिछक परताप चढ्या गढ ऊपर जाई ।
राम रिछक परताप नोवताँ निर्भय वाई ॥
राम रिछक परतापतें सुन सागर में रमरया ।
रामा राम प्रतापतें काल विघ्न दूरे गया ॥ २ ॥

राम ररकार तें निजर लागे नहीं अघ मोचन करै अनँत केरा ।
राम ररकार तें ताप व्यापै नहीं जम्मका दूत तहाँ दे न घेरा ॥
राम ररकार तें अघ दूरां डरे राम ररकार तें काल थरके ।
राम ररकार तें डक डाकण डरे राम ररकार तें प्रेत सरके ॥
जंत्र अरु मंत्र लोह लाठ लागे नहीं राहु अरु केतु शनि रहत दूरा ।
डर डफर तंतार संचार व्यापे नहीं पनग नव नाथ कहै संत पूरा ॥
असुर सुर नमि चलै शेष धिन धिन कहै शंभु अरु विष्णु कहै सुजन मेरा ।
सप्त पाताल उच्छाह उच्छव करै नमो ररकार परताप तेरा ॥
भजन परताप भयं काल सवका सिट्या सुमर ररकारकी शरण आया ।
जन रामा किया आपसा सहजमें अहो अपार अपार गाया ॥ १ ॥
शरण गुरुदेव की राम रिच्छक सदा विघ्न भव काल जंजाल दूरा ।
स्वर्ग पाताल आकाश मृत्यु लोकमें सद्गुरु वाल निर्भयसनूरा ॥
देश परदेश घट घाट वट वाटमें रिछक रमतीत सवमें दयाला ।
भोर कहा संझ पुल मंझ आनंद कर हरण अनेक अघ मन्न माला ॥
असुर सुर पक्षि जलजीव चर अचर सव नवग्रह आदि सहायक सदाई ।
एक सँवला जहाँ अनत सँवला सदा अदा जम चोट विघ्न न कदाई ॥
चौदह लोक पर लोक निर्भय रमत राम रमतीत वल निर्भय सादू ।
जहाँ विचरत तहाँ मगन उद्योत अति रामजन अगम घर अगम तादू ॥
नाटकी चेटकी जंत्र मंत्रादि सव तंत्रको जोर कोउ नाहिं लागै ।
डाकीणी साकिणी प्रेत छल छिद्र अनँत राम परताप तें दूर भागै ॥
राम परताप वल राम सुख संपदा राम अखूट भंडार मेरे ।
राम आचार विचार किरिया सवै राम पुनि पाठ गरथाँन हेरे ॥
राम मुझ धणी समर्थ शरणा सवल तात अरु मात कुल वंश सारा ।
राम पोषण भरण राम प्रतिपाल नित सत्य ही शब्द मेरो आधारा ॥
राम संजीवनं प्राण जीवन सदा आस छिनवास रग रोम रिच्छा ।
दम ता कदम वल एक कारण करण आदिसे अंत लेवै परिच्छा ॥

एक रस एक प्रतिपाल समर्थ धणी धणी सस्तूति परणाम जाकू।
गर्भ सभाल कृपालु ऐसी करी काढ़ ततकाल धिन वदि ताकू ॥
जाठरा अग्निमे मग्न आनद करण हरण अनेक दुख बाप बाप।
छाजन भोजन अनंत सुख जिण दिया जीया ता शरण मुर मेट ताप ॥
नमस्ते नमस्ते अजय सुख रामजी जयति अनूप जन भूप देवा।
अगम गति अगम गति अगम आनद अति सत्यही शब्द नित करू सेवा ॥
जाण धिनराय कहा गाय मुख आपणे तरण महाराज तोहि लाज स्वामी।
परम परलोक अहिलोक जानत नहीं करण सहाय इण लोक नामी ॥
अपत कहा सिफ्त कहो कौन मुख उचरण शरण अनेक अनेक तेरे।
कोटि अनेक अनेक है वहु गुन्हा करण प्रति पाल माईत मेरे ॥
अधर धिन सधर मम तात पूरण ब्रह्म चार पद अर्थ सभाल देता।
भक्ति अरु मुक्ति वेकुठ रग रोम रम राम भन राम भज राम कहता ॥
राम महाराज की गोद चरणारविन्द तीन भय कालमें सत सारा।
जन रामा नमो शरण जाकी सदा राम रिच्छा सोइ विरद धारा ॥ २ ॥

रक्षाबत्तीसी।

दोहा।

राम इष्ट आधार बल, राम आस विश्वास।
राम भरोसे रम रह्या, निभय रामादास ॥ १ ॥
राम तेज नटपट्ट म, मुडे न हरिका दास।
चरण कमल छाडे नहीं, रहै सत्त गुरु पास ॥ २ ॥
कहा दोखी सोखी कहा, कहा देश परदेश।
रामदासके रामजी, रक्षक सदा हमेश ॥ ३ ॥
शस्त्र अस्त्र छल छिद्र जो, मूठ मत्र रिपु घात।
व्याल सिंह दामनिदमक, रक्षा राम सु नाथ ॥ ४ ॥
भवन गवन परवत वनी, अवघट घाट अनेक।
रामदासके रामजी, आस पास बल एक ॥ ५ ॥
कूप खाड ज्वाला अग्नि, निशा चोर भय धाड।
रामदासके रामजी, अध धुध मंदवाड ॥ ६ ॥
राभय काल पावक प्रलय, शीत उष्ण मुर ताप।
राम दासके रामजी, रक्षक आपो आप ॥ ७ ॥

राहु केतु सूरजसुतन, अवनिपुत्र ग्रह घात।
विगरी में सखरी करण, तिघरी मेटण तात ॥ ८ ॥
तात मात हित प्रसनता, रामदासके राम।
समर्थ प्रतिपालक सदा, खान पान आराम ॥ ९ ॥
चिंता दीन दयालुको, मो मन सदा आनंद।
जायो सो प्रति पालसी, रामदास गोविंद ॥ १० ॥
विघ्न विदारण रामजी, आनंद करण अनेक।
रामदास मन वच करम, तारण कारण एक ॥ ११ ॥
दिवस मास जोगिनि दशा, गज अंतर कृत सोहि।
नखत जोग वाहण असम, राम इच्छा सुख मोहि ॥ १२ ॥
लगन दुघड़ियो शुभ अशुभ, राम वार व्रतमान।
दिशाशूल सन्मुख चन्द्र, कहा सॉवण पर ज्ञान ॥ १३ ॥
ऊठत वैठत जागताँ, सोवत स्वप्ने माहिं।
राम धणी प्रेरक सदा, रामदास डर नाहिं ॥ १४ ॥
मंडप मंड अधार इक, घट विच आतम राम।
प्रगट पिंड रक्षा करण, रामदास विश्राम ॥ १५ ॥
सब व्यापक पूरण कला, नमस्कार भगवंत।
राम इच्छा विचरत जहाँ, रामरायके संत ॥ १६ ॥
दशौंदिशा आनंद अगम, चिदानंद भगवान।
रामदासके रामजी, चिंतवन जीवन प्रान ॥ १७ ॥
स्वर्ग मृत्यु पाताल जो, वा सुर नर अरु नाग।
राम रक्षा सर्वज्ञ सुदृढ, रामदास वडभाग ॥ १८ ॥
आधि व्याधि मेटण सकल, अकल अखंडी देव।
रामदास ता आसरे, सुर विरंचि कर सेव ॥ १९ ॥
सेव देव मूरति धणी, हरि आचार विचार।
मंत्र जाप पूजा परम, नित्यनियम गुण सार ॥ २० ॥
तीरथ व्रत एकादशी, रामदासके राम।
राम पंथ संस्थान निज, क्षेत्र धाम परणाम ॥ २१ ॥
राम धारणा राम मुख, राम हमारे ध्यान।
राम संप्रदा वैष्णव, पूरण ब्रह्म ज्ञान ॥ २२ ॥
तिलक छाप माला मंत्र, नर नारायण भेप।
मंदिर शालग्राम यह, पूजा परम विशेप ॥ २३ ॥
राम वोलाऊ साथ मम, सदा संगि सुखरास।
सजन वंधु वेली कुटुंव, राम रत्न धन पास ॥ २४ ॥

राम आसरो राम पख, दूजा पख नहिं कोइ।
पावन पतित दयालुजी, ता शरणै सुख होइ ॥ २५ ॥
शरणागत प्रतिपालना, पावन पतित किवान।
रामदास विश्वास यह, करणी दिश हैरान ॥ २६ ॥
आधी पोथी रामजी, उद्यम राम रमाय।
राम दिशावर देश मम, रामाज्ञा सो पाय ॥ २७ ॥
रामाज्ञा आवत सोई, रामाज्ञा सो दास।
राम भावना प्रसिद्धता, भवेत रामाद्दास ॥ २८ ॥
ज्ञान भक्ति वैराग्य सिधि, क्रिया जोग गुण आद।
राम सता आसक्तिता, वाणी निमल अगाद ॥ २९ ॥
मस्तक पर गुरु देवजी, हृदै विराजे राम।
रामदास दोनू पखा, सबनिधि पूरण काम ॥ ३० ॥
श्वास श्वास दम दम बिचै, रक्षक राम दयाल।
रामा राम उचारतां, कदे न व्यापै काल ॥ ३१ ॥
रक्षा नवीसी रामकी, जानत हरि गुरु दास।
रामस्नेही रामदास, आनद अगम विलास ॥ ३२ ॥

अथ आरती।

१

ऐसी आरती घट हीं म कीजै, राम रसायन निशिदिन पीजै। टेर।
घट ही में देवल घट ही म देवा। घट ही में सहज करै मन सेवा ॥ १ ॥
घट ही में पाच पचीसों पडा। घट ही में जागै जोति अखडा ॥ २ ॥
घट ही मे पाती फूल चढावै। घट ही मे आतम देव मनावै ॥ ३ ॥
घट ही में शख शब्द घन तूरा। घट ही म प्रेम परस निज नूरा ॥ ४ ॥
घट ही में गावै हरिका दासा। घट ही में पावै पद परकासा ॥ ५ ॥
जन हरिराम राम घट माहीं। विन खोज्या कोइ पावै नाहीं ॥ ६ ॥

२

आरती करों गुरु हरिराम देवा। ब्रह्म विलास अगम घर भेवा। टेर।
आप सत ब्रह्म व्यापारी। राम नाम विणजै बहु भारी ॥ १ ॥
ज्ञान ध्यान अनुभव अनुरागी। रोम रोम में झालर वागी ॥ २ ॥
इड़ा पिंगला सुषमण भोगी। अटल अमर अनुभव पद जागी ॥ ३ ॥
शील सतोष साच मत धारी। सदा समाधि शून्य से यारी ॥ ४ ॥
आय रामिया शरण तुम्हारी। पल पल ऊपर प्राण अँवारी ॥ ५ ॥

३

ऐसी आरती करूं गुरु देवा । तन मन वचन सहज करि सेवा । टेर ।
प्रगटे इसा परम गुरु स्वामी । आदि अंत होते निज नामी ॥ १ ॥
ज्ञान ध्यान ऐसे गुणधीरा । सहज समाधि सदा सुप सीरा ॥ २ ॥
सेवग संत शरण जो आवै । ज्यूं मलियागर भुवंग मिलावै ॥ ३ ॥
सतगुरु करम काटि निरवाला । मलियागर मेटै पँग ज्वाला ॥ ४ ॥
वंदन करै हरिदेव सदाई । सतगुरु चरनकमल चितलाई ॥ ५ ॥

४

निज मनभाव आरती सारी । श्रीगुरुरामदास वलिहारी । टेर ।
सतगुरु ज्ञान ध्यान की मूरति । सतगुरु समी और नहिं सूरति ॥ १ ॥
ब्रह्मा विष्णु शिव सतगुरु मॉई । अनंत कोटि जन परचे सॉई ॥ २ ॥
दीनदयालु जीवां के तारग । सतगुरु मोक्ष मुक्ति के मारग ॥ ३ ॥
वारंवार करौं परणामा । परम धाम आनंद विश्रामा ॥ ४ ॥
अष्ट विधान आरती षोड्स । वालवालके मस्तक मोड्स ॥ ५ ॥

५

आरती करूं गुरुदेव निरंजन । सगुण रूप धरे जिन अंजन । टेर ।
धर अवतार केता जिव तारे । आयां शरण सबै अघ जारे ॥ १ ॥
काल जंजाल जरा डर नाहीं । निरमै निजानंदपद माहीं ॥ २ ॥
जय जय जय जैमलके नंदन । हरिरामा रामा धिन वंदन ॥ ३ ॥
वालवाल सतगुरु परणामा । पूरणदास लिया विसरामा ॥ ४ ॥

६

ऐसी आरती करो मन ज्ञानी । पलक न विसरो सारंगपानी । टेर ।
पांच पचीस का करो विचारा । तामें आतम राम पियारा ॥ १ ॥
प्रेम को तेल सुरत की वाती । ब्रह्म की जोत जगै दिनराती ॥ २ ॥
आरती गुरु गोविंदजू की करिये । कहै कवीर भव सागर तिरिये ॥ ३ ॥

७

आरती करौं पति देव मुरारी । चंवर दुरै वलिजाउं तुम्हारी । टेक ।
चहुं दिश आरती चहुं दिश पूजा । चहुं दिश राम मेरे और न दूजा ॥ १ ॥
आरती कीजै प्रीति लगाई । जन्म जन्म के पातक जाई ॥ २ ॥
आरती कीजै ऐसैहि तैसे । ध्रुव प्रल्हाद करी शुक जैसे ॥ ३ ॥
आनंद आरती आतम पूजा । नामदेव भणै मेरे देव न दूजा ॥ ४ ॥

इति आरती ।

ॐनमः श्रीमद्दरियानदेव्य ।

पूज्यपादाचार्य श्री १०८ श्री हरिरामदासजी महाराज की परची प्रारभः।

दोहा ।

वन्दि राम गुरुदेव को, परम मेव दरसाय।
धार्यो वपु निज जगत हित, सो मम सदा सहाय ॥ १ ॥

चौपाई ।

वन्दौं आदि पुरुष परमेस । कियो ताहि नरतनु वकसीस ॥
वन्दौं पर्म धर्म गुरुदेव । जिन दीन्हो निज भक्ति सुमेव ॥ १ ॥
अनँत कोटि वन्दौं हरिजनको । ताते करो शुद्ध मनतनको ॥
श्रीसुख भगवत कहत अनूप । हरिगुरु सन्त एक ही रूप ॥ २ ॥

दोहा ।

मति उपजावन परम गुरु, उर प्रेरक निज सार।
नाम सहित परनालिका, वरणौं करि निरधार ॥ १ ॥

छन्द मनहर ।

रामानन्द वन्दि दास वन्दन अनन्तानन्द
वन्दौं कमचन्द दवाकर सुखकन्दकों ।
पूरण ही माल्वी जू दामोदरदास वन्दौं
नारायण रु मोहन वन्दौं तजि द्वन्द्वनें ॥
वन्दौं जन माधौदास सुन्दर चरणदास
जैमल हरिराम वन्दि वन्दौं ता नन्दकौं ।
वन्दौं हरिदेव मोताराम रघुनाथ वन्दि
वन्दौं गुरुदेव गग वारू मम जिन्दकौं ॥ १ ॥

छन्दइन्दव ।

जैमलदास नमो जगतारण, दास नमो हरिराम दयाल।
जासु के शिष्य नरायणदासहि, पूज्य विहारिय प्रगट बाल ॥
ज्ञान प्रकाश उजास भयो उर, वुद्धि लही हरिदेव विशाल।
तासुके मौतियराम भए जन, ताहि कृपा रघुनाथ कृपाल ॥१॥

छन्द भुजगी ।

अहं बोध हीन प्रज्ञा हीन प्रानी । कृपा है सुनाथ दयाल बखानी ॥
कृपा है नरान सुदास सुमेव । सरै काज सिद्ध करू सन्त सेव ॥ १ ॥

कृपा है जनं रामदासं विहारी। मनू होय आनन्द सन्तं तिहारी।
कृपा है हरीदेव देवं तुम्हारी। महा धी प्रकाशं करीजै हमारी॥ २॥
कृपा है सु मोती जु रामं कृपालं। समर्पो जिको भेद रीझै दयालं॥
कृपा है रघूनाथ कीजै निहालं। जनू देव दीजै सुवाणी विशालं॥ ३॥
कृपा है सु धू प्रह्लादं कवीरं। विराजो हृदै कोटि नन्तं सवीरं॥
कहौं ग्रन्थ स्वामी कृपादृष्टि कीजै। गुरू रामगंगा इसो भेव दीजै॥ ४॥

सोरठा।

लिखी पत्रिका दोइ, धरी जु आगे पाटके।
जो तुम आयसु होइ, तो गुण गाऊं रावरो॥ १॥
जव करि कृपा दयालु, पत्री मनवांछित दई।
जानि आपनो वाल, आज्ञा कीन्ही मोहिकों॥ २॥

दोहा।

शुध ह्वै अन्तःकरण जू, मन वुधि चित अहँकार।
वरणों सुयश दयालुको, उपजै हर्ष अपार॥ १॥
वरण न जानत मूढ़ अति, मति जैराम मलीन।
उर प्रेरक हुइ कहत है, सतगुरु गंग प्रवीन॥ २॥

चौपाई।

श्रीहरिराम निरंजन श्यामं। प्रगटे आइ सिंहस्थल ग्रामं॥
निर्गुण निजानन्द निरकारं। पूरण ब्रह्म सन्त अवतारं॥ १॥
हरि अवतार चार परकारं। जानत वेद सन्त संसारं॥
जिमि वपु धर्यो कृष्ण रघुनाथं। सुर नर सवजन करण सनाथं॥ २॥
अज विनती इल भार उतारण। मेटण अधरम असुर सँहारण॥
इसि अज्ञान हरण अंधारं। प्रगट भए गुरुद्याल मुरारं॥ ३॥
अनुभव कला आदि अवतारं। जा प्रताप वरणूं विस्तारं॥
परची सहित कथा करि प्रीतें। प्रापत ज्ञान विज्ञान अद्वैतें॥ ४॥
प्रथम भक्ति ऐसी जन धारी। नाम महातम ग्रन्थ विचारी॥
सुमरण कीन्हो श्वास उश्वासं। जव उर माहीं लह्यो प्रकासं॥ ५॥
तव सवही तें भए उदासी। जानी जगज्जाल जम पासी॥
यह निश्चय मनमाहिं विचारा। गुरु विन होइ न भव तें पारा॥ ६॥

दोहा।

पूछत फिरत सु जननते, ब्रह्मज्ञान कहु भाप।
महापुरुप जन मिलनकी, अति

छन्द मनहर।

एकसमें गाम रामसर पधारत भए
जहाँ मिले हरिके सनेही पद गाए हैं।
सुनिके शब्द आप कह्यो वे पुरुष कहाँ
जब वह जन स्वामी जैमल बताए हैं॥
सो तो विराजमान दुलचासर गाम माहिं
महिमा की बेर बेर बहुत सराए हैं।
आरत तें तबै संग ह्वैके उदराम ही के,
ऐसे ही सुनत धाए जेज न लगाए हैं॥ १॥

कुंडलिया।

स्वामी जैमल धिन सदन जहाँ पहूते जाइ।
पुर दुलचासर भूमिका सप्तपुरी सम ताइ॥
सप्त पुरी सम ताइ पुरी परसत फल एका।
हरि गुरु सन्त मिलत होहिं जिग पँड अनेका॥
श्रीमुखसे भगवत माहात्म्य कह्यो भागवत गाइ।
स्वामी जैमल धिन सदन जहाँ पहूते जाइ॥ १॥

दोहा।

दे पुनि पंच प्रदक्षिणा, अष्ट अंग परणाम।
स्वामी जैमलदासके परसे पद हरिराम॥ १॥

कुंडलिया।

गोरख के पद भरथरि पारस के पद नेम।
परसे जैमलदास पद शिष हरिराम सु एम॥
शिष हरिराम सु एम प्रेम अरु नेम प्रकाशय।
ज्ञान ध्यान वैराग्य आइ मिलिए सब आशय॥
भक्ति मुक्ति तत भावना जोग जुक्ति उन जेम।
गोरखके पद भरथरि पारस के पद नेम॥ १॥

दोहा।

यों पदपंकज परस करि, हस्त जोर करि जास।
मन तन की सब वारता, प्रश्न करी गुरु पास॥ १॥

छप्पय।

धन्य धन्य मम भाग आज अनुराग दरस्स।
धन्य धन्य मम भाग मिले वैराग्य पुरस्स॥

धन्य धन्य मम भाग प्रेम अरु क्षेम प्रकासं ।
धन्य धन्य मम भाग जाग भय भर्म विनासं ॥
धन्य आज मम जन्म धिन तातें तुम दर्शन भयो ।
जा काज सकल पूछत फिरत सो मनवांछित फल लयो ॥ १ ॥

छन्द नाराच ।

करे अभ्यास श्वास मूँदि जोग जासु धारणा ।
धरे उपास वहुत ही विलास ब्रह्म कारणा ॥
निजं निवास ना लह्यो कृपा सु अब्ब कीजिये ।
गुरू अगाध ज्ञान ध्यान भक्तिज्ञान दीजिये ॥ जिय भक्ति० ॥ १ ॥
फिरे सु तीर्थ कर्त काज देश देश मज्झिये ।
सुधाम ठाम ठाम के सनान व्रत्त सज्झिये ॥
सही स भेद पें विना नही स राम रीझिये ।
गुरू अगाध० ॥ २ ॥
करी जु सेव पूज देवकी जु सो अराधना ।
कछू जपेव नाम तेव भेव भिन्न साधना ॥
अबे तुह्मार संग भो विचारि विर्द लीजिये ।
गुरू अगाध० ॥ ३ ॥
जॅगम्म शेख सेवरे न भेवरे सु नाम के ।
रॅगे वरे रजोग के सॅगे वरे न श्याम के ॥
असार जान पैं तजे न कोइ काज सीजिये ।
गुरू अगाध० ॥ ४ ॥
लगाय छार वप्पुके वधाय भार जट्टिये ।
अपार संग देखिये विकार कान फट्टिये ॥
निराजुकार नाम के आकार में अलूझिये ।
गुरू अगाध० ॥ ५ ॥
जती जु जैन व्यास फेर हेर सव्व ही लहे ।
भए उदास पेखिके परं प्रकाश ना कहे ॥
सन्यास कान फूँक पें कहूं न मन्न धीजिये ।
गुरू अगाध० ॥ ६ ॥
पढ़े कुरान काजियं भुलान भर्म होइये ।
मुलॉ मसीत मान [illegible] इये ॥
नकल्ल [illegible]
गुरू [illegible]

यदन्ति पाठ बोधका सु सो अक्षा सिधान्तकूं ।
लियो निहारि के सबे भगत्त भेस पन्थकूं ॥
मिले अलेख मित मोहि आज प्रेम भीजिये ।
गुरू अगाध० ॥ ८ ॥

दोहा ।

जोगी षटदरशण सुमग, लिए निगम वच सोध ।
अहो देव स्वामी अगम, कहो सुगम निज बोध ॥ १ ॥

छन्द भुजगी ।

अहो देव स्वामी कहो बोध आदू । मिले कोटि अनेक जे धाम साधू ॥
अहो देव स्वामी चिदानन्द रूप । चहूँ वेद को सार भाखो अनूप ॥१॥
अहो देव स्वामी तुम्ह भेद सारो । बतावो अबे ब्रह्म मोकों उधारो ॥
अहो देव स्वामी मिलावो सु सॉइ । दुहो जातहू म भव सिन्धु मॉई ॥२॥
अहो देव स्वामी पर ज्योति भास । दहो दूरि दोष लहो सग दास ॥
अहो देव स्वामी अभैदान आपो । दशा दोष पाप तिहूताप कापो ॥३॥
अहो देव स्वामी निराकार नाथ । अमात अतात अभ्रात अजात ॥
अहो देव स्वामी अरात अप्रात । अनाथ सनाथ सदात अपात ॥ ४ ॥
अहो देव स्वामी अजोनी अमोनी । नमोनी तमोनी रजोनी सतोनी ॥
अहो देव स्वामी नही आर पारे । सघन्न रहे पूर व्याप्यैक सारे ॥ ५ ॥
अहो देव स्वामी त्वमेव अरूप । जन हेत धार्यो तत्व पच स्वरूप ॥
अहो देव स्वामी सदा वीतराग । गिन्यो तीन लोक सुख विष्ट काग ॥६॥
अहो देव स्वामी न ब्रह्मादि भेव । अहो देव स्वामी सु देवाधिदेव ॥
अहो देव स्वामी दयाके सु कन्द । मया सोइ कीजे हरो मोह फन्द ॥७॥
अहो देव स्वामी गहो हाथ नाथ । परा भेद दीजे सु कीजे सनाथ ॥
अहो देव स्वामी कृपाभौन दीप । प्रकाशो हृदै सोइ मेरे समीप ॥८॥
अहो देव स्वामी भव भीति टारो । अहो देव स्वामी पर प्रीति पारो ॥
अहो देव स्वामी महा मोक्ष रासी । अहो देव स्वामी परेश प्रकासी ॥९॥
अहो देव स्वामी परानन्द इश । करो सोइ साचो सु शब्द वरीश ॥
अहो देव स्वामी शरण्य रखावो । परा प्रेम भक्ती सु नेम वधावो ॥१०॥
अहो देव स्वामी कहो रीति ऐसी । कही जो अनन्त सु सन्त हि तैसी ॥
अहो देव स्वामी अपो आदि सेवा । जिके सेव मोकों मिले ब्रह्म देवा ॥११

दोहा ।

अहो देव अस्तुति अगम, हम कछु भेव न जान ।
गावत तव यश वेद सब, तिन सुग श्रीभगवान ॥ १ ॥

योग युक्ति तत ब्रुवनि को, अवनि सन्त धरि छाप।
त्रिभुवनपति तव कारणे, भवन पधारे आप ॥ २ ॥

सोरठा।

यह तन मन अरदास, सतगुरु श्रवणाँ सँभलियै।
करो ज्ञान परकास, ध्यान धारणा सब कहो ॥ १ ॥

दोहा।

यह अस्तुति सुनि सिखन की, भए सु गुरु मस्ताक।
उदित करण ततज्ञान उर, वदत भए पुनि वाक ॥ १ ॥
यही महातम जानियो, धन्य धन्य हरिदास।
तुमरो भाव सु देखकरि, उपज्यो बहुत हुलास ॥ २ ॥

छन्द पद्धरी।

आए सु वस्तु गाहक आज। सब ज्ञान ध्यान लायक समाज ॥
धन धन्य शिष्य सुरता प्रवीन। करि भिन्न भिन्न यह प्रश्न कीन ॥ १ ॥
अब कहौं सकल मैं ज्ञान अंग। जो परापरी भाख्यो प्रसंग ॥
तुम पूछ्यो आदि सु पन्थ मोहि। है आदि पन्थ हरिनाम सोहि ॥ २ ॥
गह रामनाम की परम ओट। जिहि पन्थ मिले जन अनँत कोट ॥
तुम प्रश्न करी शिष कहौं तोय। है सार वेदको ब्रह्म सोय ॥ ३ ॥
दश चार भवन व्यापक नूर। आतमा सु एक उद्धार मूर ॥
गुरुधर्म मिलै भगवान आप। भगजाय भर्म भय दोष ताप ॥ ४ ॥
तुम अभयदान माँग्यो सु दास। सो अभयदान शिवमंत्र जास ॥
तुम मोह मिटण पूछ्यो विधान। मिटि है स मोह अद्वैतज्ञान ॥ ५ ॥
जाच्यो सु शिष्य तुम परा ज्ञान। वह पराज्ञान विज्ञान जान ॥
गुण तीन प्रकृति पाँचों पचीस। मिल एक सदन परब्रह्म ईस ॥ ६ ॥
परकाश ज्योति जहँ तेजपुंज। मिल जीव शीव दलसहस कंज ॥
वो भवन मिल्याँ भव भीति नाहिं। रह सदा एकरस ब्रह्म माहिं ॥ ७ ॥
तैं सत्यशब्द पूछ्यो सु ईस। मैं कहौं मान सत सत सहीस ॥
रघुनाथ सेतु बाँधत सुवार। सो सत्यशब्द तिरिगे पहार ॥ ८ ॥

दोहा।

नाम महात्स्य जु मैं कह्यो, परचा सहित प्रकास।
प्रेमा परा सु भक्ति के, अब लक्षण सुनु दास ॥ १ ॥
परा सु प्रेमा भक्ति पुनि, तुम माँगी शिष सोइ।
है आनन्दहि करण ए, कहौं सँभल मैं तोइ ॥ २ ॥

प्रेमाभक्ति विधान ।

राम प्रथम सरसत रसन, दरसत चिन्ह सु पेन ।
तरसत हरिके मिलन को, जल बरसत नित नैन ॥ ३ ॥

छन्द त्रिभंगी ।

जल बरषे नैना अटपट वैना गदगद शब्द होत जही ।
नहिं नींद सु रैना भूख लगैना ह्वै ल्वलीना राम मही ॥
कबहू वक्त कबहू छक चित्त द्रवत प्रेम सदा ।
ऐसे उन्मत्त कहै स जक्त शक जनत नाहिं कदा ॥

कुंडलिया ।

प्रेमा भक्ती मं कही शिष्य यही समझाय ।
जा उर धारन करतही कर्म सबै कटि जाय ॥
कर्म सबै कटि जाय भर्म भय भूत विलावै ।
जन्म मरण तजि जीव पीव पद ब्रह्म समावै ॥
यही चिन्ह दरशाय सही जन जीवन्मुक्ती ।
शिष्य तोहि समझाय कही म प्रेमा भक्ती ॥ १ ॥

पराभक्ति विधान ।

दोहा ।

पराभक्ति अब फिर कहौं, सुनिये चित्त लगाइ ।
स्वामी सेवक एक हुइ, रहै भिन्न दरशाइ ॥ १ ॥

छन्द त्रिभंगी ।

यह परा जु भक्ती धम सु रक्ती कहा सु उक्ती सजुक्ती ।
अति आतम जुक्ती पति अनुरक्ती निकट निरक्ती यों मुक्ती ॥
मिल एकमेक स्वामि विसेक सेवग टेक सुक्ख लहै ।
पय ज्यौं हवि मेक सो दरसेक रस पीवेक भिन्न रहै ॥ १ ॥

दोहा ।

परा सु प्रेमा भक्ति की, कही सु मैं तुम प्रीति ।
सो प्राप्ती अब होनकी, बहुरि कहौं सब रीति ॥ १ ॥

छन्द पद्धरी ।

लै प्रथम सोधि गुरु उतम जास । शब्दादि ब्रह्म ब्रह्महि प्रकास ॥
[illegible] जु गुरु ते लहत ज्ञान । सर्वै [illegible] ताहि परब्रह्म जान ॥ १ ॥
आरति करुणा चरण [illegible] कपट होइ तन मन अधीन ॥
सहित कर उभय [illegible] आसीन और ॥ २ ॥

जा विद्ध कहै गुरु जुक्ति जोग। ता विद्ध करै हरि हित सँयोग ॥
सम आसण वैठै सहज मारि। वांवेपर द्वै क्षण हस्त धारि ॥ ३ ॥
गुरु मंत्र जबे दे तत्वसार। धारै शिष निश्चय सार धार ॥
तव रटै श्वास उच्छ्वासराम। रट मिलै परमपद ब्रह्म धाम ॥ ४ ॥

दोहा।

कऱ्यो प्रश्न अस्तूति करि, जो जो तुम जिज्ञासु।
मैं वात सु हरि मिलन की, सो सो कही जु तासु ॥ १ ॥
ऐसे गुरु के वचन सुनि, उरके खुले कपाट।
ज्यों दिनकर के तेजतें, गयो तिमिर सव फाट ॥ २ ॥

शिष्य वचन।

चौपाई।

दया करो गुरुदेव दयालं। मोकों करो तुम्हारो वालं ॥
दीजै परम प्रसादी देवं। तन मन करूं तुम्हारी सेवं ॥ १ ॥

छन्द त्रिभंगी।

शिवमंत्र सु मेवं परं परेवं दीजै एवं परसादं।
तुम कह्यो जनेवं वहुत तरेवं यही सिरेवं है आदं ॥
लो विरद सु भेवं शरण तमेवं शिष्य करेवं गुरुदेवं।
जव राम रमेवं अन्तर मेवं अमर अभेवं उरदेवं ॥ १ ॥

दोहा।

गुरुके गुण उत्तम कहे, सो गुरु मिले जु आप।
जुक्ति सहित अव दीजिये, रामनाम को जाप ॥ १ ॥

छन्द त्रिभंगी।

दीजै अव जापं मेटि सँतापं राम अमापं उर प्रगटे।
सद्गुरु परतापं सत्य सु थापं आपं छापं पाप हटे ॥
राखो निज नेराचरणा केरा जग उरझेरा•हरलीजै।
मेरी यह टेरा वेरंवेरा चेरा तेरा करलीजै ॥ १ ॥

दोहा।

देत भए निज दासकों, दीक्षा जैमलदास।
परिक्षित जैसी शुक परम, ऐसी सुनि अरदास ॥ १ ॥

छन्द त्रिभंगी।

ऐसी अरदासा सुनी जु दासा आन उपासा हरत भए।
अत्यानँद रासा परम उजासा राम प्रकासा करत भए ॥

दे निरभै वासा ब्रह्म विलासा आसा पासा दूरि किए।
उर तिमर जु नासा तेज सु भासा सहस्र प्रभासा सूर किए॥१॥

सोरठा।

नव पट चार सुतन्त्र, सुमिरत शेष महेशसो।
रामनाम निज मन्त्र, यह गुरु कह्यो जु शिषन पें॥१॥

छप्पय।

परंपरा को धर्म गुरू उर परम सुनायो।
दे करसे परसाद राम निज मंत्र सुनायो॥
नासा निरंतर रु सुरति आन घर धरु हुयाते।
जोग जुक्ति की वात कही सब परम कृपाते॥
उर भयो अवहि मंगल परम कर्म धर्म सब कप्पिया।
हरिरामदास को परमगुरु यह उपदेश जु अप्पिया॥१॥

दोहा।

जो गिरिजा प्रति शिव कह्यो, मंत्र सजीवन जास।
वह उपदेश जु अप्पियो, श्रीगुरु जैमलदास॥१॥

छन्द त्रिभंगी।

आपे उपदेस चित्त गहेस तन मन पेस करताम।
सब मेटि अँदेस काम कलेस राम रटेस हरिराम॥
गुरु युक्ति कहेस वा विधि लेस परम परेस प्रेम पिय।
रसना सुमरेस पीयूपेस कंठ प्रवेस शब्द किय॥१॥

दोहा।

कंठ निवासहि करत जू, परम प्रकाशय प्रेम।
जब दयालु उर जानियो, यह जग स्वप्ने जेम॥१॥

छन्द त्रिभंगी।

जग स्वप्नो जान्यो सुमिरन ठान्यो हिरदे आन्यो अति हेत।
गुरु वच सँत मान्यो मन परचान्यो पीव पिछान्यो निज नेत॥
उपज्यो वेराग स्वासि सुवाग अन्तर भाग लिव लाग।
स्नेह परजाग जग अनुराग भूषण नाग सम त्याग॥१॥

दोहा।

अवर गिनै सु अग्नि सम भवन भाल सम त्याग।
यह वैराग्य सु उरन मध प्रगटै पूरन भाग॥१॥
कमज्या पूरब जन्मकी, निश्चय परम निधान।
सहय जैमल महरते, प्रापति भई सु आन॥२॥

प्रापत भए सु परम पुनि, सबविधि ज्ञान विज्ञान।
राम रूप हरिराम को, सद्गुरु मिले सुजान ॥ ३ ॥
सद्गुरु निरख सु हरप करि, परख धर्म प्रस्तूति।
आप कृतारथ जानि शिप, करत भए अस्तूति ॥ ४ ॥
नमो नमस्ते सत्तगुरु, आतम करण उधार।
यहँ परमारथ काज पर, अवनि धरे अवतार ॥ ५ ॥

छन्द त्रिभंगी।

तो आए तनु धरिके जीव उधरिके तुम ईश्वरके अवतारं।
निश्चय मैं परिके गुन उर धरिके हाथ पकरिके भवतारं ॥
सोइ सुमरिके पार उतरिके द्वै अक्षरके वरदेवं।
दीन्हे शिर हस्तं जय जय जस्तं नमो नमस्तं गुरुदेवं जी० ॥ १ ॥

दोहा।

नमो नमस्ते सत्तगुरु, वारंवार प्रणाम।
शम दम साधन गम सहित, मम सुमराए नाम ॥ १ ॥

छन्द त्रिभंगी।

तो रामं सुमराए भर्म गमाए जुक्ति बताए ततजोगं।
प्रियतम परसाए सुख सरसाए सर्व नसाए दुखसोगं ॥
मैं चित में चाए जैसे पाए निज दरसाए पुरदेवं।
दीन्हे शिर हस्तं० ॥ २ ॥

दोहा।

नमो नमस्ते सत्तगुरु, निजानन्द निरकार।
नृगुण रखाए नाम निज, तृगुण नखाए भार ॥ २ ॥

छन्द त्रिभंगी।

तो तृगुण नखाए कर्म हकाए एक लखाए अंत्रसई।
निजनाम सिखाए राम पकाए अछक छकाए प्रेममई ॥
परब्रह्म दरसाए परंपराए परे बताए सुर देवं।
दीन्हे शिर हस्तं० ॥ ३ ॥

दोहा।

नमो नमस्ते सत्तगुरु, करण सकल सिध काज।
स्वामी जैमलदासजी, जीवां तिरण जहाज ॥ ३ ॥

छन्द त्रिभंगी।

तो जीव जहाजं दीन निवाजं राम सदाजं थिरराजं।
शोभा शिर ताजं परम पराजं ज्ञान समाजं महाराजं ॥

कर जोर सदाए शीश नमाए लागूँ पाए नरदेवं।
दीन्हे शिर हस्तं० ॥ ८ ॥

दोहा।

नमो नमस्ते सत्तगुरु, महिमा लहौं न पार।
त्रिभुवन सुख मैं नॉ चहौं, रहौं चरन चित धार ॥ ८ ॥

सोरठा।

आदि मध्य अवसान, हुइ प्रसन्न गुरु दीजिये।
यह मॉगूँ वरदान, सेव निरन्तर रावरी ॥ १ ॥
वहुत किए उपकार, तार लिए भव सिन्धुते।
रामनाम ततसार, वोहित सम मम वगसियो ॥ २ ॥

दोहा।

यह विनती निज सिखन की, सुनी श्रवन गुरुदेव।
करि अनुकम्पा कहत भे, सफल सफल तुम सेव ॥ १ ॥

श्रीगुरुवचन।

कुंडलिया।

धन्य धन्य शिष धर्म यह, कह्यो निगम लछ जेम।
दरस्यो मम तव उरन मध, परा परम जन प्रेम ॥
परा परम जन प्रेम नेम नित क्षेम निवासा।
वहुत वढ़ै परताप मान सत वचन सुदासा ॥
निज हरिजन दिनकर धरणि, गुप्त रहै सो केम।
धन्य धन्य शिष धर्म यह, कह्यो निगम लछ जेम ॥ १ ॥
यह निज कृपालु वचन सुनि, प्रेम परम परकास।
जाइपरे गुरुचरनमें, अति करुणा कर दास ॥
अति करुणा कर दास, द्रवति चित रोम हुलासं।
चले जुगल दृग नीर, सीर सुखरास विलासं ॥
गद गद होइ शरीर सव, शब्द न निकसे जास।
कहत भए कछु वेर ते, मम तव चरन निवास ॥ २ ॥

शिष्यवचन।

सोरठा।

तुमरे शरण निवास, पायो जैमलदासजी।
हमरे और न आस, स्वामी पदपंकज विना ॥ १ ॥

दोहा ।

जेहि विधि हमने प्रश्न की, तेहि विधि कही सुदेव ।
और सन्देह जु सब दह्यो, बहुरि कहो इक भेव ॥ १ ॥

चौपाई ।

प्रथमहि भक्ति सगुण तुम साधी । सो सब तजी कवन परसादी ॥
निर्गुण भक्ति लही प्रभु कैसे । सो गुरु कहो कृपाकरि जैसे ॥ १ ॥

दोहा ।

शभू शब्द सु हम सुन्यो, पथी रूप मिलाप ।
भिन्न भिन्न गुरुदेव अब, कहो कृपा करि आप ॥ १ ॥

श्रीगुरुवचन ।

चौपाई ।

सुनु शिष कहा यथारथ सहते । हम जब सॉवतसरमें रहते ॥
वहाँ एक पन्थी जन आए । नाम गृहस्थ मोहि बतलाए ॥ १ ॥
जैतराम जल पावो बाल । ऐसे वचन कहे ततकाल ॥
जब ही जल तुम्बी भर लायो । तब मैं महापुरुष को पायो ॥ २ ॥
महापुरुष बोले पुनि बैना । मोकों पन्थ बताय सु दैना ॥
जब मैं पन्थ बतावन काजा । चल्यो साथमें ले महाराजा ॥ ३ ॥
चलत चलत पन्थनमें सगा । पूछ्यो एक मोहि परसगा ॥
साधन कहा करो तुम भाई । सो मोहि अरथु कह्यो सुनाई ॥ ४ ॥
जब मैं कही ताहि विधिसारी । पाठ करू अरु सेव मुरारी ॥
सेवा पूज करी अबतॉई । निश्चय भयो कि तेरे नॉई ॥ ५ ॥
तब मैं पूछत भयो सु भेव । निश्चय मोहि बतावो देव ॥
महापुरुष सामीप्य बुलायो । राम राम निज मन्त्र सुनायो ॥ ६ ॥
ब्रह्म मिलन की युक्ति बताई । सेवा पूजा सकल छुडाई ॥
धारी सुरति मूँदकर नैना । लागी राम भजन लिव लैना ॥ ७ ॥
देखे नैन खोलकर जाना । महापुरुष भे अन्तरधाना ॥
तब मैं भयो उदासी मनमें । चहुँ दिशि देखन लागो बनमें ॥ ८ ॥
पूरब कृत्य छुडायो मेरो । सशय उपजि गयो बहुतेरो ॥
विसमय भयो सदन चलि आयो । चित चिन्ता अन जल नहिं पायो ॥९॥
रजनी वीति गइ जब अरधी । आए देव देखि मोहि दरदी ॥
तब ही भइ विष्णु नभ बानी । जब मैं पूछत भयो निदानी ॥ १० ॥

तुम हो कौन कहाँते आए । मोकों यह उपदेश बताए ॥
महापुरुष बोले नभ बानी । विरह व्यथा तेरी मैं जानी ॥ ११ ॥
मैं हौं निजानन्द अविनाशी । पूरण ब्रह्म सकल परकाशी ॥
तुम कारन आयो तव पुरमैं । जन जाने तू जन सतगुरु मैं ॥ १२ ॥
तो तारन आयो है चेरा । तू है आदि अन्त जन मेरा ॥
मान मान सतवचन हमारा । राम राम रटले ततसारा ॥ १३ ॥
संशय डिगमिग छोड़ दहीजे । ज्ञान ध्यान में चित्त गहीजे ॥
ऐसे वचन कहे गोविन्दं । दूरि किए मेरे दुख द्वंदं ॥ १४ ॥
रामनाम जपियो सुख रासं । जब मेरे आयो विश्वासं ॥
शिष तै पूछ्यो राम प्रतापं । इहि विधि मेरे भयो मिलापं ॥ १५ ॥

दोहा ।

श्रीसतगुरु के वचन सुनि, उपज्यो अधिक सनेह ।
ज्ञान गुप्त सुख मिलन को, मानत भए जु एह ॥ १ ॥

शिष्यवचन ।

चौपाई ।

हितू नहि सतगुरु तुम जैसा । दीना ज्ञान गुह्य मोहि ऐसा ॥
मैं तै मेरी सकल नसाई । भक्ति भाव उर मुक्ति बसाई ॥ १ ॥
प्रथम भए दाता हरि एहा । जिनते पाई मानुष देहा ॥
अरु तुम दाता भया सु देवं । नाम महातम दीया भेवं ॥ २ ॥
तुम समान सज्जन नहिं कोई । दीन्हा मुहि अक्षर गुरु दोई ॥
रामनाम तत परम परेसं । परम इष्ट शिव सुमिरत शेसं ॥ ३ ॥
यह उपकार कहाँ लगि गाऊं । प्रियतम तोहि पार नहि पाऊं ॥
हितू नही तुमसा गुरु मेरे । तन मन वारों ऊपर तेरे ॥ ४ ॥
तुम गुरु अरथ कहे निज एकं । तन मन अनरथ मिटे अनेकं ॥
जो गुरु तुम मिलते मुहि नाहीं । आती नहीं सुरति उर माहीं ॥ ५ ॥
वेत्ता सतगुरु सम नहि होते । तो जग संग वृथा तन खोते ॥
परम भाग हम दर्शन पायो । होइ प्रसन्न प्रसंग सुनायो ॥ ६ ॥
भाखी परम सुधारस बानी । सतगुरु सबविधि ज्ञान सु जानी ॥
धन्य गुरू मोहि दीन्ही धीरा । मेटी आन अज्ञान अधीरा ॥ ७ ॥
तुम गुरु भूमि भानु सम भासे । मम उरके समस्त तम नासे ॥
गुन अगमागम लह्यो न पारा । विनय करौं मैं बारंबारा ॥ ८ ॥

सोरठा ।

विनती वारवार, करों स्वामि कर जोरिके ।
सद्गुरु रूप तुम्हार, उर में रहो जु अहनिशि ॥ १ ॥
रामनाम निजनाम, निगुण ब्रह्म सनेह जो ।
सद्गुरु समपें स्वाम, ज्ञान ध्यान करिके कृपा ॥ २ ॥
राम मिलन निच रेख, कहूँ न राखी आप मो ।
पुनि वैराग्य विवेक, दियो परम गुरुदेवजी ॥ ३ ॥
प्रेमा भक्ति पुनीत, सब विधि कही जु युक्ति से ।
परपरा की प्रीत, सो दरसाई मध्य उर ॥ ४ ॥
दीनबन्धु गुरुदेव वारवार यह वीनवों ।
चरणकमल की सेव, करि अनुकम्पा वगसियै ॥ ५ ॥

कुडलिया ।

स्याही सप्त समुद्रकी पत्र जु धरा होइ ।
कलम करत सुरतरुनकी लिखत शारदा सोइ ॥
लिखत शारदा सोइ पार गुन तोहि न पावत ।
आप बुद्धि परमान गुरू महिमा शिष गावत ॥
स्वामी लीजे मान अरज एसी गुदराइ ।
पत्र जु धरा होइ समद की करों जु स्याइ ॥ १ ॥

सोरठा ।

विनती ऐसी रीति, शिष्य करी गुरुदेवसे ।
देखत मे अद्वैत, एक ब्रह्म घट घट महीं ॥ १ ॥

दोहा ।

ब्रह्मज्ञानको यों भयो, शिष सतगुरु सवाद ।
जिन जिन को जब जब मिल्यो, आगम आदि अनाद ॥ १ ॥

घनाक्षरी ।

भयो जू भगवान सुरज्येष्ठ सम्वाद आदि,
वाशिष्ठ रामचन्द्र अर्जुन कृष्णादि कर ।
सप्तऋषि वाल्मीकि आदि ले सम्वाद भयो,
नारद वसुदेव भयो जैसे प्रह्लाद कर ॥
ध्रुव से रगाद चित्रकेतु मुनि आदि लेके,
सोइ यह वरती जो रीति जन त्यापर ।
सशय सब गयो ब्रह्म प्राप्ति जु भइ आन,
गुरु शिष मिलाप भयो ज्ञान सम्वाद कर ॥ १ ॥

दोहा ।

उद्धव दसा जु श्याम जिमि, अन्तर मिले सु आप ।
गुरु जैमल हरिराम के, भयो सु एम मिलाप ॥ १ ॥

छन्द मनहर ।

निमि के मिलाप भयो जैसे नव योगिन को ।
जैसे सनकादि भयो हंस जगदीश को ॥
यदु के मिलाप भयो दत्तात्रेय मुनी को जु ।
शुक के मिलाप भयो जनक महीश को ॥
परिक्षित के ज्यों शुकदेव को मिलाप भयो ।
रघु के मिलाप भयो जडभरतीश को ॥
ऐसे हरिराम के मिलाप भयो जैमल को ।
ज्ञान वैराग्य भक्ति नाम वकशीश को ॥ १ ॥

दोहा ।

शिष गुरुदेव मिलाप की, कहाँ कहाँ लगि रीति ।
गुनत चढ़ै रँग ज्ञान को, सुनत वढ़ै अति प्रीति ॥ १ ॥

छप्पय धुरमेल ।

हरिराम सदन आवत भए करि मिलाप गुरुदेव से ।
करि वन्दन करजोर शीश धरिके गुरु आयसु ।
हुइ सनाथ उर हर्ष नाथ पद अंग निवायसु ॥
करिके वहु अस्तूति धर्म निज उर मध धार ।
शिष सतगुरु के पास विनय करि वारंवारं ॥
इमि जुक्ति सहित सव विधि करी भक्तियुक्त तत भेवसे ।
हरिरामदास आवत भए करि मिलाप गुरुदेवसे ॥ १ ॥

सोरठा ।

दया करी गुरुदेव, जव उर ऐसी विधि वनी ।
भक्ति प्रेमरस सेव, जुक्ति सहित सवही कही ॥ १ ॥

सवैया ।

पुनि कर नमस्कार परदक्षिण आप सु संग सहित उदराम ।
श्रीगुरु तें अति श्रेष्ठ भावसे अष्ट अंग करिके परणाम ॥
ले आयसु हरिराम परम जन आवत भए सींहथल गाम ।
जव मन युगल जु कियो मनोरथ त्यागि चलां सवही धन धाम ॥ १ ॥

नर देहन को दाव बन्यो है कृपा करी है सतगुरु स्वाम।
धकाधूम बहुता गृह माहीं हुइ एकन्त भजों हरिनाम॥
शम दम करि धरि ध्यान सुरति सजि विचरों भूमध ह्वे निष्काम।
गुरुभ्राता ते पन्थ वहत जू ऐसे वचन कहे हरिराम॥ २॥

दोहा।

जगे सु प्रेम प्रकाश उर, मन से भए एकन्त।
राम रटत हरिरामजी, सदन पधारे संत॥ १॥

छन्द त्रिभंगी।

सदन पधारे सब सुख खारे लागे प्यारे हरिनाम।
ह्वेवेकों न्यारे कुल व्यवहारे वचन उचारे हरिराम॥
नहि काम हमारे धधा खारे मोहि मुरारे उर प्यार।
गुरु राह बतारे मो दरस्यारे जग उर झारे दिनच्यार॥ १॥

दोहा।

चार दिनन को जगत सुख, अति दुख को गंभीर।
तातें तजि वन जाव सा, हरि भजसा सुख सीर॥ १॥

चौपाई।

जब बोले तनके सबधी। याहीं रहो आप निरबधी॥
हम भी दशण करों तुम्हारो। ताते ह्वै कल्याण हमारो॥ १॥
करि अस्तूति कहत में सारा। अरु विनवै पुनि बारंबारा॥
धधा तुमको नाहि भुलावा। अरु कबहू नहिं ध्यान रुलावा॥ २॥
सब रहसा तुम आज्ञा मॉई। घरही माहिं भनो तुम सांई॥
ऐसी सुनी वीनती स्वामी। रहे विराज सु अन्तर जामी॥ ३॥

दोहा।

नहीं काम कछु जगत से, राम भजन से प्रीति।
यों जन बैठे भवन में, सकल मोह गण जीति॥ १॥

चौपाई।

कारण नहीं कछू घर वनको। चित्त एक हरि से हरिजनको॥
ताको मैं दृष्टान्त बतावों। परम्परा इतिहास सुनावों॥ १॥

सवैया।

पुनि यदु भूप रहूगण अलरक राजा चित्रकेतु ही जान।
जब मत सहित भोग से निवृत जनक विदेह रहे अस्थान॥

एक हि ज्ञान ध्यान दृढ कारण निश्चय एक हि ज्ञान निधान।
यों हरिराम भवन के माहीं पीउ लियो उर माहिं पिछान॥ १॥

दोहा।

लव लागी हरि नाम से, अह निशि एक अखंड।
कबहू तूटत नाहिं जू, जैसे कंठ शिखंड॥ १॥

सवैया।

एक एकन्तं भवन सु आश्रम जामें आप विराजे जाय।
आठों हि याम अखंडित आतम रामहि राम रहे लिव लाय॥
ज्ञान उद्योत ज्योति दिल दीपक ज्यों ज्यों दिन दिन होत सवाय।
परम सु क्षेम उपज अंग अंग सु प्रेम अछक छक नेम सदाय॥ १॥

दोहा।

धिन हरिराम सु धर्म तुम, परम अछक छक प्रेम।
जावत गुरु संगति करन, सप्त कोश नितनेम॥ १॥

चौपाई।

सप्त कोश नितही चलि जावै। परम पुनीत दर्श गुरु पावै॥
रजनी रजनी वहां रहावै। आज्ञा मांगि यहाँ पुनि आवै॥ १॥
श्री सद्गुरु सें प्रीति जु ऐसी। मानों मीन उदक पुनि जैसी॥
संतनकी गति संतहि जानै। हदके जीव सु कहा बखानै॥ २॥

सोरठा।

नही जानै हदजीव, वेहदकी गति वर्णिवो।
गुरु शिष जीव रु सीव, एक मेक उर मिल रहे॥ १॥

छन्द मोतीदाम।

मिले हरिराम सु वेहद माहिं, कभी भिन आदि सु अंत जु नाहिं।
परब्रह्म देव वसे जन वास, लगी धुनि एक अखंड अकास॥
अमी रस नीर चले जब एम, चिदानन्दरूप छके रस प्रेम।
जगी सुनसागर ब्रह्म सुज्योत, इसो गुरुदेव प्रताप उद्योत॥ १॥

दोहा।

शम दम सहित जु राम रटि, पहुँचे शून्य सु गेह।
संत स्वामि गुरुदेव से, दिन दिन अधिक सनेह॥ १॥

छन्द गीतक।

गजराज रेव तटादते, अनङ्गादि पक्षि अकाशते।

सफरादि नीर निधादिते, पुडरीक भानु प्रकाशते।
जिमि बाल मातु निवासते, जिमि पक्षि नेह तरोवर।
जिमि भृग पुष्प सुवासते, इमि हस मानसरोवर।
पुनि चद ज्यो जु कमोदिनी, घन मोर चातक स्वातिज्यों।
गुन प्रेम नारद गानसो, सिध प्रीति जेम सिधा तसों।
प्रहलाद ज्यों हरि नामसों, अनुराग सन्त एकान्तसों।
हरिराम श्याम सु कारणे, गुरुप्रीति है यहि भाँतसों ॥ १ ॥

दोहा।

तरन बिच गुरुदेवसे यहि विधि लगी सुप्रीत।
दृष्टि एक कर देखियो, सब घट ब्रह्म अद्वैत ॥ १ ॥

सवैया।

आतम दृष्टि एक करि देखै सृष्टिन से नहिं वाद विवाद।
सबके जनक सकलके ईश्वर इष्ट राम निजनाम अनाद ॥
जनहरिराम सहत गम शम दम अष्ट याम से लेत प्रसाद।
सहज समाधि अडिग मन आसन गोनिष्ठनके दहल उपाद ॥ १ ॥
भक्ती विना अल्प सुख भासै अन्तर ज्ञान प्रकाशै दीप।
ऐसे गृहतें रहत उदासी जैसे पन्थी नीर समीप ॥
जिमि अरविन्द लिपै नहि अम्बु जु जैसे समुदर माहीं सीप।
जग परपच समान सु जान्यो जनहरिराम पच रस जीप ॥ २ ॥

दोहा।

सब रह
सयम बालसुमीकि सम, जत मत हनुमत जेम।
मी, सुन
ची जनक विदेह सम, नन्द सुनन्द सु नेम ॥ १ ॥

छन्द गीतक।

नहीं
२ यों उपद्रा सत्त पुरी गुरुधाम सो पँच गॉइयाँ।
हरिपुर सो दिपे ब्रह्म नीर ओत सु दाइयाँ ॥
ढिग सासता पद जासता जनसे लिये।
नहीं कछू घ दा समाज सो पट मास साधत या भये ॥ १ ॥
नध्यान मे दृष्टान्त वता

दोहा।

पट मास।
॥ १ ॥

श्रीगुरुवचन ।

चौपाई ।

ज्यों निशि विसिनी जलमें रहै । वसै कलानिधि नभसो वहै ॥
यों तेरा मन मेरे पासा । दूरि नहीं कवहू निजदासा ॥ १ ॥
अव इतनी खेचल मत करो । ध्यान सदा वाहीं तुम धरो ॥
निश्चय कहों सुनो यह वाचा । सत्य सत्य मानो शिप साचा ॥ २ ॥
स्वामी वचन शीश परधाऱ्यो । दश दिन को नितनेम विचाऱ्यो ॥
जव वोले स्वामी पुनि सोही । एक मासतें परसो मोही ॥ ३ ॥
तातें तुमको श्रम नहि होवै । अरु निरताय शब्दसे जोवै ॥
तुमतो रहो नहीं शिप छाना । ब्रह्मदेश में मिलिया प्राना ॥ ४ ॥
जगमें वहुत जीव चेतावो । घर वैठा हरिके गुन गावो ॥
स्वामी ऐसी आज्ञा कीन्ही । जव सेवक मस्तक धरलीन्ही ॥ ५ ॥

छन्द मनहर ।

जैसी धरी आज्ञा रामानन्द की कवीर शिर
जैसी धरी रज्जवहू दादूजू दयालकी ।
जैसी धरी आज्ञा शिर खेम पुनि रज्जवकी
धरी चतुरदास आज्ञा सन्तदास स्वालकी ॥
धरी आज्ञा नामदेव द्विजके स्वरूप जूकी
धरी आज्ञा उद्धवहू नन्दजूके वालकी ।
अनुभव प्रकाशी सन्त हाथ जोर ऐसे शिर
धरी आज्ञा हरिराम जैमल कृपालकी ॥ १ ॥

चन्द्रायणा ।

धरि आज्ञा शिर सन्त सु आया भवन कों ।
सथिर किया असमान सहज मन पवन कों ।
आसन किया अटल्ल सुरति सुन सॉइया ।
परिहां उर सद्‌गुरु को रूप रामगुन गाइया ॥ १ ॥

दोहा ।

ऐसे जन हरिरामजू, वैठे होय निशंक ।
एक समान सु देखिया, राजा अरु पुनि रंक ॥ १ ॥

सवैया ।

धिन हरिराम स्वामि से हिलमिल निशिदिन भजै एक निजनाम ।
पुनि अर्धांगी चॉपा माता सीता माता जैसे राम ॥

जिमि सावित्री चतुरानन के पार्वती जैसे रिपुकाम।
पतिव्रत सहित करै इमि सेवा जिमि पापाके सीता वाम ॥ १ ॥

चौपाई।

करि शिलोञ्छवृत्ति अनलावे। स्वामी को परसाद करावै ॥
स्वामी करै ध्यान दिन रैना। ना काहूसे बोलै वैना ॥ १ ॥
उन्मन रहै अष्टही पहरो। सुरति लगी साँई सुन सहरो ॥
या छवि मोप वरणि न जाइ। जानै हरिजन पहुँता ताई ॥ २ ॥
यों करतों वीता के वरसो। स्वामी अधिक प्रीति हरिहरसो ॥

अथ परचा।

एक समय सुर अप्सर ध्याई। स्वामी निकट सु बैठी आई ॥ ३ ॥
स्वामी नयन खोल करि देखी। मायाके मन छल करिवेकी ॥
बायें उलटि थाप से मारी। स्वामी ध्यान लगाइ तारी ॥ ४ ॥
ऐसी वात सुनी नरनारी। सबके भाव ऊपज्यो भारी ॥
आज्ञा लैन बहुत शिष आए। स्वामीजीसे वचन सुनाए ॥ ५ ॥
तुमहो जत मत शुकदे जैसा। पुनि बद्रीनारायण तैसा ॥
अरु कवीर जैसा जन पूरा। शील सधीर अडिग मति सूरा ॥ ६ ॥
ऐसे कहत भये जिज्ञासी। दो आज्ञा स्वामी सुखरासी ॥
स्वामी वात साच फरमाई। जामें कसर न राखी काई ॥ ७ ॥
आज्ञा बहुत कठिन है भाई। जो लेसी सो शीश कटाई ॥
अब साचा सो चरणा लागा। काचा सुनत दूरि डर भागा ॥ ८ ॥
पूरव संस्कार तिन देही। सो जन हूवा रामस्नेही ॥
पुनि स्वामीसे शीश निवाए। अपने अपने भवन सिधाए ॥ ९ ॥
पुनि स्वामी सुमिरण में लागे। आतमराम सदा अनुरागे ॥
चाँपा रमा राम गुण गावै। स्वामीजीको बहुत सरावै ॥ १० ॥
हरिके जन प्रगटे परमाई। सवहीकू सुमरावै सॉई ॥
ऐसे वचन कहै अघग्या। स्वामी धिन धिन आप प्रतिग्या ॥ ११ ॥

दोहा।

गुरु मिलियाँ पहली भया, एक पुत्र जन सार।
पीछै गिरिजानन्द जिमि, रह्या जत्त मत धार ॥ १ ॥

सवैया।

पुनि स्वामी के भक्ति अकुरी नन्द विहारी जैसा नन्द।
गुन सपद्य वुद्धिके नायक हरिके गायक रूप अनन्द ॥
नाम विहारीदास जासुको खड परशुके जैसे स्कन्द।
जिमि कवीरके तनय कमाल अम्रीवरके नाभि नरिन्द ॥ १ ॥

चौपाई।

सो भी भजन करै दिल साचे। रामनाम से निशि दिन राचे।
दास बिहारी परम सु दीपै। सो स्वामी के रहै समीपै॥ १॥

सवैया।

पुनि स्वामीके जिज्ञासुनकी ताहि हकीकत कहूं तमाम।
प्रथम सु दास नारायण लक्ष्मण लीन्हो जन्म जैतपुर गाम॥
द्वारावती चले युग परसन रमते रमते सहज मुकाम।
लांबे ग्राम पाँवनी नाडी जहाँ आय कीनो विश्राम॥ १॥
तहाँ एक पूरा जन तापै सेवादास जिन्होंका नाम।
सो वे कहत भये जन सेती याहीं भजन करो तुम राम॥
ल्यो प्रसाद उनको तुम वालाँ किसनदासके जावो ठाम।
जब सो ग्राम टोंकलै ध्याये हरिजन नाहीं पाये धाम॥ २॥
तब सो पुरी सिंहथल आये सहज स्वभाव बहत सो पन्थ।
स्वामी को दर्शन जब पायो उपज्यो दिलमें हर्ष अनन्त॥
आपसमाहिं युगल बतलाये सेवादास जिसा यह सन्त।
लो आयसु अब विलँब न करनी ताते दरशै परम सु तन्त॥ ३॥

चौपाई।

आज्ञा लैन उभय जन धारी। पुनि स्वामी से अरज गुजारी॥
स्वामी बोले परम सुजाना। छोडो सबही आन अज्ञाना॥ १॥
एक राम कूं सुमरो भाई। मन निश्चय करि प्रीति सदाई॥
जब जिज्ञासू हस्त सु जोरे। स्वामी वचन शीश पर मोरे॥ २॥
तब स्वामीजी भये कृपालं। आज्ञा दीन्ही आप दयालं॥
ले आज्ञा लक्ष्मण गे दूरी। दास नारायण रहे हजूरी॥ ३॥

दोहा।

छः के वर्ष दयालुसे, मिले नारायणदास।
आन भर्म भय सब कटे, प्रगट्यो ब्रह्म विलास॥ १॥

(श्रीरामदासजीमहाराजकीदीक्षावर्णन)

सवैया।

पुनि स्वामी से रामा मिलिया वर्णों जिकी वारता होय।
मुरधर माहिं लियो अवतारा हरिके प्रेरे आये सोय।

पूरा पुरुष कहूँ नहिं पाया लीने द्वादश गुरुकों जोय ॥
जटा विभूति धर्‌या बहु बाना काज सर्‌या नहिं तातें कोय ॥ १ ॥
पुनि नापासर ग्राम जु आये स्वामी के शिष सिलिये पेन।
जयतें पढे रेखता जनका तबतें पायो परम सु चैन ॥
रामस्नेहिन से जब रामा बोल्त भये सु ऐसे वैन।
इन शब्दनके वक्ता स्वामी सो तुम मोहि बताचो सैन ॥ २ ॥

रामस्नेह वचन।

चौपाई।

पुरी सिंहथल माहिं जु स्वामी। आप विराजै अन्तर्जामी ॥
जाकी महिमा कहा बखानों। परम पारषद हरि के मानों ॥ १ ॥
जब रामा आतुर करि आये। स्वामीजी को दर्शन पाये ॥
स्वामीजीसे करि परणाम। हस्त जोरिके बोले ताम ॥ २ ॥
करि किरपा दीक्षा मोहि दीजै। स्वामी तुम शरणागत लीजै ॥
स्वामी कह्यो वचन जब ऐसे। तुमसे दीक्षा पलै जु कैसे ॥ ३ ॥
तुम तो औघड़ रूप बनेहो। जटाजूट बहु तार तनैहो ॥
रामस्नेही यह नहिं राखै। रामनाम रसनासे भाखै ॥ ४ ॥
इतना कहत हाथ तब जोरे। टामन टूमन सबही तोरे ॥
स्वामी बात हृदय सो चीन्ही। इक सेवक को आज्ञा कीन्ही ॥ ५ ॥
कर चरचा समुझाओ सोई। याको सॉच मतो जो होई ॥
पुनि सेवक सब धर्म सुनायो। ज्ञानगुष्ट करि साच लखायो ॥ ६ ॥
आय कह्यो स्वामीसे ऐसो। है साचो मत पाया जैसो ॥
स्वामी बहुरि कसोटी दीन्ही। दीक्षा देन परीक्षा की ही ॥ ७ ॥
जो पीपा जैसो मत साचो। तो कबहू नहिं होवै काचो ॥
स्वामी कह्यो सदन तुम जावो। के दिन गया बहुरि तुम आवो ॥ ८ ॥
साची टेक होय जो तेरे। राम राम करिके मन घेरे ॥
साधन आन सकल पुनि खोई। तब दीक्षा देसॉं जन तोइ ॥ ९ ॥
इतनी सुनि रामा जन बैठा। साचै मतै होय चित सैठा ॥
पुनि स्वामी की कसणी सहिया। केते दिवस अन्न नहिं लहिया ॥ १० ॥
जो प्रभु आज्ञा देवो नाहीं। तो मैं प्राण तजूँगा याहीं ॥
जब स्वामी उर दया विचारी। सेवक को देख्यो मत भारी ॥ ११ ॥

स्वामी साँची प्रीति पिछानी । पीपा जिमि अन्तरमें जानी ॥
करि अनुकम्पा दीक्षा दीन्ही । यों दासन की पारख लीन्ही ॥ १२ ॥

छन्द मोतीदास ।

इसी विधि अप्पिय आयसु देव । निरन्तर जप्पिय अन्तर भेव ॥
छुडाइय जैन शकत्तिय सेव । हरे तम जाल दुगत्तिय देव ॥ १ ॥
भगत्तिय दीध मुकत्तिय भेव । जुगत्तिय जोग उकत्तिय एव ॥
कुगत्तिय दूरि करे सब कर्म । जुगत्तिय बंधिय ज्ञान सु धर्म ॥ २ ॥
भये गुरुदेव सुदत्तिय साम । दियो जिन सर्व सिद्धान्तिय नाम ॥
वदन्तिय एम अमोलख वैन । प्रभाकर जेम छिदन्तिय रैन ॥ ३ ॥

दोहा ।

रामा मिले दयालु से, नौके वरष निधान ।
पायो पीपादास ज्यों, ब्रह्म जु ज्ञान विधान ॥ १ ॥

छन्दगीतक ।

करि वीनती गुरुदेवसे परणाम पद परसाइया ।
पुनि पंच दीन परिक्रमा अस्तूति ओघ सुनाइया ॥
गुरुआमना धरि शीश जो फिर देश मरुधर धाइया ।
नित रामदास विलास यों हरिरामके गुन गाइया ॥ १ ॥

दोहा ।

श्रीसद्गुरु को ध्यान उर, लगन ब्रह्म से लाय ।
खेड़ापै निज नगर पुनि, जहँ बैठे जन जाय ॥ १ ॥

---

१ अन्तर्यामी अन्तरकी, मानलई तहकीक ।
हुइ कृपालु कहने लगे, सब सन्तनकी सीख ॥ १ ॥
२ सन्मुख आसन सहज धरायो । मस्तक कर दे राम कहायो ॥
केवल मत्र अनादि अनादं । गुरु परताप भजन तत साद ॥ १ ॥
ॐ से परे निजानंद योही । वर्ण सर्व मध अवर्ण सोही ॥
ररंकार अपरम परपार । भयो मकार मात सिधकारं ॥ २ ॥
अक्षर उभय सयुक्ति सदाई । ॐ महत्तत्व व्यूह इन माँई ॥
(श्रीराम. परची विश्राम ८)

---

1 सहज आसन=स्वाभाविक आसन । पालथी मारना ।
"सम आसण वैठै सहज मारि बाँवे पर द्वै क्षण हस्तधारि ।
गुरु मंत्र जवे दे तलसार, धारै शिष निश्चय सार धार ॥ १ ॥
(श्रीहरि. परची)

सवैया।

इनसे आदि शिष्य उद्धारे सुनिये आगे चित्त लगाय।
आदू अमीराम जन आदू साधू देईदास सवाय॥
जो जो पुरुष भया जन पूरा सो सो लागा स्वामी पाय।
जाके दिलमें राम मिलनकी ताके ऊणत रही न काय॥ १॥

चौपाई।

सुरतरु प्रगट भये कलि माहीं। तातें ऊणत रही जु नाहीं॥
आये जीव उधारण स्वामी। धन्य धन्य तुम अन्तर्यामी॥ १॥

छन्द गीतक।

नर नारि सो नितनेमसे करि प्रेमसे परसै पद।
महिमा करै अनुमोदसे ततबोधसे प्रगटै तद॥
सतसंग स्वामि सनेहसे सुख लेत सो अति सेवसे।
पुनि पद्द धारण दास जो सत भाव सो गुरु देवसे॥ १॥

सवैया।

डूंगरदास जातको वीको आय मिल्यो स्वामीसे सोय।
कहियै जिको गामको ठाकुर स्वामी को निज चाकर होय॥
और सु प्रेमदास पुनि आदिक पीपावंशी भ्राता दोय।
सो स्वामीका भया दीक्षा कुल अभिमान भर्म कू खोय॥ १॥

दोहा।

ऐसे जीवजु आपना, लीया चरण लगाय।
जगत जाल बन्धन दह्या, रह्या राम गुण गाय॥ १॥

चौपाई।

स्वामीके जगकी नहिं आसा। सतासमाधि शून्यमें वासा।
रामनिरंजन भजन राता। पर उपकार नामका दाता॥ १॥
रहै दयालु सकल निरदावै। ऐसे रामनाम गुण गावै॥
कठिन समय इक ऐसा आया। कारण अन्न वेचते काया॥ २॥
तिन पुलमें हरिजन इक आयो। स्वामीजीको दर्शन पायो॥
स्वामी ऐसे वचन उचार्‍यो। चाँपा रमा शीश पर धार्‍यो॥ ३॥
या जन कू परसाद करावो। पीछे तुम हरिके गुन गावो॥
तब ताकी परसाद करायो। स्वामी सहित आप नहिं पायो॥ ४॥

सतवासेनको प्रसंग ।

सवैया ।

सतवासेन जिसो पत साचो ताको सत्य सु कहूं विवेक ।
आप सु सहित त्रिया सुत नारी सो उन मतो विचार्यो एक ॥
नव दिवसनतें भोजन कीन्हो दीन्हो सबै सन्तको देख ।
अर्धो नकुल भयो कंचनको पांडव जिगसे कियो विसेक ॥ १ ॥

चौपाई ।

स्वामी सत्य जु राख्यो ऐसो । सतवासेन विप्रके जैसो ॥
पुनि जन चल्यो मॉग करि आज्ञा । स्वामी वहुरि ध्यानमें लाग्या ॥ १ ॥
पन्थ चलत सो पाछो आयो । रोक रुपैयो भेट चढायो ॥
स्वामी वात चित्त की चीन्ही । भीड़ जानिके भेट जु कीन्ही ॥ २ ॥
हमरे भीड़ नहीरे भाई । रामप्रताप आनन्द सदाई ॥
पहिले भेट करत तुम आई । तो प्रसन्न हुय लेते भाई ॥ ३ ॥
अवतो नहिं लेवां हरिप्यारा । मान मान ज्या वचन हमारा ॥
जव जन विरह करन कूं लागे । लेट गयो स्वामीके आगे ॥ ४ ॥
नीरधार चाली नैननतें । वोल्यो नाहिं गयो वैननतें ॥
धीरज धार वचन तव वोल्यो । स्वामी भेट करी मैं सो ल्यो ॥ ५ ॥
जव देख्यो व्याकुल ता जनको । स्वामी प्रसन्न कियो वा जनको ॥
ऐसे हठतें भेट रखाई । रंका वंका जेम अचाई ॥ ६ ॥

दोहा ।

तीन लोकको सुख तज्यो, औरनकी क्या वात ।
स्वामी दयालु कृपालु के, जिमि कंकर जिमि धात ॥ १ ॥

चौपाई ।

अवतो भेट आयवा लागी । सेवक चेल्या एकहि सागी ॥
हृदय हर्ष दर्शन कूं आवै । सो स्वामी को भेट चढावै ॥ १ ॥

सवैया ।

कोई आन चढ़ावै कंचन कोई आन चढ़ावै नाज ।
कोई पाट पितास्वर चाढै कोई चीर चढावै ताज ॥
कोई आन चढ़ावै करहो कोई आन चढ़ावै वाज ।
ऐसे भेट करै सिख सोई स्वामीके नित रहै समाज ॥ १ ॥
जैसे अवधपुरी के माहीं सोहत सुरन संग रघु वीर ।
अति अनुमोद होत चित आतम यों गुरु ग्याल संग धरि धीर ॥

भाखत सिफ्त भाव उर भीजत चाखत महा प्रेम रस नीर।
परमारथ हित पथ बतावे स्वामी सब तें तरक फकीर॥ २॥
राजा रंक एक सम जाने जैसे कक्कर तैसे हीर।
हरिभक्ती विन कछू न चाहें ज्यूं पीपा रैदास कबीर॥
वेहद मिले रामके वल्लभ यूं हरिराम धर्मगुरु पीर।
तारण जीव समर्थ अनेकन निर्मलकर ज्यूं गंगानीर॥ ३॥
इल परकाश अर्क ज्यूं भासत निशिदिन ज्ञान गरक गंभीर।
मारे गर्व सर्व तनमनके मारे पकरि पंच बड मीर॥
राम राम हरिराम बगसिके सबको किये पार भव तीर।
जो मिलिये सो हुये आप सम अभयदान ले रहे न कीर॥ ४॥

दोहा।

बाल बिहारीदास पुनि, रटै प्रीतिकर राम।
दास नराण हजूरमें, रहै अष्टही जाम॥ १॥

चौपाई।

दास विहारी कूप पधारे। जल कारण इमि मतो विचारे॥
तहाँ एक बोल्यो नर धेकी। हरिजनसे जानी नहिं नेकी॥ १॥

सवैया।

हरिजनसे सवादो करिके दुष्ट एक जिन कीनो द्वेष।
हरिजन देख जरे निशिवासर नहीं सुहावै साधू भेष॥
हिरण्यकशिपु राक्षसके जैसी तैसी इनके उरमें टेक।
बाल बाल कूं नीर घासते वचन कहे कटु मूढ़ विशेक॥ १॥

चौपाई।

दास विहारी कछु नहि कहे। दुष्ट वचन हिरदैमें सहे॥
बालबाल यूं धीरज राखी। उद्धव प्रती कृष्ण जिमि भाखी॥ १॥
आये पुनि स्वामीके पासा। हस्त जोर करि वचन प्रकासा॥
याद यास अब नाहिं सटावे। तातें चलो रहाँ निरदावे॥ २॥
हरि सुमिरनमें विघ्न न होई। ऐसी बुद्धि विचारो कोई॥
विश्रमपुर जावनके काजा। बालबाल सह शिष्य समाजा॥ ३॥
बीच ग्राम नापासर आया। ठाकुर सन्मुख आन बधाया॥
बहु आदर करिके घर लाया। गुरु चरणोंमें शीश नमाया॥ ४॥
कीन्ही विनय सहित परससा। धिन धिन आज पधारे हंसा॥
देवीसिंह बहुत सुख पायो। स्वामीसे करि भाव सवायो॥ ५॥

दरशण करण सकल उठ भागा। आय रु स्वामी चरणाँ लागा॥
स्वामी करै रामकी चरचा। जब आवै सबके मन परचा॥ ६॥
सबही रामभजन कूं लागा। हंस किया पलटाया कागा॥
देवीसिंह प्रीति विस्तारी। पुनि सो करी रसोई भारी॥ ७॥
व्यंजन कीन्हे बहुत प्रकारं। अमृत भोजन बने अपारं॥
लाडू पुरी मिठाई मेवा। आप किया सब अर्पण देवा॥ ८॥
देवीसिंह होय आधीना। थाल सेव करि लाहा लीना॥
पुनि ठकुरानी जैताँ बाई। कीन्हो भाव बहुत विधि आई॥ ९॥
स्वामी के इक राम अवाजू। दादू ज्यों सत्संग समाजू॥
दर्शन करि सबही जन हरषे। वचन थाल अमृत सम बरषे॥ १०॥
ऐसे सन्त राम अवतारी। प्रगटे अवनि भक्ति विस्तारी॥
शरणागती जीव जो सोध्या। लागि रही नित पुरी अयोध्या॥ ११॥

दोहा।

देवीसिंह दयालुका, उत्सव किया अपार।
हुयो दास करजोर करि, विनवै वारंवार॥ १॥
साचा हरिजन सूरका, जहँ तहँ आदर होय।
ओत प्रोत हरिसे मिले, जगत न जाने कोय॥ २॥

चौपाई।

द्वेष किया तिनमें दुखपरिया। मुर सुत एक दिवसमें मरिया॥
तनधन क्षीण होन कों लागे। सॉई कोपे एकण सागे॥ १॥
भक्त द्रोह हरिको नहिं भावे। जो पुनि तीन लोक मे जावे॥
छॉडै नही सन्त को द्रोही। जाको जड़ामूलसे खोई॥ २॥
जापर जबै रामजी रूठै। ताकी सब संपत्ती लूटै॥
पुनि सो पाँच दिवस के मॉई। घर दुर्जन को गयो विलाई॥ ३॥
रोवै बहुत करै विलपातू। हे प्रभु इसी करी क्यों वातू॥
ऐसो पाप कियो मैं कॉई। तातें मोपर कोपे सॉई॥ ४॥

दोहा।

पुत्र मरे अति दुख पर्‍यो, क्षीण भयो धन साज।
घर छिरणाट्यो हुयगयो, कहा मै कियो अकाज॥ १॥

चौपाई।

जब बोले मानुप पुनि सारे। तुम अपराध न कोई पारे॥
स्वामी को विन काज सताए। तातें तुम ऐसे दुख पाए॥ १॥

अब तुम चरण उसीके लागो। जन सबही जावो करि सागो॥
जेज करी तो है है ऐसी। डोरी माहिं भई है जैसी॥ २॥
वे स्वामी प्रह्लाद समाना। तुम जानो नहिं मूढ अयाना॥
सुनता बात सबै मनमानी। यामें फेरफार नहिं जानी॥ ३॥
करणीदान हुकुम जब कीया। सासिल होन ढोल तब दीया॥
पाँचों बास एकठा हूवा। सँग लीया जाका सुत मूवा॥ ४॥
जाय लग्या स्वामी के चरणा। कृपासिंधु कीजे अब करणा॥
हम तुमको जान्यो नहिं भेवा। तुमतो अलख निरंजन देवा॥ ५॥
हमरो चूक बगसिये स्वामी। अब तुम चलो सदन घणनामी॥
जो तुम कहो जेम करिदेसा। ज्यों त्यों करिकै सँग में लेसा॥ ६॥
स्वामी कह्यो कछू नहिं चावै। हमको एक रामरस भावै॥
सो तो याही लोक सयाना। कहा सदन अब कहा पयाना॥ ७॥
बहुरि करी अरदासा लोगू। स्वामी मेटो सरही सोगू॥
तुम विन गॉव भयो भयभीतू। अन्धकार जिमि विनआदितू॥ ८॥
चन्द विना रजनी नहिं सोहै। तुम विन हाल हमारो को है॥
अब तुम ओर न जानो तातू। जलसे आदि ले छोडी बातू॥ ९॥
आप प्रसन्न सोइ करि लेसाँ। और तुरत कागद लिखदेसाँ॥
दावो उजर करण नहि पावै। हरिको खूनी सो दरसावै॥ १०॥
सही आपसे वचन उचारो। अब तुम स्वामी भवन पधारो॥
स्वामी सहज कही जब बानी। अब क्यों इतनी विनती ठानी॥ ११॥

दोहा।

तब लोकन विनती बहुरि, करी बहुत तजि मान।
हमतो शिशु मतिमूढ नर, तुम साक्षात सुभान॥ १॥
धूलि उछाले गगनमें, सूर न लागे कोइ।
चप फूटै शिर पर पडै, मूढ सचेतै सोइ॥ २॥
देह देह पहिले कहै, शिरमें लागै आय।
यही मूढ की वारता, तब पीछे पछताय॥ ३॥

चौपाई।

हम तो महामूढ हैं प्रानी। तेरी गती नाथ नहि जानी॥
तुम तो हो हरिके अवतारा। स्वामी सबके सिरजन हारा॥ १॥
हदके जीव उलंघिगे पारा। कैसे जानै मूढ गवारा॥
दयासिंधु कृपा अब कीजै। पुरी सिंहथल वेगि चलीजै॥ २॥

दोहा ।

अति लघुता अनुक्रम सहित, करुणा सुनी कृपालु ।
अव लोकन के ऊपरै, करदी दया दयालु ॥ १ ॥

सवैया ।

दीन दयालु दया के सागर आवत भये अयन कूं आप ।
देवीसिंह पहुँचावन आयो अरु कीन्ही मनुहार अमाप ॥
ओर सु रामस्नेही सारे संग चले जपते हरि जाप ।
उत्सव करत धाल के सबही सिंहथल आये रामप्रताप ॥ १ ॥

दोहा ।

सब शिष शाखा सहित जू, राजे भवन मँझार ।
दर्शण करण दयालु के, सब आये नरनार ॥ १ ॥

छन्द पद्धरी ।

आवै सु दर्श पुनि प्रीति वान । गावै दयालु गुन हर्ष मान ॥
सत्संग स्वामि गंगा प्रभाव । न्हावै सुशिष्य चित कर सुचाव ॥ १ ॥
पद विष्णु हूँत चाली सुगंग । पुनि भई सप्त धारा सुरंग ॥
जैमल्लदास सो विष्णु रूप । भक्ती सु गंग चाली अनूप ॥ २ ॥
धारा जु सप्त पुनि सप्त द्वीप । सुरसरी भई अजके समीप ॥
जंबू सु द्वीप जहँ मिली एक । सो भरतखंड माहीं विसेक ॥ ३ ॥
मारू सुदेश आनन्द कन्द । जंगलथल हेमाचल वरिन्द ॥
परवाह पुरी सिंहथल पुनीत । तहँ भक्ति गंग विस्तरी मीत ॥ ४ ॥
जल ब्रह्म रूप गुरुदेव सोय । पुनि ज्ञान ध्यानके तट सु दोय ॥
नीलोत्पलं च जहँ सुमन नाम । तहँ रहे पेख चंद्रक स्वाम ॥ ५ ॥
भय लाल प्रभा सन्तोप कंज । रह राज सर्व सरिता सुमंज ॥
अरु घाट घाट आवत अनन्त । झूलन्त जवै होवै अचिन्त ॥ ६ ॥
यूं देश देश के शिष्य वृन्द । पढ़ि सन्त मोक्ष पावै अनन्द ॥
गंगा न करि सकै अवर गंग । गुरु धाल करै अपने सु रंग ॥ ७ ॥

दोहा ।

भीषम तें सुत अधिक भनि, धाल भक्ति सत्संग ।
यह यात्रा शिष परसियाँ, बहुरि धरै नहिं अंग ॥ १ ॥

चौपाई ।

मुरधर से रामा शिष आये । मानों जिमि कंचन से ताये ॥
राम नाम सुमिरन शिर ताजू । गुरु परताप सऱ्या सब काजू ॥ १ ॥

अरज करी स्वामी से ऐसे। रामानँदसे पीपा जैसे॥
अब प्रभु सदन पधारो मोरे। तन मन धन अर्पन सब तोरे॥ २॥

दोहा।

सुनि अरजी निज शिषन की, करी कृपा गुरुदेव।
चित्त पधारण चि`तवी, भक्ति वधारण मेव॥ १॥

चन्द्रायणा।

सब शिष शाखा सग पधारे द्यालजी।
जहँ जहँ धारै पाँव करै तहाँ न्यालजी॥
गाँव गाँव के माहिं होवे जु वधावणा।
परिहा हरिजन हरिको रूप लगै जु सुहावणा॥ १॥
करै रसोई बहुत चढावै मेट जू।
रामत करते सन्त पधारे ठेट जू॥
रामा जन विधि बहुरिजु स`मुख आयके।
परिहा उर उत्सव करि प्रेम लिया जु वधायके॥ २॥

दोहा।

श्रीगुरुदेव दयालु को, लीन्हा पम वधाय।
बहुत प्रीति करि बीनती, रामदास लग पाय॥ १॥
आसन वसन बिछावना, हाजर किया जु आय।
सद्शिष रामदास के, आनँद अँग न समाय॥ २॥

छन्द पद्धरी।

इमि करत रामदासहि उछाव। धिन धरे सदन गुरुदेव पाव॥
वैकुठ सहित मिलिये जु विष्ण। मानों सदेह गोलोक कृष्ण॥ १॥
पल पलहि माहिं वारै सु प्रान। गुरुदेव सुरति निरखै निदान॥
मानों सु आज ऐसो उजास। जिमि शरद पूर्णिमा को सो प्रकास॥२॥
पुनि करी रसोई अति पुनीत। नाना प्रकार भोजन सु रीत॥
इमि प्रीति सहित पुरसे जु थाल। देवाधिदेव जीमे दयाल॥ ३॥

दोहा।

रहे थाल कै दिवसलौं, नगर खैडापे सोहि।
भक्ति भाव सपति निरखि, अति प्रसन्न हिय होहि॥ १॥

छन्द पद्धरी।

पुनि रामदास बहु करी भेट। सब शिषाँ सहित गुरु चरण लेट॥
मन धन सपति आदि ताम। सबके हो मालिक आप स्वाम॥ १॥

तब करी एह इच्छा सु आप। सिंहथल को आवन करि सिलाप॥
शुकदेव जेम सद्गुरु अचाह। करि सेवा शिष लीन्हे जु लाह॥ २॥

दोहा।

शिष तो रामा जन जिसा, द्याल जिसा गुरुदेव।
वे अचाह वे चरण रत, मिले सु एक समेव॥

चौपाई।

पुनि आवन की त्यारी कीन्ही। गुरु मूरति शिष हिय धरलीन्ही॥
घणी दूर आये पहुँचावा। मन से पाछो करै न जावा॥ १॥
गुरु हरिराम कह्यो जब ऐसे। जैमल कह्यो आप कूं जैसे॥
अम्बर माहिं बसै जिमि इन्दू। बसै कमोदनि तिमि मध सिन्धू॥ २॥
यूं तुम सदा समीप हमारे। हम तुम तें कबहू नहि न्यारे॥
अब तुम पीछो करो पयानो। यह शिष सीख हमारी मानो॥ ३॥
तब अस्तूति करे परणामा। फिरे सदन कूं निज शिष रामा॥
स्वामी आये निजपुर धामू। रामत करते सहज मुकामू॥ ४॥

दोहा।

इह विधि मुरधर देश कों, करि पावन महाराज।
आय विराजे आप यहँ, द्याल महोत्सव साज॥ १॥

चौपाई।

सिंहथलपुरी अयोध्या जैसी। और पुरी नहिं कोऊ ऐसी॥
जन साक्षात विष्णु अवतारा। दर्शन आवै लोक अपारा॥ १॥

छन्द त्रोटक।

कोउ आवत कोश जु एकनतें, सतसंग दयालु सु पेखनतें।
कोउ आवत जोजन आधनतें, गुरु ज्ञान वैराग्य सु साधनतें॥ १॥
कोउ आवत कोशजु सो मुरतें, अति होय अचिन्त्य मनो उरतें।
कोउ आवत सो जन जोजनतें, सत्संगति स्वामि प्रयोजनतें॥ २॥
कोउ आवत कोशजु पंचनतें, शुभवस्तु हृदय गुन संचनतें।
कोउ आवत जोजन डोढनतें, गुरुदेव सुसंगति कोडनतें॥ ३॥
कोउ आवत कोशजु सप्तनतें, तब द्याल सिटावत तप्तनतें।
कोउ आवत जोजन दोइनतें, निज नाथ विलोकन लोयनतें॥ ४॥
कोउ आवत कोश तिहूँ पटतें, ररकार सु शब्द मुखाँ रटतें।
कोउ जोजन सोइ सवा दुइतें, नित आवत दास जनूं हुयतें॥ ५॥

दोहा ।

सुनि सुनि आवै सकल जन, अनुभय शब्द अवाज ।
रहै थाल महाराजके, नित सतसंग समाज ॥ १ ॥

छन्द त्रिभंगी ।

सद्गुरु है शरणूँ चितधर चरणूँ जामणमरणूँ भवहरणूँ ।
भवसागर तिरणूँ करजन करणूँ अशरण शरणूँ ऊधरणू ॥
उर अवफरणूँ ध्यानसु धरणूँ सत्र वीसरणूँ सुरजाल ।
यसु यदा विस्तरणूँ करसव निरणूँ परचा वरणूँ गुरुथाल ॥ १ ॥

दोहा ।

गुना चूक तुम वगसियो, मैं अति मूढ अजान ।
थाल रावरो सुयश तो, वरणै सकल जहान ॥ १ ॥

चौपाई ।

नेतराम मुरली जन दास । वीकानेर सहरमें वास ॥
माजन जाति राम का प्यारा । शिष स्वामी के वडे सुवारा ॥ १ ॥
जिन दरशण को मतो उपायो । घरकां को नाहीं दरशायो ॥
रात जगावन कीयो व्याजू । चित से लायो साधु समाजू ॥ २ ॥
प्रीती करिके सिंहथल ध्याये । आये रातोरात चलाये ॥
यहँ जू सभा बहुरंगी सारी । स्वामी ध्यान लगाई तारी ॥ ३ ॥
पुनि सो अति दरशन के प्यासी । जब सो दोनों भये उदासी ॥
विनु दीपक दरशन किमु होवे । अरु अब बहुरि कवन से जोवे ॥ ४ ॥
दिन ऊगाला नहीं यदाओं । नाम मँदिर को लियो उठाओं ॥
ऐसी करुणा देखि दयालू । अन्तरजामी भये कृपालू ॥ ५ ॥
तब सो ऐसो कियो उजासू । मानों कोटि दिनेश्वर भासू ॥
जब दरशन पायो उन दासू । हिरदे उपज्यो बहुत हुलासू ॥ ६ ॥
अद्भुत चरित देखि तिन वेरू । अतिशय भये अचभै चेरू ॥
स्वामी कौन गती यह कीन्ही । चर्म दृष्टितें जाय न चीन्ही ॥ ७ ॥
हमकों दीपक आश न एकू । उदित किये मणि चन्द्र अनेकू ॥
चरणां लपट स्वामिके पासू । करत भये अस्तूति निज्ञासू ॥ ८ ॥
नमो नमो नित ब्रह्म नमस्ते । एक अखंड आदि मध अस्ते ॥
पूरण ब्रह्म सच्चिदानन्दा । विश्वरूप ईश्वर जग वन्दा ॥ ९ ॥
ज्यों हरि मुख सुर भुवन दिखायो । हमकों ऐसो चरित लखायो ॥
ज्यां कवीर पडाकां राखे । सेना करी नामदे लाखे ॥ १० ॥

यों तुम स्वामी कला अनंतू । वासर कियो रैन को संतू ॥
जव स्वामी वोले जन सेती । हरि कर्ता क्यूं नहिं है एती ॥ ११ ॥
मेरु करै तृण तें हरि सोइ । पुनि तृण वहुरि मेरु तें होइ ॥
साचै मतै रामकों सेवै । तो इच्छा है सो करि देवै ॥ १२ ॥
याको मती अचंभो मानो । अरु तुम हरि कों समर्थ जानो ॥
यो चरित्र राखीजो छानै । कोउ जाने को नाहीं जानै ॥ १३ ॥
हमरे काम जगत से नाहीं । मिलिये राम अंतरके माहीं ॥
अव तुम दर्श कियो रे भाई । ऊणत मनमें रहै न काई ॥ १४ ॥
यों कहि द्याल समेटी माया । शिष वंदन कर शहर सिधाया ॥
स्वामी वहुरि समाधि लगाई । शून्यशहर माहीं इकताई ॥ १५ ॥

दोहा ।

श्रीगुरु हरियानन्दके, परचॉ को नहिं पार ।
सुने सो आसी कहन में, और हु गुप्त अपार ॥ १ ॥

छन्द त्रिभंगी ।

जैसे गोपालं संग सु वालं विधि चरितालं दिखरालं ।
ह्वै विधि वछ वालं करि ततकालं हृदय कुलालं भ्रम टालं ॥
यों करन निहालं आप चालं अनुभव स्वालं विस्तारं ।
मेरी वुधि वालं कहौ कहॉलं परचा द्यालं नहि पारं ॥ १ ॥

दोहा ।

अगमागम गति द्याल की, मोपैं लखी न जाय ।
विनती गंगारामसे, सदा रहौ शरणाय ॥ १ ॥

चौपाई ।

वारट एक स्वरूपा नामू । जाका भया अडाणा धामू ॥
सो स्वामी के दरशन आया । अति करुणाकर वचन सुनाया ॥ १ ॥
हमसो और अनाथ न कोई । जो कोउ तिहूं लोकमें जोई ॥
ठौर नहीं वैठन कूं काई । अव मैं कहा करूं जनराई ॥ २ ॥
तव स्वामी मन ऐसी धारी । पींपा जैसी परम विचारी ॥
हरिजन सोई पर उपकारी । घट घट आतम राम सॅम्हारी ॥ ३ ॥
जापर स्वामी भया कृपालं । तव सो कीयो वहुत निहालं ॥
होइ प्रसन्न दीक्षा दीन्ही । करुणा सिंधु कृपा इमि कीन्ही ॥ ४ ॥
स्वामी तणी कृपासे सोई । संपति विविधि भांति जू होई ॥
जिनको दारिद गयो जु ऐसे । पुनि सो विप्र सुदामा जैसे ॥ ५ ॥

यामें संशय नाहिं कदाई। हरिजन राम एक है भाई ॥
तुठे घाल करी प्रति पारू। चारों तर्फ लक्ष्मी द्वारू ॥ ६ ॥
यों स्वरूप का दारिद भागा। सद्गुरु की सेवामें लागा ॥
दर्शन कियाँ इसी रस आई। भक्ती मुक्ति विभूती पाई ॥ ७ ॥

दोहा।

गायो गुन गोविंद को, पायो द्रव्य अमाप ॥
आयो साच स्वरूप कों, सद्गुरु राम प्रताप ॥ १ ॥

सोरठा।

बहुरि करी अरदास, रामदास जन आयके।
पावन करो निवास, सब मन भावन सद्गुरू ॥ १ ॥

छन्द तोमर।

पुनि रामदास जु आय। गुरुदेवसे शिर नाय ॥
अरजी सु कीयजु यह। पगधारिये फिर गेह ॥ १ ॥
परकाज सारन चाल। सब प्रान के रिछपाल ॥
निरधारके आधार। शरणाय के साधार ॥ २ ॥

श्रीगुरुवचन।

सोरठा।

सुनि ऐसी अरदास, जब सद्गुरु बोलत भये।
दासा करियत दास, बार बार कारन कहा ॥ १ ॥

शिष्यवचन।

चौपाई।

करन करावन हम कछु नाहीं। व्यापक आप सकल के माहीं ॥
प्रेरक हो तुमही तन मनके। दयासिंधु बधू दीनन के ॥ १ ॥
सोइ तुम चरणन की सेवा। मैं तो दास तुम्हारो देवा ॥
तुम तो सदा अचल हो स्वामी। पर तव वृद्ध अवस्था जामी ॥ २ ॥
बार बार अवसर कब पावों। तातैं या अर्जी गुदरावों ॥
जब स्वामी अर्जी सत मानी। सेवक की अति प्रीति पिछानी ॥ ३ ॥

सोरठा।

करि अनुकम्पा ख्याल, मरुधर देश पधारिया ॥
करण शरण प्रतिपाल, रीतिसु आदि अनादिकी ॥ १ ॥

छन्द मनहर ।

साची प्रीति जानि एक, समुचै पधारे श्याम
विप्र श्रुति देव अरु, नृप वहुलास के ।
जैसे जू पधारे प्रीति, हेतु भीलनी के राम
जैसे जू पधारे रामा, नन्द पीपादास के ॥
पीपा जू पधारे तहाँ, श्री रंगदास के पुनि
नारद पधारे भूप, भीम सुखरास के ।
श्याम के सनेही जन, भावना के हेतु एम
ऐसे जू पधारे हरि, राम रामदास के ॥ १ ॥

सोरठा ।

समय पधारत नाथ, खैडापा पुरकों जवै ।
आयो सन्मुख भात, सॉच वचन सतगुरु कह्यो ॥ १ ॥

दोहा ।

गांव खेड़ापै जावतॉ, सवबातांका ठाट ।
दूध दही घृत मोकला, भरिया रहसी माट ॥ १ ॥

छन्द पद्धरी ।

पुनि रामदास करिके हुलास । आयासु वधावण परमदास ॥
सब लिये शिष्य शाखा जु साथ । चित द्रवति प्रेम रोमांच गात ॥ १ ॥
वाजन्त ढ़ोल वाजा विशेख । सुर मे प्रसन्न सम्माज देख ॥
पुनि अष्ट अंग करते प्रणाम । यों लगे शिष्य पदपद्म स्वाम ॥ २ ॥
आनी सुगन्धि वस्तू अनूप । मृगमद हरिचन्दन पीतरूप ॥
कुंकुम कर्पूर सु काशमीर । चोवा गुलाल चन्दन अवीर ॥ ३ ॥
तिलकार्घ्य आरती करे ताम । पद पाट परत पधराय धाम ॥
सिंहासन आसन धर्‍यो आय । अति भाव सहित सेज्या विछाय ॥ ४ ॥
कर जोरि भये ठाढ़े सु दास । पुनि करत भये वानी प्रकास ॥
धनि धन्य आज मेरो सु भाग । पायो घर वैठाँ गुरु समाग ॥ ५ ॥

कुंडलिया ।

शिष निज रामादासके वटी वधाई एम ।
दास विदुरके द्वार जो यदुपति आवत जेम ॥
यदुपति आवत जेम तेम पतिवृत हरपाई ।
व्याकुल भई शरीर सुधी वुधि सवै भुलाई ॥
निरखि परम गुरुदेव को छके अछक छक प्रेम ।
शिष निज रामादासके वटी वधाई एम ॥ १ ॥

छन्द मनहर।

हरष हरष मन विधि विधि भाँति भाँति
चीज भोजन बनायो भल चित भावसे।
क्षीरहु मिठाइ लाडु सीरो पक्वान पूरी
चाँवर शक्कर मूग घृत करि चावसे॥
ऐसी विधि बहुत रसाल गुरुदेवजी कू
सुदर परोसे प्रीतिभाव के प्रभावसे।
जीमें श्रीहरिराम रामदास जू पाँन ढोरे
करे मनुहार भूरी अधिक उछाह से॥ १॥

दोहा।

यों नव दश दिन जावतों, आवन कह्यो अवास।
राखलिये अनुमोदसे, हटकरि रामदास॥ १॥

चौपाई।

स्वामी इकदिन वनमें आये। पूरव दिशि परवत नियराये॥
रामदास शिष साथे लागी। पंदरे बीस ओर वैरागी॥ १॥
गिरि समीप सबको बैठाये। स्वामी हाथ जहाँ मिटियाये॥
पुनि सो अटल वचन फरमायो। सब शिष हु जनके मनभायो॥ २॥
तुमरा लशकर यहा न मावे। अरु शिष बहुत लगेगा पावे॥
ताते यहा करो मुस्ताना। देश विदेशाँ रहे न छाना॥ ३॥
रामदास ऐसो तत जान्यो। सतगुरु वचन अटल करि मान्यो॥
स्वामी कह्यो भूमि जिन स्थानू। वाही ठौर कियो सहनानू॥ ४॥
पुनि स्वामी आसन को आया। कई दिवसला वहाँ रहाया॥
भूखे भाव सन्त भगवन्तू। औरों कारज करण अनन्तू॥ ५॥

दोहा।

रामदास निजदास का, सबही साव्या काज।
बहुत करी प्रतिपालना, याल गरीवनिवाज॥ १॥

चौपाई।

अब आवन की इच्छा धारी। सब सामग्री करी तयारी॥
रामदास बहु प्रीति चढ़ाई। तन मन धन ले भेट चढ़ाई॥ १॥
पहली भेट शिखा जो कीन्ही। सो स्वामी आगै धरदीन्ही॥
स्वामी कह्यो क्या न तुम राखी। अपण करी आनकर आखी॥ २॥

रामदास कह तन धन तेरा। मैं तो सदा चरण का चेरा॥
यों सेवा करि लाहा लीया। गुरु कों वहुत प्रसन्न जु कीया॥ ३॥
वहुत दूर पहुँचावण आए। करि प्रणाम पुनि भवन सिधाए॥
स्वामी शनैः शनैः मग माहीं। आये कक्कू गाँव जहाँ ही॥ ४॥
तहँ हरिदास वधावण आये। आय लगे स्वामी के पाये॥
करि अति प्रीति सदन पधराये। वहु भोजन ले भोग लगाये॥ ५॥
टैल करी अतिश्रद्धा सहितू। सेवग भया भेदसे रहितू॥
मग वासी चालण नहिं देवै। स्वामी कों वहुते मिल सेवै॥ ६॥
स्पर्शैं चरण प्रशंसा गावै। रामरूप सवके मन भावै॥
ये हैं कपिल महामुनि ज्ञानी। इनकी कृपा मोक्ष ह्वै प्रानी॥ ७॥

दोहा।

ऐसे उत्सव ग्रालके, ग्राम ग्राम में होत।
सवके उपजै भावना, दर्शन करन उद्योत॥ १॥

चौपाई।

स्वामी जहाँ जहाँ पद्धारै। तहाँ तहाँ महिमा विस्तारै॥
ये तो सन्त इहाँ के नाँई। अमर लोक से आए साँई॥ १॥
नारायणदास हजूरी संगा। ज्यों नन्दादि श्याम निजअंगा॥
पुनि हरिदेव जु शोभित ऐसे। दिव्यरूप सनकादिक जैसे॥ २॥
स्वामी अमृत वचन उचारै। जीवन के त्रय ताप विदारै॥
परमारथको पन्थ वतावै। जिन जिन कों हरिचरणाँ लावै॥ ३॥

दोहा।

साधु लच्छ भगवद कहे, ऐसे सन्त दयाल।
एक भवन की का कहों, त्रिभुवन करै निहाल॥ १॥

चौपाई।

रामत करते करत पयाना। सिंहस्थल आये अस्थाना॥
सुनि स्वामी आयां की वाजा। धाये जन दर्शन के काजा॥ १॥
पूछे समाचार पुनि सारा। स्वामी कहे सकल विस्तारा॥
जिन जिन ग्राम लिया विश्रामू। तिन तिनका जु वताया नामू॥ २॥
जेता दिन खेड़ापै रहिया। तेता भिन्न भिन्न करि कहिया॥
जहाँ जहाँ मिलिये हरि प्यारे। तहाँ तहाँ के नाम उचारे॥ ३॥

दोहा।

चोतीसैं पावन कियो, याल सु मरुधर देश।
रामदास के भावसे, दिया भक्ति उपदेश ॥ १ ॥
वरप सईके आदिले, इतने भये वदीत।
अब अगली वणन करा, हरि गुरु कृपा समीत ॥ २ ॥

चौपाई।

पुनि सो दिवस अष्ट दश जात। परचा भया जगत विख्यात ॥
चार पॉच परचे मे लगत। सो सुनि सुख पावै हरिभक्त ॥ १ ॥

सवैया।

है परचा जानी अति सुन्दर परचा भया मास इक माहिं।
हरि गुरु की अर्चा करि आपू लखिवेकी मेरी मति काहिं ॥
गावत ब्रह्मज्ञान दरशावै सुनता परम मोक्ष मिल जाहिं।
जो हिरदै निश्चै गहि राखै सो भवसागर आवै नाहिं ॥ १ ॥

चौपाई।

एक समय सब सिखा विचारी। मेलो करण सूँज विस्तारी ॥
सब जनपें दीन्हे समँचारू। ग्राम ग्राम हरिजनके द्वारू ॥ १ ॥
चैत्र सु मास कृष्णपप सातम्। तिथि ठहराई हरिजन जातम् ॥
मेदो घिरत शकरा लीन्ही। विविधि भाति सामग्री कीन्ही ॥ २ ॥
अचरज हुवो एक अति [illegible]री। लखि नहिं सकै कोउ तनधारी ॥
पदर दिन मे[illegible]के आगू। हरियानन्द कियो तनुत्यागू ॥ ३ ॥
नारायण आदिक [illegible] दासू। देखत ही जन भये उदासू ॥
जो मेलो आर[illegible] ऐसे। स्वामी विना होय अब कैसे ॥ ४ ॥
यों मिलि सकस करी जो करणा। स्वामी सुनी परमपद शरणा ॥
राखन तीस [illegible] [illegible] काया। हरिसे कौल करे यहँ आया ॥ ५ ॥
आय किय[illegible] परवेसू। मेट्यो सरको शोक अँदेसू ॥
ऐसे समरथ [illegible] दयालू। करुणामयीकरण प्रतिपालू ॥ ६ ॥

दोहा।

कारज क[illegible]वा कारणे, शरणायक रिछपाल।
कर वाचा करतार से, आए यहाँ दयाल ॥ १ ॥

चौपाई

सबहि प्रसन्न भये शिष शाषा। पुनि स्वामी पूरी अभिलाषा ॥
ज्यों सरजीत राम लघु बधू। ऐसे उर में भयो अनदू ॥ १ ॥

स्वामी बहुरि दिलासा दीन्ही । करुणा परम सकल पर कीन्ही ।
केती वस्तू पहिले आई । अरु चाही सो फेर मँगाई ॥ २ ॥
जलको समाधान सब कीयो । दे नाणो जु कवल करि लीयो ॥
सब सामान तयार करायो । जो चाहै सो वहाँ धरायो ॥ ३ ॥

दोहा ।

अष्ट सिद्धि नवनिद्धि रिधि, हाजर हुई सु आन ।
श्री स्वामी के भवन मध, सब विधि भरे समान ॥ १ ॥

सवैया ।

धाये सबै महोत्सव ऊपर जहँ जहँ पूगे समंचार ।
बाई भाई रामसनेही सब आये स्वामी के द्वार ॥
रामप्रताप कमी नहिं काई यहाँ धनेश तणा भंडार ।
मावै नहीं लोक पुरमाहीं ऐसो थटियो थाट अपार ॥ १ ॥
जलरो काम कठिन दरशायो साकट पलट्यो वचन गवार ।
प्यासाँ मरै तड़फड़ै मेळो बालक करै बारही बार ॥
द्वेषी लोक हँसी अति ठानै जानै नाहीं नाथ मुरार ।
ओरहु शिष्य चिन्त बहु आनै अब प्रभु कीजै कहा विचार ॥२॥
स्वामी के धीरज मन ऐसी धना जिसी हरिसे इकतार ।
सबकों कहै करो मति आतुर तृषित नहीं राखै करतार ॥
मोकों बडो भरोसो वाको नहिं चूकै अवसर निरधार ।
यों कहि द्याल बिराजे आश्रम निज शिप को वैठाये बार ॥ ३ ॥
हरी हरी करि खरी प्रीतिसे दोय घरी लगि करी पुकार ।
जब नभ चढी पवन इक बदली जाको बहुत भयो विस्तार ॥
वर्षण लगी सींहथल ऊपर धरणी एक अखंडी धार ।
ठंढ़ी भरत लोक अति धूजे मिटगी प्यास एक छिनवार ॥
तन मन प्राण द्याल पर वारै करै सकल मिल जैजैकार ॥ ४ ॥

दोहा ।

जल होवै तहँ थल करै, थल जहँ जल हुय जाय ।
हरि करता क्यों नहि हुवै, हरि हरिजन के भाय ॥ १ ॥

चौपाई ।

रामजनॉका रुपे निसाना । साकट जब है परे खिसाना ॥
सब पुर माहिं ऊपज्या भावू । आय लगे स्वामी के पावू ॥ १ ॥

दोहा ।

चोतीसै पावन कियो, थाल सु मरुधर देश ।
रामदास के भावसे, दिया भक्ति उपदेश ॥ १ ॥
वरष सईके आदिले, इतने भये वदीत ।
अब अगली वर्णन करों, हरि गुरु कृपा सप्रीत ॥ २ ॥

चौपाई ।

पुनि सो दिवस अष्ट दश जात । परचा भया जगत विख्यात ॥
चार पॉच परचे मे लगत । सो सुनि सुख पावे हरिभक्त ॥ १ ॥

सवैया ।

है परचा जानी अति सुन्दर परचा भया मास इक माहिं ।
हरि गुरु की अर्चा करि आपू लखिवेकी मेरी मति काहिं ॥
गावत ब्रह्मज्ञान दरशावे सुनता परम मोक्ष मिल जाहिं ।
जो हिरदै निश्चै गहि राखै सो भवसागर आवे नाहिं ॥ १ ॥

चौपाई ।

एक समय सब सिख्या विचारी । मेले करण सूंज विस्तारी ॥
सब जनपे दीन्हे समँचारू । ग्राम ग्राम हरिजनके द्वारू ॥ १ ॥
चैत्र सु मास कृष्णपक्ष सातम् । तिथि ठहराई हरिजन जातम् ॥
मेदो घिरत शकरा लीन्ही । विविधि भाति सामग्री कीन्ही ॥ २ ॥
अचरज हुयो एक अति [illegible]री । लखि नहि सकै कोउ तनधारी ॥
पदर दिन मेलाके आगू । हरियानन्द कियो तनुत्यागू ॥ ३ ॥
नारायण आदिक [illegible] दासू । देखत ही जन भये उदासू ॥
जो मेले आरम्भ ऐसे । स्वामी विना होय अब कैसे ॥ ४ ॥
यों मिलि सकल करी जो करणा । स्वामी सुनी परमपद शरणा ॥
राखन तीस [illegible] रसलों काया । हरिसे कोल करे यहँ आया ॥ ५ ॥
आय किय[illegible] परवेसू । मेट्यो सबको शोक अँदेसू ॥
ऐसे समरथ [illegible] दयालू । करुणामयीकरण प्रतिपालू ॥ ६ ॥

दोहा ।

कारज क[illegible]या कारणे, शरणायक रिछपाल ।
कर वाचा करतार से, आप यहाँ दयाल ॥ १ ॥

चौपाई

सबहि प्रसन्न भये दि[illegible] शापा । पुनि स्वामी पूरी अभिलापा ॥
ज्यों सरजीत राम लघु बधू । ऐसे उर में भयो अनन्दू ॥ १ ॥

स्वामी बहुरि दिलासा दीन्ही। करुणा परम सकल पर कीन्ही।
केती वस्तू पहिले आई। अरु चाही सो फेर मँगाई॥ २॥
जलको समाधान सव कीयो। दे नाणो जु कवल करि लीयो॥
सव सामान तयार करायो। जो चाहे सो वहाँ धरायो॥ ३॥

दोहा।

अष्ट सिद्धि नवनिद्धि रिधि, हाजर हुई सु आन।
थी स्वामी के भवन मध, सव विधि भरे समान॥ १॥

सवैया।

धाये सवै महोत्सव ऊपर जहँ जहँ पूगे समंचार।
वाई भाई रामसनेही सव आये स्वामी के द्वार॥
रामप्रताप कमी नहिं काई यहाँ धनेश तणा भंडार।
मावे नहीं लोक पुरमाहीं ऐसो थटियो थाट अपार॥ १॥
जलरो काम कठिन दरशायो साकट पलट्यो वचन गवार।
प्यासाँ मरै तड़फड़ै मेलो वालक करै वारही चार॥
द्वेपी लोक हँसी अति ठानै जानै नाहीं नाथ मुरार।
ओरहु शिप्य चिन्त वहु आनै अव प्रभु कीजै कहा विचार॥२॥
स्वामी के धीरज मन ऐसी धना जिसी हरिसे इकतार।
सवकों कहै करो मति आतुर तृपित नहीं राखै करतार॥
मोकों वडो भरोसो वाको नहिं चूकै अवसर निरधार।
यों कहि द्याल विराजे आश्रम निज शिप को वैठाये वार॥ ३॥
हरी हरी करि खरी प्रीतिसे दोय घरी लगि करी पुकार।
जव नभ चढी पवन इक वदली जाको वहुत भयो विस्तार॥
वर्पण लगी सींहथल ऊपर धरणी एक अखंडी धार।
ठंढी भरत लोक अति धूजै मिटगी प्यास एक छिनवार॥
तन मन प्राण द्याल पर वारै करै सकल सिल जैजैकार॥ ४॥

दोहा।

जल होवै तहँ थल करै, थल जहँ जल हुय जाय।
हरि करता क्यों नहि हुवै, हरि हरिजन के भाय॥ १॥

चौपाई।

रामजनाँका रूपे निसाना। साकट जव ह्वै परे खिसाना॥
सव पुर माहिं ऊपज्या भावू। आय लगे सामी के पावू॥ १॥

सबही स्तुती करण कौं लागे । अति आधीन होय अनुरागे ॥
हम तुमकों जाने नहिं स्वामी । चूक बगसिये अतरजामी ॥ २ ॥
स्वामी कहै चूक नहिं कोई । हरि सुमरो सबही सुख होई ॥
जैजैकार करे नर नारी । धिन धिन स्वामी गती तुम्हारी ॥ ३ ॥
पति समर्थ तुमरे बस सॉई । ताल तलाव छले छिन मॉई ।
स्वामीका इमि करत बखाना । करत सबै पालर जलपाना ॥ ४ ॥

दोहा ।

नाणा सारे नीरको, नट गयो वचन उचार ।
सो मुख महिमा उच्चरे, ऐसे सरजनहार ॥ १ ॥

चौपाई ।

पालर बहु तालते आवै । सब मेल्ये अतिही सुख पावै ॥
स्वामी पॉच दिनालों पोषे । बहु भोजन करिके सन्तोषे ॥ १ ॥
मन वाछित सो हाजर कीया । स्वामी सब कू आदर दीया ॥
जब प्रसन्न हुवे जनसारे । आज्ञा मॉगि चले पुनि द्वारे ॥ २ ॥
पन्थ पन्थ माहीं गुन गावै । स्वामि सरूप हृदयमें लावै ॥
पुनि अब आपसमें बतलावै । स्वामीकी गति लखी न जावै ॥ ३ ॥
ऐसे कहते सकल सिधाए । जेते जन उत्सवमें आए ॥
रामदास जब मॉगी आज्ञा । लागत जान गुरुकी आग्या ॥ ४ ॥
स्वामी कह्यो रहो तुम याहीं । इन कारण ठहरे जब नाहीं ॥
करि प्रणाम बहुत परकार । आये मरुधर देश मॅझार ॥ ५ ॥
पुनि स्वामी मन भयो उदासू । अब या नरलोकन के बासू ॥
चित्त लग्यो अमरापद माही । जहॅ जग जाल काल डर नाहीं ॥ ६ ॥
आतुर करे पारपद जोई । नन्द सुनन्द आदि ले सोइ ॥
स्वामी कह्यो रहो सुस्तावू । कौल कियो जबही मैं आवू ॥ ७ ॥
यों कहि सब वस्तु पहुँचावै । पाछा वेगा वेग बुलावै ।
पुनि सो चार पाच दिन मॉइ । जो जो आनी सो पहुॅचाई ॥ ८ ॥
सागी दिवस कोलको आयो । प्रातसमय स्वामी फरमायो ॥
परम लोककी सौंज मॅगाई । जब निश्चै सबको दरशाई ॥ ९ ॥
आगम तीन पहर पुनि सोइ । बात विख्यात जननमें होई ॥
श्रीदयालु वैकुठ पधारे । ऐसे सबही लोक उचारे ॥ १० ॥
जहँ जहँ पुरुष खबर हु पावै । तहँ तहॅके दरशनकों धावै ॥
यों सब हलक चोखलो आयो । बहुरि थाट मेलेको थायो ॥ ११ ॥
धाप और सन्त बहुतेरा । स्वामीके चरणों का चेरा ॥
दर्शणके कारण जू ऐसे । हरिकारण आये सुर जैसे ॥ १२ ॥

पुनि वैकुंठी आदि तयारी। सामग्री करवाई सारी॥
वीठू सकल चरण जू चंपै। स्वामीको तन मन धन अर्पै॥ १३॥
पुनि सो एम विलोके नैना। स्वामी एक कह्यो जू वैना॥
समाचार जीवनको देना। यहँ आवै इतनाही कहना॥ १४॥
एक कहंते उठिया दोई। ले आया निंज जनको सोई॥
ताकूं समंचार कछु कहियो। सो निजदास मान उर लहियो॥ १५॥
जीवनदास समुझि यह सैनूं। वदरी पास चले धरि वैनूं॥
स्वामी कह्यो वचन पुनि त्यूं ही। ढूंवो लाघ्यो ज्यूं को ज्यूं ही॥ १६॥

दोहा।

स्वामी मेले पहिलही ढूंवो कीन्हो ताहिं।
विखर्यो नाहिं जु असलमें, उन समाजके माहिं॥ १॥
ऐसा परचा अनंत है, जाका अन्त न पार।
गंगाराम इमि वीनवै, वरण्या मति अनुसार॥ २॥

चौपाई।

शिप ढूंवाके हाथ लगायो। लारै समंचार तव आयो॥
भगवत् ज्योंही कियो पयानो। देखत सवही लोक सयानो॥ १॥
आसण मार विराजे ऐसे। वल वलवीर विराजे जैसे॥
वैसेहि नैन मूंदि लिवलाई। सुरति ब्रह्म के माहिं समाई॥ २॥
आप स्वच्छंद देह तजि मानू। दशवे द्वार मिलाये प्रानू॥
सव ही भे अचरजयुत भाऊ। स्वामी की गति लखी न काऊ॥ ३॥
कछु इक लखी जासु के दासू। कवहु न रही तासुके प्यासू॥
महाप्रसाद नारायण पायो। तवही शव्द तिरकुटी आयो॥ ४॥

दोहा।

तत्क्षण लेत प्रसाद पुनि, साधु भये शिप सोय।
गंगाराम दयालु गति, लखी न जावै कोय॥ १॥

चौपाई।

पुनि वैकुंठ घड़्यो जो मोटो। माप्यो जवै वारणो छोटो।
कोई कहै दूसरो कीजै। यो वैकुंठ नहीं मावीजै॥ १॥
कोई कहै भींतकों तोड़ो। कोई कहै ढहावो मोड़ो॥
यों संकल्प करै मनमाहीं। वात तोलमें आवै नाहीं॥ २॥
जव वोल्यो वीदो सूथारू। है स्वामीकी गती अपारू॥
अटकै नही साच सव मानो। याको मत अंदेशो आनो॥ ३॥

कै तो होय नारणो चोडो । कै वेकुंठ हुयजावै सोडो ॥
यों कहि जब वेकुंठ उठायो । द्वार मॉह नाहीं अटकायो ॥ ४ ॥
उच्छव करत तहाँ चलि आये । दूवो कियो आप जिहि ठाये ॥
घृत कपूर समिधि सब लीन्ही । दाहकिया देहकी कीन्ही ॥ ५ ॥
चली सुगन्धि बहुतही सुन्दर । मोहे सुर मुनि सहित पुरन्दर ॥
बाल युवादिक ले नरनारी । सबके भाव ऊपज्यो भारी ॥ ६ ॥
आनि आनि घृत सींचन लागे । लेत सुधूम कर्म सब भागे ॥
जैसें पुरी अवन्ती माहीं । प्रेत सहस दश मोक्ष मिलाहीं ॥ ७ ॥
ऐसें सकल पवित्र हि भये । सहजे जन्म दोष मिटगये ॥
जब भसी शीतल जू होई । तब निजदास सँभाली सोई ॥ ८ ॥
साबित रहिया श्रीफल गान्टी । पॉच सात पटल्या जू लाधी ॥
परचा को कोइ पार न पावै । आदि अन्तलौं अगम लखावै ॥ ९ ॥

दोहा ।

पार लहै कुण बालको, अपरपार अनन्त ।
चिदानन्द जुगजुग महीं, सदा चिरंजिव सन्त ॥ १ ॥
यह परचे इन लोकके, सुने सु धरणे सोइ ।
गंगाराम अब कहत जन, सुरपुर उत्सव होइ ॥ २ ॥

छप्पय ।

सँवत अठारह जान बप पुनि शुभ पतीस ।
चैत्र शुक्र सप्तमा मिले परमातम ईस ॥
वार सु शुकर वार ध्यान तद् ब्रह्म सु धार्‍यो ।
आप सुछन्द शरीर पच भूतादि निवार्‍यो ॥
शरणाय सीव मेले सकल अनत सु जीव उधारिया ।
नरलोक वाल परित्याग तनु परम सु धाम पधारिया ॥ १ ॥

सोरठा ।

कर घन तडित प्रकाश, पुनि आकाश समाइ है ।
ऐसो होय उजास, सन्त मिले परब्रह्म में ॥ १ ॥

छन्द पद्धरी ।

ज्यों ज्योति ज्योति मिल एक होइ । जल लवन पूतरी भिन न कोइ ॥
यों मिले हरीजन ब्रह्म माहिं । भवजलमें आवै बहुरि नाहिं ॥ १ ॥

सोरठा ।

नमो नमो हरिराम, परम धाम हरिमें मिले ।
सग सदा इक स्याम, आदि मध्य अवसान में ॥ १ ॥

कहाँ लगि करौं वखानि, पार न पाऊं आपको।
बुधि मेरी तुछ वानि, सो उरहीमें थकि रही ॥ २ ॥

सवैया।

स्वामी श्रीदयालु की परची पावै पढ़त परम विश्राम।
मन तन दोष ताप मिट जावै सुनतां होय सकल सिध काम॥
करि विचार धारै उर निश्चै सो जन मिलै ब्रह्मके धाम।
शिष जैराम के उर विराजके भाखी गुरु श्रीगंगाराम ॥ १ ॥

सोरठा।

अक्षर घट वध होय, लीज्यो सकल सुधारिकें।
सर्वे सन्तजन सोय, विनती दास जैरामकी ॥ १ ॥
समत उनीसो जान, मिति अषाढ़ शुदि पंचमी।
वार वृहस्पति मान, परची संपूरण भई ॥ २ ॥

इति श्री परची सम्पूर्णम्।

अथ श्रीदयालुदासजी महाराज कृत ग्रन्थ प्रगटबोध।

दोहा।

प्रगट बोध तारण तरण, रामा राम अनाद।
गुरु प्रसाद सद्गति मिलै, प्रगट परायण साद ॥ १ ॥

चरण।

घट विच अघट प्रगट रट रमता, सत्त शब्द सुखदायक।
आगै अबै भया सँत जेता, सिद्ध शिरोमणि वायक ॥ १ ॥
लायक लगन कहै गुरु शिख रत, मति गति मूढ़ विचारं।
काष्ठ मथत प्रगट हुय अग्नी, यों आतम तत निरकारं ॥ २ ॥
सद्गुरु उक्ति युक्ति रस नेता, श्वासोच्छ्वास चलाया।
सूतर दोय रसण मिल आतम, भाव सभाव मिलाया ॥ ३ ॥
तब तत्काल प्रगट दरशाणा, एक अखंडित धारा।
अध मध उत्तम भया प्रकाशा, कारज करण हमारा ॥ ४ ॥
विरह प्रजल उर नीर सु सोख्या, शब्द प्रगट दरशाना।
धम धमकार टेर सुन मुरली, फुरक फुरक फुरकाना ॥ ५ ॥
पीत वदन श्वासा जु सिरानी, नागरवेल शरीरा।
प्रेम नीर बिन ऐसे सूकत, नख शिख विचै अधीरा ॥ ६ ॥

मधुरे वैन ण्वास शर घायल, अन्दर विरहनि तीरा।
आदि रु अन्त तल्ब तत सुमिरण, मन वच कर्म सधीरा ॥ ७ ॥
अबके मिलो परम परमानँद, जीवनप्राण अधारा।
निमल करण महा सुखसागर, विरहनि का भरतारा ॥ ८ ॥
ऊणत एक पिया भव भजन, रजन राम सनेही।
फीका लग्या सर्वे रस रसना, प्रेमा भई विदेही ॥ ९ ॥
लघु निद्रा आल्स मिट अगा, पथी पथ अबाढे।
धाय वधाइ देऊँ मुझ सॉई, हरिवृत साधत साधे ॥ १० ॥
इकदिन प्रगट अजब अति अचरज, कला अनेक सवाई।
गोला दग्या शब्द गैतुला, श्वास उश्वासा मॉई ॥ ११ ॥
ररर रोम थरर थरराट, नाभिकमल सुलटाणा।
नगर उछाह नारि तरु सरजल, जन्तर तार वजाणा ॥ १२ ॥
चार हजार नाडि घरनाभी, ररर शब्द रमाणा।
नख शिख विचै एक ध्वनि रमता, मनवा पवन मिलाणा ॥ १३ ॥
लेजु सधीर भया ध्वनि डका, गगन नाद घरराणा।
आतम भया साध घर परचा, चरचा राम ठिकाणा ॥ १४ ॥
कै दिन रह्या नाभि घर माहीं, इकदिन करण पयाणा।
मन अरु पवन मिले लिव प्रेमा सुरति शब्द दरसाणा ॥ १५ ॥
भिन भिन भेद लह्या घर निश्चय, आतम तत्त्व प्रकाशा।
छेदत इला सप्त पाताळूं उलटा पलट तमाशा ॥ १६ ॥
परा समीप शब्द गत रेला, रसिया सप्त पताळू।
पूरब उलटि पछिम दिशि आया, चढ उरधा वॅकनाळू ॥ १७ ॥
अमृतधार वक झर झरणा, नाद विन्दु इक होई।
शब्द वेग पर्पा विन उडणा, जाणेगा जन कोई ॥ १८ ॥
लया माग अचभा भारी, श्वास वेग ततकाळू।
प्रकट इकीस् मणिया छेद्या, सुरति शब्द उजवाळू ॥ १९ ॥
पगा चढ्या मेरु की घाटी, सब वैराट उँचाया।
पाँचां प्राण सुई के नाके, सूधे रस्ते लाया ॥ २० ॥
सब ले उड्या गगनके माहीं, अद्भुत प्रगट अनन्दा।
इन्द्र आदि अष्ट सुर आतक, नमस्कार कह वन्दा ॥ २१ ॥
गूगा वायक अविरल बोल्या, राग अनेक उचारू।
गगन घोर वाजा तहँ बनता, कहिये कौन विचारू ॥ २२ ॥
चारे मेघ लगी झड वरषा, नीर विना सर भरिया।
वरषी धरणि गगन हुय सरजल, परम पन्थ जन परिया ॥ २३ ॥

दशमें द्वार चढ़्या अवधूता, जरा न झंपे कालू ।
जोगी नमो अजोनी अणभँग, राम शब्द मतवालू ॥ २४ ॥
गंगा तीन सिली तट त्रिकुटी, तीर्थ सबै शिरताजू ।
निर्मल न्हाय मिट्या दुख जन्मा, सरिया सब सिध काजू ॥ २५ ॥
बहुर्‌यों जगत जन्म नहिं धरणा, ऐसा करणा स्नानं ।
अनुभव परा पाठ जन उचरत, आतम अद्भुत ज्ञानं ॥ २६ ॥
परगट शब्द सदा जन केरा, पहुँता साख सदाई ।
आगे अबै होयगा अबही, त्रिकुटी तख्त समाई ॥ २७ ॥
मुद्रा पंच सधे अवधूता, ज्ञान भँडार खुलाणा ।
विछुर्‌या जहाँ उलटिके आसन, सहजाँ आन मिलाणा ॥ २८ ॥
प्रगट श्रवण रसन चख नासा, गावाँ शब्द लुभाणा ।
देखन रूप भये सब निर्मल, दश दरवान मिलाणा ॥ २९ ॥
किल्लादार चारों चित चोखै, पाँचों पंच हटाणा ।
सहजाँ सिल्या शब्दके घोरै, उन्मनि ध्यान धराणा ॥ ३० ॥
परमानन्द महा सुख पूरण, ध्यान अखंडित धारं ।
झीनमें झीन तारमें तारी, सुषमण सुक्ख अपारं ॥ ३१ ॥
निश्चल चित्त गरक गुण तीनों, त्रिगुणी मायात्यागी ।
बेहद सिल्या तजी हद रचना, परम पुरुष वैरागी ॥ ३२ ॥
बेहद वास विदेही निर्भय, अपना कारज कीया ।
बन्धन तोड़ भया निर्बन्धन, परम तत्त्व सुख लीया ॥ ३३ ॥
सहजाँ सुरति शब्द का मेला, सुन पर तख्त विराजै ।
आसण अधर अनूप अवासा, लेजु अखंडित साजै ॥ ३४ ॥
जोत उद्योत अनेक प्रकाशा, सूर अनेक छिपाणा ।
बारै कला सिली थिर सोलै, शीतल लहर समाणा ॥ ३५ ॥
सूत्र भेद रह्या नहिं कोई, सुरता परख विचारी ।
सुषमण सीप अटलपद मुक्ता, कण कारण गुण जारी ॥ ३६ ॥
सरवर शून्य हंस पर हंसा, ब्रह्म वृक्ष पर थिरता ।
निज कण नाम चुगै नित मुक्ता, कदू काल नहिं खिरता ॥ ३७ ॥
अवर्ण कहा वर्ण मे आवै, वृक्ष अनादि अगाधं ।
भक्ति विचार दोय अँक चढ़णा, मुक्ति महाफल आदं ॥ ३८ ॥
मीठा कहों तो बले न कोई, हरिया उन सम बोई ।
दीठा जिके सर्व परिपूरण, सरिया कारज सोई ॥ ३९ ॥
छाया तासु रच्यो ब्रह्मंडा, सचराचर सब जीवं ।
मंडप मंड अमंडी सोई, एक अखंडी सीवं ॥ ४० ॥

मधुरे वैन श्वास शर घायल, अन्दर विरहनि तीरा ।
आदि रु अन्त तलब तत सुमिरण, मन वच कर्म सधीरा ॥ ७ ॥
अबके मिलौं परम परमानँद, जीवनप्राण अधारा ।
निर्मल करण महा सुखसागर, विरहनि का भरतारा ॥ ८ ॥
ऊणत एक पिया भव भजन, रजन राम सनेही ।
फीका लग्या सर्व रस रसना, प्रेमा भई विदेही ॥ ९ ॥
लघु निद्रा आलस मिट अगा, पथी पथ अवादै ।
धाय वधाइ देऊँ मुझ साई, हरिवृत साधन साधे ॥ १० ॥
इकदिन प्रगट अजब अति अचरज, कला अनेक सवाई ।
गोला दुग्या शब्द गैतूला, श्वास उश्वासा मॉइ ॥ ११ ॥
ररंरर रोम थरर थरराट, नाभिकमळ सुलटाणा ।
नगर उछाह नारि तरु सरजल, जन्तर तार वजाणा ॥ १२ ॥
चार हजार नाडि घरनाभी, ररंरर शब्द रमाणा ।
नख शिख विचै एक ध्वनि रमता, मनवा पवन मिलाणा ॥ १३ ॥
लेजु सधीर भया ध्वनि डका, गगन नाद घररणा ।
आतम भया साध घर परचा, चरचा राम ठिकाणा ॥ १४ ॥
कै दिन रह्या नाभि घर माहीं, इकदिन करण पयाणा ।
मन अरु पवन मिले लिव प्रेमा सुरति शब्द दरसाणा ॥ १५ ॥
भिन भिन भेद लह्या घर निश्चय, आतम तत्त्व प्रकाशा ।
छेदत इला सत्त पातालूं उलटा पल्ट तमाशा ॥ १६ ॥
परा समीप शब्द गत रेला, रसिया सत्त पतालू ।
पूरब उलटि पछिम दिशि आया, चढ उरधा वॅकनालू ॥ १७ ॥
अमृतधार वक झर झरणा, नाद विन्दु इक होइ ।
शब्द वेग पखाँ विन उडणा, जाणेगा जन कोइ ॥ १८ ॥
लया माग अचभा भारी, श्वास वेग ततकालू ।
प्रकट इकीसू मणिया छेद्या, सुरति शब्द उजवालू ॥ १९ ॥
पगा चढ्या मेरु की घाटी, सब वैराट उँचाया ।
पॉचों प्राण सुइ के नाके, सूधे रस्ते लाया ॥ २० ॥
सब ले उड्या गगनके माहीं, अद्भुत प्रगट अनन्दा ।
इन्द्र आदि अष्ट सुर जातक, नमस्कार कह वन्दा ॥ २१ ॥
गूगा वायक अविरल बोल्या, राग अनेक उचारू ।
गगन घोर बाजा तहँ अनता, कहिये कौन विचारू ॥ २२ ॥
वारे मेघ लगी झड वरपा, नीर विना सर भरिया ।
वरषी धरणि गगन हुय सरजळ, परम पन्थ जन परिया ॥ २३ ॥

दशमें द्वार चढ्या अवधूता, जरा न झंपै कालू ।
जोगी नमो अजोनी अणभंग, राम शब्द मतवालू ॥ २४ ॥
गंगा तीन मिली तट त्रिकुटी, तीर्थ सबै शिरताजू ।
निर्मल न्हाय मिट्या दुख जन्मा, सरिया सब सिध काजू ॥ २५ ॥
बहुर्‌यों जगत जन्म नहिं धरणा, ऐसा करणा स्नानं ।
अनुभव परा पाठ जन उचरत, आतम अद्भुत ज्ञानं ॥ २६ ॥
परगट शब्द सदा जन केरा, पहुँता साख सदाई ।
आगे अवै होयगा अवही, त्रिकुटी तख्त समाई ॥ २७ ॥
मुद्रा पंच सधे अवधूता, ज्ञान भँडार खुलाणा ।
विछुर्‌या जहाँ उलटिके आसन, सहजाँ आन मिलाणा ॥ २८ ॥
प्रगट श्रवण रसन चख नासा, गावाँ शब्द लुभाणा ।
देखन रूप भये सब निर्मल, दश दरवान मिलाणा ॥ २९ ॥
किल्लादार चारों चित चोखै, पाँचों पंच हटाणा ।
सहजाँ मिल्या शब्दके धोरै, उन्मनि ध्यान धराणा ॥ ३० ॥
परमानन्द महा सुख पूरण, ध्यान अखंडित धारं ।
झीनमें झीन तारमें तारी, सुषमण सुक्ख अपारं ॥ ३१ ॥
निश्चल चित्त गरक गुण तीनों, त्रिगुणी मायात्यागी ।
बेहद मिल्या तजी हद रचना, परम पुरुष वैरागी ॥ ३२ ॥
बेहद वास विदेही निर्भय, अपना कारज कीया ।
बन्धन तोड़ भया निर्बन्धन, परम तत्त्व सुख लीया ॥ ३३ ॥
सहजाँ सुरति शब्द का मेला, सुन पर तख्त विराजै ।
आसण अधर अनूप अवासा, लेजु अखंडित साजै ॥ ३४ ॥
जोत उद्योत अनेक प्रकाशा, सूर अनेक छिपाणा ।
चारै कला मिली थिर सोलै, शीतल लहर समाणा ॥ ३५ ॥
सूत्र भेद रह्या नहिं कोई, सुरता परख विचारी ।
सुषमण सीप अटलपद मुक्ता, कण कारण गुण जारी ॥ ३६ ॥
सरवर शून्य हंस पर हंसा, ब्रह्म वृक्ष पर थिरता ।
निज कण नाम चुगै नित मुक्ता, कदू काल नहिं खिरता ॥ ३७ ॥
अवर्ण कहा वर्ण में आवै, वृक्ष अनादि अगाधं ।
भक्ति विचार दोय अंक चढ़णा, मुक्ति महाफल [illegible] ॥
मीठा कहों तो वले न कोई, हरिया
दीठा जिके सर्व परिपूरण,
छाया तासु रच्यो ब्रह्मंडा
मंडप मंड अमंडी सोरे

ब्रह्म अधार पुरुषतें प्रकृति, महततते हंकारा।
तम रज सत्व उपज गुण तीनों, पंच तत्त्व विस्तारा ॥ ४१ ॥
प्रथम अकाश वायुते तेज, जल मॅझ अंड पकाया।
ता मॅझ विष्णु नाभि कॅज ब्रह्मा, विधिते शंभु उपाया ॥ ४२ ॥
छाया प्रबल होत इमि सृष्ट, माया अपरम पारा।
चारप्रकार फिरत सो प्रलय, जग वधाण उद्धारा ॥ ४३ ॥
घटिका एक चार युग ब्रह्मा, कहत चौकडी एही।
यहतर गयॉं शक्र हुय ऊमर, चवदे इन्द्र दिनेही ॥ ४४ ॥
चार हजार जात युग जिनमें, ब्रह्मा दिवस कहीजे।
सुर शत साठ गयॉं हुय सम्वत, शत वष आयु लहीजे ॥ ४५ ॥
क्रोड पॅतीस उपज अवतारा, आयु पद्मसुत मॉंई।
अयुत सहस्र उपज आतमभू, घटिका विष्णु कहाई ॥ ४६ ॥
द्वादश लाख विष्णु हुय जावत, शंभु अधघटि जानो।
पाँच हजार चले जब ईश्वर, माया रंग रॅगानो ॥ ४७ ॥
नित्य नैमित्तिक लय आत्यन्तिक, छाया हद या ताँई।
शक्ति शृंगार तहॉं नवयौवन, आप आप विल्सॉंई ॥ ४८ ॥
माया लाख अनेक अनेक, ब्रह्म उन्मेष अगाध।
तुकियक ध्यान मध्य यह रचना, नमो अगम गति आद ॥ ४९ ॥
यौर न छौर अकथ कुन कथता, कहा किणीसे जावै।
आदि न अन्त मध्य नहिं जाकी, साक्षी सन्त बतावै ॥ ५० ॥
रूप न रेख अरंग अजोनी, चढिया तिके अडकी।
सागर लीन पूतली गति ता, वरणत कौन असकी ॥ ५१ ॥
अपरम अतुल ब्रह्म पर परम, इस जु वृक्ष बतायो।
नामी नहीं नाम कहॉं ठाहर, रमता राम रमायो ॥ ५२ ॥
गहरा अगम निगम तत निर्णय, पारख जनॉं सदाई।
सबका सार भेद तत आतम, परमहॅंस दिखलाई ॥ ५३ ॥
दर्पण वदन कहै चख नामी, यों जन शब्द प्रकासा।
सूर उद्योत परख मिट रजनी, सजनी कमल हुलासा ॥ ५४ ॥
चन्द उदय शीतलता परगट, तरुण उदय ज्यों मदनस।
माया उदय रजोगुण परगट, राम उदय मिट कलमस ॥ ५५ ॥
भोजन परख कहै घट परगट, लक्ष्मी वदन दिखावै।
दग विच हेत वचनमें ब्रह्म, दुख तनु नाक लखावै ॥ ५६ ॥
पारख कपट वदन कह परगट, देश परख मुख भासा।
संस्कृत रसना पथ सूत्र, भाव दिखावै दासा ॥ ५७ ॥

सजन परख विप्र विच बेली, कुलवन्ती कुल लाजा ।
धर्माध्यक्ष दुभख में दूणा, परमारथ हित जाजा ॥ ५८ ॥
सूरा खाग सती जल देही, आसत सिद्धि सदाई ।
परख सभाव दिना केइ रहता, गरवा रीस न काई ॥ ५९ ॥
वनिता समय शील की पारख, परगट साख शिरोमन ।
अपनी कला दिखावत आपे, जानत सबै मनोमन ॥ ६० ॥
साद अनादि सिल्यॉ का निश्चय, परचै शब्द सतोलौं ।
निर्गुणसार वज्र अणअक्षर, अपरमपार अतोलौ ॥ ६१ ॥
बीजक सिद्ध मोक्षको मारग, परगट जनॉ सदाई ।
नमस्कार ऐसा ततवेता, भूल न परत कदाई ॥ ६२ ॥
जूनो द्रव्य देख अँक पावत, पिता आथ खत साखं ।
गुरु प्रसाद साध घट निर्णय, सत्तशब्द मुख भाखं ॥ ६३ ॥
चार प्रकार प्रगट धुर बानी, ताका भेद बताऊँ ।
अर्थ माहिं सबको परिपूरण, गरथॉ पार न पाऊँ ॥ ६४ ॥
परगट सदा साध घरहासिल, दोय अंक सत विद्या ।
प्रथमहि गुरू पढ़ाया हमको, श्वास श्वास पर सिद्धा ॥ ६५ ॥
जिनका दास पास नित चरणॉ, मन वच सुरति हमारी ।
अनुभव वाच साच उर आतम, परमपुरुपसे यारी ॥ ६६ ॥
खानाजाद गुलाम गुलामी, नितप्रति एकण धारा ।
भूँडा भला रावरा चाकर, घर जाया प्रतिपारा ॥ ६७ ॥
करुणा भाव वीनती दासा, आदि अन्त इक अंगा ।
समता लियां सर्व सुखदायक, निश्चल चित मन चंगा ॥ ६८ ॥
करता राम नहीं मैं करता, सदा दीनता माँई ।
अकरणकरण उधारण समरथ, चरण शरण जन साँई ॥ ६९ ॥
इन आशय वायक ब्रह्मवाणी, दास शिरोमणि सारं ।
बोध अनेक प्रगट चख आतम, अरस परस दीदारं ॥ ७० ॥
प्रथम जगत ते भयो उदासा, माया भर्म अनेका ।
स्वप्न जंजाल तजौं कुलकर्मा, भजौं शुद्ध मन एका ॥ ७१ ॥
प्रथम पकर मन गुरुगम धारण, सत्संगति घर मॉई ।
ज्ञान खड्ग पासी मोह वाढ़त, निर्भय खाग वजाई ॥ ७२ ॥
सदा निशंक रहै निर्दावे, बन्धन ते निरवाला ।
केवल मंत्र जपै उर आनंद, राम शब्द मतवाला ॥ ७३ ॥
अन्तःकरण वासना त्यागी, शान्ती वन मँझ रहता ।
वस्ती क्रोध कदे नहिं जावै, सत भिक्षा सत लहता ॥ ७४ ॥

उन्मनि मुद्रा गुफा शिरोमणि, सुरति शब्द का मेला।
ध्यान समाधि अखंडित धारण, अष्ट जाम इकवेला ॥ ७५ ॥
गुणातीत नमो अणभंगी, घृत छिपे नहिं भोजन।
केवल भया लह्या पद आनँद, ऐसे कहिये सो जन ॥ ७६ ॥
त्यागी नाम सदा वैरागी, जिनको वन्दन मेरी।
आशा तृष्णा अह कल्पना, जीति लई गोचेरी ॥ ७७ ॥
ब्रह्म प्रकाश गिरा इन आशय, यही उदासा वाणी।
प्रपच ज्ञान करै सब खंडन, पूरा गति सहनाणी ॥ ७८ ॥
उर वैराट रूप भगवान, ता बिच सबै समाहीं।
समच गिरा अजोनी आनँद, राम बिना कछु नाहीं ॥ ७९ ॥
स्थावर जंगम सूक्ष्म स्थूला, सचराचर अविनासी।
जल स्थल धरणि पवन आकाशा, परगट तेज निवासी ॥ ८० ॥
ब्रह्माआदि कीटपयंता, चींटी गज इकसार।
सब भरपूर अन्तगतजामी, रमता राम हमार ॥ ८१ ॥
घर वन देश कहा परदेशों, स्वर्ग मृत्यु पाताल।
राम इच्छा विचरत आनन्दी, जरा न झपै काल ॥ ८२ ॥
कुणसा भूत प्रेत छल भयता, कुण मारत कुण द्रोहा।
सब घट जीव आपसा आपे, निदावे गत सोहा ॥ ८३ ॥
जनहु तन्त्र मूठ नहि माया, नवग्रह तिथि नहि वारा।
नक्षत्र योग लग्नघुल वेला, कुण महुरत अनुसारा ॥ ८४ ॥
तीनों ताप जल्ण नहिं पावे, आधि व्याधितैं न्यारा।
चन्दन नमो निकन्दन साधू, मोहा प्रीतम प्यारा ॥ ८५ ॥
समभ भया लह्या पद ऐसा, अब सुदवह सिधकारण।
मैं हों आदि अंत मध जैसा, स्थिर आकाश अपारण ॥ ८६ ॥
प्रथम प्रागभाव परमातम, अन्योभन्य स जीवा।
प्रकट करण इच्छा भइ मेरी, पुरुष प्रकृतिकी सींवा ॥ ८७ ॥
सब विध्वंस काल गति करता, प्रगत्या जेथ मिलाणा।
तत मिल तत्व परम परमातम, एकाएक ठिकाणा ॥ ८८ ॥
सो आत्यंतिकभाव कही जैं, अक्षय ब्रह्म निकारा।
ता मिलिवै मारग है अक्षर, सहज शब्द विचारा ॥ ८९ ॥
अव्यय धाम राम जन रमता, हम तारण हम तरण।
पोषण भरण सबवें स्हायक, कारण अकारण करण ॥ ९० ॥
अनुभव आप जु सुदवह स्वामी, इन परकार कहीजैं।
साधु अगाध नमो गति समरथ, ता चरणाँ मन रहिजे ॥ ९१ ॥

के जन दास उदास संभवी, के खुदवह की धारा।
प्रगट बोध सर्वको मारग, राम शब्द ततसारा ॥ ९२ ॥
चार खानि प्रगटे जिव सबही, ताकी वानी चारौं।
चार पदारथ सिध परमारथ, चत गत मुक्ति मिलारौं ॥ ९३ ॥
चार अवस्था आतम उपजत, ज्ञान दृष्टि परकासी।
शुभ जु क्रिया जन सेव सदाई, एकाएक उपासी ॥ ९४ ॥
द्वितिये उपज विरह उर मेले, तृतिये त्रिभुवन मोह्या।
चतुर्थ अरस परस मिल खेलूं, सुरता नैंन संजोया ॥ ९५ ॥
तत्पर सुक्ख छक्या तद बोल्या, अनुभव शब्द रसालूँ।
ज्ञान प्रकाश अंग गलताना, एकसे एक विशालूँ ॥ ९६ ॥
जीव अंकूर भक्त उर अवनी, उदय भया तत्कालूँ।
दुइ दल खुले अक्षर दुइ आदू, वरषा प्रेम विचालूँ ॥ ९७ ॥
सद्गुरु ज्ञान घटा घन वरषत, भक्ति वृक्ष गरजाणा।
तत रत पेड मूल अविनाशी, वाणी डाल बँधाणा ॥ ९८ ॥
ता मध अंग प्रगट उपशाखा, वडनामी विस्तारा।
उपमेय नहीं उपमा कैसी, कहिहौं कछु अनुसारा ॥ ९९ ॥
"नमस्कार"[१] "गुरुदेव"[२] सदाई, जिव सद्गति "गुरुपारख"[३]।
"गुरुवन्दन"[४] "गुरुधर्म"[५] सनातन, चरण शरण भव तारक॥१००॥
"सुमरणअंग"[६] "सार (इक) सुमरण", सुमरण चार प्रकारा।
"अकल"[८] एक अविगत को चीन्है, यह "उपदेश" सदारा ॥१०१॥
ताहि प्रसाद "विरह" उर उपजत, पाऊँ प्रीतम प्यारा।
अटपट बैन श्वास शर घायल, दरशण दो करतारा ॥ १०२ ॥
"ज्ञानसंजोगविरह"[११] नव जोवन, अग्नी सिन्धु जलाया।
मच्छी उडी अकाशां माहीं, आतम "परचा"[१२] पाया ॥ १०३ ॥
"परचैसूर"[१३] यारि तव लागी, यह साधारण कीजै।
सोंज समेत ज्ञान असवारी, मिल अपना सुख लीजै ॥ १०४ ॥
अम्मर पीव परश "पिवपरचै"[१४], परमानन्द सँगाती।
यह है "रस"[१५] सर्व्वे ते मीठा, पीयाँ ताप न ताती ॥ १०५ ॥
ताको "लोभ"[१६] सदाई कीजै, तत कमँडलु भर नीरं।
पीपी अधप तलव के धोरे, श्वासोच्छ्वास अधीरं ॥ १०६ ॥
हरि विन सर्व भया "हैरांना", पढ़ि पढ़ि झकत कीताना।
आन उपाय करी सो भूला, वे सव जान अजाना ॥ १०७ ॥
"हैरतंअंग"[१८] वूँद विच गागर, सागर वूँद समावै।
"जरणा"[१९] धार पार पुरुपोत्तम, भाव पदारथ पावै ॥ १०८ ॥

पाया तिकाँ वहाँ "लिव" लागी, परमपद गलताना।
पाँचों तीन मन नहिं डोले, यह "पतिवृत" का वाना ॥ १०९ ॥
चेत 'चेतावनि" चितके माहीं बरिया स्वप्न जँजाला।
"मनमंजन"भर्म सकल अघ मेटण, 'मनमृतक" जु गुण गाला॥११०॥
मन वृति त्याग वासना त्यागी, तन पर झूठ बँधाणा।
"सूक्ष्ममारग" सन्तका चलना, दास सपूत मँडाणा ॥ १११ ॥
"स्वर्गमाग" विकट गति चलना, विचमें विघ्न अनेका।
"माया' तीन प्रकार विलूधा, डाकण भखण विसेका ॥ ११२ ॥
देखत तजे झीन सब खावे, "मान" सबल घट माइ।
"चाणकथग" एक मिन फोकट, भूल परे सुन जाँई ॥ ११३ ॥
कहिहाँ कहा सन्त सब साक्षी, "कामीनर" जु ठगाणा।
तिरिया रूप वायणी जानो, मदनों घाव यचाणा ॥ ११४ ॥
"सहेन(हि)सुरूख" रामके शरणे, "साच" वाच नहिं डरणा।
कचन हाथ काच करि काने, साचा पार उतरणा ॥ ११५ ॥
भ्रम जुजाल जगत उलझाणो, हाथाँ मड पुजावे।
"भ्रमविध्वसनअग" जनेश्वर, एक अखडी ध्यावे ॥ ११६ ॥
के तन "भेख" धारि भूलाणा, भला "कुसग" न होइ।
गगा नीर सिन्धु मघ मेला, छोत मिटै नहि कोई ॥ ११७ ॥
तेल "सुसग ' इत्र दरशाणा, नींव चन्दन के सगा।
भीतर मिया विना सब झूटा, वाँदा गठ नहिं रगा ॥ ११८ ॥
ऐसे रहा "असाधु" अचेतन, वायस गिरा न कीर।
उलू कहा सूर सुख पावत, शठ अज्ञान अधीर ॥ ११९ ॥
"साधु" सदा सबका सुखदायक, मन वच भ्रम इकधारा।
हसा चुगे नाम निजमोती, निपख रह्व ससारा ॥ १२० ॥
"देखादेखि" करै नहिं कबहू, कुल मारग को त्यागे।
कीडी नाल जान जग उट्र सु जन जग पखे न लागै ॥ १२१ ॥
जग जन अग एक नहिं कबहू, अनड पक्षि गति जैसी।
पाला देख देख जल मोती, विनस स्थिर गुण रैसी ॥ १२२ ॥
"साधूसाक्षीभूत" सदाइ, गुणा अतीत अखडा।
सागर सीप रहै विन आशय, मुक्ता उर्ध्व समडा ॥ १२३ ॥
ता उपमा वणन कहा गाऊ, "साधु (कि) महिमा" भारी।
रामहि राम और नहिं सर भर, इन्द्र जु आदि चिकारी ॥ १२४॥
मध सत गहा विना सब खमा, "मध्यअग" जन रत्ता।
यह है "ज्ञानविचार" सनातन, गावै सन्त अनन्ता ॥ १२५ ॥

"सारग्राही"[४४] हंस जनेश्वर, पय पानी निरवाला ।
माया ब्रह्म करै उर निर्णय, ततदर्शी मतवाला ॥ १२६ ॥
"पिउपहिचान"[४५] लिया घट भीतर, बाहिर कौन मनावै ।
जोत उद्योत सर्वज्ञ अगोचर, पूरण ब्रह्म धियावै ॥ १२७ ॥
यह "विश्वास"[४६] पूर हरि आशा, मन वच कर्म सदाई ।
पोषण भरण सर्व प्रतिपालन, भूलै नाहिं कदाई ॥ १२८ ॥
चिन्ता मेटि धरो उर "धीरज"[४७] हरि है पार उतारण ।
"विरक्तअंग"[४८] सारकी चोटॉ, नटणी वरत विचारण ॥ १२९ ॥
गर्व निवार अगमगति अविगत, "समर्थ"[४९] करै स होई ।
तृण ते वज्र वज्र ते तृण सम, नाच नचावै सोई ॥ १३० ॥
हर्ष रु शोक मिथ्या भव संशय, "शून्यसरोवर"[५०] न्हाया ।
जन्म रु मर्ण गया किण दिशिनें, अक्षर मंझ समाया ॥ १३१ ॥
"प्रेम"[५१] प्रवाह भया गलताना, "कुशब्द"[५२] लखै न कोई ।
अजरा जरै कौन है शत्रू, मेरा मंझ स कोई ॥ १३२ ॥
"शब्द"[५३] स तीर भया मन घायल, जानै बाहन हारा ।
ताकी बाज गगन मग निकसी, अनहद शब्द अपारा ॥ १३३ ॥
"कर्म"[५४] अनेक मिथ्या जन केरा, पाप पुण्य सब जाना ।
"कौल"[५५] जाल ते भया निदावै, ब्रह्म समॅद सुख माना ॥ १३४ ॥
"मच्छी"[५६] नीर लह्या चित निर्मल, अघट अमर सुख पाया ।
ऐसी प्रीति बहुरि नहिं बिछुरत, कीर न जाल बधाया ॥ १३५ ॥
सही "संजीवन"[५७] यही ज औषधि, "चितकपटी"[५८] कहा जानै ।
मनतें मोट तनॉ पर उज्वल, विद्रुम चोर समानै ॥ १३६ ॥
परगट जान असल यह कमसल, मन वच कर्म बुहारौं ।
सत्य असत्य कहो कद पकै, कुन्दन तुस्स निकारौं ॥ १३७ ॥
"गुरुशिखअंग"[५९] मिलै जद महरम, ओतप्रोत दरसाणा ।
बूझै ब्रह्म परम करदेवै, आतम तत्त्व ठिकाणा ॥ १३८ ॥
योही "हेतप्रीत"[६०]सत जानो, दूरापन उरमाहीं ।
गुडनी डौर सुरति के धोरै, मेरा मुझ्झ मिलाहीं ॥ १३९ ॥
"सूरा"[६१] होय खाग सत सुमरण, मन दुर बात हटाणा ।
"जीवतमृतक"[६२]हुया सोपाया, अधरा अमर मिलाणा ॥ १४० ॥
"मांसअहारी"[६३] सोकह जानै, गोजर श्वान भुलाना ।
हीरो जन्म "अपारख"[६४] खोयो, कोडी हाथ विकाना ॥ १४१ ॥
"पारख"[६५]परी जिकॉ शुधि पाई, द्रव्य हमारा येही ।
अन्तर परख शिके इकधारा, हीर अमोलक लेही ॥ १४२ ॥

"अँानदेव" को कदे न मानै, आदरी सन्त हमारा।
सो तो मिल्या ब्रह्मसुखसम्पति, भूला जिके गॅवारा ॥ १४३ ॥
ऊचा नीच इसी विधि कहिये, अष्ट अग नहिं भेदा।
बिन हरिभक्ति नीचसे नीचा, श्रेष्ठ भक्ति कहवेदा ॥ १४४ ॥
"निन्दा" नही साच कह साधू, आतम अर्थ विचारो।
हितरी वात सकल सुखदायक, अवगुण मिथ्या उधारो ॥१४५॥
तृण तुसार निंदे नहि साधू, रार दुसार दुखावै।
"दयानिर्वैरता" आपे माही, सब की पीर मिटावै ॥ १४६ ॥
"सुन्दर"सार करो अविनाशी, तुम बिन कौन छुडावै।
एक अधार अजोनी आनॅद, सायद सन्त बतावै ॥ १४७ ॥
'उपजनअग" इहै यह उपजत, माग विदेश पयाणा।
षोड शृगार तज्या सुर पावै, आतम तत्त्व ठिकाणा ॥ १४८ ॥
नांका नाम तिरो भवसागर, उपजन अग सदाई।
"कस्तूर्यौमृग" ज्यों मत भूलो, भ्रमत मुआ दुखदाइ ॥ १४९ ॥
जानै नही "निगुण" शठ दुमति, पर्वत सुधा सिलाणा।
कोटि प्रकार कहो सुख आतम, मनमुख अध वॅधाणा ॥ १५० ॥
हरि परताप जिकां गति ऐसी, सदा "दीनता" माई।
म सो नीच नीचसे नीचा, पतित उधारण साँई ॥ १५१ ॥
यह "तनमालाअग" धारणा, किनकों दोष बताऊं।
हिन्दू तुरक कहा षटदर्शण, परके दिशा न जाऊँ ॥ १५२ ॥
निपष एक निजानंद आनॅद, हरि गलतान दिवाना।
"मेला" श्वास उश्वास सुमरणा, अजपा जाप समाना ॥ १५३ ॥
"कडवीवेलि" जान जग तॉता, तृष्णा आदा पसारा।
जोगी जती सिद्ध कहा तपसी, फल तरबूज विचारा ॥ १५४ ॥
उदय अक्रूर आदि सम कडवा खिर अरु अवनि सिलाणा।
लकडी लगी जली जद वेली, मूल गयाँ फल खाणा ॥ १५५ ॥
"वेलि" अनादि साच घर माहीं, "वेहद" जाय समाणा।
तीन प्रकार तजी हद रचना, अपरम परम कहाणा ॥ १५६ ॥
सुमरण भेधा विधि अस्थान, आतम शब्द पयाणा।
"सुरतिविचारअग" सब निर्णय, केवल सुरति समाणा ॥ १५७ ॥
"ब्रह्मसमाधि" साध पद पूरण, नव तत गले अखंडा।
"मायाब्रह्म ' (भयो जद) निर्णय," छाया "वृक्ष" अमडा ॥ १५८ ॥
अक्षर ब्रह्म क्षरे सोमाया, गुरु परसाद प्रकासी।
ररकार "निगुणं (निजनामी), सगुण" जु ममो थकासी ॥ १५९ ॥

"ब्रह्मएकता" एक अभंगी, ता पर अंग न कोई।
सबके परे प्रगट सब माहीं, रमता राम स कोई॥ १६०॥
भक्ति विलास प्रगट जन माहीं, अपरम अनुभव धारा।
देशकाल उपजत परसंगा, अर्थ शिरोमणि सारा॥ १६१॥
वाणी चार अंग चौरासी, उपमेय अंग अपारा।
परगट साख शिरोमणि साखी, सद्गुरु शब्द उधारा॥ १६२॥
शिव अवधूत नमो योगीश्वर, आसण लख चौरासी।
एता छन्दवर्ण शिव परगट, आतम एक उपासी॥ १६३॥
लख मध एक भया चौरासी, सेनापति परवानू।
लख चौरासी जीव उपाया, ब्रह्मा सृष्टि विधानू॥ १६४॥
पोषण भरण सर्वका पालक, विष्णुदेव सब नायक।
भक्त उपास दास का रक्षक, धर अवतार सहायक॥ १६५॥
केवल मंत्र सर्वको बीजक, परगट साख बतावे।
तारण तरण परश परमानँद, अनुभव शब्द दिखावे॥ १६६॥
परगट अंग जनाँ की वाणी, सब तत सार पिछान्या।
इसविधि ब्रह्म भया पारायण, महा परम सुख मान्या॥ १६७॥
अक्षर भया लह्या घर आदू, सूत्र रु तत्त्व जलाया।
घण सो काल खाय नहिं सकिहै, वज्र अडंक सवाया॥ १६८॥
परगट शब्द कृपा गुरु कारण, यह कमज्या जन केरी।
इसविधि बीजक द्रव्य दिखाया, कहा कहै मति मेरी॥ १६९॥
अवर्ण कहा वर्ण में आवै, शब्दाँ शब्द दिखाया।
रामदास सद्गुरु के शरणै, उर उद्योत सवाया॥ १७०॥

दोहा।

अघ तिमिर भ्रम दृष्टिता, दूर करी गुरुदेव।
जन रामा आतम उदय, अनुभव पाया भेव॥ २॥
प्रगटबोध परकासिया, वाणी अंग विचार।
देशकाल संयुक्ति सब, खंडण आन विकार॥ ३॥
गुरु सन्मुख शिख आतमा, प्राप्ति जु जिनके होय।
रामशब्द धारण करै, भूल परै नहिं कोय॥ ४॥
जन अगाध वन्दन सदा, प्रगट दिखायो मोहि।
राम साधु छोडूँ नहीं, जो कल उत्थल होहि॥ ५॥

इति प्रगटबोध[1]।

---

1 यह ग्रंथ अवश्य विचारणीय है।

(ग्रन्थ)

"ज्ञानविवेक ग्रन्थ" जब आयो, "गुरुमहिमा" परताप दिखायो।
"भक्तमाल" चेतो "चेतावनि", "जमफोरगती" सन्त करावनि ॥ १ ॥
"मर्न (से) राडू" करै "जंगजन" घिन, "रणजीत" सूरा सन्त मरमन।
"अमरबोध ग्रन्थ" भव पारा, "मूलपुराण" सोझिया सारा ॥ २ ॥
"उभयज्ञान" दुइ अच्छर पाया, "आदिबोध" तत अथ समाया।
दत "आकाशबोध" सर्वंगी, "नाममाल" रतनाम अभंगी ॥ ३ ॥
"आतमसार" लिया तत ताई, "ब्रह्मजिज्ञास" भया घट माँई।
"पट्दर्शण" का निर्णय भया, "पद्वत्तीसग्रन्थ" और थया ॥ ४ ॥
"बालबोध" जन्मत धुर गायो, "पचमात्रा" सरूप दिखायो।
"सोलहकला" प्रकट घट माहीं "आत्मानेलि" सजीवन ताहीं ॥ ५ ॥
"निरालंब" हरिजन पद पूरा, "नीसाणी" पदब्रह्म निज नूरा।
निर्णय नाम ग्रन्थ अरथाया, साखी अंग सब दरशाया ॥ ६ ॥
कवित रेखता हरिजश जेता, कुंडलिया सवैया हरि हेता।
ज्ञानसरोवर झूले जबही, चन्द्रायणा सोरठा सबही ॥ ७ ॥
दास उदास रु समय खुदबद्ध, अनुभव हरिजन चतविध सिधबद्ध।
(श्रीराम-परची विश्राम १७)

इति श्रीरामस्नेहधर्मप्रकाश सम्पूर्णम्।

श्रीरस्तु कल्याणमस्तु।

अथ श्री १०८ श्रीकबीर साहबके अनुभव शब्द।

कबीर प्रणमत गुरु गोविंद कूं, अब जन वदौं सोय।
पहल भये परणाम तिहिं, नमो सु आगे होय ॥ १ ॥
कबीर सब कोउ डरपै कालसूं, ब्रह्मा विष्णु महेश।
काल डरै करतार सौं, जय जय जय आदेश ॥ २ ॥

रेखता-

रामरे राम विश्राम या जीवको और विश्राम नहिं कोइ भाई।
स्वग अरु मृत्यु पाताल छूटै नही जहाँ जावै तहाँ काल खाई।
आसरै एक निज देवके ऊररे आनके आसरै नाहिं छूटै।
अचल के आसरै काल भय को नहीं आनके आसरै काल कूटै ॥
उम्प अरु रुम्प तीथ मत योवरा[1] जोग अरु जग्य सब देख छोई।
नाम निवाण विन पार पहुचै नहीं वेद अरु पुराण सब देख जोई।

---

[1] योग्यता, होनेके योग्य।

नाम परताप तिहुँ लोक छाना नहीं भौसिंधु के तिरन कूं वन्या मेरा।
संत अनेक तरि पार पैले गये कहै कवीर निज नाम तेरा ॥ १ ॥
वारही वार रटि राम रस पीवणा भटकि मत भर्म में भूलि जाई।
जहाँ जावे तहाँ सूत सुलझै नहीं उलटि उलझै तहाँ जाय भाई ॥
सुलटि अवजूद में पलटि मन पवन कूं परम सुखधाम जहां प्राण लावै।
कहै कवीर वहाँ अजंव विश्राम है रोमही रोम रस राम पावै ॥ २ ॥
मन वारही वार ररंकार रसना रटो सार सुखसीर निज नाम नेरा।
पाप का नास अरु ताप लागै नहीं चतुर अस्सी तणा मिटै फेरा ॥
नाम परताप तिहुँ लोक छाना नहीं शेप शिव विरंचि सव साधु गावै।
कहै कवीर गुरु दई है औपधी पीवै सो पार भवसिंधु पावै ॥ ३ ॥
देह गुण त्यागि अरु लागि हरिनामसूं जागिरे जागि अव कहा सोवै।
ज्ञानसमशेर ले मारि मन मीर कूं पांच कूं पकड़ि ज्यूं पीर होवै ॥
गगन का तखत परि जुगति कर खेलणा रोक नवद्वार ज्यूं कमल फूलै।
कहै कवीर तहाँ काल लागै नहीं सहज दरियाव में प्राण झूलै ॥ ४ ॥
नाम ही ज्ञान अरु ध्यान पर नामही नामही भक्ति वैराग थाई।
नाम ही प्रेम निज नेम सो नाम ही नाम ही जोगकी जुगति भाई ॥
शील अरु साँच संतोप पर नाम ही नाम ही जप्प अरु तप्प कीया।
कहै कवीर यह कृत्य वाकी नहीं रोमही रोम निज नाम पीया ॥ ५ ॥
फेर रे फेर मन पवन कूं घेर रे सुरत की डोर सूं जेर भाई।
अधः अरु ऊर्ध्व के बीच में रोकणा नाम कूं छांडि नहीं अंत जाई ॥
निकट विश्राम निजधाम नैड़ा सही गुरां के ज्ञान तें होय पारा।
कहै कवीर यों नीर मुकलावणा चूहड़ी चाहका करो चारा ॥ ६ ॥
पवन के रोकणे मन्त्र भी वोलता मन्त्र के रोकणे तन्त्र वोलै।
तन्त्र के रोकणे तेज में खेलिया तेज में खेल के पाट खोलै ॥
देव कृपालु तव होय कृपालुता प्रेम प्रकासका सुक्ख आवै।
दास कवीर तहाँ अलख जपता रहो विना कर तांतियाँ नाद वावै ॥७॥
जोगकी जुक्ति विन मुक्ति होवै नहीं जुक्ति विन कर्मही नाहिं छीजै।
जोगकी जुक्ति विन साधु पद ना लहै जोगकी जुक्ति विन कौन धीजै ॥
सुरति मन पवन कूं फेर उलटा चलो शील अरु सांच संतोप धारो।
कहै कवीर यों राम रसना जपो काम अरु क्रोध मद लोभ मारो ॥ ८ ॥
राम कह राम कह राम कह लीजियो राम विन काम नहिं और कीजै।
सुरति मन पवन कूं फेर उलटा चलो रोम ही रोम रस राम पीजै ॥
आदि ही अंत मध्य एक ही आसरा एक विन दूसरा आन नाँई।
दास कवीर यूं कहत पुकारिके एक तूं एक तूं एक साँई ॥ ९ ॥

भजन के वास्ते संत जन कहत है राम रमतीत यह नाम तेरा।
नाम अरु ठाम कुल गाम नहिं देखिये अगम जह निगम दुइ थकत चेरा॥
इन्द्रियों द्वार मन वाक पहुचै नहीं सकल परकास करि रहै न्यारा।
रूप अरु रेख वपु भेख नहिं पाइये कहै कबीर सोइ पीर थारा॥ १०॥
एक विन दूसरा दृष्टि आवै नहीं एक विन दूसरा कौन दूजा।
एक विन दूसरी सेव कहो कौन की एक विन दूसरी कौन पूजा॥
पाच अरु तीन का सब मडाण है एक प्रकाश ब्रह्मड कीया।
कहै कबीर अब द्वैत दीसै नहीं एक ही इष्ट गुरु देव दीया॥ ११॥
अलख अल्लाह अबीह समर्थ धणी नाम निवाण ते थाह नाहीं।
शेष शिव विरंचि ते पार पावै नहीं उदय अरु अस्त नहिं धूप छाहीं॥
रूप नहिं रेख नहिं वरण वासा नहीं आप अलेख सब छोड़ दूरा।
कहै कबीर कछु लिख होवै नहीं ल्है कोई सत्तगुरु ज्ञान पूरा॥ १२॥
कथत है ज्ञान अरु ध्यान पुनि धरत है चलत विचार करि पथ माहीं।
सास उसास की गूदड़ी सीवतॉ सुरति की सुई तहा अनँत जाहीं॥
रहै निरधार कोइ द्वद मे ना पड़ै मध अरु पवन का करत मेला।
कहै कबीर फिर फूट चालै नहीं सहज दरियाव में सहज पेला॥ १३॥
कर्म अरु भर्म ससार सब करत है पीव की परख कोइ सत जानै।
सुरति अरु निरत मन पवन कू उलटिके गग अरु यमुनके घाट आनै॥
पाच कू नाथि के साथ सोई लिया अधर दरियाव का सुक्ख मानै।
कहै कबीर कोइ सत निर्भय रहै जन्म अरु मरण का भर्म भानै॥ १४॥
चक्र के बीच में कमल अति फूलिया तासका सुक्ख कोइ सत जानै।
कुलफ तब द्वार अरु पवन कू रोकणा भृकुटी मध्य मन भँवर ठानै॥
सिंधु की घोर चहुँ ओर तहाँ देत है अधर दरियाव का सुक्ख मानै॥
कहै कबीर यू सुख सिंधु झूल है जन्म अरु मरण का भर्म भानै॥ १५॥
गग अरु जमुन के घाट कू खोजले भँवर गुजार जहॉ जुग्ग भाई।
सरस्वती नीर तहॉ देख निर्मल वहै जासका जल पियॉ पाप जाई॥
पाच की प्यास तहॉ देख पूरी हुई तीन की ताप तहॉ लगै नाहीं।
कहै कबीर तहॉ अगम का खेल है गैव का चानणा देख माहीं॥ १६॥
बोलरे बोल अब चुप्प कू है रहा बोल मन सूवटा ब्रह्म वाणी।
पाच कू पलट करि तीन कू जीत ले महल चौथैतणी खबर जाणी॥
गगन गरजै तहाँ नीर नीझर झरै पाक पीवै कोई सतपूरा।
कहै कबीर मसतान माता रहै विना मृदग तहा बजत तूरा॥ १७॥
अगम अस्थान गुरु ज्ञान विन ना लहै लहै कोइ सत गुरु ज्ञान पूरा।
द्वादशार पलटि करि षोड्शा प्रगटे गगन गरजै तहॉ बजत तूरा॥

इला अरु पिंगला सुषुम्णा सोझि करि अधः अरु ऊर्ध्व विच ध्यान लावै।
कहै कवीर सोई संत निरभै रहै कालकी चोट फिर नाहिं खावै॥ १८॥
छक्या अवधूत मस्तान माता रहै ज्ञान वैराग सूं छल्या पूरा।
सास उसास का पेम प्याला पिवै गगन गरजै तहां वजै तूरा॥
पूठ संसार सूं राम राता रहै जतन जरणा लियां जुगति खेलै।
कहै कवीर यूं पीर सूं सर खरू सहज सुखधाम में प्राण मेलै॥ १९॥
संत की चाल संसार सूं भिन्न है सकल संसार में चहल वाजी।
हिंदू मुसलमान दोउं दीन शरहद वने वेद कत्तेव प्रपंच साजी॥
हिंदू को नेम आचार पुजा घनी व्रत्त एकादशी रहै राजी।
वाकरा मारि मुख मांस भक्षन करै भक्ति नहिं होत या दगावाजी॥
सर्व वध जीव अपराध के मूल है कठिन या चूक तुम चेत याजी।
सर्व धर्म ऊपरै कृष्ण गीता कथी कृष्ण का कह्या तू मान याजी॥
कह्या गीता पढ़ी दृष्टि खूल्ही नहीं यों वकिमुवा नर मूढ़ पाजी।
मुहम्मद या करीम कृष्ण कह्या क्या फरक वहस कर सुनो कह्या वीन वाजी
मुसलमान कलमा पढै तीस रोजा करै वांग निवाज धुन करत गाढ़ी।
वकरी मुरगी जीव जह्वै करै गाय पछाड़ि करि कूह काढ़ी॥
जुल्म एता करै विहिश्त काहे मिलै खून अपराध की व्याधि वाढ़ी।
होय हिसाव तव जाव क्या देत है ले चले फरिश्ते पकरि दाढ़ी॥
होय तंवीर जव कठिन कूंदी करै चाम दल कष्ट तहाँ परै गाढ़ी।
मुहम्मद महरवान दया दिलसे करो जहां रोजा तहां विहिश्त ठाढ़ी॥
जहाँ रव राज तहाँ वाज अनहदतणी महरपद मुहर्रममें सुरति गाढ़ी।
कहै कवीर जहाँ साहिवी सो करै आप तिन चीन्ह सव कुफुर छाड़ी॥२०॥
तिलक माथै दिया हाथ में लाकड़ी भजन का भेव तो नाहिं पाया।
शील अरु सांच संतोप अंतर नहीं कनक अरु कामिनी जहर खाया॥
गूदड़ा पहरि करि वक्र आसन किया मच्छली गिटन सूं हेत भारी।
कहै कवीर जव काल गढ घेर है कौन गति होयगी जीव थारी॥ २१॥
पर्वतां दोय में जीव वहु उलझिया वनी के वीच में लूट लीया।
पांच पैंडायतां प्रगट पैंडादिया तासकै वीच कोइ संत जीया॥
भीर भगवंत अरु शरण गुरु देव की घाटियाँ लंघि करि पार हूवा।
कहै कवीर यूं खेयले सावती वहुरि विषधार में नाहिं वूवा॥ २२॥
करत परतीत सो खाय गोता सही रहै निरभै तहां चोर लागै।
अग्नि के संग ज्यूं घीव पिलघल चलै कामिनी संग यूं काम जागै॥

काम बलवान सब जीव अधा किया पड्या मन सारथी सग झूलै।
कहै कबीर कोइ सत जन ऊबरे नाम निर्वाण नहि पलक भूलै ॥ २३ ॥
तरक ससार से फरक फारक सदा गरक गुरु ज्ञान में सदा जोगी।
अध अरु ऊर्ध्व के बीच आसन किया बक प्याला पिवै रस्स भोगी ॥
अधर दरियाव तहाँ जाय डोरी लगी महल बारीक में मोज पाया।
कहै कबीर यू सत निरभै भया परम सुख धाम जहा प्राण लाया ॥२४॥
देव निर्वाण तहाँ बाण लागै नही सकल काला सिरै काल देवा।
विष्णु शिव शेष अज पार पावै नही चद अरु सूर दोउ करत सेवा ॥
तेज क्षिति पवन जल रहत आज्ञा महीं निगम हू कहत नहिं पार आवै।
कहत अगाध सब साध सेवै सदा दास कबीर तहाँ शीश न्यावै ॥२५॥
सचा साँइयाँ एक तू अवर दूजा नही दृष्टि दीसै जिकी सब माया।
गुणा के कृत्य परपच सब विनसही दीसता नही कोइ रहण पाया ॥
थट्ट अरु मट्ठ महदादि थिर नाँ रहै रहैगा आदि सोई अत माँइ।
कहै कबीर मैं तासकी बदगी एक भरपूर सर्वज्ञ साँइ ॥ २६ ॥
पाव अरु पळक की आरती कौनसी रैण दिन आरती सत गावै।
घुरत नीसाण जहाँ गैब की झालरां गैब की घट का नाद आवै ॥
तहाँ नींव बिन देहरा नाम निर्वाण है गगनका तख्त पर जुक्ति सारी।
कहै कबीर तहाँ रैणदिन आरती पातियाँ पाँच पूजा उतारी ॥ २७ ॥
साँइया आप की सेव तो आप ही जान हो आप का भेव कहो कौन पावै।
आपनी आपनी बुद्धि अनुमान है बचन बिलास करि लहर लावै ॥
इसो मोहि आत है देख वा उक्ति को निगमहू कहत नहिं पार पावे।
कहै कबीर इय सैन गूगातणी गूग होवे सोई सैन पावै ॥ २८ ॥
रजा तुम साँइयाँ करो सो होयगी आपकी रजा कहो कौन मेटै।
बूडता जीव तारे तुझे पलक में केइ असख्य जुग नाहिं भेटै ॥
उलटका पलट अरु पल्टका उलट है आपका खेल कहो कौन पावै।
पलक में भाज करि फेरि रचना करै कहै कबीर मैं रह्या हावै ॥ २९ ॥
खेल अवधूत का महा अद्भूत है दूत परपच का लेस नाहीं।
गुणमयी कृत्य सब कालकी दाढमें शेष शिव विरचि अरु विष्णु ताहीं ॥
रहै निर्धार आधार थिर ना रहै बिसर ससार आधार माहीं।
कहै कबीर यह खेल निश्चय किया जन्म अरु मरण का भर्म जाहीं ॥३०॥
देख अवधूत का ज्ञान का बेसला कालके जाल कू दूरि तोड़ै।
गुणमई कृत्य कू काटि पायमाल करि पाच पचीस कू पल्टि मोड़ै ॥
राग अरु दोषकी भींत कू ढाहि करि भरम के कोटकी फेर फोड़ै।
कहै कबीर यू प्रेम परकास करि सुरत अरु निरत का तार जोड़ै ॥३१॥

सेलियाँ वांकियाँ देख अवधूत की जीवता मरे सोइ ठोड़ पावे ।
तीर खुरसाण का वहुत तीखा वहै लगै उर माहिं डिग नाहिं जावै ॥
राजसा माहिं गद्‌गोल वहु ऊपज्या तामसा माहिं अंधार भाई ।
कहै कवीर निह सत्तका तापियै जीव की वृत्ति क्यूं ठीक थाई ॥ ३२ ॥
तत्त्व कूं छाँडि निह तत्त्व कूं सव कथै भ्रम्म में पड़्या सव भेप धारी ।
मुकुट करि जटा शिर तव जोगी भया पहर करि मुंदरा कान फारी ॥
एक नागे भये सर्व लज्जा तजी वज्र कच्छोट कस काम जारी ।
छेद अव जुज घर गूघरू वाय करि पाखंड केते कहुं गर्व प्रहारी ॥
आकाश मौनि मुख उरध वाहू नखी दीह निशि रहै ठाढेज वारी ।
वंध पग खंभ से उरध मुख झूलत रहै धूम घोटत रहै कस्स कारी ॥
अन्न भोजन तजै दूध रोगन करै वजै जग माहिं मैं दूध धारी ।
लूण कूं त्याग करि भये अलूणिया वैठ के गुफा में लाय तारी ॥
तिलक छापा किया मूर्ति पूजा लिया शंख धुन आरती जोति जारी ।
सेव कीन्ही सही देव, चीन्हा नही आपरा भक्त तजि जड़ पुजारी ॥
ज्ञानी पंढित वडे गीता[1] भागवत पढ़े कर्म की भूतना नाहिं टारी ।
इतना विटंवसे वस्तु न्यारी रही ज्ञान की दृष्टि से लीज्यो विचारी ॥
भरम कूं त्याग करि लागि निज परम से इसे जन कोइ निज ब्रह्मचारी ।
कहै कवीर सोइ संत जन जौहरी काटि जम फंद सव को संघारी ॥३३॥

इत्यलम् ।

अथ श्रीनामदेवजी महाराज के अनुभव पद ।

१

जौंलगि रामनाममें हित न भयो तौंलगि मेरीमेरी करतां जन्म गयो । टे०
लाग्यो पंक पंक ले धोवै निर्मल न होवै जन्म विगोवै ॥ १ ॥
भीतर मैला वाहिर चोखा पाणी पिंड पखाले धोखा ॥ २ ॥
नामदेव कहै सुरभी परहरिये मेड़ पूंछ कैसे भवजल तिरिये ॥ ३ ॥

---

1 श्रीमद्भगवद्गीता, पिंगलगीता, शंपाकगीता, मंकिगीता, बोध्यगीता, विचख्यु-गीता, हारीतगीता, वृत्रगीता, पराशरगीता, हंसगीता, अनुगीता, ब्राह्मणगीता, अव-धूतगीता, अष्टावक्रगीता, ईश्वरगीता, उत्तरगीता, कपिलगीता, गणेशगीता, देवीगीता, पाडवगीता, ब्रह्मगीता, भिक्षुगीता, यमगीता, व्यासगीता, शिवगीता, सूतगीता, सूर्यगीता, इत्यादि.

पद २

माइ गोविंद रु बाप गोविंद जाति पाति गुरु देव गोविंद। टेर
गोविंद ज्ञान रु गोविंद ध्यान सदा आनंदी राजाराम ॥ १ ॥
गोविंद गावै गोविंद नाचै गोविंद भेष सदा नृत्य काछै ॥ २ ॥
गोविंद पाती गोविंद पूजा नामो भणै मेरे देव न दूजा ॥ ३ ॥

पद ३

इतना कहत तोहि क्या लागत। रामनाम ले सोवत जागत। टेर
ध्रुव प्रह्लाद इह गुण तारे। रामनाम अक्षर हृदै विचारे ॥ १ ॥
रामनाम सनकादिक राता। रामनाम निर्भयपद दाता ॥ २ ॥
भणत नामदेव भाव है ऐसा। जैसी मनसा लाभ है तैसा ॥ ३ ॥

पद ४

अब तब रामनाम निस्तारै।
साठ घड़ी में एक घड़ी रे सोई सकल अघ जारै ॥ टेर
काशी पुरी मँझ गवरापति अह निशि सदा पुकारै।
कीट पतंग सुनत गति पावै गोविंद गुण विस्तारै ॥ १ ॥
अजामेल गनिका शुक पक्षी रसना नाम उचारै।
गज पशु व्याध तिरे हरि सुमिरत महिमा व्यास विचारै ॥ २ ॥
परम पुनीत स्वरूप हरि वासर निजजन हरि व्रत धारै।
नामदेव कहै सोइ दास कहावै जीवतैं छिन न विसारै ॥ ३ ॥

पद ५

राम भक्ति विन गति न तिरनकी कोटि उपाय जो करही रे नर।
जल सींचे करि जतन प्रवाले आव बँबूर न फलही रे नर ॥ टेर
आपा थाप और कू निंदै गर्व मान के मारे।
फिर पीछै पछिताहुगो वौरे रत्न न मिलहिं उधारे रे नर ॥ १ ॥
यह ममता अपनी जनि जानो धन जोवन सुत दारा।
बालू के मंदिर विनस जाहिंगे झूठा करो पसारा रे नर ॥ २ ॥
जोग न भोग मोह नहिं माया कहा भयो वनमें वासा।
चरनकमल अनुराग न उपज्यो तब लग झूठी आशा रे नर ॥ ३ ॥
मनुष्य जन्म आय नहिं चेते अधैं पदा गवारा।
तेरे शिर काल सदा शर साधे नामदेव करत पुकारा रे नर ॥ ४ ॥

पद ६

जिह्वा बोले तो रामहि बोल। नहितर बदन कपाट न खोल ॥ टेर ॥
जो बोलिये तो कहिये राम। आन वचन से नाहीं काम ॥ १ ॥

रामनाम मोरे हिरदे लेख । राम बिना सब फोकट देख ॥ २ ॥
नामदेव भणै मेरे एको नाम । रामनाम की मैं बलि जाम ॥ ३ ॥

पद ७

हरि भज हरि भज हरि भज मूल विन हरि भजन परे मुख धूल । टेर
अनेकवार पशु है अवतऱ्यो । लख चौरासी भर्मत फिऱ्यो ।
पायो नहीं कहीं विश्राम । सतगुरु शरण कह्यो नहिं राम ॥ १ ॥
राज काज सुत वित सब जाय । अविनाशी से प्रीति लगाय ।
यह अनुमान भक्त व्रत धारै । जरा मरण भव संकट टारै ॥ २ ॥
गुण सागर गोविंद गुण गाय । अपनो विरद विसर जनि जाय ।
प्रणमत नामदेव संत सधीर । चरण शरण राखो हरि तीर ॥ ३ ॥

पद ८

रामनाम मेरे पूंजी धना । जा पूंजी मेरो लागो मना । टेर ।
साह की पूंजी आवै जाय । कबहू आवै मूल गमाय ॥ १ ॥
यह पूंजी है अगम अपार । ऐसा कोइ न साहूकार ॥ २ ॥
ज्ञाली जलै न खाई खाय । राजा डंडे न चोर लेजाय ॥ ३ ॥
अलख निरंजन दीन दयाल । नामदेवके धन श्रीगोपाल ॥ ४ ॥

पद ९

भक्ति आप मोरे बावुला । तेरी मुक्ति न मॉगूं हरि वीठुला । टेर
भक्ति न आपै तो तन आड्डूं । कोटि करै तो भक्ति न छॉड्डूं ॥ १ ॥
अनेक जन्म भ्रम तो फिऱ्यो । तेरो नाम ले ले उधऱ्यो ॥ २ ॥
नामदेव कहै तूं जीवन मोरा । तूं सायर मैं मच्छा तोरा ॥ ३ ॥

पद १०

सन्त प्रवेणी भक्ति आपिला नहिं आपिला तो प्राण त्यागिला । टेर
हमचा थाती तुम्ह वस भइला अमचा जीवला किमचा लागिला ॥ १ ॥
च्यार मुक्ति आष्टा सिधि आपूं भक्ति न आपूं दास नामइया ॥ २ ॥
नामदेव वीठुल सनमुख भक्ति आपिला मुक्ति त्यागिला ॥ ३ ॥

इत्यलम् ।

अथ श्रीरैदासजी महाराज के अनुभव

पद १

ऐसी भक्ति न होई रे भाई ।
राम नाम विन जो कछु करिये सो सब भर्म कहाई । टेर

पद २

माइ गोविंद व बाप गोविंद जाति पाति गुरु देव गोविंद। टेर
गोविंद ज्ञान व गोविंद ध्यान सदा आनदी राजाराम ॥ १ ॥
गोविंद गावै गोविंद नाचै गोविंद सेव सदा नृत्य काछै ॥ २ ॥
गोविंद पाती गोविंद पूजा नामो भणै मेरे देव न दूजा ॥ ३ ॥

पद ३

इतना कहत तोहि कहा लागत। रामनाम ले सोवत जागत। टेर
ध्रुव प्रह्लाद इह गुण तारे। रामनाम अक्षर हृदै विचारे ॥ १ ॥
रामनाम सनकादिक राता। रामनाम निभयपद दाता ॥ २ ॥
भणत नामदेव भाव है ऐसा। जैसी मनसा लाभ है तैसा ॥ ३ ॥

पद ४

जब तब रामनाम निस्तारै।
साठ घड़ी में एक घड़ी रे सोई सकल अघ जारै ॥ टेर
काशी पुरी मँझ गवरपति अह निशि सदा पुकारै।
कीट पतग सुनत गति पावै गोविंद गुण विस्तारै ॥ १ ॥
अजामेल गनिका शुक पक्षी रसना नाम उचारै।
गज पशु व्याध तिरे हरि सुमिरत महिमा व्यास विचारै ॥ २ ॥
परम पुनीत स्वरूप हरि वासर निजजन हरि व्रत धारै।
नामदेव कहै सोइ दास कहावै जीवतें छिन न विसारै ॥ ३ ॥

पद ५

राम भक्ति बिन गति न तिरनकी कोटि उपाव जो करही रे नर।
जल सींचे करि जतन प्रचाले आव रँबूर न फलही रे नर ॥ टेर
आपा थाप और कू निंदै गर्व मान के मारे।
फिर पीछे पछिताहुगे यौरे रत्न न मिलहि उधारे रे नर ॥ १ ॥
यह ममता अपनी जनि जानो धन जोवन सुत दारा।
वालू के मदिर विनस जाहिंगे झूठा करो पसारा रे नर ॥ २ ॥
जोग न भोग मोह नहिं माया कहा भयो वनमें वासा।
चरनकमल अनुराग न उपज्यो तव लग झूठी आशा रे नर ॥ ३ ॥
मनुष्य जन्म आय नहिं चेते भये पशू गवारा।
तेरे शिर काल सदा शर साधे नामदेव करत पुकारा रे नर ॥ ४ ॥

पद ६

जिह्वा बोले तो रामहि बोल। नहितर वदन कपाट न खोल ॥ टेर ॥
जो बोलिये तो कहिये राम। आन वचन से नाहीं काम

रामनाम मोरे हिरदै लेख। राम विना सब फोकट देख॥ २॥
नामदेव भणै मेरे एको नाम। रामनाम की मैं बलि जाम॥ ३॥

पद ७

हरि भज हरि भज हरि भज मूल विन हरि भजन परै मुख धूल। टेर
अनेकबार पशु है अवतर्यो। लख चौरासी भर्मत फिर्यो।
पायो नहीं कहीं विश्राम। सतगुरु शरण कह्यो नहिं राम॥ १॥
राज काज सुत वित सब जाय। अविनाशी से प्रीति लगाय।
यह अनुमान भक्त व्रत धारै। जरा मरण भव संकट टारै॥ २॥
गुण सागर गोविंद गुण गाय। अपनो विरद विसर जनि जाय।
प्रणमत नामदेव संत सधीर। चरण शरण राखो हरि तीर॥ ३॥

पद ८

रामनाम मेरे पूंजी धना। जा पूंजी मेरो लागो मना। टेर।
साह की पूंजी आवे जाय। कबहू आवै मूल गमाय॥ १॥
यह पूंजी है अगम अपार। ऐसा कोइ न साहूकार॥ २॥
जाली जलै न खाई खाय। राजा डंडे न चोर लेजाय॥ ३॥
अलख निरंजन दीन दयाल। नामदेवके धन श्रीगोपाल॥ ४॥

पद ९

भक्ति आप मोरे वाबुला। तेरी मुक्ति न माँगूं हरि वीठुला। टेर
भक्ति न आपै तो तन आडूं। कोटि करै तो भक्ति न छाँडूं॥ १॥
अनेक जन्म भ्रम तो फिर्यो। तेरो नाम ले ले उधर्यो॥ २॥
नामदेव कहै तूं जीवन मोरा। तूं सायर मैं मच्छा तोरा॥ ३॥

पद १०

सन्त प्रवेणी भक्ति आपिला नहिं आपिला तो प्राण त्यागिला। टेर
हमचा थाती तुम्ह वस भइला अमचा जीवला किमचा लागिला॥ १॥
च्यार मुक्ति आष्टा सिधि आपूं भक्ति न आपूं दास नामइया॥ २॥
नामदेव वीठुल सनमुख भक्ति आपिला मुक्ति त्यागिला॥ ३॥

इत्यलम्।

अथ श्रीरैदासजी महाराज के अनुभव

पद १

ऐसी भक्ति न होई रे भाई।
राम नाम विन जो कछु करिये सो सब भर्म कहाई। टेर

भक्ति न रसदान भक्ति न कथे ज्ञान
भक्ति न वनमें गुफा खुदाई।
भक्ति न ऐसी हास भक्ति न आशा पास
भक्ति न यहु सब कुल कामिनि गाई ॥ १ ॥
भक्ति न इंद्री बाधे भक्ति न जोग साधे
भक्ति न अहार घटावे यह सब कर्म कहाई।
भक्ति न निद्रा साधे भक्ति न वैराग्य बाधे
भक्ति नहीं यह सब वेद् बडाई ॥ २ ॥
भक्ति न मूड मुडावे भक्ति न माला दिखावे
भक्ति न चरन धुवावे यह सब मुनिजन कहाई।
भक्ति तोलों न जानी जोलों न आपको आप बखानी
जोइ जोई करे सोई सोइ कर्म चढाई ॥ ३ ॥
आपो गयो तब भक्ति पाई ऐसी है भक्ति भाई
राम मिले आप गुण खोयो ऋद्धिसिद्धि सब अगवाई।
कहै रैदास छूटी आशा तब हरि ताही के पासा
आत्मा स्थिर तब सब निधि पाई ॥ ४ ॥

पद २

परचै राम रमै जो कोई पारस परसे दुबुधि न होई। टेर
जो दीसे सो सकल विणास अण दीठे नाहीं विश्वास।
बरण रहित कहै जो राम सो भक्त केवल निष्काम ॥ १ ॥
फल कारण फूली वनराई उपज्यो फल तब पहुप बिलाई।
ज्ञानहि कारण कर्म कमाई उपज्यो ज्ञान तब कर्म नसाई ॥ २ ॥
वटक बीज जैसा आकार पसऱ्यो तीन लोक विस्तार।
जहाँ का उपजा तहाँ समाई सहज शून्यमें रह्यो लुकाई ॥ ३ ॥
जो मन वदे सोई बन्द अमावस में जैसे दीसे चन्द।
जल में जैसे तूबा तिरै परचै पिंड जीवे नहिं मरै ॥ ४ ॥
सो मन कौन जो मनकू खाइ विन द्वारे त्रैलोक्य समाई।
मनकी महिमा सब कोइ कहै पंडित सो जो अनुभव रहै ॥ ५ ॥
कहइ रैदास यह परम वैराग रामनाम किन जपहु सभाग।
घृत कारण दधि मथै सयान जीवतमुक्त सदा निवान ॥ ६ ॥

पद ३

अवतो मैं हाऱ्यो रे भाई।
थकित भयो सब हाल चालतें लोकन वेद बडाई। टेर

थकित भयों नाचण अरु गावण थाकी सेवा पूजा ।
काम क्रोध ते देह थकित भइ कहूं कहाँ लगि दूजा ॥ १ ॥
राम जन होउं न भक्त कहाऊं चरण पखालुं न देवा ।
जोइ जोइ करूं उलटि मोहि बाँधै ताते निकट न भेवा ॥ २ ॥
पहिले ज्ञानका किया चानणा पीछे दिया बुझाई ।
शून्य सहज में दोऊं त्यागे राम कहूं न खुदाई ॥ ३ ॥
हरि वस है पटकर्म सकल अरू दूरव कीन्ही सेऊं ।
ज्ञान ध्यान दोउं दूरव कीन्हे दूरव छाँडे तेऊं ॥ ४ ॥
पाँचूं थकित भए हैं जहाँ तहाँ जहाँ तहाँ थिति पाई ।
जा कारन में दोन्यो फिरतो सो अव घट में पाई ॥ ५ ॥
पाँचूं मेरी सखी सहेली तिन निधि दई दिखाई ।
अव मन फूल भयो जग महियां उलट आपसें समाई ॥ ६ ॥
चलत चलत मेरो निज मन थाक्यो अव मोपें चल्यो न जाई ।
साँई सहज मिले सो सन्मुख कह रैदास वताई ॥ ७ ॥

पद ४

गाइ गाइ अव क्या कहि गाई गावन हाराकों निकट वताई । टेर
जवलग है या तन की आशा तवलग करै पुकारा ।
जव मन मिल्यो आश नहिं तनकी तव को गावण हारा ॥ १ ॥
जवलग नदी न समुद्र समावै तव लग वढै अहंकारा ।
जव मन मिल्यो रामसागर से तव यहु मिटी पुकारा ॥ २ ॥
जवलग भक्ति मुक्ति की आशा परमतत्त्व सुण गावै ।
जहाँ तहाँ आश धरत है यहु मन तहाँ तहाँ कछू न पावै ॥ ३ ॥
छांडै आश निराश परम पद तव सुख सत कर होई ।
कहै रैदास जासे और कहत है परम तत्त्व अव सोई ॥ ४ ॥

पद ५

रामजन होउँ न भक्त कहाऊँ सेवा करों न दासा ।
गुनी जोग जिग कछू न जानों तातें रहों उदासा । टेर
भक्त हुआ तो चढै वडाई जोग करों जग माने ।
गुणी हुआतें गुणि जन कहै गुणी आपकों ताने ॥ १ ॥
ना मैं ममता मोह न महिमा यह सव जाय विलाई ।
दोज़ख़ विहिश्त दोउ सम करि जानों दुहुवातें तरक है भाई ॥ २ ॥
मैं तै ममता देख सकल जुग मैं तै मूल गमाई ।
जव मन ममता एक एक मन जवहि एक है भाई ॥ ३ ॥

कृष्ण करीम राम हरि राघव जब लग एक एक नहिं पेखा।
वेद कतेब पुरान कुरानन सहज एक नहिं देखा ॥ ४ ॥
जोइ जोइ कर पूजिये सोई सोई काचा सहज भाव सतहोई।
कह रैदास मैं ताहि कू पूजू जाके गाम न ठाम नाम नहिं कोई ॥ ५ ॥

पद ६

भाई रे भरम भक्ति सो जान जोलों नहि साचसे पहिचान। टेर
भरम नाचण भरम गावण भरम जप तप दान।
भरम सेवा भरम पूजा भरम से पहिचान ॥ १ ॥
भरम षट कर्म सकल सहिता भरम ग्रह वन जान।
भरम करि करि कर्म कीये भरम की यह बान ॥ २ ॥
भरम इन्द्री निग्रह कीये भरम गुफामें वास।
भरम तोलो जाणिये शून्य की करै आस ॥ ३ ॥
भरम शुद्ध शरीर तोलौं भरम नाम विनाम।
भरम भणै रैदास तोलौं जोलों चाहै ठाम ॥ ४ ॥

पद ७

भाई रे राम कहा है मोहि बतावो सत्य राम ताके निकट न आवो। टेर
राम कहत सब जगत भुलाना सो यह राम न होई।
कर्म अकर्म करुणामय केशव करता नाम स कोई ॥ १ ॥
जिहि रामहि सब जग जानै भ्रम भूले रे भाई।
आप आपतें कोई न जानै कहै कौन से जाई ॥ २ ॥
सत तम लोभ परस जिव तन मन गुन परसन नहिं जाई।
अखिल नाम जाके ठोर न कितहू क्यों न कहो समुझाई ॥ ३ ॥
भणै रैदास उदास ताही तें करता कोहै भाई।
केवल करता एक सही कर सत्य राम तिहि ठाइ ॥ ४ ॥

पद ८

ऐसो कछु अनुभव कहते न आवै साहिब मेरो मिलै तो को विगरावै। टेर
सब में हरि है हरि में सब है हरि आपनपो जिन जाना।
अपनी आपा साखी न दूसरि जाननहार समाना ॥ १ ॥
बाजीगर से रहन रहीजे बाजी का मर्म अब जाना।
बाजी झूठ साच बाजीगर जाना मन पतियाना ॥ २ ॥
मन स्थिर होय तो कोइ न सूझै जानै जानन हारा।
कह रैदास विमल विवेक सुख सहज सरूप सभारा ॥ ३ ॥

पद ९

नरहरि चंचल मति मोरी कैसे भक्ति करौं राम तोरी। टेर
तू मोहि देखै हौं तोहि देखूं प्रीति परस्पर होई।
तू मोहिं देखै न हौं तोहि देखूं यह बुधि सब मति खोई॥ १॥
सब घट अंतर रमसि निरंतर मैं देखत ही नहिं जाना।
गुन सब तोर मोर सब अवगुन कृत उपकार न माना॥ २॥
मैं तैं तोर मोर असमंजस कैसे करि निस्तारा।
कह रैदास कृष्ण करुणामय जय जय जगत अधारा॥ ३॥

पद १०

प्रभुजी तुम चंदन हम पानी जाकी वास अंग अंग समानी। टेर
प्रभुजी तुम दीपक हम वाती जाकी जोति जगै दिन राती॥ १॥
प्रभुजी तुम घन वन हम मोरा जैसे चितवत चंद चकोरा॥ २॥
प्रभुजी तुम मोती हम धागा जैसे सोन ही मिलत सुहागा॥ ३॥
प्रभुजी तुम स्वामी हम दासा ऐसी भक्ति करै रैदासा॥ ४॥

इत्यलम्।

वैष्णवधर्ममंत्र।

कवित्त।

धूणी गिरनार मंत्र तारक धाम रामनाथ
विलास[1] चित्रकूट इष्ट सीता जान है।
ऋषि वशिष्ठ वेद ऋग देव हनुमान तीर्थ
क्षेत्र है धनुष बीज अग्नि वखान है॥
रमाचारज शाखा है अनंत मुक्ति सामीप्यकं
अच्युत गोत्र वर्ण शुक्ल सुख खान है।
राघव उपासी धर्मशाला अयोध्या है पर-
दक्षिणा गोदावरी अखाड़ा निर्बान है॥ १॥

यज्ञोपवीतधारणमंत्र।

ॐ यज्ञोपवीतं परमं पवित्रं प्रजापतेर्यत् सहजं पुरस्तात्।
आयुष्यमग्र्यं प्रतिमुञ्च शुभ्रं यज्ञोपवीतं बलमस्तु तेजः॥ १॥

---

1 सुखविलास।

कंठी माला धारणमंत्र ।

तुलसीकाष्ठसम्भूते माले विष्णुजनप्रिये ।
त्वा धारयाम्यहं कण्ठे कुरु मां रामवल्लभम् ॥ १ ॥

यज्ञोपवीतवद्धार्या सदा तुलसिमालिका ।
क्षणमात्रपरित्यागाद् विष्णुद्रोही भवेन्नर ॥ २ ॥

चरणामृतमंत्र ।

अकालमृत्युहरणं सर्वव्याधिविनाशनम् ।
विष्णुपादोदकं पीत्वा शिरसा धारयाम्यहम् ॥ १ ॥
एकादशीव्रतं गीता गंगाम्बु तुलसीदलम् ।
विष्णोः पादाम्बु नामानि मरणे मुक्तिदानि च ॥ २ ॥

तीर्थं प्रसादस्वीकारानन्तरं वैष्णवो द्विजः ।
न हस्तक्षालनं कुर्यात् न तत्राचमनक्रिया ॥ ३ ॥

तुंबिकाकमण्डलुशुद्धिमंत्र ।

ॐ जलं दहति पापानि कमण्डलुगतं तु यत् ।
गंगातोयसमं नित्यं जलपात्रं च शुद्ध्यति ॥ १ ॥

कठारीशुद्धिमंत्र ।

ॐ जले चाग्निः स्थले चाग्निरग्निश्च वायुमण्डले ।
त्रिभिरग्निप्रकारैश्च काष्ठपात्रं च शुद्ध्यति ॥ १ ॥

कई महात्माओं के आविर्भाव और तिरोभावका समय वि. सं. ।

नाम	ग्राम	प्रादुर्भाव	दीक्षा	मोक्ष
श्रीशंकर स्वामी	कालपी(दक्षिण)	८४४		८७६
श्रीरामानुज स्वामी	काचीपुरी	१०७४		११९४
श्रीरामानंद स्वामी	काशी	१३५६		१५०५
श्रीकबीर साहब	काशी	१४५५		१५७५
श्रीहरीदासजी म.	डीडवॉणा	१४७५		१७००
श्रीजाभाजी	पीपासर (बीकानेर)	१५०८		१५९३
श्रीगुरुनानक साहब	पंजाब	१५२६		१५९५
श्रीजसूनाथजी	कतरियासर (बीकानेर)	१५३९		१५६३
श्रीसूरदासजी	वृंदावन	१५४०		१६२०
श्रीगोस्वामी तुलसीदासजी	काशी	१५८९		१६८०
श्रीस्वामीजी दादूदयालजी म.	नराणा	१६०१	१६१२	१६६०
श्रीसुन्दरदासजी म.	कोषाणा	१६५३		१७४६
श्रीसन्त दासजी म.	दातड़ा	१६८६	१७४२	१८०६
श्रीचरणदासजी म.	डहरा (अलवर)	१७६०		१८३९
श्रीजै[1]मलदासजी म.	दुलचासर (बीकानेर)		१७६०	१८१०
श्रीदरियासाजी म.	रैण	१७३३	१७६९	१८१५
श्रीहरिरामदासजी म.	सिंहथल		१८००	१८३५
श्रीनारायणदासजी म.	सिंहथल		१८०६	१८५३
श्रीरामचरणजी म.	साहपुरा	१७७६	१८०८	१८५५
श्रीरामदासजी म.	खेड़ापा	१७८३	१८०९	१८५५
श्रीदयालदासजी म.	खेड़ापा	१८१६		१८८५
श्रीप[2]रशरामजी म.	जोध सूरसागर	१८२४		१८९६

१ श्रीरामस्नेहसद्धर्मोपदेष्टा मूलाचार्य । २ विरक्तशाखाप्रवर्तक श्रीपरशरामजी म. सं. १८६० में जोध. सूरसागर विराजे। आपकी अनुभववाणी १५००० श्लोक संख्याकी है।

॥ श्रीः ॥

संग्रह–सार ।

अथ निर्गुण भजनमाला ।



बधावा ।

॥ श्रीः ॥

संग्रह–सार ।

अथ निर्गुण-भजनमाला ।

वधावा.

१

म्हांरा हरिजन आइजो म्हांरे आंगणिये थानें ले मोतीड़ा वधाऊं । टेर।
सुरे गायरो गोवर मंगाऊं घर आंगणियो निपाऊं ।
कंचनकलस वधाय गुरांने मोतियां चोक पुराऊं ॥ १ ॥
कदली वनरो हस्ती मॅगाउं अंवाड़ी झुकाऊं ।
गेहरा गदरा गुरुजी विराजै ऊपर चॅवर ढुलाऊं ॥ २ ॥
जल जमुनारो नीर मँगाऊं तातो तुरत कराऊं ।
चोवा चंदन और अरगजा अपणे हाथ न्हवाऊं ॥ ३ ॥
नख छोल्या सा चावल मॅगाउं काचे दूध धुआऊं ।
खीर खांड घृत अमृत भोजन अपणे हाथ जिमाऊं ॥ ४ ॥
कंठी माला कड़ा किलंगी सतगुरु अरपण लाऊं ।
दिखण दिशारी मंगाय फॉवरिया अपणे हाथ ओढाऊं ॥ ५ ॥
कहै कवीर सुणो भाई साधू आनंद मंगल गाऊं ।
भवसागर गुरु दयाल खेवटिया भवजल वहुरि न आऊं ॥ ६ ॥

२

चालो ए सइयॉ आपे गुरां ने वधावण जासां ए । टेर ।
सतगुरु स्वामी म्हारा अंतर जामी चरणॉ में शीस निवासां ए ॥ १ ॥
कुंकुम केसर री गार घलासां मोतिड़ां रो चोक पुरासां ए ॥ २ ॥
सोनेरी झारी रूपेरी थारी कंचन कलस वधासां ए ॥ ३ ॥
घर घर री सव सखियां तेड़ासां हिल मिल मंगल गासां ए ॥ ४ ॥
मीरां कहै प्रभू गिरधर नागर हरिचरणा में चित लासां ए ॥ ५ ॥

३

चालो रे मनां सतगुरुजीरै चरणां । टेर ।
वा चरणॉ सूं आवागवन मिटत है पीछे क्या करणा ॥ १ ॥
देह धर्‌यां की याही है परम गति साधु संगति करणा ॥ २ ॥
चितरा चंवर करूं गुरां ऊपर मनमे ले उर धरणा ॥ ३ ॥
मीरां कहै प्रभू हरि अविनाशी छांड सकल भरमना ॥ ४ ॥

४

वधावो म्हारे नित नवलो म्हारे सतगुरुजी रो परताप। टेर।
सतगुरु आया पाहुना मैं काँई करू मनुहार।
हिवरा करू विछावना तन मन ऊपर वार ॥ १ ॥
केसर चदन गार घलाऊ घर आगणो निपवाय।
कचन कलस वधावस्या हिलमिल मगल गाय ॥ २ ॥
आगण वाही पल्ची हुयगई अम्बर बेल।
आज गुरुजी म्हारे पाहुना हिवड़ा में कूपल मेल ॥ ३ ॥
सद्गुरु चदन बावना सिख सतगुरुके दास।
सतगुरु हाट हीरा तणी म्हारे हिरदे भयो प्रकास ॥ ४ ॥
कहै कबीर धर्मदासनें अमृत पियो अघाय।
यो मन सदा रलियावणो म्हारे कुण आवे कुण जाय ॥ ५ ॥

५

म्हारे मन आज उमावो हो, रामसनेही आविया निज भाव वधावो हो ॥ टेर ॥
जन्म आज लेखे भयो धिन उदित अकूरा हो,
परम भाग्य परगट भयो मिल पकज सूरा हो ॥ १ ॥
पाँच सखी मेली भई मिल मगल गाया हो,
उर सरोजके चौक में सुख रास मडाया हो ॥ २ ॥
रग राग बाजा अनँत घर बटत बधाई हो,
मन गुलाल अबीर चित प्रेमा सरसाई हो ॥ ३ ॥
कोड कोड़ आनद भयो कोड़ाँ कोड बधाई हो,
ज्ञान भक्ति वैराग मिल मेरे घर आई हो ॥ ४ ॥
भावसदन सौंप्यो सजन गुरुदेव विराजे हो,
सब मनोरथ पूरवै हरिराम निवाजे हो ॥ ५ ॥
रामदास धिन धिन घड़ी धिन मोसर पही हो,
चाल वाल मिलज्यो सदा म्हाने राम सनेही हो ॥ ६ ॥

६

या दिनको मैं बलि जाऊं हो, मिले पियारे रामजन सन्मुख शिर नाऊं हो ॥ टेर ॥
करू दडोत परिक्रमा वन्दन वारवारा हो,
आज पधारे सतगुरु धिन भाग हमारा हो ॥ १ ॥
चोरासी फेरा टल्या जम दड मिटाया हो,
भर्म जाल भय भाजग्या आतम सुख पाया हो ॥ २ ॥

विधि वैकुंठ सदन फवै अठसठ तीरथ गंगा हो,
रामदास पदकंज परस उर भक्ति अभंगा हो ॥ ३ ॥

७

लोकां थानें लाख वधाई हो म्हारा सतगुरु आया आज
लोकां थानें लाख वधाई हो ॥ टेर ॥
भलीभई म्हांरे आंगण आया, जाण पुराणो नेह ।
आनंद भयो मन भावनो म्हांरे दूधां वूठो मेह ॥ १ ॥
भावतड़ा सतगुरु भेट्या मेट्या आल जंजाल ।
प्रभुजी दीनी प्रीत सूं म्हांने भक्ति श्रीगोपाल ॥ २ ॥
कर प्रणाम परिक्रमा देसां दुख दालद भव दूर ।
ऊगो सहेली आज नो म्हारे सोना हंदो सूर ॥ ३ ॥
हस्तराम प्रभु हरिमुख निरखै नैणा नैण निहार ।
वलिहारी गुरुदेवजी री मैं रही छूं लूण अवार ॥ ४ ॥

८

सइयां ज्ञानी गुरुजी वधासां हे, ऐसो मोसर
चूक के फेरूं कव पासां हे ॥ टेर ॥
चित कर चंदन अगर कस्तूरी कुंकुम लेसां हे ।
करणी री केसर घोल के वाके मस्तक देसां हे ॥ १ ॥
प्रेम फुलेल ले सनमुख जासां अमी रस पीधा हे ।
गुण की गुलाल उड़ाय गुरां पर सांच को सूधा हे ॥ २ ॥
धीरज थाल धरूं ले आगे करूं मन मोती हे ।
इस विध आरती संजोय गुरां की झिगामिग जोती हे ॥ ३ ॥
पाट पितांवर पांवड़ा विछावां सिरे पधरासां हे ।
दिल की दुरमति दूरकर विनती गुदरासां हे ॥ ४ ॥
भोजन भाव जिमाय गुरां नें ले मन्दिर माहीं हे ।
तीन लोक संपति सव वारूं तोहि ऊरण नाहीं हे ॥ ५ ॥
सतगुरु शरणै अभयपद पाया अमीरस पीसां हे ।
काल करम सवै मिट जासी जुगे जुग जीसां हे ॥ ६ ॥
ज्ञान गवाड़ विच सतगुरु भेट्या मेट्या मन खतरा हे ।
सुरतराम कहाँलों जस गावै जाणूं किया जितरा हे ॥ ७ ॥

९

सइयां सतगुरुजी रे जासां हे, सोई आज्ञा गुरुदेवकी
म्हे तो शीश चढ़ासां हे ॥ टेर ॥

कठ कमल में फूली गुल क्यारी अमीरस पीया है।
गुपता सा नैन गुरा म्हारा खोल्या ज्यों मन्दिर दीया है ॥ १ ॥
पूरणवद चौक चिच ऊगो हिरदे उजियाला है।
झिलमिल नूर गुराजीरा वरस्या ज्यू दीपक माला है ॥ २ ॥
भॅवर गुंजार नाभ घर माहीं मगल गासा है।
प्रेमरा कल्स गुरा ने वधासा वधाई बटासा है ॥ ३ ॥
घमके छै घूघर बाजे छै मुरली रास रच्यो छै है।
तू चढ बैठी गगनरा गोखा में अचना सुन्यो छे है ॥ ४ ॥
धिन शरणो सुखराम कहे नित फिरू छू फूली है।
सुखरा सागर गुरु दरियासा दुखडो सब भूली है ॥ ५ ॥

१०

आवो ए गावो सइया अणद बधावो म्हारे पाहुणा परम गुरु आज। टेर।
सोनैरो सूरज सइया इण पुल ऊगो म्हारे घर बैठा गगा आई आज ॥१॥
कथा कीर्तन सइया हरि गुण गार्सा म्हारे आगणिये छै सतारो समाज ॥२॥
लख चौरासी सइया दुखडैरी पासी कोइ हुवा छै बहुत अकाज ॥ ३ ॥
इण भवसागरसे म्हारा सद्गुरु तारे कोइ आपणे विरद की लाज ॥४॥
सुखदेव सागर में म्हारो मनडो झूले म्हारे सन्त सदाई सिरताज ॥५॥

११

घर आज हमारे आया परम गुरु पाहुणा ॥ टेर ॥
कचन कलश शीश धर कर में भर मोतियन को थाल।
जय जय शब्द होत चहुँ दिशि ते दरसन दिया दयाल ॥ १ ॥
केसर चन्दन तिलक चढाऊ पुष्प माल पधराय।
प्रेम प्रीति सू करू आरती सखियाँ मगल गाय ॥ २ ॥
बीण मृदग शख सहनाई बाजा बजत अपार।
जरी पाट पर परत पावडा आये भवन मझार ॥ ३ ॥
कर दडोत शीश धर चरणा तन मन अरपण कीन।
जन भावन सतगुरु पद परसत लाभ जनम को लीन ॥ ४ ॥

१२

सूरज सोनारो ऊगो सखीरी धिन आजनो ॥ टेर ॥
पावन भवन करण पग धारे सतगुरु सवही सत।
कथा कीरतन हरि गुण गावे आनद उदै अनत ॥ १ ॥
दरसन करत सबे नर नारी साचो राम सनेह।
प्रेम भाय चित चाव परस्पर दूधाँ बूठा मेह ॥ २ ॥

शीत प्रसाद लेत चरणामृत उरमें अधिक उमंग।
पावन पतित होत पल माहीं कर संतन को संग ॥ ३ ॥
संत समाज आज भल पायो दूर भया दुख द्वंद।
जन भावन सतगुरु दर्शन तें पायो परमानन्द ॥ ४ ॥

१३

राजभोग।

राग गूढ़ विलावल।

सतपुरुषांरै भोग लागै शब्द अनाहद घंटा वागै ॥ टेर ॥
प्रेम प्रीतिसे करी है रसोई अमृत भोजन पारस होई ॥ १ ॥
कंचन झारी सुकृत थाल जीमन वैठे श्रीराम दयाल ॥ २ ॥
पाय प्रसाद अँचवन कीनो महाप्रसाद दास कूं दीनो ॥ ३ ॥
दास एक कणका भर लीनो तातें काल भयो आधीनो ॥ ४ ॥
कहै कवीर हम भये हैं सनाथ जव सतगुरु मस्तक धरिया हाथ ॥५॥

१४

सतगुरु भोजन जीमो प्यारे, अपने जनपर कृपा कीजे जाउं सदा वलिहारे ॥ टेर ॥

पारब्रह्म परमेश्वर स्वामी आवो कृपा धारे।
श्री गुरुदेव दयानिधि आनंद संतनके हितकारे ॥ १ ॥
भाव भक्ति ले करूं रसोई श्रद्धा साग सवारे।
सुरत शब्द का चौका लाऊं चरण कमल वलिहारे ॥ २ ॥
करमॉवाई खीच पवायो उठ परभात सवारे।
शुचि संजम किरिया नहिं देखी प्रेम भक्ति के प्यारे ॥ ३ ॥
झूँठे करकर वन सूं लाये जाति अपावन नारे।
शवरी के फल रुचिकर पाये मीठे गिणे न खारे ॥ ४ ॥
दुर्योधनका मेवा त्यागे व्यञ्जन न्यारे न्यारे।
साग विदुर घर रुचिकर पाये पर्णकुटी पग धारे ॥ ५ ॥
भिलनी के वोर सुदामा के तन्दुल लीने वदन पसारे।
नामा का दूध धनाकी रोटी जुग जुग जन विस्तारे ॥ ६ ॥
मैं अजान कछु सेव न जानूं सेवा अगम अपारे।
सनक सनन्दन अर्जुन नारद ब्रह्मादि पचहारे ॥ ७ ॥
दीन छीन मतिदीन महा जड शरण पड़्यो दरवारे।
रामदास की श्रद्धा राखो लीजे भोग मुरारे ॥ ८ ॥

पद ११

अवसर आयो यार असीनो ।
आज सुदिन भयो भाग पूरबले पायो परम रसीनो । टेर
रह सू राम सदा रग राती आन भरमना भागी ।
अतर तार कबहु नहिं तूटे लिव चेतन सू लागी ॥ १ ॥
अहनिशि ध्यान धरू आतमको एके तन मन होई ।
ना कुल मात पिता नहि जायो दयाम हमारे सोई ॥ २ ॥
पाच पचीस मिल्या निज मनसू भया अचभा भारी ।
उलटा नाद विन्दु चरपाना गगन भरे पनिहारी ॥ ३ ॥
इला पिगला पास सहेली सुखमण सू घरवासा ।
राम निरजन रमें अकेला शून्य महल में वासा ॥ ४ ॥
निरभे राज भयो पतनीको अजर अमर वर कीना ।
जन हरिराम मिले महरम सू अरस परस लिव लीना ॥ ५ ॥

पद १२

म तो राम पिया सग खेलूगा होरी ।
साधु सगत मिल फागण आयो ज्ञान गुलाल उडोरी । टेर
पाच सखी मिल खेलन निकसी आज बसत उदोरी ।
प्रेम नीर पिचकारी दिलसू छूटत अमिट सजोरी ॥ १ ॥
सुधो प्रीति चित्तको चदन केसर महिमा घोरी ।
तन वृदावन गोप ग्वाल मिल दशमां द्वार रुल्योरी ॥ २ ॥
रास विलास अरूट सदाई बाजत है घन घोरी ।
पिव पत्नी मिल तत रग भीनी सो शिव जानत गोरी ॥ ३ ॥
इडा पिंगला सुषमण ना उन पायो वर घर जोरी ।
चाल्याल सतगुरु कृपातें धुन बिच ध्यान सझोरी ॥ ४ ॥

पद १३

ऐसे साधुसगति मिल खेलोरी होरी ।
साधुसगति अज शरर चाहे सुर नर नाग सकोरी । टेर
चोरासी फिर नर तनु पायो पूरब पुण्य मिलोरी ।
छूट गया पीछे पछितासो क्यू न सफल करलोरी ॥ १ ॥
पर हित सत पुकार कहत हैं यो जग जाल तजोरी ।
कोटि निनाणू राजा रमिया सो सुन साख भरोरी ॥ २ ॥
गुरु गम फाग खेल हुय सनमुख ज्ञान गुलाल गहोरी ।
प्रेम सजल पिचकारी छूटत नख शिख भीज रहोरी ॥ ३ ॥

चित चंदन गुरु गाल अरगजो चोवा गुन चुनोरी।
सूंघो सुरत लगाय रैन दिन अनहद नाद सुनोरी ॥ ४ ॥
भक्ति परा जिव पाय परम पद निश्चल होय रहोरी।
जनम मरण फेरा मिट जावै नव तत देह दहोरी ॥ ५ ॥
अनंतकोटि रम पार पहूंता गुरु गोविंदसे जोरी।
सेवगराम सतगुरु संग खेलै औ सरसाज सझोरी ॥ ६ ॥

पद १४

राम रसीले से रंग रच्यो म्हारै आज वसंत को खेल। टेर.
प्रेम नीर पिचकारी दिलसे छूठत चहुं उर झेल ॥ १ ॥
अधः ऊर्ध्व विच खेल मँड्यो है सुरत शब्द को मेल ॥ २ ॥
धुनविच ध्यान ज्ञान जहाँ अनुभव जनम मरण दुख पेल ॥ ३ ॥
ग्वालवाल रस राम रमैयो रामदास गुरु खेल ॥ ४ ॥

पद १५

नितही वसंत नित फाग मंगल होरी खेलो। टेर.
दया धर्म की केसर घोरी प्रेम प्रीति पिचकार।
भाव भक्ति से भर सतगुरु संग जनम सफल नर नार ॥ १ ॥
क्षमा अबीर चित चंदन सुमरण ध्यान धमार।
ज्ञान गुलाल अगर कस्तूरी उमग उमग रंग डार ॥ २ ॥
चरणोदक अरु महाप्रसाद अपणे शीस चढाय।
लोक लाज कुल कॉण छॉडिदै निरभै निसाण वजाय ॥ ३ ॥
कथा कीर्तन मंगल महोत्सव कर संतन से सीर।
कबहु न काज विगरै नर तेरो सत सत कहत कबीर ॥ ४ ॥

पद १६

खेलन वहुरि न आवूं ऐसा खेलूंगा मैं खेल। टेर.
सुलट खेल वहु जनम वदीता अवके उलटा खेल ॥ १ ॥
रसना कंठ हृदय हुय हिल मिल नाभि कमल रंग रेल ॥ २ ॥
पैठ पयाल आकाश उलट चढि वंक नीझरझर झेल ॥ ३ ॥
तृकुटी घाट न्हाय हुय निर्मल जन्म मरण दुख पेल ॥ ४ ॥
फागुन साधु संगति गुरु समरथ सेवगराम मिल्यो मेल ॥ ५ ॥

पद १७

श्याम से खेल सखी री नित आनंद मंगल होरी। टेर.
सुषमण होरी खेलण निकसी ज्ञान कुमकुमा घोरी।

पद २२

ऐसी होरी को औसर आयो।
सुर दुरलभ ब्रह्मादिक चाहैं सो नर तन तैं पायो।
अरे क्यों हरि विसरायो। टेर
जा दिन तैं हरि तैं बिछुर्‍यो जब तैं जीव नाम धरायो।
प्रभु वेमुख कर मन ल प्रेर्‍यो जोनी अनेकन धायो।
जहाँ जम हाथ विकायो ॥ १ ॥
सुरपुर कबहु देव तनु पायो कबहु पाताल पठायो।
कबहु पशु पक्षी को तन थिर कबहू नहिं आयो।
पलक विसराम न पायो ॥ २ ॥
निज मुख नाम सुधारस कू तजिके तैं विषय विष खायो।
हरिसो हीर अमोलख हार्‍यो काच किरच मन लायो।
वृथा नर देह गमायो ॥ ३ ॥
परवस होय मूढ मरक्ट ज्यू निशि दिन नाच नचायो।
जन भावन अब राम सुमरले वेद पुराणा मे गायो।
कहा भव माहिं भुलायो ॥ ४ ॥

पद २३

होरी खेलन की ऋतु आई।
सतन की सत सगत मं हरि रगन की झरि लाई।
उमग नहिं मनमें समाई। टेर
इला पिंगला सुपमण सी सजनी रजनी मे रमाइ।
आतम रूप पिया अल्बेला ताहिसे खेल खिलाई।
रली रलि के ललचाई ॥ १ ॥
सुरत निरत की भर पिचकारी सुमति सखी ने चलाई।
प्रानप्रिया प्रभु के उरलागी हरप हिये लपटाई।
सुहागन साची कहाई ॥ २ ॥
अध ऊरध के अबर मं अनुभव की अबीर उडाइ।
ज्ञान गुलाल चली चहु दिशि झुकि प्रेम घटा बरपाई ॥
नेह नदिया उमगाई ॥ ३ ॥
आदि पुरुप अविनाशी के सगर्म शून्य की सेज विछाई।
जन भावन बज आवन जावन पावन प्रीति बढाई।
सखी सुख माहिं समाइ ॥ ४ ॥

पद २४

होरी खेलन की ऋतु भारी ।
नरतनु पाय भजन कर हरि को ओ मोसर दिन चारी ।
अरे अब चेत अनारी । टेर.
ज्ञान गुलाल अबीर प्रेम कर प्रीति तणी पिचकारी ।
सास उसास राम रंग भरभर सुरति सरीसी नारी ।
खेल इन संग रचारी ॥ १ ॥
सुलटो खेल सकल जग खेलै उलटो खेल खिलारी ।
सतगुरु सीख धार शिर ऊपर सतसंगति चल जारी ।
भरम सब दूर गमारी ॥ २ ॥
ध्रुव प्रहलाद विभीषण खेलैं मीरां करमा नारी ।
जन भावन जगमें इमि खेलै सो नहि आवत हारी ।
सखी सुन लीज्यो हमारी ॥ ३ ॥

पद २५

होरीया रंग खेलन आवो ।
इला पिंगला सुषमण नारी ता संग खेल खिलावो ।
सुरत पिचकारी चलावो । टेर.
काचो रंग जगत को छाडो साचो रंग लगावो ।
वाहिर भूल कबहू मति जावो काया नगर वसावो ।
तवै निरभै पद पावो ॥ १ ॥
पांचू उलट घेर घट भीतर अनहद नाद वजावो ।
सब बकवाद दूर तज दीजै ज्ञान गीत नित गावो ।
पिया के मन तब भावो ॥ २ ॥
तीनूं ताप तीन गुण त्यागो संशय शोक नसावो ।
जन भावन हित सूं नित गावो फेर जनम नहिं पावो ।
जोति में जोति समावो ॥ ३ ॥

होरी सोरठ ।

पद २६

तुम पी रे अवधू हुय मतवाला प्याला प्रेम हरी रसका । टेर.
बालपणो हंस खेल गुमायो तरुण भयो तिरिया वसका ।
वृद्ध भयो कफ वायुज घेर्‍यो पड्यो रह्यो नहिं जाय मुसका ॥ १ ॥
पाप पुण्य दोय भुगतण आयो कुण तेरा और तूं किसका ।
केई दिनजीवड़ा हरी गुण गायले तन जोबन सुपना निशिका ॥ २ ॥

चकोर अग्नि को चुगता है पहले ध्यान धरे शशिका ।
राम रसायन हरिजन पीवे और जगत गाहक विषका ॥ ३ ॥
चोरासी सू छूट्यो चाहै तज कनक कामिनी का चसका ।
चरणदास शुकदेव कहत है नख शिख सर्व भऱ्या विषका ॥ ४ ॥

पद २७

तुम सतो खेलो सभारी जग होरी मचरही बहु भारी । टेर
जड़ चेतन दोय रूप बन्या है एक कनक दूजी नारी ।
पाच पचीस लियाँ सग अबला सबला हस मिल गावै गारी ॥ १ ॥
ब्रह्म कपाट है या करम डफ मे बड़ मे बड़ की तारी ।
निगुण तार तबूरा बाजे आशा तृष्णा गति न्यारी ॥ २ ॥
पाप पुण्य दोय भर पिचकारी छूटत है वारबारी ।
सन्मुख हुय जो नर खेलै ताकै छींट लगै नहिं कारी ॥ ३ ॥
कुमति गुलाल डार मुख मींडे काम कला पटली मारी ।
सुर नर मुनिजन पीर अवलिया भीज रह्या सब ससारी ॥ ४ ॥
चोवा चदन और अरगजा माया की गागर भारी ।
षट दरशन छिनवे पाखडा पकड़ किये सब बेगारी ॥ ५ ॥
चतुरा फगवा देदे छूटा मूरख को लागै प्यारी ।
कहै कबीर सुणो भाई साधो निरगुण ज्ञान गली न्यारी ॥ ६ ॥

पद २८

उठरी होरी होय रही तू कहा पड सोवैरी । टेर
रैन गई तो जानदे सजनी दिन मत खोवैरी ॥ १ ॥
और सखी मिल बसत बधावे तू क्या जोवैरी ॥ २ ॥
खेलन खेल बण्यो अति नीको सब जग मोवैरी ॥ ३ ॥
कहै कबीर सुणो भाइ साधो बहुरि जन्म नहि होवैरी ॥ ४ ॥

पद २९

सइया बेदिन कद आवैला केसू फूलैला । टेर
केसू फूलै आंबा मोरै कोयल अवलैरी डाल ।
हस्ती घोड़ा माल खजाना सुपने कैसा ख्याल ॥ १ ॥
बीण बजती रह गई सजनी टूट गइ सब तार ।
बीण बिचारी क्या करे गये बजावण हार ॥ २ ॥
धमण धमती रहगई सीला पड़्या अगार ।
अहरण का ठमका मिस्यारी लाद चले लोहार ॥ ३ ॥
सदा न जोबन थिर रहै सदा न बाग फुलाय ।
शाह अकबर कबीर गुसाइया बारी गये बजाय ॥ ४ ॥

लोय

पद ३०

वो घर सतगुरु क्यों न बतावो जिण घर सूं जिव आया वे।
काया छॉडि चलै जब हंसो कहो नी कहाँ समाया वे टेर.
मै मेरी ममता के कारण वारंवार ठगाया वे।
समझ न पड़ी ज्ञान गुरुगमकी तातें फिर भटकाया वे ॥ १ ॥
रज वीरज दोऊँ नहिं होता जद जीव कहॉ समाया वे।
ब्रह्मा विष्णु महेश न होता आदि न होती माया वे ॥ २ ॥
चंद न सूर दिवस नहिं रजनी जहां जाय मट छाया वे।
सुरत सुहागण पाव पलूसे पीव आपणा पाया वे ॥ ३ ॥
मेरी प्रीति पिया सूं लागी उलट निरंजन ध्याया वे।
कहै कवीर सुणो भाई साधो परे ही के परै वताया वे ॥ ४ ॥

पद ३१

तन धर सुखिया कोइ न देखा जो देखा सो दुखिया वे। टेर.
शुक आचारज दुखके कारण गर्भ में माया त्यागी वे।
घाटॉ वाटाँ सब जग दुखिया क्या गृही वैरागी वे ॥ १ ॥
सांच कहूं तो कोई न मानै झूठी कही न जाई वे।
ब्रह्मा विष्णु महेश्वर दुखिया जिन या मांड रचाई वे ॥ २ ॥
जोगी दुखिया जंगम दुखिया तपसी को दुख दूना वे।
आशा तृष्णा सब घट व्यापै कोई महल नहिं सूना वे ॥ ३ ॥
राजा दुखिया परजा दुखिया रंक दुखी धन रीता वे।
कहै कबीर सबे जग दुखिया कोई साधु सुखी मन जीता वे ॥ ४ ॥

पद ३२

अवधू जोगी जुग जुग जीवै हरि रसका प्याला पीवै। टेर.
ज्ञान भानु अंतर में प्रगट्या भया उजाला सब सूझै।
परचा प्राण रमैं ब्रह्मंड में या विधि कोइ विरला बूझै ॥ १ ॥
सहजॉ चढ्यो अगम को पाणी वरपै धरणि गगन भींजै।
सींच्या वाग घनी हरियाली उस वाड़ी मे चित दीजै ॥ २ ॥
फूटी वास वहुत फूलन की भॅवर वस्या वाड़ी के माहिं।
रह्या लुभाय लह्या सुख सारा अब पीछा आवन का नाहिं ॥ ३ ॥
अम्मर रूख कबू नहिं सूखै दावा झोला लगै न कोय।
मूलदास ताका फल पावै वो जोगी अम्मर होय ॥ ४ ॥

पद ३३

शब्द फकीर अनाहद राता मैं घर अकुला के जाऊगा।
ब्रह्मा विष्णु महे वर तीनू दश अवतार न ध्याऊगा। टेर
बैठा रहू न फिर कर लाऊ भूखा रहू न अघाऊगा।
पथर्वे जाय पान नहिं तोडू धर बठा ऋधि पाऊगा ॥ १ ॥
तीरथ जाउ न जलमें न्हाऊ जलका जीव न सताऊगा।
अडसठ तीरथ गुरू रखाया घटही भीतर न्हाऊगा ॥ २ ॥
पाती तोड पथर नहिं पूजू देवी देव न ध्याऊगा।
पात पात में है पुरुषोत्तम वाकू नाहिं सताऊगा ॥ ३ ॥
जडी बूँटी औषधि नहिं साधूं नाड़ा वेद्य न लाऊगा।
सतगुरु वैद्य मिल्या अविनाशी ताकू नाडि दिखाऊगा ॥ ४ ॥
चद सूर दोउ सम कर राखू सुन में सुरति समाऊगा।
कहे कबीर सुनो भाई साधो ब्रह्मजोति मिल जाऊगा ॥ ५ ॥

पद ३४

ऐसा हाल फकीरों हदा सुणलीज्यो सब कोई वे।
स्वग मृत्यु पाताल लोकता फिकर फकीरा खोई वे। टेर
टोपी तरन सुमरणा चितवन सांगी अनहद सोई वे।
नाम निरतर चोला पहन्या सैली सुरत सुमोइ वे ॥ १ ॥
जत कोपींद आड्वध सत का मगन मतगा सोइ वे।
सिरजनहार तिलक शिर ऊपर सुमरण कठी पोइ वे ॥ २ ॥
धूणी ध्यान लगाय रैणदिन फिकर पावोड़ा पोई वे।
आशा तृष्णा अधिक लाकडी धूणी माहि धसोई वे ॥ ३ ॥
भिक्षा भाव सहज की चीपा झोली अकलन टोइ वे।
जो मांगे ताही कों देवै ऊच नीच नहिं कोई वे ॥ ४ ॥
सेज्या भूमि आकाश ओढ़णा जोति चद्रमा जोइ वे।
निशि दिन पवन करत खवासी दृढ आसण पर सोइ वे ॥ ५ ॥
सदा उदास रहत जगत सू निस्पृही निरमोही वे।
तातें तीव्र वैराग्य धारणा राग द्वेष नहि कोइ वे ॥ ६ ॥
एका एकी रहत रैण दिन दिलकी दुमति खोइ वे।
कहत कबीरा अलमस्त फकीरा रावरक नहिं कोई वे ॥ ७ ॥

राग सून।

पद ३५

कहोजी सखी साधोजी क्या मिल साचो म्हारो सिरजन हार। टेर
म्हांरे आगणे है सखी मोरी अवलारी डाल।
जिण पर बैठी कायली बोलै शब्द रसाल ॥ १ ॥

किस विधि काली कोयली किस विधि राता नैण ।
किस विधि आमण दूमणी क्यूं थारा मधुरा वैण ॥ २ ॥
विरह व्यथा तन साँवली रोय रोय राता नैण ।
राम विछोहे आमणदूमणी सुमरण मधुरा वैण ॥ ३ ॥
थारै कोयल पॉखड़ी उड मिल क्यों नहिं जाय ।
जाय मिल सगुणा श्याम सूं विरहनि धान न खाय ॥ ४ ॥
गल विच डारूं गूदड़ी करलूं जोगण भेश ।
जाय मिलूं सगुणां श्याम सूं तो सॉचो उपदेश ॥ ५ ॥
मो मे अवगुण अति घणा तुम गुणवंता श्याम ।
दयाकर दरशण देवो कान्हड़ के पति राम ॥ ६ ॥

पद ३६

आशा में अलूझी रामैयो कव मिलै मिलियां हरिने जाण न देह ।
अंचलो झालीने हरिने राखलूं नैणा म्हारै नीर भरेह । टेर.
राम रहूको म्हारै मनवस्यो विसारूं पण विसर्‌यो न जाय ।
एक घड़ी जो वीसरूं हिरदै खटू के आय ॥ १ ॥
जव सोऊं जव दोय जणां जव जागूं जव एक ।
सेज ढ़ंढ़ोरी पिव पायो नहीं हिवड़ा में पड़ गयो छेक ॥ २ ॥
वेर लगाई म्हारा वालमा विरहिन करत विलाप ।
कोइयक आडा होगया पूरव जनम रा पाप ॥ ३ ॥
वालपणेरी प्रीतड़ी वूढापै लग दीठ ।
कहै वखनो आवो हरी जरतां वुझावो अंगीठ ॥ ४ ॥

पद ३७

वालूॅ रे विधाता थारे लेखने हरि विच लिख्यो रे विजोग ।
करम रेख कद पालटै कव हरि मिलन संजोग । टेर.
दव की दाधी लाकडी सिलग सिलग धूंधाय ।
त्रास भली विरहजु वुरा मोपैं सह्यो न जाय ॥ १ ।
सांप लड़ो विच्छण डसो सिंहज मारो मोय ।
अग्नि जलूं जलमें वहूं राम न छॉडूं कोय ॥ २ ॥
गजके हित हरि आविया प्रगट्या हित प्रहलाद ।
चीर वधार्‌यो द्रौपदी वाकी राखी लाज ॥ ३ ॥
वालखिल्य राख्या डूवता हरि धार्‌यो अवतार ।
दास कवीरो वीनवै गया समंदॉ पार ॥ ४ ॥

आव हमारे पीतमा वलि जाउं मैं तेरे हो।
ज्यूं चातक जल बूंदकूं विरहनि यूं टेरे हो॥ १॥
वाट तुमारी जोवतां केता दिन वीता हो।
तुमरे तो खातर नहीं हुय रह्या नचीता हो॥ २॥
राम विछोहै मैं दुखी मन करत अनोहा हो।
पाचूं वैरण हुय रही वां कियां विछोहा हो॥ ३॥
दुख मेटण सुखसागरा निरधारां आधारा हो।
सहजराम की वीनती घर आवो मेरा प्यारा हो॥ ४॥

पद ४२

ऐसी मोहि रैन विहाई हो।
कौन सुनै कासूं कहूं वरनी नहिं जाई हो। टेर.
पूरण ब्रह्म विचारते मोहि नींद न आई हो।
जागत जागत जागियो सूते न सुहाई हो॥ १॥
कारण लिंग स्थूल की सव शंक मिटाई हो।
जाग्रत स्वप्न रु सुषुप्ति तीनों विसराई हो॥ २॥
तुरिया पद अनुभव भयो ताकी सुध पाई हो।
अहंब्रह्म के कहत ही हूं यो गयो विलाई हो॥ ३॥
वचन तहाँ पहुंचै नहीं यों सैन वताई हो।
सुंदर तुरियातीत में सुरती ठहराई हो॥ ४॥

पद ४३

सखी म्हारी नींद नसानी हो।
पिव को पंथ निहारताँ सारी रैण विहानी हो। टेर.
सव सखियां मोहि सीखदे मन एक न मानी हो।
विन दरशन कल ना परै मन ऐसी जानी हो॥ १॥
अंग क्षीण व्याकुल भई मुख मधुरी वानी हो।
अंतर वेदन विरह की पिव पीर न जानी हो॥ २॥
चातक ज्यूं घन कों रटै मछली विन पानी हो।
जन तुरसी पिव विन मिले सुध वुध विसरानी हो॥ ३॥

पद ४४

दरद की कासे कहिये हो।
वेदरदी जाणै नहीं अपणे तन सहिये हो। टेर.
पड़दे पावक परजली उर अंतर दाधी हो।
धूंवा झाल दीसे नहीं विरहिन डस खाधी हो॥ १॥

राग सोरठ ?गद्दी।

पद ३८

पिया तोरे नाम लुभानी हो।
नाम लेत तिरता सुण्या जैसे पाहन पानी हो। टेर
सुकृत कपड्ड ना कियो बहु काम कमानी हो।
गनिका कीर पढावता वैकुंठ पठानी हो॥ १॥
अर्ध नाम कुंजर लियो बाकी अवधि घटानी हो।
गरुड छॉड हरि आविया पशु जूण छुडानी हो॥ २॥
जो नाम हमारे गुरु दियो सोइ वेद बखानी हो।
मीरा दासी बारणैं अपनी कर जानी हो॥ ३॥

पद ३९

पिया तैं प्रीति न जानी हो।
तलफ मुई तुम कारणे तुम चित्त न आनी हो। टेर
मीनजु तल्फै नीर कू नहिं जानत पानी हो।
दया न आई देखता मन ऐसी ठानी हो॥ १॥
पडत पतंगा आगमें कछु दीप न मानी हो।
प्रीति की रीति विचारता भइ देह की हानी हो॥ २॥
प्रीति करी मृग नाद सू कछु नाहिं ज छानी हो।
सुखसें वैणु बजाय के शर मार्‍यो तानी हो॥ ३॥
प्रीति गयाँई क्यों बनै सुनो सारंगपानी हो।
दास कू अंग लगाइये तुम हो सुख दानी हो॥ ४॥

पद ४०

काहू सें नेह न करिये रे।
नेह किया निश्चै सही विन पावक जरिये रे। टेर
जग की झूठी मिलनता मिल बंधन परिये रे।
बंध छोड़ निरबंध हो सुख सिंधु विचरिये रे॥ १॥
यो जग पावक रूप है जामें पॉव न धरिये रे।
यो ही ज्ञान विचार के हरि पथ विचरिये रे॥ २॥
सुत दारा सब झूठ है येतो देखत मरिये रे।
तुरसी वन मन वारकै हरि नाम उचरिये रे॥ ३॥

पद ४१

रामैयो मित्र हमारो हो।
तुम बिन बीजो को नहीं जोयो जग सारो हो। टेर

आव हमारे पीतमा वलि जाउं मैं तेरे हो।
ज्यूं चातक जल वूंदकूं विरहनि यूं टेरे हो॥ १॥
वाट तुमारी जोवतां केता दिन वीता हो।
तुमरे तो खातर नहीं हुय रह्या नचीता हो॥ २॥
राम विछोहै मैं दुखी मन करत अनोहा हो।
पाचूं वैरण हुय रही वां कियां विछोहा हो॥ ३॥
दुख मेटण सुखसागरा निरधारां आधारा हो।
सहजराम की वीनती घर आवो मेरा प्यारा हो॥ ४॥

पद ४२

ऐसी मोहि रैन विहाई हो।
कौन सुनै कासूं कहूं वरनी नहिं जाई हो। टेर.
पूरण ब्रह्म विचारते मोहि नींद न आई हो।
जागत जागत जागियो सूते न सुहाई हो॥ १॥
कारण लिंग स्थूल की सव शंक मिटाई हो।
जाग्रत स्वप्न रु सुषुप्ति तीनों विसराई हो॥ २॥
तुरिया पद अनुभव भयो ताकी सुध पाई हो।
अहंब्रह्म के कहत ही हूं यो गयो विलाई हो॥ ३॥
वचन तहाँ पहुंचै नहीं यों सैन वताई हो।
सुंदर तुरियातीत में सुरती ठहराई हो॥ ४॥

पद ४३

सखी म्हारी नींद नसानी हो।
पिव को पंथ निहारतॉ सारी रैण विहानी हो। टेर.
सव सखियां मोहि सीखदै मन एक न मानी हो।
विन दरशन कल ना परै मन ऐसी जानी हो॥ १॥
अंग क्षीण व्याकुल भई मुख मधुरी वानी हो।
अंतर वेदन विरह की पिव पीर न जानी हो॥ २॥
चातक ज्यूं घन कों रटै मछली विन पानी हो।
जन तुरसी पिव विन मिले सुध वुध विसरानी हो॥ ३॥

पद ४४

दरद की कासे कहिये हो।
वेदरदी जाणै नहीं अपणे तन सहिये हो। टेर.
पड़दे पावक परजली उर अंतर दाधी हो।
धूंवा झाल दीसे नहीं विरहिन डस खाधी हो॥ १॥

ज्यू सूरा रणखेत में लोहा तन सहिये हो।
ब्यावर केरी पीर को बझा किम लहिये हो ॥ २ ॥
हुलस्या नर हासी कर वेदरदी विचारा हो।
परमानद की वीनती सुन साहिब प्यारा हो ॥ ३ ॥

पद ४५

लगै मोहि राम पियारा हो।
प्रीति तजी ससार से किया मन न्यारा हो ॥ टेर
सतगुरु शब्द सुनाइया दिया ज्ञान विचारा हो।
भरम तिमर भागे सबै घट भया उजियारा हो ॥ १ ॥
मैं वदा उस ब्रह्म का जाका वार न पारा हो।
ताहि भजै कोइ साधवा जिन तन मन मारा हो ॥ २ ॥
चाख चाख सब छोडिया माया रस खारा हो।
राम अमीरस पीजिये छिन वारवारा हो ॥ ३ ॥
आन देव को ध्यावसी जाके मुख छारा हो।
राम निरजन ऊपरे जन सुदर वारा हो ॥ ४ ॥

पद ४६

ऐसा जन रामजी को भावे हो।
कनक कामनी परिहरै नहिं आप बधावे हो। टेर
सब ही ते निरवैरता काहू न दुखावे हो।
शीतल वाणी वोल के अमृत वरसावै हो ॥ १ ॥
कैतो मुनी होय रहै कै हरि गुण गावे हो।
भरम कथा ससार की सब दूर भगावै हो ॥ २ ॥
पाँचू इद्री वस करै मनही मन लावै हो।
काम क्रोध मद लोभ को खिण खोद बधावै हो ॥ ३ ॥
चौथे पद को चीन्ह के वहा जाय समावै हो।
सुदर ऐसे साधु के ढिग काल न आवै हो ॥ ४ ॥

पद ४७

समझ मन मूरख गैला रे।
बाहिर धोया क्या भयो घट भीतर मैला रे। टेर
काम दिवानो यों फिरै जैसे छाल्या में छैला रे।
वडी वडी कर छोलसी छुरिया धार सहेला रे ॥ १ ॥
मन कहै मीठो जीमले माणीजै महिला रे।
सुख जेता दुख ऊपजै चोरासी सहेला रे ॥ २ ॥

ठकुराई दिन चारकी सुखपाल वहैला रे।
नाम विना पहुंचै नहीं यहां को यहां ही रहैला रे ॥ ३ ॥
पांच संगाती संगमें गुरजॉ वाण सहैला रे।
कहै कवीर समझ्यां विना कांई उत्तर दैला रे ॥ ४ ॥

राग सोरठ रायसा।

पद ४८

पिया तुम देखो मेरी ओर हो ओर।
कांई होयरहे चितचोर हो चितचोर। टेर.
ऊंचा तरवर गहरी छाया शाखा पात सदन फल लाया।
तापर टाली सदन वनाया नाहिंन दूजी ठोर हो ठोर ॥ १ ॥
पूर्व जन्म की प्रीति विचारो अवगुण मेरा चित्त न धारो।
ज्यूं वायस वल जहाज विचारो नाहिंन दूजी दोर हो दोर ॥ २ ॥
भॅवरी भारत माहिं पुकारी लज्जा राखी पांडवनारी।
मंजारी सुत अग्नि प्रजारी गज के तंतू तोर हो तोर ॥ ३ ॥
उत्तरा जरत गरभ को राखे प्रीति काज अर्जुन रथ हांके।
झूठे वोर भीलनी के चाखे भीषम को पण जोर हो जोर ॥ ४ ॥
करमा खीच प्रीतिकर पायो विनतेड़ै विदुर घर आयो।
विप्र सुदामो तंदुल लायो सो लीने पट छोर हो छोर ॥ ५ ॥
शरण आयां की सहाय करीजे वांह गह्यां की लाज वहीजे।
जन पूरण को दरशन दीजै गुरु मस्तक के मोर हो मोर ॥ ६ ॥

पद ४९

पिया तुम देखो मेरी पीरहो पीर।
तुम गुणवंता गंभीर हो गंभीर ॥ टेर.
जग जीवन जग अंतरजामी सकल शिरोमणि सवके स्वामी।
विरद तुमारो है घननामी तुम सुखसागर की सीर हो सीर ॥ १ ॥
अपने स्वारथ में रंग राता परकी पीर न जान हो दाता।
समरथ स्वामि निरंजन नाथा आन वंधावो धीर हो धीर ॥ २ ॥
अजामिल कुब्जा कूं तारे वहुता अपती पतित उधारे।
इन सवहिन के कारज सारे मोमे कहा तकसीर हो तकसीर ॥ ३ ॥
विनती वार वार कहा कीजे लाज विरद की राज वहीजे।
जन पूरण को दरशण दीजे पार उतारो तीर हो तीर ॥ ४ ॥

पद ५०

अबै म्हाने पार उतारो महाराज प्रभु थाने निज भगतारी आन। टेर
काम क्रोध मद लोभ मोहमें भूलो पद निरवान।
बुडो जात हू भवसागर में तारो श्याम सुजान ॥ १ ॥
लख चोरासी भरमत भरमत मोड़ी पडी पिछान।
अब तो शरण आयो चरणाँरी थे मत दीज्यो जान ॥ २ ॥
मैं हू कुटिल अधम अपराधी भजियो नहिं भगवान।
कह नरसी तुम पतित उधारण गावै छै वेद पुरान ॥ ३ ॥

पद ५१

थे थांके कानी जोज्यो राज अवगुण म्हाँरा मति देखो। टेर
अधम उधारण नाम तुम्हारो पतो मनमें हिल मिल पेखो ॥ १ ॥
माणसछा म्हाँने नही ठिकाणो तुम बिन किणपर करा परेखो ॥ २ ॥
भजनदजी म्हाने थाका कहै छै जेज करो छो राज ओ काई लेखो ॥ ३ ॥

पद ५२

कायमा कीर्ति करूला रे तू मोटो दातार।
सबर्त सिरजीला साहिबजी तू मोटो करतार। टेर
चौदह भवन भाँजे घड़े घड़त न लावै वार।
थपै उथपै तू धणी धिन धिन सिरजनहार ॥ १ ॥
धरती अबर तैं किया पाणी पवन अपार।
चाद सूरज दीपक रच्या रैण दिवस विस्तार ॥ २ ॥
ब्रह्मा शकर त किया विष्णु लियो अवतार।
सुर नर साधु सिरजिया करले जोव विचार ॥ ३ ॥
आप निरजन हुय रह्या कायमो कोतकहार।
दादू निगुण गुण कहै जाऊगा बलिहार ॥ ४ ॥

राग सोरठ सूबा।

पद ५३

कोई प्रीतम राम मिलावै रे।
प्यासलगी चातक ज्यू सजनी और न कछू सुहावै रे। टेर
सहज शृगार भयो पावक सम दिन दिन विरह सतावै रे।
है कोई ऐसा पर उपकारी हरिजीने आन मिलावै रे ॥ १ ॥
सोई साधु सो पर उपकारी मो उर साल मिटावे रे।
स्वाति बूद ज्यों सींच सनेहा अब मोहि मरत बँचावै रे ॥ २ ॥
कहा करू करुणानिधि स्वामी अब कछु कहत न आवै रे।
अब तुरसी विरहनि व्याकुलता बिन दरसन बिललाव रे ॥ ३ ॥

पद ५४

वाहवारे मोज फकीरांदी। टेर.
कभी इक खासा मलमल मौसर कभी इक गुदड़ी लीरांदी ॥ १ ॥
कभी इक वासी टुकड़ा मौसर कभी इक चावल खीरांदी ॥ २ ॥
कभी इक आसण राजमहल में कभी इक गली अहीरांदी ॥ ३ ॥
वात जगत की कछु न सुहावै सीख सुणी गुरु पीरांदी ॥ ४ ॥
कहत कबीर सुणो भाई साधो चालैचाल अमीरांदी ॥ ५ ॥

पद ५५

सुलतानी मियाँ बलख बखारेदा।
धिन या वांदी गुरू हमारे राहवताया पिवण्यारेदा। टेर.
चेरी सूती खरी विगूती चाबुक चोट चकारेदा।
पातशाह सूं किया जवावू येही हाल तुमारेदा ॥ १ ॥
सवा टॉक तन चोला पहरे पॉच टॉक तन सारेदा।
अब तो बोझ उठावण लागा गूदड़ सेर अठारेदा ॥ २ ॥
चंगीचीज निवाले लेता ताती तुरत तयारेदा।
अब तो टूका पावण लागा सीला सांझ सवारेदा ॥ ३ ॥
दलवादल ले लश्कर चढ़ता पड़ती धौह नगारेदा।
अब तो प्यादा चालणलागा त्याग लिया पेजारेदा ॥ ४ ॥
इतनी तजकर लिवी फकीरी धिन आकीन विचारेदा।
कहै कबीर सुणो भाई साधो फकर ज्ञान अखारेदा ॥ ५ ॥

राग सोरठ।

पद ५६

वे दिन कब आवै हे माय।
जा कारण या देह धरी मिलवो अंग लगाय। टेर.
जे जाणूं मैं हिल मिल खेलूं तन मन सुरत समाय।
या कामना करो परिपूरण समरथ हो रामराय ॥ १ ॥
मैं उदास माधव नित चाहूं चितवत रैण विहाय।
सेज हमारी सिंह भई है जब जागूं जब खाय ॥ २ ॥
यह अरदास दासन की सुणियै तनकी तप्ति बुझाय।
कहै कबीर मिलो सुखसागर मिलकर मंगल गाय ॥ ३ ॥

पद ५७

माई मेरी हरि नहिं पूछी वात।
पिंड माँहिलो प्राण पापी निकस क्यों नहिं जात। टेर.

पाट न खोलै मुखाँ न बोलै साम नहीं परभात।
अबोलणे में अवधि बीती काहे की कुशलात ॥ १ ॥
स्वप्नमें हरि दरशण दीन्हो मैं न जाण्यो हरिजात।
नैन हमारे उघरि आए मरौंगी विष खात ॥ २ ॥
रैन अंधेरी विरहिन घेरी तारा गिणत विहात।
काढ खड्ग कठ कापलौंगी करौंगी अपघात ॥ ३ ॥
आवन आवन कहि गये मोहि मिलनकी ख्यात।
दास मीराँ भई व्याकुल बालकज्यों बिललात ॥ ४ ॥

पद ५८

जोगिया ने राखो रे बिलमाय। टेर
ऊठो पाच सहेलियाँ लागाँ जोगिया रे पाय।
इण जोगियारे मन काइ वसी जी म्हारी नगरी छोड्याँ जाय ॥ १ ॥
तो बिन जोगी झूँपड़ीरे वाला जगल वघेली जाय।
इण नगरी री बातड़ी कुण कहैला आय ॥ २ ॥
शरणै आयो बहु सुख पायो अब क्यू छोड्याँ जाय।
कमर कशी परदेशने कवै मिलैगे आय ॥ ३ ॥
शरणो त्याग्यो बहु दुख पायो दियो चोरासी मॉय।
कहत कबीर सुणो भाइ साधो कुण आवै कुण जाय ॥ ४ ॥

पद ५९

जोगियाजी हो मत जाज्यो बचना पेल। टेर
आवतड़ा आनद हुवो रे जोगी जाता करगयो हेल।
थारा शब्द सुहावणा रे जोगी म्हारे अतर वहगयो शेल ॥ १ ॥
म्हारो जिवड़ो थामें बसे रे जोगी ज्याँ दीपक में तेल।
म्हैं तो मनमें जाणियो रे जोगी करसी म्हासू खेल ॥ २ ॥
सूरत थारी जीवनम्हारी रे जोगी योही रामत खेल।
रूपदास की वीनती रे जोगी कदे मिलेगो मेल ॥ ३ ॥

राग सोरठ।

पद ६०

मेरो मन हरि हठ नाहिं तजै। टेर
ज्यों युवती अनुभव प्रसवती दारुण दुख उपजै।
हुय अनुकूल विसार शूल शठ पुनि खल पतिहि भजै ॥ १ ॥
इंद्रिय लोलुप गृह्र पशुज्यूं जहाँ तहाँ शिरत्राण वजै।
तदपि अधम विचरे तेहि मारग तोउ न मूढ लजै ॥ २ ॥

मैं हार्‍यो कर जतन विविध विधि अतिशय प्रवल अजै।
तुलसीदास वस होय तवै जव प्रभु प्रेरक वरजै ॥ ३ ॥

पद ६१

मन पछितैहो अवसर वीते।
दुर्लभ देह पाय नर हरि भज कर्म वचन मन ही ते। टेर.
सहस्रावाहु दशवदन आदि नृप वचे न काल वलीते।
हम हम कर धन धाम सँवारे अंत चले उठ रीते ॥ १ ॥
सुत वनितादि जान स्वारथ रत नॉ कर नेह इन्हीते।
अंतहु तोहि तजैगे पामर तू न तजै अव हीते ॥ २ ॥
तज अनुराग जाग जड़ मूरख त्याग दुरासा जीते।
वुझहि न काम अग्नि तुलसी के विषय भोग रस घीते ॥ ३ ॥

पद ६२

हे हरि वो दिन क्यों न करै।
कर करवा कोर्पीद कमर पट मैं ममता निवरै। टेर.
मोह द्रोह दुख सुख संशय भ्रम कामादिक विछुरै।
ज्ञान वैराग्य संत जन संगति यो मन विपुल धरै ॥ १ ॥
विजित इंद्रियाँ विमद मत्सर तजि क्रोधाग्नि न जरै।
यथालाभ संतोष मानिके लोलुपता न करै ॥ २ ॥
तृष्णा दंभ लोभ हठ तजिके उत्पथ पग न धरै।
समता सत्व शुद्धि धीरज धरि निर्भय है विचरै ॥ ३ ॥
मित्र अमित्र आपनो दूजो मैं तैं चित न धरै।
दया विवेक शील संग लेके दृढ मन मौन करै ॥ ४ ॥
तजि संकल्प विकल्प कल्पतरु तव पद ध्यान धरै।
कर्म जाल संसृति अनेक के सो सव ही पर जरै ॥ ५ ॥
मन क्रम वचन निसारि विषयरस रामहि राम रटै।
स्वर्ग मुक्ति ब्रह्मादि लोककी अभिलाषा न करै ॥ ६ ॥
एकाकी दृढ निस्पृह आसन गुरुवच मनन करै।
चिन्मय निखिल अखंडरूप तव तासूं पल न टरै ॥ ७ ॥
तूं सर्वेश सर्व कारण पर निजप्रण क्यों न धरै।
वालकृष्ण कूं दीन जानि के क्यों नहिं पार करै ॥ ८ ॥

पद ६३

अव हरि कहांगये करुणा केत। टेर.
अधमउधारण पतितॉ पावन कहत पुकार्‍या नेत ॥ १ ॥

नैंई नरोनों लागेंदर्गे कायें उर न चैन ॥ २ ॥
सुख मालव कर बहुरेप उनके दरस न हैन ॥ ३ ॥
पूनमचंद पद श्रति नितुरता कबहूं सार न लेन ॥ ४ ॥

पद ६४

कबहू न निरखत नाथ कठोर । टेर
कबहि दर्पने कबहू नहीं माने किन्तु रहे चितचोर ॥ १ ॥
चार पहर चारों जुगसी रैन गुमाई मोर ॥ २ ॥
दरसन बिना बहुत दिन राते सुन्दर नागन मोर ॥ ३ ॥
कबहू नैन निरखे नहीं देखे तारा गिनत भोर ॥ ४ ॥
दादू पवं आतुर विरहिन जैसे चंद चकोर ॥ ५ ॥

पद ६५

अब हरि भूल्या नाहिं बने । टेर
विरति विहारन तुमही गिरधर सुखमें नित्य घने ॥ १ ॥
मैं आपीन कछु नहिं लायक तुम बिन कोन गिने ॥ २ ॥
ज्यूं त्यूं कर मोहि पार उतारो भजनिधि लाज तुमें ॥ ३ ॥

पद ६६

हरि बिन ये दिन जाव दुखारे ।
सेज शृंगार सकल सुख लागे जादिन तें भये न्यारे । टेर
सुमति सखी वरषा ऋतु आइ वरसे सब वन प्यारे ।
इनसों देह बनाई ऊहीं विरह अनेसो जारे ॥ १ ॥
कोन सुने कोन या मानें उर विच करवत सारे ।
मन ही माहिं निसुरै विरहिन मूरछ नैणनल डारे ॥ २ ॥
आरतवत चातक ज्यू सजनी सारी रैण पुकारे ।
जन तुलसी प्रभु प्रीति जानिके घन ज्यू आन मिलारे ॥ ३ ॥

पद ६७

हरि मेरे तारण तरण जहाज । टेर
भव भव में कोऊ चैन न पायो अब मेरी तुमही को लाज ॥ १ ॥
आन देव पूज्या घनुतेरा सन्यो न एको काज ॥ २ ॥
अब तो शरण राख जगतपति धराताके महाराज ॥ ३ ॥

पद ६८

एक नदियाँ एक नाल कहावत मैलो नीर भरो।
जब सिलिगे तब एक वरण भे गंगानाम परो॥ १॥
एक लोहा पूजा में राखत एक घर वधिक परो।
सो द्विविधा पारस नहि राखत कंचन करत खरो॥ २॥
एक माया एक ब्रह्म कहावत सूरश्याम झगरो।
के याको निर्वाह करो प्रभु नहिं प्रण जात टरो॥ ३॥

पद ६९

गोविंद गाढ़ाछोजी दिलड़ारा मीत। टेर.
प्रीति करो तो ऐसी कीज्यो ज्यूं गजगीरी भीत॥ १॥
कपटी मित्रसें प्रीत न कीजै छोडचले अधवीत॥ २॥
जब जम आय पकड़ लेजावै होसी बहुत फजीत॥ ३॥
कहै बखतावर हरि को भजन कर निर्भय होय नचीत॥ ४॥

पद ७०

ऊमर थारी जावै छै जी दियां रे दगो। टेर.
श्याही गई सपेती आई हुय गयो श्वेत बगो॥ १॥
ओ संसार ओसको पानी चाल्यो जात भगो॥ २॥
मात पिता सुत कुटुम्ब कबीलो स्वारथ लार लगो॥ ३॥
भूप विजयकी याही है वीनती प्रभुविना कोई ना सगो॥ ४॥

पद ७१

प्रिय म्हांनै लागै छै जी श्रीसिंहथल गुरुधाम।
जहाँ रटत अहोनिशि राम। टेर.
श्रीजैमल शिष्य शिव पदसु जाहि पद विराजे संत हरिराम॥ १॥
भवभ्रमहारी बलिहारी बिहारी शरणागति विसराम॥ २॥
धिन हरिदेव देव तरु सादृश तादृश मोतीराम॥ ३॥
श्रीरघुनाथ चेतन चरणाश्रित नरसिंहदास गुलाम॥ ४॥

पद ७२

चलो चलो सखी सिंहथल धिन महाराज।
जन हरिराम है भेष उजागर जीवां तारण जहाज। टेर.
देव सृष्टि दरशण को आवै मन वांछित सब काज॥ १॥
शिवसनकादिक और ब्रह्मादिक ऐसो वण्यो समाज॥ २॥
च्यार मुक्ति अरु च्यार पदारथ इण मौसर है आज॥ ३॥

भरतखड उधार करण कू आये हैं महाराज ॥ ४ ॥
सत हरिचद कबीर नामदे काशी शकर राज ॥ ५ ॥
लाखूरामकू शरणे राखो अपने विड्द की लाज ॥ ६ ॥

राग कालिंगडो ।

पद ७३

निमिप मन ना करों न्यारो हे ।
रूडो सतपुरुपारो धाम, सिंहथल लागे प्यारो हे । टेर
सिंहथल लागे सुहावणो, धोला धोरामाहिं ।
मानसोत शिवपुरी समसोहै, दरस्या भव दुख जाहि ॥ १ ॥
अवधपुरी मथुरा द्वारावती, काशी गया प्रयाग ।
तीथगुरुसे अधिक कोटि फल, परसे ते वडभाग ॥ २ ॥
चेतन महन्त भये जहा चकवे, ज्यां भागीरथ भूप ।
हरिपुरसों आये इलऊपर, भक्ती गगस्वरूप ॥ ३ ॥
दयावन्त गुणवन्ता ग्यानी, जनकराय ज्यों जान ।
रामचन्द्र जैसे मयादी, सत हरिश्चन्द्र समान ॥ ४ ॥
तिहॅं गादी सोहै मनमोहै, श्रीश्रीरामप्रताप ।
प्रीति सहित पद परसै कोइ, हरै पाप दुख ताप ॥ ५ ॥
रामचोकमें दिपै रवीसम, मुख शोभा जिमि चन्द ।
शुद्धमना सतपुरुप शान्तिचित, गावत गुण गोविंद ॥ ६ ॥
दया करो दीनानाथ दयालू, रामप्रताप महाराज ।
माँगूं दोउँकर जोड देह मोहि, रज चरणारी राज ॥ ७ ॥
जन्म जन्म सिंहथल गुण गाऊ, नहिं पाऊ मैं पार ।
भाखे मुक्त महर यों भजन्यो, सिंहथल को आधार ॥ ८ ॥

राग कामिनी सोरठ ।

पद ७४

मतिदेखो करणी हमारी । राज लेखो विरद मुरारी । टेर.
कहाकियो गजराज धर्म नेमा । डूबत मुख ररर्र प्रेमा ।
सुनतों ततकाल पधारे । वाके फद काट दुख टारे ॥ १ ॥
कहा अजामेल कियो आचारा । वाकी करणी नाहिं लिगारा ।
सुत हेत नारायण गायो । जमदूता पास छुडायो ॥ २ ॥
कहा कुब्जा कियो तप भारी । वाकू सूंज परापतिसारी ।
वाकी कीरति मुख मुख गावै । शुक श्रीभागवत वतावै ॥ ३ ॥

कहा गनिका पतिव्रतधारी । सो बैठ विमान सिधारी ।
तुम पतितउधारण देवा । सुरनर मुनि लहत न भेवा ॥ ४ ॥
शरणागत लेत उबारी । यह आदूरीति तुम्हारी ।
गुरु ध्याल दरस बलिहारी । जन पूरण तन मन वारी ॥ ५ ॥

पद ७५

करुणानिधान सुनिये । कछु करुणा का न मेरी । टेर.
प्रह्लाद के हितकारी । खंभ फाड़ के देहधारी ।
नरसिंह रूप कहायो । सब संतन के मन भायो ॥ १ ॥
गजकी अरज तुम मानी । सो तो वदत वेद वानी ।
ग्राह के जो फंद काटे । अघ कोटि कोटि दाटे ॥ २ ॥
तुम केते पतित उधारे । सो तो कविजन गिनगिन हारे ।
अब मेरी बेर राघो । तुम सूता हो कि जागो ॥ ३ ॥
मैं बेर बेर प्रभु टेरूं । प्रभु बाट तुम्हारी हेरूं ।
महाराज अवधविहारी । जन रामसखे बलिहारी ॥ ४ ॥

पद ७६

बूझूं बूझूं पंडित जोसी । म्हारो राम मिलन कद होसी । टेर.
म्हारी आंख फरूके बाँई । म्हांनै साधु मिलै कै साँई ।
म्हारा पिया परदेसां छाया । किन बेरण ने बिलमाया ॥ १ ॥
म्हारी रोय रोय अंखियाँ राती । म्हारो तन दिवलो मन वाती ।
म्हारा झुर झुर पिंजर खीना । जैसे जल विच तलफै मीना ॥ २ ॥
उड उड रे काला कागा । म्हारे पियाने घणा दिन लागा ।
बाजींदो विरह विसूरे । मेरी आस गुसाइयां पूरे ॥ ३ ॥

पद ७७

पोथी जो खोल पांडे । साजन हमारा कित है । टेर.
मैं सुणी सजन की बतियाँ । मेरे चली कलेजे कतियाँ ।
मोहि नींद न आवै सारी रतियाँ । आली आई निगोड़ी रत है ॥ १ ॥
कोई सजन संदेशा लावे । मोहि मिठोड़ी सी बात सुणावे ।
म्हारा साजन कब घर आवै । वाही सें म्हारो चित है ॥ २ ॥
दादुर मोर कोकिला बोलै । चपला चित्त चहुं दिशि डोलै ।
बखने को दरशण दीजै । म्हारो योही संदेशो नित है ॥ ३ ॥

पद ७८

जिव सतगुरु विन दुख पावै । म्हांरे नेणा नींद न आवै । टेर
वे परम शून्यके वासी । अव यहा से भये उदासी ।
वे अमर लोक में पहुता । अव राम जना यहाँ ओवता ॥ १ ॥
अव वा सूरत कब पाऊ । मैं रात दिना विल्लाऊ ।
मैं एक घड़ी भी न रहता । वे वायक अमृत कहता ॥ २ ॥
अव धीरज कोण बधावै । मोहि राम अमृत कुण पावै ।
वे पूरण ब्रह्म अवधूता । है अर्जुन जाको पूता ॥ ३ ॥

राग सोरठ ।

पद ७९

काई सूतो नींद वटाऊड़ा । वीर वाट घणी रे । टेर
आवेली नींद म्नोय मत जाइयो । सोवाने रैण घणी रे ॥ १ ॥
इन निद्रा में नफो नही है । पूछेला जाब धणी रे ॥ २ ॥
अवघट घाट विषम का मारग । खाडेकी धार अणी रे ॥ ३ ॥
मात पिता सुत नारि कबीलो । तेरो कोई नाहिं धणी रे ॥ ४ ॥
कहे बखतावर सुणो भजनदजी । अवै जमसे आण वणी रे ॥ ५ ॥

पद ८०

शरणे आया श्याम विहारी जी । राज ताऱ्या सजेला । टेर
अधम उधारण साहिब साचा । जे जग जान भजेला ॥ १ ॥
आयलई मैं ओट रावरी । प्रभु गहि वाह तजेला ॥ २ ॥
ललनासखी मेरो कहा विगरैगो । रावरो विरद लजैला ॥ ३ ॥

पद ८१

शरणै आया री सांवरा वरग वहोला । टेर
नेह न घट तो बढ़ तो वारिद ज्यूं एकरस सदा रहोला ॥ १ ॥
ओगुण दपट धरो जाजम तल हरि अग वाह गहोला ॥ २ ॥
ल्लनासखी प्रभु कमल वदन सू कब मोहि वचन कहोला ॥ ३ ॥

पद ८२

जाऊं कहा तजि चरण तुम्हारे । टेर
काको नाम पतित पावन जग किहि अति दीन पियारे ॥ १ ॥
कौन देव विरदाइ विरद हित हठि २ अधम उधारे ॥ २ ॥
खग मृग व्याध पाषाण विटप जड़ यवन कवन सुरतारे ॥ ३ ॥

देव दनुज मुनि नाग मनुज सब माया विवस विचारे ॥ ४ ॥
तिनके हाथ दासतुलसी प्रभु कहा अपनपो हारे ॥ ५ ॥

राग जैजैवन्ती ।

पद ८३

आज तो आलीरी म्हारे आंगन वधावना । टेर.
आये गुरुदेव आज करन हमारे काज ।
कंचनकलश साज सन्मुख जावना ॥ १ ॥
कंचनको थार हाथ आरती संवारनाथ ।
तिलक चढाय माथ घर पधरावना ॥ २ ॥
तन मन भेट कीजै लोचनको लाभ लीजै ।
चरण पखाल पीजै भवन सींचावना ॥ ३ ॥
किये जप जोग जाग तीरथ गया प्रयाग ।
भावन हमारे भाग भये मन भावना ॥ ४ ॥

राग जैतश्री ।

पद ८४

यो तन पाहुणो रे मति कोई करो रे गुमान ।
परसूं आज क काल में रे छोड चलै सिजमान । टेर.
नदियां नाव संजोग है रे विछड्यां मेलो नाहिं ।
गया सो फेर न आवसी रे समझ देख मनमाहिं ॥ १ ॥
छत्र सिंहासन छोडकै रे मर मर गये अमीर ।
तू क्यों गाफल हो रह्यो रे काचो धार शरीर ॥ २ ॥
मोत खड़ी शिर ऊपरै रे जीवन झूठी आस ।
कहा जाणूं कव आवसी रे वाट वटाऊ स्वास ॥ ३ ॥
झूठी जग की मोहनी झूठा तन धन धाम ।
रामचरण अव चेतके रे सुमरो सत ही राम ॥ ४ ॥

पद ८५

राम गुण गायलै रे साजा थकां शरीर ।
पीछै याद न आवसी रे पिंजर व्यापै पीर । टेर.
जोवन थकां भज लीजिये रे जेज न कीजै वीर ।
फेर बुढापो आवसी रे नैना ढरसी नीर ॥ १ ॥
अवसर वीतो जात है रे ज्यूं अंजरीको नीर ।
फेर न हंसो आवसी रे इण सरवर की तीर ॥ २ ॥

भाग भला सतगुरु मिल्या रे पढ़यो समद से सीर।
हंसा होय चुग लीजिये रे नाम अमोलख हीर ॥ ३ ॥
सब देवन को देव है रे सब पीरन को पीर।
सहजराम भज लीजिये रे दुख मेटण सुखसीर ॥ ४ ॥

पद ८६

म्हारा मन माँहिला रे चलणो आज कै काल।
झूठा झगड़ा छोडदे रे साहिब में चित चाल। टेर
फरीदा घोर निमाणिया रे महलाँ माल न लाय।
खाफण सेती राखले रे और फकीरा खुलाय ॥ १ ॥
अम्मा साँई साच है साँई सच सुहाय।
सतगुरुसेती मिलरहो रे खाफण देह कहाय ॥ २ ॥
भणे फरीदो साभलो रे झूठो जगको नेह।
राम भजो म्हारा भाइयाँ रे माटी मिलसी देह ॥ ३ ॥

पद ८७

सजन सनेहिया रे छाय रह्यो परदेश।
बालपणो भोळे गयो रे पडर होगया केश। टेर
मैं तो जाण्यो ओरही रे तैं कछु जाणी ओर।
तुम करसो ज्यों होवसी रे मेरी झूठी दोर ॥ १ ॥
मैं जान्यो अवसर भलोरे पीव मिलेंगे आय।
तेरे भावें कछु नहीं रे तलफ २ मर जाय ॥ २ ॥
मैं अबला अतिशय दुखीरे तुम जानो सब बात।
जब ही हग्निभर देखिहो रे मेरे खुद कुदालात ॥ ३ ॥
चातक ज्यू टेरों सदा रे देवो प्रभु जल दान।
सुंदर विरहनि कहत है रे दो दरसन दिनमान ॥ ४ ॥

पद ८८

जारे निरमोहिया रे कहा रह्यो करवास।
पहली प्रीत लगाय के रे अब क्यू भयो उदास। टेर
लाड लडायो अति घणो रे हाँस न पूरी मोर।
विणजारेरी आगज्यू रे गयो धुकती छोर ॥ १ ॥
घड़ी पलक जुग जात है रे क्यू कर राखू मान।
मैं तो जाण्यो सग रहै रे तै तो तोडी तान ॥ २ ॥
अब तो मसी कीजिये रे प्रियतम प्यारा लाल।
सुंदर विरहन कहत है रे दरशन दोनी दयाल ॥ ३ ॥

पद ८९

विचाले आंतरो रे म्हारो हरि विन भाजे नाहिं ।
कहा जाणू कब भाजसी रे ऊमावो मनमाहिं । टेर.
आडा परवत बीच है रे नदियां नीर अनंत ।
पिंजर आयां पांखड़ी रे मिलमिल आऊँ नित्त ॥ १ ॥
चरण विहूणो चालणो रे धरणि विहूणी वाट ।
आडा परवत हुय रह्या रे किसविधि लंघूँ घाट ॥ २ ॥
पोथी प्यारा पीवकी रे वॉचन दे नहिं नैन ।
याद करूं तो आवसी रे प्रीतम दर्शन दैन ॥ ३ ॥
कुंजर झूरे वन्न कूं रे चकवो पैले पार ।
वखनो झूरे रामकों रे म्हारी आवागवन निवार ॥ ४ ॥

पद ९०

रामने संदेशड़ोरे वालो कोइक जन लेजाय । टेर.
चितवंती चक्रितभई ज्यूं मृग नाद सुनाय ।
मैं अवला आतुर भई रे वाला दरशन दीज्यो आय ॥ १ ॥
रूप विहूणी कुलच्छणी रे नारी शरणै आय ।
दीन दयाल दयानिधि देवा विरदवहोघणराय ॥ २ ॥
अंग आभूषण साझ सुंदर ऊभी सेझ विछाय ।
वेग पधारो वालमा विरहन लो वतलाय ॥ ३ ॥
अधम उधारण पतितां पावन अशरण शरण सहाय ।
सांवतराम के समरथ स्वामी धेनु वछा ज्यूं धाय ॥ ४ ॥

पद ९१

घड़ी न आवड़े रे वाला तुम दरशण बिन मोय ।
तुम विन मोरे प्राण पियारे जीवन किस विधि होय । टेर.
दिवस न भूख रैण नहिं निद्रा विरह संतावै मोय ।
घायल ज्यूं घूमूँ खड़ी म्हारो दरद न जाणै कोय ॥ १ ॥
दिन गमायो खायके रैण गमाई सोय ।
प्राण गमायो झूरके नैण गमाये रोय ॥ २ ॥
जो मैं ऐसी जाणती प्रीति कियां दुख होय ।
नगर ढंढोरो फेरती प्रीति करो मति कोय ॥ ३ ॥
पल पल पंथ निहारती नीठ रही मग जोय ।
मीरां कहै प्रभु गिरधर नागर तुम मिलियाँ सुख होय ॥ ४ ॥

रेखता ।

पद ९२

जगत सब रैणका स्वप्ना । समझ दिल को नहीं अपना ।
कठिन है मोह की धारा । बुहो सब जाय ससारा । टेर
सजन परिवार सुत दारा । सबै उस रोज है न्यारा ।
प्राण जब निकस जावेगा । कोई नहिं काम आवेगा ॥ १ ॥
पता जिम डारसे टूटा । घडा ज्यों नीरदा फूटा ।
ऐसी नर जान जिंदगानी । चेते क्यू न फेर अभिमानी ॥ २ ॥
भूलेमत देख तन गोरा । जगत में जीवना थोरा ।
तजो मद लोभ चतुराई । रहो नि शक जग माई ॥ ३ ॥
सदा मत जान या देहा । लगावो राम से नेहा ।
कटे जम जालदा घेरा । कहे गगादास जन तेरा ॥ ४ ॥

पद ९३

इश्क गुरु रामदा लागा । खल्क का भम सब भागा ।
छक्या रस प्रेम पिव प्यारा । भया हू मगन मत वारा । टेर
प्रीति की रीति हम जाणी । तलफ है मीन विन पानी ।
भॅवर का हाल है ऐसा । जिवै वो कमल विन कैसा ॥ १ ॥
वाण गुरु ज्ञानदा मान्या । कलेजा छेद कर डान्या ।
जगत का रग सब खोया । हृदय में प्रेम से धोया ॥ २ ॥
घूमे गजराज की नॉई । रहे मस्तान मन मॉई ।
गूगो मिष्टान कछु खावे । मगन सुख कहत नहि आवै ॥ ३ ॥
ऐसे गुरु शरण सिष पूरो । धावै गुरु मुखी सिष सूरो ।
जगत की मेट दे आसा । कहै गुलाब जन दासा ॥ ४ ॥

पद ९४

शब्द गुरु वाण भर मान्या । कलेजा छेद कर डान्या ।
सूती इक विरहनी जागी । आरत पिव मिलनकी लागी । टेर
रोम रोम फैल गई पीरा । चलत है सास अति सीरा ।
गले गद गद से वैना । बोलत है अटपटे वैना ॥ १ ॥
वदन पर पान ज्यू पीरा । चलत है नैन में नीरा ।
दिवस कछु धान नहिं भावै । रैण इक नींद नहिं आवै ॥ २ ॥
नहीं कोइ महरमी मेरा । ताही सें दाखिये वेरा ।
कहो दुख कौन से कहिये । आपने आप तन सहिये ॥ ३ ॥

तलफ ज्यूं नीर विन मीना । वे दरदी मरम नहिं चीना ।
व्यावर की पीर कूं वंजा । करै क्या ज्ञान कूं गंजा ॥ ४ ॥
वीती सो वैद पुनि होई । न जाणै दूसरा कोई ।
दीनी सो महरमी होई । भेदी उर जानसी सोई ॥ ५ ॥
दरद की पीर अति भारी । लगै नहि दूसरी कारी ।
सेवगराम विरहनी गावै । मिल्यां पिव प्राण सुख पावै ॥ ६ ॥

पद ९५

भया हूं इश्क मस्ताना । कहै सव लोग दीवाना ।
दिलों का दरद को जानै । कहे से सत्य को मानै । टेर.
हम न दिन रैन रोते हैं । दमन से जान खोते हैं ।
सूली की सेज सोते हैं । विरह के ये निसाने हैं ॥ १ ॥
तजी खिदमत उजीरी की । पाई लज्जित फकीरी की ।
चढा किस्ती सवूरी की । फकर के ए मकाने है ॥ २ ॥
हम न हक् यार है जानी । पिया हरि नाम का पानी ।
आखिर होयगा फानी । अलू राम ही समाने हैं ॥ ३ ॥

पद ९६

लगन की वात न्यारी है । कटारी से करारी है । टेर.
लगी मन सूरके ऐसी । करी उन देखलो कैसी ।
अनलहक यूं कही वानी । चढ़े सूली नहीं मानी ॥ १ ॥
लगी सुलतान के भाई । वलख की तजी वादशाई ।
अठारे लाख तजे तुरियॉ । सोलह सहॅस तजि हुरियॉ ॥ २ ॥
जनन की पीर है भारी । न जानै वांझवा नारी ।
लगी सो आदि अंताई । कवीर यूं कहै भाई ॥ ३ ॥

पद ९७

विरहनि मग पीव का जोवै । नहिं सुख रैण दिन सोवै ।
पड़त है विरह का झोला । खिनक मासा खिनक तोला । टेर.
भवन मुझे भाखसी होई । भयावन वाग था सोई ।
शब्द पिक सेलसी अनिया । ऐसी गति आयके वनिया ॥ १ ॥
लगत है सेज मुझे सूनी । पिया विन एकली रूनी ।
विरह की ताप अति भारी । न लागै दूसरी कारी ॥ २ ॥
खाना पहरना फीका । लगे नहिं स्वाद कछु नीका ।
भूपण भुजंग जिम खावै । असन वा वसन नहिं भावै ॥ ३ ॥

आरति अत पीवकी मनमें । निमिष भर चेन ना तनमें ।
हियो भर नैन जल आवै । दरशन कव पीव दिखलावै ॥ ४ ॥
रैन सब बीत गई सजनी । रही अब पीछली रजनी ।
रहे नहिं जात यो तन ही । अरे पिव आयाँ ही बनही ॥ ५ ॥
सेवग को स्वामि सुख दीजे । निपट ही अत नहिं लीजे ।
झूरे नित आतमा दासी । मिलो प्रभु आप अविनासी ॥ ६ ॥

पद ९८

पिया टुक देख तू मोसू । तेरे विन प्राण मैं सोसू ।
ऐसा क्या हुवा वेदरदी । जरद तन होरहा हरदी । टेर
करवत वहत है मेरे । महर कर तू न हेरे ।
हरि हर वचन नित टेरू । तिहारो पथ नित हेरू ॥ १ ॥
दिवस मोहि अन्न नहिं भावै । रात्यु नींद नहिं आवै ।
तिहारो देखबो भावै । नाथ कब दरश दिखलावै ॥ २ ॥
किशोर जन विरह अति भारी । लगी है दरश की यारी ।
खड़ी कबकी पुकारू रे । तेरे पर प्राण वारू रे ॥ ३ ॥

पद ९९

सजन इक अर्ज है मोरी । मुझे हैं आशिकी तोरी ।
कलेजा फटत है माहीं । तुझे कछु खबर भी नाहीं । टेर.
ऊबके रैंण दिन छाती । लिखी नहिं जात है पाती ।
वहै नित नैन में पानी । पिया मेरी पीर नहिं जानी ॥ १ ॥
डरावै रैण अंधियारी । विजलिया चमक है भारी ।
टहूका मोर का सालै । हिये में हूक सी चालै ॥ २ ॥
परत मुरझाय के धरती । तपत तन विरह की जरती ।
पपैया पीव मति बोलै । सुनत मन परत है झोलै ॥ ३ ॥
कोयलियाँ कूक है झीनी । मानुँ मोहि सेल की दीनी ।
कबीरो विरहनी गावै । मिल्यॉ प्रभु प्राण सुख पावै ॥ ४ ॥

राग कालेरा ।

पद १००

वाट घणी दिन थोड़ो रे वटाऊड़ा वीरा वाट घणी दिन थोड़ो रे । टेर
ले कमची वीख ना चोरो हाक घणेरो घोड़ो रे ॥ १ ॥

है घर दूर सूर घर हालो दोड़ सकै तो दोड़ो रे ॥ २ ॥
नगर पहूंताँ निरभै होसी वीच रह्यां रो फोड़ो रे ॥ ३ ॥
पंथ दुहेलो संग न कोई जग में जीवण थोड़ो रे ॥ ४ ॥
आशाराम अणघड़ के शरणै मारग पायो मोड़ो रे ॥ ५ ॥

पद १०१

सतगुरुजी म्हारा नैणाँदे आगल रहियो रे । टेर.
यो संसार मोह जल भरियो सार हमारी लहियो रे ॥ १ ॥
मो निगुणी में गुण नहिं कोई ओगुण म्हारा सहियो रे ॥ २ ॥
इण संसार में कोइ न अपणो के नेह लगाऊँ कि नेहियो रे ॥ ३ ॥
मीरां कहै प्रभु गिरधर नागर लाज विरद की वहियो रे ॥ ४ ॥

परज

पद १०२

एरी सुख सुंदरि श्याम मिला वे, यारी एक लगी आतम सूं ।
और भई निरदावै । टेर.
प्रेम भाव का पहर पटोरा सुरत निरत कर नाचूं ।
अनहद तार तत्तझणकारा एक अखंड धुनि राचूं ॥ १ ॥
अमल कमल का सझ सिणगारा जागूं संजम राती ।
तन मन जोड़ करूं दासातन रहूं रामरंग राती ॥ २ ॥
जाग्या भाग भये जग न्यारा पीव पुरातन पाया ।
जन हरिराम श्याम अरु सुंदरि अरस परस लिवलाया ॥ ३ ॥

पद १०३

मानोंगी मानोंगी गुण तेरा ऊधो मैंतो मानोंगी गुण तेरा । टेर.
जादिन ते बिछुरे मनमोहन हृदै वीच वसेरा ।
नैन हमारे नीर न खंडे कंचन भवन वसेरा ॥ १ ॥
जिम तिम करि कोइ हरि ही लावे कर उपदेश घनेरा ।
एकवार जो हरि ही मिलावे प्राणजीवन धन मेरा ॥ २ ॥
या जीवन से मरण भलेरो यातें करो निवेरा ।
सूरश्याम प्रभु छोड चले हैं बाँध गेह का वेरा ॥ ३ ॥

पद १०४

बिन बिन मोय को कछु न सुहावै तरफत चित अति ही अकुलावै । टेर.
एरी सखी हमरे प्रीतम को जाय कोई यह वात सुनावै ।
यह जोबन छीजत है छिन छिन वीत गये पर फिर नहिं आवै ॥ १ ॥

बहुत कोल वीते आवन के गिनत गिनत जियरा घबरावै।
हाय दैया अखियाँ तरसत है विरह विपत नित मोय जरावै ॥ २ ॥
मरन न देत आश मिलवे की जीवन छिन विन नहिं भावै।
सुध बुध सबही भूलगईरी यह दुख तो अब सह्यो न जावै ॥ ३ ॥
मतलब को गरजी जग सारो अरजी मोरी कोन सुनावे।
तनमन जीति रीति सब करके भजहु राम काम बनि आवै ॥ ४ ॥
हे जगदीश ईश विश्वभर तुम विन यह दुख कोन मिटावे।
करहु कृपा करुणानिधि मोपै मिले पिय जिय हरप न मावे ॥ ५ ॥
ध्यानी याहि ध्यान कर देखै रसिक याहि रस पच्छ लगावै।
योग भोग गति दोइ एक करि सुमति अजित पद सहज बतावै ॥

मगरु

पद १०५

घड़ी एक विलव करो नगरी हश राजवी।
ऐसो मेवासो छोंड उदासी क्यू करी। टेर
काया करत पुकार जगल विच क्यू धरी।
पहिला कियो सनेह अबै क्यू परहरी ॥ १ ॥
हम मानसरोवर के हस तेरी सग ना रहाँ।
हमहैं बटाऊ लोक सजन तुमसे कहाँ ॥ २ ॥
चलरी अगम के देस जहा देख्या जम डरै।
जहाँ भन्या प्रेम का होद हस केलाँ करै ॥ ३ ॥
कहै कवीर विचार समझ सत भावना।
हस गया ब्रह्मलोक वहुरि नहिं आवना ॥ ४ ॥

पद १०६

चलो सतगुरुजी री हाट ध्यान बुद्धि लाइये।
लीजै रामजी रो नाम परम पद पाइये। टेर
सतगुरु रूठा होय तो तुरत मनाइये।
हुइकर दीन आधीन गुना बकसाइये ॥ १ ॥
सतगुरु दीन दयाल दैणा सो सब दिया।
मं रही अभागण नारि अमृत तज विप पिया ॥ २ ॥
सतगुरु ऐसा दयाल दया चित हेरवै।
कोट करम करि जाय पलक चित फेरनै ॥ ३ ॥
कहै कवीर विचार समझ हिरदे धरै।
जुग जुग कीज राज क दुरमति परहरै ॥ ४ ॥

पद १०७

हाथ आम की डार डगर बिच क्यूं खरी।
चल्यो जा मूरख गंवार मेरी तुझै क्या परी। टेर.
पीव चल्या परदेस क पतियाँ दे गया।
छतियाँ वजर किंवार जंजीरी दे गया ॥ १ ॥
कूंची पिया के हाथ क ताला प्रेम का।
शील संतोष शृंगार पिया के नेम का ॥ २ ॥
काजल तिलक तंबोल क ऊपर आरसी।
सतगुरु है सुभियान लखे मेरी पारसी ॥ ३ ॥
गगन मंडल के बीच उडै दोय पंखिया।
राम मिलण के काज झुरै मेरी अंखिया ॥ ४ ॥
गावै दास कबीर मंगल के भावना।
हंस चल्यो सतदेश बहुरि नहिं आवना ॥ ५ ॥

पद १०८

चली भवन के माहिं अकेली गोरियाँ।
जाय खड़ी पिव पास हाथ जुग जोरियाँ। टेर.
चले नीर दोउ धार प्रेमकी नारियाँ।
हिरदो सजल होय भूली सुधि सारियाँ ॥ १ ॥
कह न सकी मुख बैन चैन नहिं जीव में।
जैसे चित्रकनैन रुपे जाय पीव में ॥ २ ॥
रोम रोम थरराय पाँव कर डिगमिगे।
साहिब देख उदास त्रास अति ही भगे ॥ ३ ॥
कहै कबीर विचार सार प्रभु लीजिये।
विरहन को दुख देय गमन मत कीजिये ॥ ४ ॥

पद १०९

इण आंगणिये हे सखी हम खेलण आया।
केई खेल्या केई खेलसी केई खेल सिधाया। टेर.
आवो पांच सहेलड्याँ सींवो मेरा चोला।
मैं अबला भई विरहनी साहिब मेरा भोला ॥ १ ॥
एक निमाणी कोहड़ी जाकी नेजू है झूठी।
नैंण हमारे यूं झरै जैसे गागर फूटी ॥ २ ॥
वड़ तल आण उतारिया संगी कुरलाया।
तुमतो तुमारे घर चले हम भये जी पराया ॥ ३ ॥

काजी मुहम्मद यू भणै अब यहाँ नहिं रहणा ।
आया संदेशा मेरे राम का कछु नहिं कहणा ॥ ४ ॥

पद ११०

दुख सुख मन नहिं आणिये घट साथे घडिया ।
टाल्या किसका ना टले रघुनाथजी जडिया । टेर
सीता सरीसी भारजा रघुपति मोटा स्वामी ।
लंकारो पति लेगयो वनमें विपति जामी ॥ १ ॥
हनूमानसा महाबली कारज किया मोटा ।
प्रारब्ध को पायचो पाया तेल लँगोटा ॥ २ ॥
हरिश्चंद्रसे राजवी तारादे रानी ।
काशी नगर के चोहटे शिर ढोया पानी ॥ ३ ॥
नल सरीसा नर नहीं दमयंतीसी रानी ।
वन वन भटकत वे फिऱ्या विन अन अरु पानी ॥ ४ ॥
पाँचू पांडव रामका धन माहिं निगूता ।
बैठण जागाँ ना मिली सुखभर नहिं सूता ॥ ५ ॥
भीड पडी महादेव में सुमऱ्या अंतरजामी ।
भीड को भजन भूधरो गावे नरसीलोस्वामी ॥ ६ ॥

राग आसावरी ।

पद १११

भजन विन मिरगै ने खेत उजारा । टेर
मिरगो एक पांच है हरिणी जामें तीन छिकारा ।
अपने अपने रसके लोभी चरत है न्यारा न्यारा ॥ १ ॥
आंबा खाय आमली खाई केसर केरी बाडी ।
कायानगरमें कछुइ न राख्यो ऐसो मृगो उजाडी ॥ २ ॥
मन मिरगैने किस विधि राखाँ विहरत नाहिं विहारी ।
जोगी जंगम जती सेवड़ा पंडित पच पच हारी ॥ ३ ॥
शील संतोषकी बाड़ करायलो गुरुशब्द रखवारी ।
कहै कबीर सुणो भाई साधो बिरिया भली सभारी ॥ ४ ॥

पद ११२

चित चंचल बहुत हमारो राम कैसे करू मैं भजन तुम्हारो । टेर
पांचको मंत्री पचीस को संगी उनसे बनी है हमारी ।

मनवो पड्यो कुमति के पीछै तजदियो ज्ञान ध्यान सारो ।
साधु संतोंका कह्या न मानै ऐसो है धूतारो ॥ २ ॥
या मनवा को लाज न आवै साखभरै केई वारो ।
छूटां पीछै हात न आवै जैसे ढ़ोर उजारो ॥ ३ ॥
चोरी में चौकस और परनिंदा खाणेमें हुसियारो ।
हरिजीकी भक्ति साधुकी सेवा उनसे लेरह्यो टारो ॥ ४ ॥
शास्त्र पुराण भागवत गीता सुण सुण गयो जमारो ।
कहै कवीर सुणो भाई साधो इन मनवारो काँइ पतियारो ॥ ५ ॥

पद ११३

अरे मन धूरत क्यों न अघावै । टेर.
भोगत भोगत वहुत दिन वीते शांति नहीं कवु आवै ॥ १ ॥
जिन विषयन में वहु दुख पायो जिनमें फेर उरझावै ॥ २ ॥
यथा श्वान श्वानी सूं उरझ्यो पुनि पुनि चोटॉ खावै ॥ ३ ॥
क्षण में शांति मौन गहि वैठत क्षण में फिर ललचावै ॥ ४ ॥
धनके हित मूढन के आगै सो सो नाच दिखावै ॥ ५ ॥
पूत मिंत ममता सूं वंध्यो नाना सांग वनावै ॥ ६ ॥
सबके देखत जमने पकऱ्यो श्रद्धा कौन छुड़ावै ॥ ७ ॥

पद ११४

मनरे क्यूं नहिं राम संभारे । टेर.
या जगमें वहु मान वढ़त है पुनि परलोक सिधारे ॥ १ ॥
कहा भयो सुख संपति पाई अरु धन धाम चोवारे ॥ २ ॥
धिक विद्या धन रूप वाहुवल विन हरिनाम उचारे ॥ ३ ॥
हट व्रत नेम यज्ञ तप कीना जटा लोम नख धारे ॥ ४ ॥
जो पै रामनाम नहिं गायो लोकविड़ंवन सारे ॥ ५ ॥
इत उत देखत अवध विहानी रे मन निठुर निकारे ॥ ६ ॥
अवहु संभार कछू नहिं विगऱ्यो श्रद्धा वेद पुकारे ॥ ७ ॥

पद ११५

मन तूं निपट भयो सेलानी । तैं संत सीख नहिं मानी । टेर.
तन धन जन जग संपत्ति देखिके तेरी मति वोरानी ।
काम क्रोध मद लोभ मोह सव वन्यो फिरे अभिमानी ॥ १ ॥
देख विचार मोत नहिं छोडै राव रंक भय पानी ।
कित हरिश्चंद्र दधीचि गये कहाँ रहगई प्रगट कहानी ॥ २ ॥

मनुष्य देह देवन को दुर्लभ जाचत है मुनि ज्ञानी।
ताकू पायके व्यर्थ गमावत करत निपट नादानी ॥ ३ ॥
प्रभुमय जग लखि नैन सफल कर राममंत्र जप यानी।
दान पुण्यकर कर शुचि करले होय सफल जिंदगानी ॥ ४ ॥
शरणागत पालक सुखदायक दीनबंधु सुखदानी।
प्रभु स्वतंत्र को आय बचावो अपनो सेवक जानी ॥ ५ ॥

पद ११६

मन तू ऐसो नीच सगाती। टेर
निशिदिन रहत नीच नीचन में आठ पहर दिन राती।
विषयकी बात लगे अति प्यारी हरि चरचा न सुहाती ॥ १ ॥
आवत जावत लग रही मनमें कुकरम रोपे छाती।
मृगतृष्णा जग छोड वावरे चढ़े न सुपकी घाटी ॥ २ ॥
बैठ सभा में मीठो बोले मनमें राखै घाती।
जानबूझकर नर पडै नरक में बीतत है दिनराती ॥ ३ ॥
कहा कहीं इण मन की घाती लगे न तिलभर वाती।
कहत कबीर सुणो भाई साधो आवागवण मिटाती ॥ ४ ॥

पद ११७

मन तोहि किसविधि कह समझाऊ। टेर
सोनो होय तो सोगी मिलाऊ करडो ताव दिराऊ।
पच रग नाल जुगत सू फूकू पाणी ज्यों पिघलाऊ ॥ १ ॥
हस्ती होवै तो मावत बुलाऊ अङ्कुश दे चलवाऊ।
सुरत निरत का पहर घूघरा साहिब में मिलवाऊ ॥ २ ॥
लोहा होय तो पेरण मगाऊ घणकी चोट दिराऊ।
ले हथोड़ो सार बधाऊ जन्त्री तार कढाऊ ॥ ३ ॥
ज्ञानी होय तो ज्ञान सुणाऊ पंडित वेद पढाऊ।
कहै कबीर सुणो भाई साधो फेर जनम नहिं पाऊ ॥ ४ ॥

पद ११८

मन तू विरछन की मति लेह। टेर
काटे जासू वैर नहीं है सींचे जासू नेह ॥ १ ॥
अपने शिरपर ताप सहत है ओर न को सुख देह ॥ २ ॥
जो कोई वाकू पत्थर मारे तो वाकू ही फल देह ॥ ३ ॥
कहै कबीर सुणो भाई साधो साधू का लछ यह ॥ ४ ॥

पद ११९

मन रे अब तू जग तें छूटो ।
शीस उघाड़ो गल में कंथा करमें कमंडलु फूटो । टेर.
फाटा पाँव मैल तन ऊपर उघरत नाहीं अँखियाँ ।
मतवाले ज्यूं घूमत डोले एक न माने सँकियाँ ॥ १ ॥
ऐसा होय चल्या वस्ती में भिक्षा कारण डोलै ।
पांच सात छोरा चोगड्दे वैड़ो कहि कहि बोलै ॥ २ ॥
ऐसी विधि विचरै जग माहीं संग न कोई साथी ।
धताधूत वैराग इसी विधि ज्यों मद छकियो हाथी ॥ ३ ॥
छांड्या स्वाद दिया तन आडा रामनाम लिवलाया ।
तुलसीदास गुरु परतापे यूं अमरापुर पाया ॥ ४ ॥

पद १२०

भरथरी भूप भयो रे वैरागी ।
विरह वियोगी वन वन डोले सुरत शब्द सूं लागी । टेर.
हस्ती घोड़ा गाम गढ़ गूडर कनड़े पायक आगी ।
जोगी भयो देख जग जातो नगर उजीणी त्यागी ॥ १ ॥
छत्र सिंहासन चवर ढुलंता राग रंग वहो रागी ।
गोखां वैठी रंभा राणी तासूं सुरत न लागी ॥ २ ॥
सब सुख छोड़ भज्यो इक साँई राम नाम लिव लागी ।
सूरवीर सेंठा पग रोप्या जरा मरण भव भागी ॥ ३ ॥
मनसा वाचा और कर्मना गंधर्व सुत वड़भागी ।
कहै कबीर जूझ मन अपने अमर भयो अणरागी ॥ ४ ॥

राग कालिंगड़ा ।

पद १२१

मना यह मोसर नीको रे ।
देहड़ली दिन दोय करीजै कारज जीको रे । टेर.
चोवारा चहुं ओर अटारी चाकर भूपन चीर ।
रंग पतंग चार दिन चंगा अंत विरंगा वीर ॥ १ ॥
मात पिता परिवार पसारा सुत वित नारि सँजोग ।
साजन संग सराय वसेरा वीर विराना लोग ॥ २ ॥
हरि गुरु संत चरण की सेवा कीजै और न काम ।
मानुष तन को मोसर मेहगो भावन भजिये राम ॥ ३ ॥

पद १२२

एरघो जश क्यू नहीं लीजे रे। मना मुख राम रटीजे रे। टेर
ना कोई यासै जीभकी ना कोई लागे दाम।
ना कोई पथ निहारणो वदा क्यों सुमरै नहिं राम ॥ १ ॥
काया माया पाहुणी ओर कन्या घर होय।
राखी काहू की ना रहै ऊठ चलै पत खोय ॥ २ ॥
यो मन मेरो गोडियो हुनर किया अनेक।
मन वाछा माया रची अट लिख्या फल देख ॥ ३ ॥
सव दोझकरै कारणै देत पइसा खोल।
विना पईसा मुक्ति है जे कोई लेवै मोल ॥ ४ ॥
लख चोरासी भुगत कर पाइ मिनखा देह।
सुखसारण भज राम ने अवसर आयो एह ॥ ५ ॥

राग बिलावल

पद १२३

जोगियाने ढूढत जुग भयो कहु देख्यो री माई।
कोई रे वतावे जोगी आवतो जाने लाख वधाई। टेर
पाना छाई रे जोगी रावटी फूला सेज विछाई।
आयो जोगी रम गयो भिक्षा देण न पाई ॥ १ ॥
जोगियारी झोली हीरा जडी माहे माणक भरिया।
जो मागे जाकू देत है ऐसा दिल दरिया ॥ २ ॥
एक जोगी दूजो मित्र है तीजो मस्त दिवाना।
चोथा तकिया रालके धरती असमाना ॥ ३ ॥
शेष नाग सेवा करै चद्र पूरै चराकी।
लेखण वाके हाथ है कछू काढत वाकी ॥ ४ ॥
देखो जोगी री करामातकी मनसा महल वणाया।
विन थाभा विन थोभली असमान ठहराया ॥ ५ ॥
कहै कवीर मैं क्या कहू क्या कहिके गाऊ।
अलख निरजन राम है वाका पार न पाऊ ॥ ६ ॥

पद १२४

मीठा लागे माधवा निजनाम तिहारा।
से भी आसण ना रहे धरती गिलगई सारा। टेर
मनु सरीसा राजवी कुजर क्रोड अठारा।
लाल लगूरा नेजा फर हरै बाजे वब नगारा ॥ १ ॥

ऊंचा मंदिर चुणावते विच कोटिक धारा।
झालर वाजै देहरा जाँरा अंत न पारा ॥ २ ॥
भीम सरीसा महावली दल ढंभण हारा।
सहदेव सरीसा जोतिषी वाचै पुराण अठारा ॥ ३ ॥
पीर पैकंवर अवलिया जोगी जंगम धारा।
कहै कबीर सुण साधवा हमभी चालण हारा ॥ ४ ॥

पद १२५

अब तो नाथ दया करो मेरे समरथ दाता।
जीव तड़फै दरशण विना किनसों कहुँ वाता ॥ टेर.
आठ पहर नहिं वीसरों नित डगर निहारों।
हों तेरे नाम के ऊपरे मेरा तन मन वारों ॥ १ ॥
मेरा घट में तलफता जैसे घन विन मोरा।
लगत पियारा मित्र सों जैसे चंद चकोरा ॥ २ ॥
वरषा विन दादर दुखी निरधन धनकाजा।
जनकी या गति जानके वुझावो दाझा ॥ ३ ॥
करणी दिशा न देखियो पूरण अविनासी।
शरणां की प्रतिपालियो नहिं तो विरद लजासी ॥ ४ ॥
धीरप दे अपनो करो विरहा विश्वासो।
कनीराम कूं दरस दो मेटो सब साँसो ॥ ५ ॥

राग परभाती।

पद १२६

जाग पियारे अब क्या सोवै, रैण गई दिन काहे कूं खोवै टेर.
जो जाग्या सो माणक पाया, मैं मंद भागण सोय गमाया ॥ १ ॥
पियोजी चतुर मैं मूरख नारी, पियाजी की सेज कबू न सँवारी ॥ २ ॥
मैं भोली भोलापण कीनो, भरजोवन में नाम न लीनो ॥ ३ ॥
कहै कबीर मन तानक तैया। तज अभिमान मिलै रामैया ॥ ४ ॥

पद १२७

हिल मिल मंगल गावो मेरी सजनी। भयो परभात वीतगई रजनी। टेर.
नाटक चेटक तजदे फेना। सतगुरु शब्द साँच गहलेना ॥ १ ॥
अमृत वेली मीठा फल लागा। चाखैगा कोई संत सुभागा ॥ २ ॥
उर्ध शिखर तहाँ फूली फुलवारी। मनसा मालन करै रुखवारी ॥ ३ ॥
कहै कबीर गुरु रामानंदा। उनकी कृपा मोय भया अनंदा ॥ ४ ॥

पद १२८

श्रीगोविन्द परमानन्द भक्तन हित कारी । टेर
दीनबन्धु दामोदर मधुसूदन मुरलीधर विश्वनाथ विश्वंभर व्रजपति वनवारी ॥ १ ॥
जनपर जब परत भीर तुरत धरत नर शरीर क्षणभरमें हरत पीर साँवरो विहारी ॥२॥
टेर्‌यो झट दीनगज धाये झट खगपति तज धन्य धन्य गरुडध्वज भक्तनभयहारी ॥ ३ ॥
दु शासन दुष्टराज नग्न करन चहत आज देखरह्यो सब समाज लाज भय विसारी ॥ ४ ॥
करुणाकर कष्टहरन वीरोत्तम धीरधरन अब तो हूं चरण शरण हैं प्रभुविहारी ॥ ५ ॥
वेग आय सोचवाय नहिं तो यह लाज जाय फिर तुम कहाकरिहो आय जब ना रहै सारी ॥६॥
हेगोविन्द हेगिरधर हेयदुपति हेश्रीधर ऐसे कही आतुभर द्रौपदी पुकारी ॥ ७ ॥
खगपति हो सवार धाये यशोदाकुमार बधादियो पट अपार झटपट असुरारी ॥ ८ ॥
धन्य धन्य ज्ञानवान भक्तों ये तुमसुजान जगमें को प्रभु धर्मध्वजाधारी ॥ ९ ॥
जो जन है परम भक्त हरिहरि दिनरात जपत उनको नहिं देख सकत दामोदर दुखारी ॥१ ॥

पद १२९

दीनदुखहरन देव सन्तन सुखकारी । टेर
अजामेल गीध व्याध इनमें कहो कौन साध पक्षीहू पद पठात गनिकासी तारी ॥ १ ॥
ध्रूके शिर छत्रदेत प्रह्लादको उबार लेत भक्तहेतु बांधसेतु लंकासी जारी ॥ २ ॥
तन्दुलसे रीझजात शाक पात तें अघात गिनत नाहिं झूटे फल खाटे और खारी ॥ ३ ॥
गजको जब ग्राह ग्रस्यो दु शासन चीर खस्यो सभाबीच द्रौपदी कृष्णको पुकारी ॥ ४ ॥
इतने ही हरि आयगये वचन आरूढ भये सूरदास द्वार ठाढो आंधलो भिखारी ॥ ५ ॥

पद १३०

तूँ दयालु दीन हूँ तूँ दानी मैं भिखारी ।
हूँ प्रसिद्ध पातकी तूँ पापपुंजहारी । टेर
नाथ तूँ अनाथ को अनाथ कोन मोसो ।
मो समान आरत नहीं आरत हर तोसो ॥ १ ॥
ब्रह्म तूँ हूँ जीव तूँ ठाकुर हूँ चेरो ।
तात मात गुरु सखा तूँ सब विधि हित मेरो ॥ २ ॥
तोहि मोहि नाते अनेक मानिये जो भावे ।
ज्यों त्यों तुलसी कृपालु चरण शरण पावे ॥ ३ ॥

पद १३१

देव दीनको दयालु दानी दूसरो न कोइ ।
जाहि दीनता सुनाय दीन देखों सोइ । टेर
मुनि सुर नर नाग असुर साहिब तो घनेरे ।
जोलों तोलों रावरे न नेक नैन हेरे ॥ १ ॥

त्रिभुवन तिहुं काल विदित वदत वेद चारे।
आदि अंत मध्य राम साहिवी तुम्हारे॥ २॥
पाहन पशु विटप विहंग अपने करलीने।
महाराज राज दशरथ के रंक राव कीने॥ ३॥
तोहि मांग मांगनो न मांगनो कहायो।
सुन खभाव शील सुजस जाचन जन आयो॥ ४॥
तूँ गरीव को निवाज हूँ गरीव तेरो।
एक वेर कहो कृपालु तुलसीदास मेरो॥ ५॥

पद १३२

मोसम कोन कुटिल खल कामी।
तुमसे कहा छिपी करुणानिधि तुम उर अंतर्यामी। टेर.
भरभर उदर विषय रस पीवत जैसे शूकर गामी॥ १॥
जो तन दियो ताहि विसरायो ऐसो लूण हरामी॥ २॥
जहाँ सत संग तहाँ अति आलस विषयन संग विरामी॥ ३॥
श्रीपतिचरण छोड ओरन की निशिदिन करत गुलामी॥ ४॥
पापी कोन वड़ो है मोसम सव पतितनमें नामी॥ ५॥
कीजै कृपा दास तुलसी पर सुनिये श्रीपति स्वामी॥ ६॥

पद १३३

मोसम कोन अधम अज्ञानी। टेर.
हम हमके वस प्रभु नहिं हेरे भयो देह अभिमानी॥ १॥
सेवत विषय भोग निशिदिनमें उलटे फास फसानी॥ २॥
धन धन कर ऊमर सव वीती तृष्णा नाहिं अघानी॥ ३॥
लाख सुनी मानी नहिं एकहु साधु संतकी वानी॥ ४॥
आपे की कछु सुधि नहिं राखी तक तक आस विरानी॥ ५॥
निरभैराम यह पंचरंगी चादर होत पुरानी॥ ६॥

रागटोडी।

पद १३४

एक राम विन अवर न मानूं मेरे सतगुरु यों फरमाया है। टेर.
पाणी की भींत पवन का थंभा दशमुख भवन वनाया है॥ १॥
देवी देव चंद रवि राया सवही हरि उपजाया है॥ २॥
भक्ति किवी जॉ किया चोगणा मूरख मूल ठगाया है॥ ३॥
दारा दोलत संग न साथी ना संग सुंदर काया है॥ ४॥
विष्णुदास प्रभु तुम्हारे मिलन को हरि चरणां चित लाया है॥ ५॥

पद १३५

सतगुरु कह समझाया हो ।
परम पुरुप विन ओर न परतू पीव निरजनराया हो । टेर
सबसे ऊपर मेरा साँई तापर कोई न बताया हो ।
मनसा वाचा और कर्मना वाही से चित लाया हो ॥ १ ॥
घटधारी सें प्रीति न मेरी जो अवतार कहाया हो ।
वे हम भया वधु आप में थके जननी जाया हो ॥ २ ॥
ब्रह्मा विष्णु महेश विचारा वहाँ लग जाण न पाया हो ।
वाजी माहिं वीच ही अटके मोहलिये सब माया हो ॥ ३ ॥
जहाँ गये गोरख भरथरी तहाँ धूप नहिं छाया हो ।
जहाँ कवीर गुरु दादू पहुते सुंदर वे दिस ध्याया हो ॥ ४ ॥

पद १३६

तुम सुणियो नाथ वीनती दयालु दीनकी । टेर
पूरण ब्रह्म परमातम आगम ओपम सागरकी ।
भीड़ पडी जब द्रौपदी में पत राखी है नागर की ॥ १ ॥
भक्तवछल थारो विरद है पत राखजो जनकी ।
तुमसे का छिपाउ नाथ वात जो मरम की ॥ २ ॥
अविगत थारी लखी न जावे रूप वरण की ।
दीन कहै मोहि राखो नाथ शरण चरण की ॥ ३ ॥

पद १३७

म सुण्यो नाथ नाम तेरो पतितपावन को । टेर
व्याध गीध भालु कीस सजन से कसाइ ।
गनिका कुब्जा भीलणी निज धाम को पठाई ॥ १ ॥
डूबतही गजराज अरध नाम उचार्यो ।
प्यादे ही उठ धाये काज चकसों कर्यो ॥ २ ॥
अनेकही अधम उधारे नाम नरहरी ।
दीनको उधारवेकी ढील क्यों करी ॥ ३ ॥

राग जैजैवंती ।

पद १३८

दीनबंधु दीनानाथ काहेते कहाये हो । टेर
कैसे तुम द्वारिका में द्रौपदी की टेर सुनी ।
कैसे गजराज काज नगे पाँव ध्याये हो ॥ १ ॥

कैसे तुम गनिकाके औगुण विसारे नाथ।
कैसे तुम भीलनीके झूठे वेर खाये हो ॥ २ ॥
कैसे तुम भारथ में भीष्म को प्रण राख्यो।
कैसे वसुदेवजीको वंधन छुडाये हो ॥ ३ ॥
करुणा निधान कान्ह मेरी वेर वूँदे कान।
अशरण शरण श्याम सूर मन भाये हो ॥ ४ ॥

पद १३९

दीनवंधु दीनानाथ मेरी सुध लीजिये। टेर.
सोने को सोनैयो नाहीं रूपे को रूपैयो नाहीं।
कोडी पैसो पास नाहीं विणज कासूं कीजिये ॥ १ ॥
भाई नाहीं वंधु नाहीं कुटुम्व कवीलो नाहीं।
ऐसो कोउ मित्र नाहीं जाके पास जीजिये ॥ २ ॥
हाट औ हवेली नाहीं चोवारा औ महल नाहीं।
ऐसो कोउ मंदिर नाहीं जामें वास दीजिये ॥ ३ ॥
कहत है मलूकदास छांडदे विड़ानी आस।
हरिको भजन कर हरिमें समीजिये ॥ ४ ॥

पद १४०

लाखां वातां तारसी भरोसो रघुवीर को। टेर.
द्रुपदसुताकी लज्जा राखी पार न पायो उन चीरको ॥ १ ॥
रंका तार्‍या वंका तार्‍या कुल तार्‍यो कालू कीर को ॥ २ ॥
केता तार्‍या पार नहिं पाऊं तार्‍यो छै अधम अहीर को ॥ ३ ॥
जाझूराम कहै वालद लाये दालद हर्‍यो जी कवीर को ॥ ४ ॥

पद १४१

केसां हो दीनानाथने मनड़ारी वातां केसां हो रघुपति नाथने। टेर.
ज्ञान ध्यानसुं गुंज करांगा सतसंग मांग मांग लेसां हो ॥ १ ॥
दिलका दलीचा उरका ओसीसा खमाजी खमाजी करलेसां हो ॥ २ ॥
राजरो मिलाप खुशी दिन भावे हाजर हजूर हुय जासां हो ॥ ३ ॥
दीन कहै लवलीन भजन में तन मन थांपर वारवार देसां हो ॥ ४ ॥

राग सारंग।

पद १४२

समझ वूझ दिल खोज पियारे आशिक हो फिर डरणा क्यारे। टेर.
सतगुरु वांण विरह का मार्‍या घायल होय फिर सोणा क्यारे ॥ १ ॥

जो तोरे नैणा में नींद सतावे तकिया और बिछोणा क्यारे ॥ २ ॥
जो तोरे मनमें क्षुधा सतावे लूखा और सलूणा क्यारे ॥ ३ ॥
जो तू आया प्रेम गलीमें सीस दिया फिर रोणा क्यारे ॥ ४ ॥
साह्न सेन फकीर सॉइदा जादू ऊपर टूणा क्यारे ॥ ५ ॥

पद १४३

साजन हो तेरे सग चलूगी फॅट पकर इक बात कहोंगी । टेर
जो शिर काटो तो अग न मोडू प्राण जाय तोइ प्रीति न तोडू ॥ १ ॥
प्रीति पुराणी नेह नवेलो बिछुरन है पण मिल्न दुहेलो ॥ २ ॥
काजी मुहम्मद चेरी में तेरी बल जल भई भस की ढेरी ॥ ३ ॥

पद १४४

आव सलोंना मोहि देखन देरे पल पल में बलिहारी तेरे । टेर
सब गुण तेरा अवगुण मेरा पीव हमारी आहन लेरे ॥ १ ॥
आव पिया अब सेज हमारी निशिदिन देखू मैं बाट तुम्हारी ॥ २ ॥
सब गुणवता साहिब मेरा लाड गहेला जन दादू केरा ॥ ३ ॥

पद १४५

राते माते नाम तुम्हारे काहेकी परवा है हमारे । टेर
झिलमिल झिलमिल नूर तुम्हारा परगट खेले प्राण हमारा ॥ १ ॥
नूर तुम्हारा नैणा माहीं तनमन लागा छूटे नाहीं ॥ २ ॥
प्रेम मगन मतवारे माते रग तुम्हारे दादू राते ॥ ३ ॥

राग मलार ।

पद १४६

वहोनी वाल्हा कोन विरद की लाज ।
जे तुम सद्दो कसोटी हितकी निरणो निकसै आज । टेर
मैं अति दुखित दीन गुरु द्विजवर अशरण शरण तुम्हारो ।
तुमसें एक भक्ति को नातो थोरो घणो विचारो ॥ १ ॥
साची कहू सुणो दुरवासा मोरी सुरत स्वतन नाहीं ।
मोहि भक्तॉ ऐसे वस कीनो कीर पींजरा माही ॥ २ ॥
मख के हितनी खबर पड़ी जब भागो मनको भोर ।
अग्रदास साचा हरिजनकी सार भज्या कछु है ओर ॥ ३ ॥

पद १४७

सुण्यो मैं भक्तवत्सल विरद तेरो ।
जनकी घटे सो तुम्हारी घटत है मान वचन सत मेरो । टेर

जन प्रह्लाद खंभसे बांध्यो असुर चहुं दिशि घेरो।
खंभ फाड़ नरसिंह हुय प्रगटे नखसें उदर विदेरो ॥ १ ॥
द्रुपदसुता को आण सभा विच खांच्यो चीर घणेरो।
वाको चीर अनत लग वधियो दुष्ट पच्यो वहुतेरो ॥ २ ॥
स्याल कूं छोड शरण आयो सिंघकी कहाँ रह्यो भय नेरो।
निरभै रहै ताकूं भय नाहीं सवलै वास वसेरो ॥ ३ ॥
कर करुणा हरिजन यूं विनवै हरि कर ऊपर मेरो।
कहै रैदास शरण सतगुरु की जन्म जन्म को चेरो ॥ ४ ॥

पद १४८

माया रंग वादलीरे जामें हरि चंदा दीसै नाहिं। टेर.
लोभ मोह के वादल छाये गरज रह्यो अहंकार।
तृष्णा विजली चमकन लागी भीज रह्यो संसार ॥ १ ॥
काम क्रोध की नदियां चलत है गहरी वहै चौधार।
पीर पैगंवर और अवलिया वहगया ऊंडी धार ॥ २ ॥
ज्ञान पवन जव छूटण लागी वादल दिये उडाय।
कहत कवीर जव फूली कमोदिनि चंदो निकस्यो आय ॥ ३ ॥

पद १४९

लटको छोड़दे रे जोगिया असल फकीरी धार। टेर.
पत्थर पूज्याँ हरि ना मिले रे सव कोइ पूजो जाय।
पूजोनी घररी घरटियां सव जग पीस रु खाय ॥ १ ॥
मूंड मुडायाँ हरि ना मिले रे सव कोई लेवो मुंडाय।
छठे महीनें लूणे गाडरी सो कांई अमरापुर जाय ॥ २ ॥
न्हायाँ धोयाँ हरि ना मिलेरे सव कोई लेवोनी न्हाय।
जलमें न्हावे माछली सो कांई अमरापुर जाय ॥ ३ ॥
राख लगायाँ हरि ना मिलेरे सव कोई लेवोनी लगाय।
लुटे गधेड़ा राखमें सो कांई अमरापुर जाय ॥ ४ ॥
नागा हुयाँ हरि ना मिलेरे सव कोई नागाहुय जाय।
नागा फिरे पशु जिनावरा सो कांई अमरापुर जाय ॥ ५ ॥
लिया पातरा हाथमें रे घर घर अलख जगाय।
दास कवीर की वीनती हरि सुमरो लिवलाय ॥ ६ ॥

पद १५०

कोइ नाहक कष्ट करावे विन राम मुक्ति नहि पावै। टेर.
कोइ लटक अधोमुख झूलै कोइ धूम्रपान कर फूलै।
कोइ पंचा अग्नि जलावै सो राजपाट को पावै।

काशीमें करवत सारे कोइ नींद भूख तिस मारे।
दे ग्रहण समय गऊदान करे सनमानक मनमें भावे ॥ १ ॥
कोइ करत गुफा में वासा वाके बहु जीवन की आसा।
कोइ नग्न होय कर डोले कोइ मौन पकड़ नहिं बोले।
कोइ बन बन फिरत उदासा वाके मनमें और ही आसा।
आसा जो अपनी फिरे जन्म बहु धरेक चौरासी में जावे ॥ २ ॥
कोइ देत बहुत तन त्रासा वनमें रहे होय निरासा।
कोइ गले हिमालय माहीं सो स्वर्ग लोक को जाहीं।
कोइ कंद मूल फल खावे उद्भिज का जीव सतावे।
तनको देत सुकाय करे दुख दाय ले हाथ चढ़ावे ॥ ३ ॥
कोइ च्यार धाम फिरि आवे मुक्ति की राह नहिं पावे।
कोइ तीरथ सेवे जाई वाकी आसा अरर मॉई।
कोइ झपापातहि लेवै सुतहेत देहको देवै।
सो फलहीको पाय मरे दुखदायक जन्म गमावे ॥ ४ ॥
कोइ शकुन सरोधा माने औरन को भरम वखाने।
कोइ होम जाप मख लावे कोइ अनुष्ठान ठहरावे।
कोइ आनदेव को ध्यावे वह पशुवा पशू चढावे।
वो ले सिर बदला धरे नरक में पड़े क जमपुर जावे ॥ ५ ॥
ये रामसनेही साधू जिन झेल्यो धर्म अनादू।
जिन झूठी तज वकवादू इक रामनाम धन लादू।
गुरु रामदास शरणाई जन पीथल वलि वलि जाई।
गुरु कन्हीराम महाराज भक्ति की जाज शरण में आवे ॥ ६ ॥

पद १५१

देखोनी साधो नावमें नदियाँ डूबीजाय कहा कहों समझाय। टेर
एक अचभा हमने देखा कूपमें लगगई लाय।
पाणी फचरा सबही जलगया मछी होगई स्वाय ॥ १ ॥

---

१ श्रीकबीर साहिब नामदेवजी सुन्दरदासजी आदि महात्माओंकी वाणीमें विपयय अग है। परन्तु वाममार्गी (कूडापन्थी) वेसिरपैर के ऊटपटाग मन घडत शब्द बनाकर कबीरसाहब आदि महात्माओंकी छाप लगा देते हैं और उनका ऊल जलूलही अर्थ किया करते हैं। उनके अनुयायी उन्हींको पंडित ब्रह्मज्ञानी व साध मानते हैं। दूसरे चाहे षट्शास्त्रनिष्णात पूर्ण महात्माही क्यों न हो उनको स्थूल कहते हैं।

२ ज्ञान। ३ आशा आदि। ४ समाना। ५ अन्त करण। ६ ज्ञानाग्नि। ७ मल विक्षेपादि आवरण। ८ वृत्ति। ९ स्वाह अर्थात् वृत्तिका बदल जाना।

कीडी[1] चाली सांसरे[2] नेव[3] मण काजल[4] सार।
हस्ती[5] वाके गोद[6] में ऊंठलियो[7] ललकार[8] ॥ २ ॥
जल[9] जाई थल[10] ऊपनी जल में कियो न पाप।
एक अचंभो देखियो बेटी[11] जायो बाप[12] ॥ ३ ॥
घड़ो न डूबै बेड़ियो हस्ती[13] मल मल न्हाय।
कोट[14] कांगरे पाणी आयो पक्षी[15] प्यासा जाय ॥ ४ ॥
सासू[16] कवारी बहू[17] हमल में नणंदल[18] फेरा खाय।
देखण[19] वाली पुत्र[20] जन्मियो पाडोसण[21] हालोगाय ॥ ५ ॥
अंडांथा[22] जब बोलता बच्चा[23] बोले नाहिं।
पंडित होय सो अर्थ करै अज्ञानी गम नाहिं ॥ ६ ॥
बेटी[24] पूछै बापने[25] अणजायो वर लाव।
अणजायो वर नां मिलै तोरे मोरे व्याव ॥ ७ ॥
कहत कबीर सुणो भाइ साधो साची कहुं समझाय।
या पद को कोइ अर्थ विचारै तो सहज मोक्ष मिल जाय ॥ ८ ॥

इति।

अथ विनय-वैराग्योपदेशमंजरी।

जय जगवंदन नंद के नन्दन पांडव स्यंदन हांकनहारे।
चर्चित चंदन कष्ट निकंदन ग्राह गयंदन ग्राह विदारे ॥
इंद्र फनिंद्र कविंद्र मुनींद्र रु छन्द गुणीगन वृन्द उचारे।
आनंदकंद गोविंद मुकुंद करो दुख द्वंद निकंद हमारे ॥ १ ॥

कवित्त।

जनम गमायो राम नामको न गायो कबु कीनो ना उपाय भवसिंधु के तरन को।
शरण मे जैहो कौन वदन दिखैं हों हाय औगुण भरें हों गुण एको ना शरन को ॥
रसिक विहारी है न आपको भरोसो रच को सहाय शोकनद पार के करन को।
परो मजधार बीच हों तो निराधार अब एक ही अधार रघुराय के चरन को ॥ १ ॥

---

१ सूक्ष्मवृत्ति। २ आत्माका संग। ३ नवतत्व। ४ दग्ध होजाना। ५ निजमन। ६ एकता। ७ मिथ्या अहंकार। ८ सूक्ष्म शरीर। ९ अन्तःकरण जलाशय मे प्रेमजल। १० स्थूल वैराट। ११ माया। १२ जीव। १३ मन। १४ नेत्र। १५ शुष्क-वेदान्ती। १६ शुद्ध सतगुणी माया। १७ अविद्या जीवकी स्त्री। १८ वासना। १९ बहिर्मुखवृत्ति। २० अज्ञान। २१ वैखरी वाणी। २२ जिज्ञासू। २३ पूर्ण। २४ माया। २५ ब्रह्म।

एक ही भरोसो उर आवत खरोसो यह उपज निषाद गीध अधम विचारे हैं ।
शबरी औ शाखामृग रीछ कौन वेदपाठी जावे इनओर कृपा कोरते निहारे ह ॥
दीन हैं पियारे दीनबंधु को स्वभाव मृदु रसिक विहारी सोही रक्षक हमारे हैं ।
काहू ते न घाट पातकी हौं क्यों तजेंगे मोहि वेगि अपने हैं जो पे इतने उधारे हैं ॥२॥
व्याधहूते विहद असाध अजामेलहू ते ग्राह ते गुनाह कहा तिनमें गिनावोगे ।
शबरीहूँ न सिद्धहूँ न केवट कहूको त्यों न गौतम त्रिया यामें पगधर आवोगे ॥
रामसों कहत पदमाकर पुकार तुम मेरे महा पापन को पार हू न पावोगे ।
सीता सी सती कू तजी झूठोइ कलंक सुन साचो मैं कलंकी ताहि कैसे अपनावोगे ॥ ३ ॥
दाराके कुबोलन को झोंकसो गलेमें तोक हाथ हथकरी परी लोभ की बनायके ।
सुत औ सुताकी ममता के मद पाके सू रही है जालिम जोर जजीरें जकरायके ॥
काम क्रोध पाहरु सो काढन कृपानधीश गाल्यो कैदखानो घर घेरो दाव पायके ।
हे हरि किवेहो कबी हित सू हिवेहो अब ऐसी ही चितहो कि चितहो चित लायके ॥
काम क्रोध लोभ मोह मान मद भट नाना जिनके सरवरकी कहाँलों सेन जोरोगे ।
तृष्णा है अपार कहू पार को न पारावार कौन के निकट सेतु करिवेको छोरोगे ॥
सकलपाप हरन को हश हू कृपानिधान मनो है कुबोध ताहि कौनविधि फोरोगे ।
अघको अमोघ गढ वका है बुद्धि मेरे लका हत नाहिं ताहि डका दे तोरोगे ॥ ५ ॥
रावरो कहावों गुण गावों राम रावराइ रोटी द्वे हों पावों राम रावरी हि कानि हों ।
जानत जहान मन मेरेहू गुमान वडो मान्यो म न दूसरो न मानत न मानि हों ॥
पावको प्रतीति न भरोसो मोहि अपनोइ तुम अपनाइ हो तबही परि जानि हों ।
गढि गुढि छीलिछालि कुंदनीसी भाइ वात जैसी मुख कहो तैसी जीय जब आनि हों ॥६॥
वेदकू छदामा धना जाट राख्यो कामा छींट रंगवेको नामा सो प्रणामी के उधारो है ।
आपकी हजूर सेना राख्यो है हनामतको जूती तग तोबराकू रविदास जिन भारो है ॥
कपराकी खातर कबीरा पैं कृपा करी कारीगर जान अति भवसागर तारो है ।
एते जन तारे तब कोन पें अहसान कियो विना भक्ति तारो तो तरिबो तिहारो है ॥ ७ ॥
तारे प्रहलाद जन तात हू की घात सही तारे तुम ध्रुव सो तो बारो तन गारो है ।
तार्‍यो तुम मोरध्वज पुत्र पर धर्‍यो हरि तार्‍यो हरिश्चंद्र सोतो नेकहू न हारो है ॥
निपट निरंजन कहै भक्त विभीषण तारे सोतो घर फाऱ्यो तद लंक भेद पारो है ।
जिनही जिन भक्ति करी तिनही कू तारे तुम विना भक्ति तारे प्रभु तारिबो तिहारो है ॥ ८ ॥
कर्म छुटेला वरणआश्रम टुटेला मजु धरम छुटेला जाति पाति ते उठेला है ।
दीन को जुटेला और मलीन को लुटेला सदा आन वान कान सान मान ते मठेला है ॥
मनको मुटेला पातकीन को घुटेला चित चाह को चुटेला झूठ मद को झुठेला है ।
रसिकविहारी तोहि नीकी भाति जानू राम द्विज को कुटेला मीठनीको तू लुटेला है ॥ ९ ॥
शबरी अहल्या गणिकादि दुराचारी भारी ऐसी ऐसी घनी अधम कुनारिनको रंगी तू ।
वायस निषाद गीध राक्षस अपावन ये गज कपि रींछ भूरि भूरन को संगी तू ॥

काम क्रोध लोभ मोह विवस मलीन दीन दु खित दरिद्री इमि रागिन को ढंगी तू ।
रसिकविहारी भली भाति पहिचानों राम हों तो तोहि जानू हू सदाते नीच सगी तू ॥ १० ॥
कूवरा कसाई जाट कीर डूम नाई कोली छीपा रु चमारन की भक्ति मन भाई है ।
गूजर गवारन कूं सगले विहार कियो ताकी तो पुरानन मे कथा व्यास गाई है ॥
गनिका और भीलनी को तारी सो प्रसिद्धवात दासी को खवासी खासी ऐसी चतुराई है ।
नीचको निवाजवे की तुमही को परी वान मेरी जात ऊच प्रभु काहे को वनाई है ॥ ११ ॥
गोकुल मे जन्म लीनो जल जमुनाको पीनो सुवल सुमीत कीनो जाको जग जाप है ।
भनत मुरारी जाकी जननी जसोदा जैसी उद्धव निहार नद जैसो तेहि वाप है ॥
काम वामते अनूप तजी व्रजचंद मुखी रीझ्यो सग कूवरी कुरूप सो अमाप है ।
नेह वीर नयको न पंचतीर भय को न वयको न पूतना के पय को प्रताप है ॥ १२ ॥

दोहा ।

पंगुल गूंगो रोग युत वनिक क्षुधातुर जीव ।
भय युत वालक प्रिय अचख सुनत अनाथ सदीव ॥ १ ॥

छप्पय ।

पंगु कुब्जा संपाति गुंग जमलार्जुन गावत ।
रोगी माधवदास वनिक तिरलोचन ध्यावत ॥
क्षुधित सुदामा विप्र भीत युत व्रजकी भामिनि ।
वालक ध्रुव प्रह्लाद अवल द्रुपदादिक कामिनि ॥
है अंधसूरलों हम सुने हाथ विके तिनके हरी ।
जग के निवास सव गुननयुत स्वरूपदास विनती करी ॥ १ ॥

कवित्त ।

ज्ञान औ विराग दोउ पायन विनाहू पंगु भक्ति रसना ते हीन गूंगहू निहारोगे ।
त्रिधा ताप रोगी कर्म वानिज वनिकहू मैं भूखो दसधाको केउ जन्म को विचारोगे ॥
काल भीति वालवुद्धि आत्मा है अवला औ अंध तत्त्व अजन के विनाहु नेक धारोगे ।
एक अग के अनाथ ताके विके सुने हाथ आदि अत मे अनाथ नाथ क्यों विसारोगे ॥ १३ ॥
मनसे महीपति के मुंशी मतग मोह मदन महुर्रिरकी मदत मतवारी है ।
क्रोध कोतवाल लोभ नाजर की मिसलत ज्ञान मुद्दई की जिन मिसल विगारी है ॥
अहंकार अहलमद करत ना रपोट भली तृष्णा चपरासी की दस्तग नित्त जारी है ।
दीन की दरख्वास्त यही डिगरी न होवै केशव अरजी हमारी आगै मरजी तुम्हारी है ॥ १४ ॥

गीत ।

अद्भुत नाथ न लोपे आज्ञा इन्द्र ब्रह्मा शंकर ले आप ।
भावतणो लोंदारो भूखो वांदारो वांदो मा वाप ॥

कोटि २ ब्रह्माड जो करता कोटि २ दैत्योंका काल।
वोलारो साचो निरवधण गोलारो गोलो गोपाल॥
ईश्वर दुखा अचभो आवै घट सूरापण निपट घणो।
ठावो सब्ल सकलरो ठाकुर तू चाकर चाकरा तणो॥
दास ब्रह्म झूठ नहिं दाखै केशव अज सुणो दे कान।
तिलोचद घर रह्यो टहल्यो छींपे तणी छजाई छान॥ १॥

कवित्त।

रूठै क्यों न राजा तातें सरे नहीं काजा एक तूसे महाराजा और कौन को सराहिये।
रूठै क्यों न भाइ तातें कछू ना वसाइ एक तू ही है सहाई और कौन पास जाइये॥
रूठै क्यों न मित्र शत्रु तरव आठों याम एक रावरे चरण करे नेह को निवाहिये।
ससारी ही रूठ एक तूटी है अनूटा सब चूसगे अगूटा एक तू न रूठा चाहिये॥ १॥

दोहा।

जितने तारे गगन मे, तितने वैरी होय।
कृपा होय श्रीराम की, वाल न वॉको होय॥ १॥
कहा करै वैरी प्रवल, जो सहाय रघुवीर।
दश हजार गज वल घट्यो, घट्यो न दश गज चीर॥ २॥
साइ टेढी अरिखिया, वैरी सलक जहान।
टुकेक झोला महरदा, लरखों करै सलाम॥ ३॥
लग्न मुहूरत योग वल, तुलसी गनवन काहि।
राम भये जेहि दाहिने, सबै दाहिने ताहि॥ ४॥
गगा जमुना सरस्वती, सात समुद्र भरपूर।
तुलसी चातक के मते, विन स्वाती सब धूर॥ ५॥
सीतापति रघुनाथजी, तुम लग मेरी दौड़।
जैसे काग जहाज को, अत न वाकू ठौड़॥ ६॥
काहू के धन धाम है, काहू के परिवार।
तुलसी मोसम दीनके, सीताराम अधार॥ ७॥
नहिं विद्या नहिं वाहुबल, नहिं खरचनको दाम।
तुलसी मोसम पतित की, तुम पत राखो राम॥ ८॥
सव देखे परखे लिखे, वहुत कहे क्या होय।
तुलसी सीताराम विन, अपनो नाहीं कोय॥ ९॥
माधव मा मन होहु मम, माधव मम होहु आन।
माधव मेरे उर वसो, सदा सकल सुखखान॥ १०॥
वारन को तारन कहो, वार न लागी तोहि।
वार न कीजे हे प्रभो, वारन भटकत मोहि॥ ११॥

क्या मुख ले विनती करूं, लाज आवत है मोहि।
तुम देखत अवगुण करों, कैसे भाऊँ तोहि ॥ १२ ॥
मैं अपराधी जन्मका, नख शिख भन्या विकार।
तुम दाता दुख भंजना, मेरी करो संभार ॥ १३ ॥
मुझ अवगुण है तुझ्झ गुण तुझ गुण अवगुण मुझ्झ।
जो मैं विसरूं तुझ्झ को, तुम न विसारो मुझ्झ ॥ १४ ॥
मोमें गुण कुछ है नहीं, तुम गुण भरेहो जहाज।
गुण अवगुण न विचारिये, बाँह गह्यां की लाज ॥ १५ ॥
अवगुण किये तो वहु किये, करत न मानी हार।
भावै वंदा वखसिये, भावै गरदन मार ॥ १६ ॥

सोरठा।

कवलों गिणूं कृपाल, मो अवगुण गुण रावरे।
देखहु करन दयाल, गनिकाको सो घूंघटो ॥ १ ॥

दोहा।

हरियो देख हरामड़ो, रोस न कीजै राम।
अव तो तेरो हुय रह्यो, और न मेरे काम ॥ १७ ॥
विड़द तुम्हारो रामजी, लेवहिये महाराज।
हरियै गुण अवगुण किया, तोही तुम कूं लाज ॥ १८ ॥
हरियै अवगुण वहु किया, करत न कोई छेह।
जो तूं अवगुण याद कर, होय न छूटण केह ॥ १९ ॥
हरियै दोषण वहु किया, शंक न मानी काय।
भावै तो मुझ वगसियै, भावै कुंद मराय ॥ २० ॥
काहू के शिर को धणी, कूडा करत कलाप।
हरियै के शिर तू धणी, तूंही माय रु वाप ॥ २१ ॥
जन हरियै की बीनती, सांई करिये कान।
वंदे कूं मुश्किल घणी, सॉई तुझ आसान ॥ २२ ॥
हरियै का दिल तुझ्झ सूं, तेरा मुझ सेतीह।
ज्यों सोनो अरु सोहगी सिलिया अग्गेतीह ॥ २३ ॥
हमसा तेरे वहुत है, तुमसा मेरे नाहिं।
हरियो तुझको छांडिके, और न किसपे जाहिं ॥ २४ ॥
पाप किया से मुझ किया, हरिया फेर न सार।
भावै तो मुझ मेटकर, भावै दोज़ख डार ॥ २५ ॥
कलम हमारी रामजी, होय तुम्हारे हाथ।
जनहरियै कूं राखिये, सदा तुम्हारे साथ ॥ २६ ॥

कबीर तेरा जोर न जुल्म है, मेरा होय अकाज।
विड्द तुम्हारो लाजसी, शरण पड्या की लाज ॥ २७ ॥
कबीर अबके जे सॉई मिले, सब दुख अपणा रोय।
पाहण ऊपर शीश धर, कहूँज कहणा होय ॥ २८ ॥
कबीर सॉई मेरा सुनहगे, बूझेंगे कुशलात।
उन सॉई से कहूगा, मेरे मनकी बात ॥ २९ ॥
कबीर मो मरने को नेम है, मरूँ तो हरिके द्वार।
कबहू तो हरि पूछि हैं, कौन मर्‍यो दरबार ॥ ३० ॥
जा मरनें सों जग डरै, मेरे है आनद।
कब मरिहों कब भेटिहों, पूरण परमानद ॥ ३१ ॥
सॉइ तोसों बीनती, भावे भूल मभूल।
करीजिका शिर ऊपरे, करसी जिका कबूल ॥ ३२ ॥
डाल हने फल कू भपे, पातन कू फाड़ेह।
ये अवगुण पछी करे, तोउ तरवर नहिं ताडेह ॥ ३३ ॥
बडे दीनको दुख सुनत, देत दया उर आन।
हरि हाथी सू कबहुती, कहु रहीम पहिचान ॥ ३४ ॥
मूड चढाये हू रहै, पर्‍यो पीठ कच भार।
रहो गरे पर राखिये, तोऊ हिये पर हार ॥ ३५ ॥
हरे चरे तापहि वरे, फरे पसारहि हाथ।
तुलसी स्वारथ मीत जग, परमारथ रघुनाथ ॥ ३६ ॥
राम अवलब अनन्य गति, राम विना बेहाल।
वाकीलार हरि फिरत है, ज्यों जननी सग बाल ॥ ३७ ॥
लार फिरै रक्षा करे, गिरत पकरलै बॉह।
जनि दुख पावै दास मम, यों जानै मन मॉह ॥ ३८ ॥
दो पेंड हरि सन्मुख चले, हरि आवत पेंड पचास।
ज्यों जननी लघु बालकी, दोरि के आवत पास ॥ ३९ ॥

टीका-जसे माता ऊपरी पर काम करे है नीचे घर में बालक खेले है, जहां ताऊ बालक अपने ख्याल में मग्न है तहां ताऊ माता भी चुपचाप होरही है। जब बालक कों भूख लगी तब रोवण लाग्यो तब माता भी दिलासा देने लगी। जब बालक सीढी के नजदीक आयो तब माता को चिंता उपजी सो देखन लगी, जब बालक एक दोय सीढी पर चढ्यो तब तो माता के धोखो भयो। अब जो गिरेगो तो हाथ पाव टूट जायगो। तब तो माता ऊपर सू बहुत सीढी उतर के बालक कू कठ लगाय लेत हैं।

१ तुम आवो डग आठभर हम आवें डग साठ।
तुम भ करे काठ से, हम लोहे की गाठ ॥ १ ॥

दृष्टांत-तैसे माता की नांई नारायण है, सो भी सब के ऊपर अपनो स्वरूप मे वर्ते है। और जीव जो है सो नारायण को अंश है तातें बालककी नांई अज्ञ है, सो नीचे संसार में स्त्री पुत्रादि विषय ख्याल मे जबताऊ आत्मसक्त होय रह्यो है तबताऊ नारायण हू याकी उपेक्षा कररह्यो है, जब जीव के बालककी नांई विषय सूं वैराग्य भयो अरु नारायण की चाह भई तब विरह करिके रोवणे लाग्यो तब माता की नांई नारायण हू गुरू शास्त्रद्वारा जीव कूं समझावणे लाग्यो जब जीव बालक की नांई भगवत् प्राप्तिका साधनरूप सीढी के नजीक आयो तब माता की नांई नारायणहू जीवपर कृपादृष्टी सूं देखने लाग्यो जब जीव बालककी नांई एक दोय साधनरूप सीढीपर चढ्यो तब माता कीसी नांई हरि दोरिके अंग लगावे है।

नित्य स्वाधीन स्वल्पमूल्य के, मन रुचि जाणन हार।
ऐसे सेवक हरि दिये तें, भज्यो न ताहि गंवार॥ ४०॥

टीका-स्वल्पमूल्य=सेर नाजके १४ चाकर हैं, सेर नाज कूभी सब ही बांटि खावे है, इगर नहिं मरै है। काम ऐसो करै है हजार रुपिया का चाकर सू भी नहीं होय। धर्म अर्थ काम मोक्ष जो मन चावै सोई अर्थ कू साधी देत हैं तातें देखरे गंवार जीव! परम दयालू नारायण ने ऐसा सेवक दिया तो भी उन सेवकोंसेई सेवा नारायण की नहीं कराई, तू तो करेई काय की।

पकरि रह्यो प्राणां कूं, अरु प्रेरत इंद्रियग्राम।
सहायक सब व्यवहार मे, भजत न लूण हराम॥ ४१॥

टीका-देहरूप फूटा पिंजरा में चंचल प्राणरूप पक्षी कूं पकड़ रह्यो है तातें प्राण ठहर रह्यो है। नहीं तो कबकोई कोइ द्वार होके निकस जातो। फेर श्वासारूप करके बाहर जावे है तोभी शिकारी बाज की नांई ज्यांको खेंच्यो फेर उलटि के ठिकानेपर आय वैठे हैं नही तो नारायण विना पवन कूं पीछो फेरने वालो कौन है? ऐसे सब इंद्रिय समुदाय कूं आप आपके व्यवहार मे नारायण प्रेरे हैं।

झूलणा.

देह आज पड़ो चाहै काल पड़ो दिन च्यार पड़ोजी झड़ाक झड़ेगी।
पांच पचीस पचास पड़ो दस तीस पड़ोजी खडाक खड़ेगी॥
ऐस पड़ो भावे पोर पड़ो परार पड़ोजी दड़ाक दड़ेगी।
दीन कहै कहा देहको सोच है सो वरष रहै तोही देह पड़ेगी॥ १॥
फिट फिट्ट कहै दुनि घट्ट तेरा इस घट्ट का घाट घड़ायगाजी।
खट पट्ट ते खेद वधाय रहा झटपट्ट सिताब झड़ायगाजी॥
केई कूड़ कपट्ट निपट्ट करे अवधूत अपट्ट अड़ायगाजी।
सॉइ दीन दपट्ट झपट्ट कहै जी जम्म जंजीर झड़ायगाजी॥ २॥
जिव थेट के सूलतो भूलगया यहाँ पेट के काज भटकता है।
वहो कूड़ कपट्ट झपट्ट रह्या लालच्च लपट्ट लटकता है॥

इराम के काम तो बोत करे साइव्य के नाम अटकता है।
साई दीन कहै आसड मती पकड के काल पटकता है ॥ ३ ॥

सवैया।

गर्भ चढे पुनि सूप चढे पलना पे चढे चढे गोद घना के।
हाथी चढे फिर अश्व चढे सुखपाल चढे चढे जीमें घना के ॥
बैरी श्री मित के चितचढे कवि ब्रह्म भने दिन बीते पना के।
ईश कृपालुको जान्यो नहीं अब काधे चढे चले चार जनाके ॥ ४ ॥
पेट में पोढके पोढ़े मही जननी सग पोढ़ के बाल कहाये।
त्योंहि त्रिया सग पोढन लागे तो सारी निशा इस खेल गमाये ॥
क्षीरसमुद्र के पोढ न हारेको ध्यान कियो न कभी चित लाये।
पोढ़त पोढत पोढ रहे तो चितापर पोढ़न के दिन आये ॥ ५ ॥
देह अचेतन प्रेतदरी रज रेत भरी मळ खेत की क्यारी।
व्याधि की पोट अराधिकी ओट उपाधिकी जोट समाधिसे न्यारी ॥
रे जिय देह करें सुख हान इते पर तो तोहि लागत प्यारी।
देह तो तोहि तजेगी निदान पें तूहि तजे किन देहकी यारी ॥ ६ ॥
विक्रम भोज दधीचि भये बलि करण कुबेर जिसा थिर नाई।
भीषम द्रोण भये दुर्योधन पचहु तत्व समुद्र सुखाई ॥
बेद कतेब पुकार कहे नर जीमगई अवतार सदाई।
खायगई सगरे जगकू इक मोत निगोडी को मोत न आई ॥ ७ ॥
जळमें उपज्यो जलमाहिं रह्यो जल पोखत है जल डूबत नाहीं।
तापक जो रवि सोपत है नित कज ज्यू ताहि देख्या विकसाहीं ॥
तैसे यो जीव विषयसग फूलत ता बिन जीव अती मुरझाही।
हरि सू उपज्यो हरि पोसत है हरिमाहिं रह्यो हरि कू विसराही ॥ ८ ॥
पशुअ भले उनते जग में नहि कर्म करी दुख बीज को बोवै।
कियो भुगते पशु देह धरी सुख दु ख के पाप के कर्म कू धोवै ॥
आचार मलीन चरे अपनो उनवें सगते कोऊ भ्रष्ट न होवै।
उनतें यो नीच भयो नर माणक गाठ के सींग रु पूछ को खोवै ॥ ९ ॥
जननी क्यों बोझ मरी इनकी जाने ऐसे पशू को पेट में राखो।
कलक जणी अपणे कुलको अधबीच नहीं क्यों गभ ते नाखो ॥
जन्मत ही मरि क्यों न गयो जाने जीव के रामको नाम न भाखो।
मरेतें भलो निज मूरख को जीवत करेगो यो सरन को साखो ॥ १० ॥
आछो सो काछ कछ्यो तननें मननें नहीं आछो सो नाच यो नाच्यो।
राम गुलाम कहावत है पै गुलाम भयो जगको दाम जाच्यो ॥

कूड़ कपट्ट विकार भर्‍यो मन नेक नहीं हरि सूं भयो साच्यो।
कैसे के राम रीझे अव माणक यो मन रामके रंग न राच्यो ॥ ११ ॥
आछो सो नर्त करो मन नर्तक जैसे तैं आछो यो काछ कछ्यो है।
आदर नेम करी हरि को नित चिंतन ध्यान यो नर्त अछ्यो है॥
प्रेमकरी हरि को रस पीवहु पीवत दूध ज्यूं वालवछ्यो है।
माणक सूर ज्यों आगे ही दोरत नेक न धारत पांव पछ्यो है॥ १२ ॥

कवित्त।

भैया जगवासी तू उदासी है के जगतसों एक छ महीना उपदेश मेरो मानु रे।
ओर सकल्प विकल्प के विकार तजि वैठि के एकंत मन एक ठोर आनु रे॥
तेरो घट सरिता में तूही है कमल ताको तूही मधुकर है सुवास पहिचानु रे।
प्राप्ति न है है कछु एसो तू विचारतु है सही है है प्राप्ति स्वरूप यों ही जानु रे॥ १ ॥

करिले रे सुकृत सुमरिले रे नरहरि परिहरि ओढ़र डरनि मोहजाल की।
रसरास तेरे हाथ चिंतामनि हेरे याते ओट गहिले रे प्रहलाद प्रतिपाल की॥
करत कहा है कहा करिवे को आयो कहि कोहै तूं कहा है कैसी गति काल की।
गई सो तो गई अव रही सो तो राख मूढ एक एक लव जात लाख लाख लाल की॥ २ ॥

श्वासके भरोसे गढ मास मे निवास कियो आशा मन माहिं राखि मानत सरीरा की।
वडे २ सूरवीर छोड गये देख मूढ रही ना निसानी तहा साह अरु वजीरा की॥
भजरे निरजन दुखभंजन कुल आलम को नित्य रोज खवर लेत पाहन मे कीरा की।
कहै कवि प्यारामल सुमरणकी यही पल एक एक घड़ी जात लाख लाख हीरा की॥ ३ ॥

काहू घर पुत्र जायो काहू के वियोग आयो कहूं राग रग कहुं रोवारोव करी है।
जहा भानु ऊगत उच्छाह गान गीत देखे साझसमे ताही स्थान हाय हाय परी है॥
ऐसी जगरीति देख को न भयभीत होत हा हा नर मूढ तेरी मति कौन हरी है।
मानुपजन्म पाय सोवत विहायो जाय खोवत किरोरन की एक एक घरी है॥ ४ ॥

चौरासी समुद चूर मिल्यो है मनुष्यतन कहीं भूरि भागते किनारे आनधीयो है।
ऐसी या अनूप देह नाक कान नेन वेन ऐन करतार जू करार कर कीयो है॥
ताही को तू पाय करत डावा डोल पशू ज्यूं भरत पेट विपय पान पीयो है।
गोविंद नरदेह पाय प्रभू को न जान्यो ताय धूरि वाके धन मे धृकार वाको जीयो है॥ ५॥

नंदकी नोनिधि घरी वीसल की वीस टरी रावन की सवै जरी खाख मे समावोगे।
हेम हीर चीर हाथी काहू के न भये साथी वाट के वटाऊ जेम ठाठ छिटकावोगे॥
वहा सूं न लाये हाथ यहा सूं न चाले साथ यहा ही की जोर जोर यहा ही लों खावोगे।
कहत है छजू पवार सुनोरे मायाके यार वँधी मूठी आये हो पसार हाथ जावोगे॥ ६ ॥

इत उत फिरत है हरत धरत कछु करत अनर्थ वहु जात दिन वीते है।
राति पड़े घरमाही आयके भोजन करि नारी कंठ लाय करि सोवत नचीते हैं॥

ऐसे ही करत सब जन्म व्यतीत भयो राम को न नाम लेत यम सू न भीवे हैं।
माणक जुवारी मूढ गाँठ कू गमाय जैसे आये बांध मूठी फिर जात हाथ रीते हैं॥ ७॥

राम को न लेत नाम काम को भयो गुलाम दाम दाम पीछै लागि पाप बहु कीवे हैं।
औरन को देत दुख आपको चहत सुख रामसू विमुख होय फिरत नचीते हैं॥
सुखन के काज बहु दुख को सजत साज विषय विष स्नेह माहिं घोरि घोरि पीवे हैं।
राम को विसारि नरजन्म में धूरि डारि आये बाध मूठी फिर जात हाथ रीते हैं॥ ८॥

फिरत है फूले २ माया के भर्म भूले बैठे सब हारि अरु माने जगजीते हैं।
जवानी के जोर माहिं मानकी मरोर माहिं कोइ कू गिने नाहिं विषय चित्त दीवे हैं॥
मोह मद माते अति विषय हू के रंग राते विषय के यत्न माहिं दिन सब वीते हैं।
जनम को हारि सब काजकू बिगारिकरि आये बाध मूठी फेर जात हाथ रीते हैं॥ ९॥

पाय प्रभुताइ कछु कीजिये भलाइ यहा नाहीं थिरताइ वैन मानिये कविन के।
यश अपयश रहिजात बीच पहुमी के मुल्क खजाना वेनी साथ गये किन के॥
और महिपालन की गिनती गिनावे कोन रावण से ह्वैगये त्रिलोकी वश जिनके।
चोपदार चाकर चमूपति खबरदार मदिर मतंग ये तमाशे चार दिन के॥ १०॥

हय हाथी हेम हीर हुरम हिरननैनी हींसत हौंकरत फिरत घर घेरे हैं।
बधु सुत सुता सुत सुत सुतहू के सुत सज्जन सगेन से कहत मेरे मेरे हैं॥
चाहटा न चाकर चहुधा चहैं चोकीदार चोवारा न चहल चुहुल चेरी चेरे हैं।
तिनको तो तू है वे हैं तेरे तोहूं तेरा तन तन गये तिनको तो तू न वे न तेरे हैं॥ ११॥

माया के समूह माझि बधिके शिथिल भयो मान कह्यो मेरो ओतो झूठो घट घेरो है।
काल है करेरो आनि दहैगो दरेरो सो तो पर्यो ही रहैगो सब घरको बखेरो है॥
कुटुम्ब घनेरो बहु वेर झक झेरो सो पखिन को रेरो जैसे दरखत बसेरो है।
चलत सवेरो दरकूच माँझि डेरो तेरो मेरो मेरो कहै यामें कौन साज तेरो है॥ १२॥

एरे मन मेरे तेरे कोन हाल ह्वैगे अब गेरे अजाण दीह गोविंद नहिं गाये हैं।
उठि के सवेरे साथ दोरन की करी एक लेरे बहु जोरि ढेरे धन में लुभाये हैं॥
साधू कहैं वेर वेर तोहू न समझै शठ पूब भलेरे पुण्य मोसर यह पाये हैं।
रे रे अजाण जीव पीव क्यू न हृदय रख खेरे सखेरे काल केते नर खाये हैं॥ १३॥

कौरव दल पाडव सगर सुत जादू जेते जात हू न जाने ज्यू तरैया परभात की।
वलि वैणु अबरीष मानधाता प्रह्लाद कहिये कहालों कथा रावण जजात की॥
वेहू न बचन पाये काल कौतुकी के हाथ भाति भांति सेना रची घने दुख घात की।
च्यार च्यार दिन को बचाव सब कोउ करो अत छुटिजैहै जैसे पूतरी वरात की॥ १४॥

कासों करों मोहि मोहि मोही को परी है देव मोहन से मोही महामाया में मिलागये।
मीनके मुनीश्व महा मद्य से मनुज मानधाता सम मानी महामद सो खिरागये॥
वामन से रावन से रामजू से खेलिखेलि खलन की खोपरी खिलोनासी खिलागये।
काटे महाकाल व्याल बली बलभद्र ऐसे बालि ऐसे बली ऐसे छुलाके विलागये॥ १५॥

ऊंची ऊंची चित्रसारी रंग के झरोखे भारी ताके मध्य सभा सोहै खान सुलतान की ।
चोपदार छरी लिये बोलत अगारी खरे सेन्या जो चढत है हजारन के खान की ॥
एते ही में औचक अचानक ही मोत आई होदा ही में फेलगई जानु लगी बान की ।
गढ़ कोट तोड़िवे की मिसलत भूल गये मिसलत होन लगी चलन मसान की ॥ १६ ॥

जीती दश दिशा देश देश के नरेश जीते औज औज लाखो माल भडार भरे रहे ।
कंचनके आसन सुवासन सब कंचनके पलंग अवास सोतो अलग ढरे रहे ॥
हाथी हथशालनमें घोड़े घुड़सालनमें कुलके कुटुम्ब लोक देखत खरे रहे ।
तजी देह अवर दिगम्बर चल्यो निदान आसन विभूतिके सिघासन धरे रहे ॥ १७ ॥

रूनी तरूनी झूनी वही दुख झूनी माझ देखत अभूनी पथ पीलन खरी रही ।
पाटन विछूनी हूनी मदिर पिशूनी तज दूनी सोभ चित्रसारी सूनीसी परी रही ॥
कहत कल्याण वात सारी ही अलूनी भई कूनी ग्रह चितनमें चूनी जरी रही ।
जूनी तज काया हंस खूनी तो वहीर भयो मूनी अवधूतनकीसी धूनी धरी रही ॥ १८ ॥

नितही कमातो ध्यातो लातो वन माझ साझ तातो सो न खातो रातो पह्न्यो ना हटाऊसो ।
जेतों आतो वारमें सुहातो एतो कोऊ नाहि ऐसे घुररातो मानो श्वान है कटाऊसो ॥
माया मद मोह मातो कोडी हू न लातो दान पीछे पछितातो जब भयो है लटाऊसो ।
राम सू न रातो रे परातो अब काल आयो देखो रे खटाऊ चल्यो जात है वटाऊसो ॥ १९ ॥

धरेही रहेंगे धरा धूरि मांझ गाढे धन भरेही रहेंगे भंडार वहु वानी के ।
जरेही रहेंगे गजराज हू जंजीरन से खरेही रहेंगे मानों अश्वपंथ पानी के ॥
काल आय गहै जब करैगो सहाय कौन कृष्ण रहेंगे जग जोधा मरदानी के ।
थकै मुखवानी माया होयगी विरानी जब छाड रजधानी वासी होयगो मसानी के ॥ २० ॥

रामको लियो न नाम दियो न कणूको दान कूर नहि खायो धाप राच रह्यो कूर मे ।
कोडी कोडी जोड़ वेसे कहायो करोरी तामें छात माखी जेम छायो मायाहूके पूर मे ॥
वाई को न भाई को न पिता हू को हूवो नाहि मलिन सरूप रह्यो देखियो न नूर मे ।
सांकड़ी वणाणी घाटी कालकी झपाटी लागी हालियो मडाकी हाटी खाटी रही धूर में ॥ २१ ॥

रहा है न कोई यहा रही है न कोई यह जाने सब कोई पै न माने मोह परिगे ।
हाथी और घोड़े जोड़े छोडे सब ठौर ठौर भौनन मे माडे भूरि भाडे ते विसरिगे ॥
कहै छविनाथ एक राम के भजन विनु ऐसे ही विचारे जन्म कोटिन निसरिगे ।
जगवाले जोरवाले जाहिर जरबवाले जोसवाले जालिम चिताकी आग जरिगे ॥ २२ ॥

ढहीसी सराय काय पंथी जीव वस्यो आय रत्न त्रय निधि जामें मोक्ष जाको घर है ।
मिथ्या निशि कारी जहाँ मोह अधकारी भारी कामादिक तस्कर समूहन को थर है ॥
सोवै जो अचेत सोई खोवै निज सपदाको तहां गुरु पाहरू पुकारे दया कर है ।
गाफिल न हूजे भ्रात ऐसी है अंधेरी रात जागरे वटोही यहा चोरन को डर है ॥ २३ ॥

हाथी के दातन के खिलोना बने भाति भाति वाघन की खाल शिव सकर मन भावेगी ।
मृगनकी खालनको ओढत है जोगी जती बकरे की खाल आछापानी भर लावेगी ॥

सांभर की खालन को बांधत सिपाइ लोक गर्दै की खाउ राव औ राजा मन भावेगी।
कहै दयाराम एक राम के भजन विन मानुष की खाल कछु काम नहिं आवेगी ॥ २४ ॥

खालही की खोलमें अखिल ख्याल खेलिखेलि गाफिल ह्वै भूल्यो दोष दुख की खुसाली तें।
लाख लाख भांति अभिलाष रखे खोटे अरु जलख उहयो न लखी लाखन की लाली तें ॥
पुलकि पुलकि देव प्रभुतें न पाली प्रीति दे दे करताली न रिझायो वन माली तें।
झूठी झलमल की झलक ही में झूल्यो झल्मलकी पखाल खल खाली खाल पाली तें॥ २५ ॥

जासू तू कहत यह संपदा हमारी सोतो साधने अडारी एसें जैसे नाक छिन की।
जासू तू कहत हम पुण्य जोग पाइ सोतो नरक की साइ है वडाइ डेढ दिन की॥
घेरा माहिं पर्यो तू विचारे सुख आंखिनको माखिन के चूटत मिठाइ जैसे भिन की।
एते पर होहि न उदासी जगवासी जीव जगमें असाता है न साता एक छिन की ॥ २६ ॥

रेतकी सी गढी किधों मढी है मसान कीसी अंदर अंधेरी जैसी कंदरा है शैल की।
ऊपरकी चमक दमक पट भूषन की धोके लागी भली जैसी कली है कनैल की॥
औगुन की ओंडी महा भोंडी मोहकी कणोंडी मायाकी मसूरती है मूरती है मैल की।
ऐसी देह याही के सनेह याकी संगति सों ह्वै रही हमारी गति कोल्हूकैसे वैल की ॥ २७ ॥

केतीवार सिंह स्वान साभर सियार सांप सिंधुर सारंग मुसा सूरि ऊंदरे पर्यो।
केतीवार चील चमगादर चकोर चीरा चक्रवाक चातक चडूल तन भू धर्यो॥
केतीवार मच्छ कच्छ मींडक गिंडोरा मीन शंख सीपि कोडी ह्वै जलूका जलमें तिर्यो।
कोऊ कहै जारे जिनावर तब माने बुरो यों न जानै मूढ में अनेकवार ह्वै मर्यो ॥ २८ ॥

मूष चूस कहत हमारो तहखानो यह चिरियां कहत खसखानो में बनायो है।
मकरी कहत यह हमारो मगसखानो भमर कहत काठ महल में उपायो है॥
माछर पखारी कांठै छांडिदे हमारो धाम चोर रु बिलाव छिपकाडू अपनायो है।
ऐसे झगरे को घर तजिके गये हैं सत करता निमित्त निज अति सुख पायो है॥ २९ ॥

जिनके है परायोघर कुटी सो न धाम जामें मूसे रु बिगाइ सांप न्योला जो रहत है।
भाजन तो मृत्तिका के फूटे खाली धान नाहीं टूटीसी खरेडी खाटमल जो रहत है॥
करकस कटोर नार कानी काली कलहगारी करकस वचन बोलै अवगुण की महत है।
हाहारे कर्मनकी विटवना कही न जाय ऐसो गृह पाय मूढ त्यागा न चहत है॥ ३० ॥

चचला चलाचल ज्यों घनमें विलोकियतु जलमें कलोल भूरि भासत भगतु है।
पानी मृग प्यास को विनाश ठग चातुरी को रैनन में जोति जैसे जुगनू जगतु है॥
नगर गंधर्व को पिनाक ज्यों पुरंदर को ऐसे वनवाद मन प्रीति को पगातु है।
झूठो हैरे झूठो जग राम की दुहाइ काहू सांचे को बनायो तातें सांचो सो लगतु है॥३१॥

दिया है प्रभूने जामें खुशी करो ग्वारु कवि खावो पीवो लेवो देवो यहीं रहजाना है।
बादशाह आदि ले अमीर उमराव सब कूच करगये जाका लगा ना ठिकाना है॥
हिंदो मिठो भिन्नो नरेंद की वा राहचलो जिंदगी जरासी जामें दिल वहलाना है।
आवै परवाना तब चले ना बहाना यहां नेकी कर जाना फिर आना है न जाना है॥ ३२॥

मुक्ताफल कल्हार कमल तहाँ कुंदनसे मणिनसों जरी पाल चहूं और सांकरी ।
विहरत सुर मुनि वेद धुनि उचरत सुखसुं समेटि रास विधि तहाँ हाकरी ॥
वासी उही पुरको उदासी भयो काशीराम तोउ वह बिछुरत एसी आशा हू नाकरी ।
पऱ्यो कोऊ काल तातें आन तक्यों तुच्छ ताल लख्यो ऊ मराल तो चुगेगो कहा काकरी ॥ ३३ ॥
एकता कूं लिये भावै वैठ तू अटन कर ज्ञान धन हूते तू तो साहन को साह है ।
आशा और तृष्णा और चिंता को विसारडार आतम खरूप तू तो सदाई अचाह है ॥
मन वानी जीत्यो जव सकल जगत जीत्यो द्वंदभाव गयो ताते भयो वे प्रवाह है ।
जैसो घर तैसो वन सदाई आनंद घन योंही वाह वाह फेर योंभी वाह वाह है ॥ ३४ ॥
कवहु क ऍंट वैठे चूतरा अडालचके कवहु क पायन हू पैनी झुन झुनिया ।
सपति में सुक्ख होय विपति में दु.ख होय सपति रिझाय औ विपति सिर धुनिया ॥
सपति मे विपति औ विपति मे सपति है सपति विपति दोनूं एक देव गुनिया ।
सपति में कॉय कॉय विपति मे भॉय भॉय कॉय कॉय भॉय भॉय देखी सव दुनिया ॥ ३५ ॥
जाँचवे न कहूं जावै राजके रिजक दावै पावै के न पावै दिल नावै दिलगीरी पें ।
धीरी मन धारै यादगीरी करतार हीरी पीरी हू न चहै तहाँ कहा सोभ मीरी पै ॥
खालिक खलक माहि और कछु देखै नाहि पऱ्यो रहै सीनो सीनो लग्यो सुखसीरी पें ।
करी आदि अत कीरी भली वछवेकी भीरी कोटिक अमीरी वारडारूं या फकीरी पें ॥ ३६ ॥
गुहा हू का रहना कहना नहि काहू सेती साहव से प्रीति अरु काकी परवाह है ।
चित्तकी सुराही लिये प्रेम हू का प्याला पिये खलककी खुसालीका सदा चित चाह है ॥
ज्ञान हू की गूदड़ी मे पेमद फकीरी फवै निपट निरंजन कहै नाम निर्वाह है ।
चिंता चितचीरी लोभ लालच तगीरी तजी दफै दिलगीरी तो फकीरी वाहवाह है ॥ ३७ ॥

सवैया ।

धूत कहो अवधूत कहो रजपूत कहो जुलहा कहो कोऊ ।
काहू की बेटी से वेटो न व्याहवो काहू की पांति विगार न सोऊ ।
तुलसी सरनाम गुलाम है राम को जाको रुचै सो कहो कछु ओऊ ।
मांगिके खैवो मसीत को सोइवो लेवे को एक न देवे को दोऊ ॥ १ ॥
खेतनहीं रु तिजारत नां करनी नहिं काहु की व्याह सगाई ।
ग्रंथ वनावनो ना कछु वाग त्यूं मंदिर की नहिं नीव खुदाई ॥
दासस्वरूप न सोच या लोकको ना परलोक को सोच सगाई ।
आज मरै तोही खूव है वांधव काल मरै तोइ खूव है भाई ॥ २ ॥

झूलणा ।

हरिनाम रटै गुरु ज्ञान थटै लपटै न जठै करतूतन को ।
अटकै न अठै भटकै न कठै खड़कै न जठै जमदूतन को ॥

घटमें घट गोतलियो घटिके घट औघट घाट अद्भूतन को।
साईदीन कहै मजबूत गुरू अदभूत मतो अवधूतन को ॥ ३ ॥
मैड़िहि मदिर छाड दीजे वन माहिं न झूपड़ा बाध टटीदा।
रूखी हु सूखी हु खाय रहो काला मूह करो जिप घट्ट मिठीदा॥
रूप सिंगार तो उनहू को लोड़िये जो कोउ आशक होत लटीदा।
फकीर की राह कठिन अल्ल पगधरतहि निकसत दूध छटीदा ॥ ४ ॥
निशिवासर वस्तु विचार सदा मुख साच सदा करुणा धनहै।
अघनिग्रह सग्रह धर्म कथा न परिग्रह साधुन को गन है॥
कहै केशव भीतर जोति जगे अरु बाहर भोगनको तन है।
मन हाथ सदा जिनके तिनके वनही घर है घरही वन है ॥ ५ ॥

कुडलिया।

घटकेवाली वस्तु को दीन्ही जिसनें डार।
भावै रहो उजार में भावै बीच बजार॥
भावै बीच बजार पर्यो रह मुखा न बोलै।
अथवा बात अनेक करै निशि वासर डोलै।
कहै गिरिधर कविराय बीज जो च्यारों पटकै।
सुत दारा धन धाम गये सब तिनके खटकें ॥ १ ॥
विरक्त सोई जाण बसे वस्ती से न्यारा।
अहनिशि आठों याम रामजी लागे प्यारा॥
छाजन भोजन नीर जिको पर इच्छा आवै।
चेराचेरी तजै पक्ष के दिशा न जावै॥
आठ पहर चोसठ घड़ी एकाएकी रामजी।
जनरामा विरकत सोई चोथेपद विश्रामजी ॥ २ ॥
विरकत कहिये भरतरी कै गोपीचद मीर।
ढाको बल्ख उजीण तजि तीनू भया फकीर॥
तीनू भया फकीर अलख सू पलक लगाई।
गिरि डूगर वनवास समयसर वस्ती आई॥
अणचाहिक अवधूत जन चखी शब्द की सीर।
विरक्त कहिये भरतरी कै गोपीचद मीर ॥ ३ ॥

दोहा।

जोड़ी तज जोड़ी तजी फिर जोड़ी का त्याग।
रज्जब जोड़ी रामसू ते कहिये वैराग ॥ १ ॥
तुलसी जाके दो नहीं घर घरनी धन हीन।
ताको वन वसिवो भलो कर करवा कोपीन ॥ २ ॥

दमड़ी चमड़ी बीच में हरिया बिवरो होय।
दमड़ी सूं दावा किसा चमड़ी मां कर जोय ॥ ३ ॥

कुंडलिया।

खंडी हंडी हाथ में बंडी सी कोपीन।
रंडी दिस देखै नहीं काया दंडी कीन।
काया दंडी कीन दीन वायक नहिं बोलै।
भोग योग संयुक्त उक्त वह मन में तोलै॥
उर धर गुरु को ज्ञान मोह ममता सब छंडी।
सो वैरागी राम कहै हरिराम अखंडी ॥ १ ॥
तीनटूक कोपीन के अरु भाजी बिन नोंन।
तुलसी रघुवर उर बसै इंद्र बापुरो कोंन ॥ १ ॥
कबीर सात गांठ कोपीनके मन में रहै निशंक।
राम अमल मातो रहै गिनै इंद्र को रंक ॥ २ ॥
कर अरु जीभ लंगोटड़ी यह तीनों बसरख्ख।
निरभय होय निशंक रम वैरी मारो झख्ख ॥ ३ ॥

कवित्त।

कोऊ राजहंस उडिआयो हो समुद्रहूते, बीतगये वासर समुद्र फिर जावणो।
ताही मध बीच एक भऱ्यो हो सुभगसर, रैन बिसराम लेय भोर उड़जावणो॥
कहै करजोर ताल बैठे रहो कोउ काल, राज बैठे डेरो पाल लगत सुहावणो।
चरण कहत सर काहेको बिलाप करै, रोक्यो नॉ रहै गोरे बिदेशी हस पावणो ॥ १ ॥

दोहा।

मत हो समँद उतावलो, लांबी छोल न लेह।
आपेही उडजावसां, पांख संवारण देह ॥ १ ॥
हंसा सरवर मत तजो, जो जल खारा होय।
डाबर डाबर डोलतां, भला न कहसी कोय ॥ २ ॥
सरवर हंस मनायले, नेड़ा थका बहोड़।
जा बैठां रलियावणा, तासूं तान न तोड़ ॥ ३ ॥
रहताने वरजूं नहीं, जाता न लाऊं वहोड़।
सरवरमें मोती घणा, तो हंसा लाख करोड़ ॥ ४ ॥
और घणा ही आवसी, चिड़ी कमेड़ी काग।
हंसा फेर न आवसी, सुण समदर मंद भाग ॥ ५ ॥
जा जल तूं पाछो जा, तुझ मुझ रह्या न रंग।
कडुवा बोल्या बोलड़ा, फेर न मिलसी अंग ॥ ६ ॥

पाल कहै रे सायरा लागे आज दुरोह।
मैं हसता हस ने कह्यो वो जातो रह्यो परोह ॥ ७ ॥

सोरठा।

मनमेलू गयो मार हितरूपी हथियार से।
सक्यो न आप संभार लिरवल थयो निरजना ॥ १ ॥
शिप हुतो क शरीर पिंजर हुतो क प्राणिया।
धरै न यो मन धीर नाम निरजन के विना ॥ २ ॥
चेला थारी चिन्त फहो किणीनै दाखबु।
मिले न दूजो मित नव खड फिरू नारायणा ॥ ३ ॥
चेला इतरी चूक मरता तें मूवो नहीं।
हिवडे हालै हूक नींद न आवै नारायणा ॥ ४ ॥
साभल ज्यो सेणाह वैणा पीसरसी नहीं।
नित झुरसी नैणाह मैंमत सावण मेह ज्यू ॥ ५ ॥
धारे चरणा धाम चलवतरो मन यां वसै।
सेवगरो सतराम अनदाता छेहलो अवै ॥ ६ ॥
मोती हुतो अमोल पीछडतों फहिया वचन।
वल्वँत थारा वोल खारा निशिदिन खटकसी ॥ ७ ॥
अडा अनड तणाह माले विन ही मेलिया।
पखी पोख विनाह जीवै किणविध जेठवा ॥ ८ ॥
ताला सजड जडेह कूची ले काने करी।
ऊघडसी आयेह जडिया रहसी जेठवा ॥ ९ ॥
प्यारी ना कोइ पूत वधव ना कोई वेनडी।
दोरा हुपा जमदूत नाम छुडासी नानिया ॥ १० ॥
मात तात ने मीत सगा सजन नाती सरव।
जम लेजासी जीत नाम छुडासी नानिया ॥ ११ ॥
कण माणक कोठार पटा गॉव घर परगना।
या सू नाहिं उवार नाम छुडासी नानिया ॥ १२ ॥
वस्तर ढाल वन्दूक पाखरिया कमधज पख्या।
करसी कूका कूक नाम छुडासी नानिया ॥ १३ ॥
तोप तमचा तीर हाथी अश्व हजार सू।
चलै न चालम चीर नाम छुडासी नानिया ॥ १४ ॥
हाजर हुसी हकीम पलक न खुल्सी प्राणरी।
जॅवरो लेसी जीम नाम छुडासी नानिया ॥ १५ ॥

लेसी तन धन लूट द्दग देखत दोफाररा ।
ताँता जासी तूट मोह तणा जव मोतिया ॥ १६ ॥
करसी कूका कूक हाथो हाथ हकावसी ।
फलसे बाहिर फूँक कोई न चलसी कानिया ॥ १७ ॥
लीन्ही करणी लार पाप पुण्य हरि जाप री ।
ओ तन देवो उतार मृतक कहै सब मीरिया ॥ १८ ॥
तागो लेसी तोड़ बंधन कोइ बाँधै नहीं ।
चांपर चल्यो चहोड़ मरहट हक में मीरिया ॥ १९ ॥
घड़िया घट जेताह जाता सह दीसै जगत ।
जन धन तन जेताह सब ही अंत सिधावसी ॥ २० ॥

दोहा ।

कहँ जाये कहँ ऊपजे कहां लडाये लाड़ ।
क्याजानूं किस खाडमें पड़े रहेंगे हाड़ ॥ १ ॥
अर्ब खर्ब लों द्रव्य है उदय अस्त लों राज्ञ ।
जो तुलसी निज मरन है तो आवहि किहिकाज ॥ २ ॥
लाडू तूं परलोकरो कर साधन ततकाल ।
हालंता नह लागसी ताली इतरी ताल ॥ ३ ॥
छहसो सहस्र इकीस दम जावत है दिन रात ।
एतो तोटो तास घर काहेकी कुशलात ॥ ४ ॥
जाणाहै रहणा नहीं चलणा विश्वा वीस ।
रज्जब तनक सुहाग को कोन गुथावे शीस ॥ ५ ॥
आंख झपंती ना लहै अस मुख माहिं गिरास
लख लख लानत नानगा दमदा करै विश्वास ॥ ६ ॥
छींकत डेरी पग दियो पीछे दीनो रोय ।
असगुन तो पहिले भयो कुशल कहांते होय ॥ ७ ॥
सुन प्रानी सदगुरु कहै देह खेह की खानि ।
धरै सहज दुख दोप को करै मोख की हानि ॥ ८ ॥
जसवंत शीशी काचकी जैसी नरकी देह ।
जतन करंता जावसी हरिभज लावा लेह ॥ ९ ॥
जसवंत वास सरायका क्या सोवत भरि नैन ।
श्वास नकारे कूचके वाजत है दिन रैन ॥ १० ॥
दश दुवारका पींजरा तामें पंछी पौन ।
रहन अचंभा है जसा जात अचंभा कौन ॥ ११ ॥

सम्मन रोवै कौन को हसै सु कोन विचार।
गये सो आवन के नहीं रहे सो जावन द्वार ॥ १२ ॥
नदी किनारे देखिये सम्मन सव ससार।
के उतरे के उतरिके वुकचा बाँधि तयार ॥ १३ ॥
पान झडतॉ देखिकै हँसी जु कोंपलियॉह।
मो बीती तो वीतसी धीरी वापड़ियॉह ॥ १४ ॥
केइ फूले केइ फूलिगे सुदर नये नयेह।
कैते वाग जहान मे लगि लगि सूक गयेह ॥ १५ ॥
धन जोवन का मत करो गुमाना जानो तरुवर पाका पाना।
लागै वायु थत झड़ पडना तो ते पर पता क्या करना ॥ १ ॥
वहुत गई थोरी रही नारायण अब चेत।
काल चिरैया चुग रही निशिदिन आयू खेत ॥ १६ ॥
काल करतो आजकर आज करतो अब।
अवसर वीतो जात है फेर करैगो कब्ब ॥ १७ ॥
रात गमाई सोयकरि दिवस गमायो खाय।
हीरा जन्म अमोल था कचडी वदले जाय ॥ १८ ॥
धन जोवन यों जाहिगे जिन विधि उडत कपूर।
नारायण गोपालभज क्यों चाटै जगधूर ॥ १९ ॥
हाथ जोरि हाजर रहे जिनके सन्मुखकाल।
नारायण एसे नृपति परे कालके गाल ॥ २० ॥
जिनके सहज हि पग धरत रज सम होत पषान।
नारायण तिन को कहूँ रह्यो न नाम निसान ॥ २१ ॥
रे मन क्यू भटकत फिरे भज श्रीनंदकुमार।
नारायण अब भी समझ भयो न कछु विगार ॥ २२ ॥
ऊठ फरीदा जागरे झाड़ देह मसीन।
तूँ सोवे रब जागता किसविधि वनै परीत ॥ २३ ॥
ऊठ फरीदा जागरे जागन की कर चोप।
यह दम हीरा लाल है गिन गिन रब कों सोंप ॥ २४ ॥
कहताहों कह जातहों कहा वजाऊं ढोल।
श्वास श्वास में जात है तीन लोक को मोल ॥ २५ ॥
आयू नेजरु देह घट जातकूप भव माहि।
दोप सँभाले सो धारिहे सुधरै विगरै नाहिं ॥ २६ ॥

टीका=मरुस्थल में भ्रमतो वराऊ प्यास मरे हे वाने उजाड़ में कूप मिल गयो बिलस्व नेज बाहिर रही है यह भी गइ तो फरस नेज प्राण सबही गया।

वहुत गई थोड़ी रही अजहूं चेतै नाहिं।
रे जड़ फिर कित पावही यो औसर जग माहिं ॥ २७ ॥
काम को किंकर हुइ रह्यो वाम को भयो गुलाम।
दाम दाम से वंधियो पामर भज्यो न राम ॥ २८ ॥
द्वै वातन को भूल मति जो चाहै क़ल्यान।
नारायण एक मोत कूं दूजे श्रीभगवान ॥ २९ ॥
नारायण द्वै वात को दीजै सदा विसार।
करी वुराई और ने आप कियो उपकार ॥ ३० ॥
कविरा कहै कमाल कूं दो वार्ता लिख लेह।
कर साहिवकी वंदगी भूखे कूं कछु देह ॥ ३१ ॥
देह धरेको एह फल देह देह कछु देह।
आगै हाट न वाणियां लेना होय स लेह ॥ ३२ ॥
खाय खुलाय लुटायदै करले अपना काम।
चलती विरियाँ रे नरॉ संग न चलै छदाम ॥ ३३ ॥
गांठी होय सो हाथ कर हाथ होय सो देह।
देह खेह हो जायगी फिर कोन कहेगो देह ॥ ३४ ॥
धन दीये धन नाँघटै नदियॉ घटै न नीर।
अपनी आंखे देखलो यों कहै दास कवीर ॥ ३५ ॥
तुलसी पंछिन के पियां सरवर घटै न नीर।
धर्म किये धन ना घटै जोसहाय रघुवीर ॥ ३६ ॥
कुंजर मुख ते गिर पड़्यो घट्यो न ताहि अहार।
लाखों कीड़ी ले चली पोखन को परिवार ॥ ३७ ॥
लेवे कूं हरिनाम है देवेकूं अनदान।
तरने कूं आधीनता डूवन कूं अभिमान ॥ ३८ ॥
माया मेरे रामकी धरणीधर की देह।
पूंजी विराने साह की करसें जशकर लेह ॥ ३९ ॥
पानी वाढ़ो नाव में घरमें वाढ़ो दाम।
दोनों हाथ उलेचियै यही सयानो काम ॥ ४० ॥
खाया सोतो खूटग्या खरच्या सोई साथ।
जशवंत धर पोढाविया माल विड़ाणै हाथ ॥ ४१ ॥
सर्वे सुनत प्रिय लगत है दान मान जुधवात।
स्वरूपदास कहिवो सुगम करिवो कठिन दिखात ॥ ४२ ॥

सोरठा ।

वहुताई वा नेह वाल्टाँ वोली नहीं ।
नाणी सूँकी नेह कारण ता कूकी करण ॥ १ ॥

गीत ।

वावरज्यो खाज्यो विलसज्यो हिम्मतहै तो दीज्यो हाथ ।
दियाँ विना जासी नहिं दीठो सोनो रूपो साथ ॥ १ ॥
साजाँ पर्गां आपरी सपत मरदाँ पाज्यो मीठी ।
जोड़णहारे लार जावताँ दोलत किणी न दीठी ॥ २ ॥
खावो खुलावो भल्पण खाटो जिणघर सपत जेती ।
मेलण काज इतो नहिं मिलियो रावण के मुख पकरती ॥ ३ ॥
ओपो कहे दियाँ ऊवरसी गाडी जिकाँ गमाणी ।
वीस क्रोड़ वीसलदे वाली पड गइ ऊंडे पाणी ॥ ४ ॥

(प्रेम)

परा भक्ति अरु ज्ञान में तनक नहीं कछुभेद ।
नारायण मुख्य प्रेम है कहै शास्त्र अरु वेद ॥ ४३ ॥
परा भक्ति याको कहै जित तित श्याम दिखात ।
नारायण सो ज्ञान है पूरण ब्रह्म लखात ॥ ४४ ॥
प्रेम बराबर योग नहि प्रेम बरावर ध्यान ।
प्रेम भक्ति विन साधिबो सबही थोथा ज्ञान ॥ ४५ ॥
जेहि घट प्रीति न प्रेमरस पुनि रसना नहिं राम ।
नर आया ससार में उपज खप्या वेकाम ॥ ४६ ॥
जिन्हें प्रेम प्याला पिये घूमत जिनके नैन ।
नारायण वा रूप मद छके रहैं दिन रैन ॥ ४७ ॥
रूप छके घूमत रहैं तनको तनक न ज्ञान ।
नारायण दृग जल भरे यही प्रेम पहिचान ॥ ४८ ॥
फूटो नेन फाटो हियो जरो सु तन केहि काम ।
श्रवे द्रवे पुलके नहीं तुलसी सुमिरत राम ॥ ४९ ॥
प्रेम छिपाया ना छिपे जा घट प्रगट होय ।
जो क मुख बोलै नही नैन देत है रोय ॥ ५० ॥
रहिमन अँसुवा नयन ढरि जिय दुख प्रगट करेय ।
जाहि निकारो गेह तें कस न भेद कहि देय ॥ ५१ ॥
लागी लागी क्या करै लागी नाँही एक ।
लागी सोई जाणिये करै कलेजे छेक ॥ ५२ ॥

सुरत लगी वा ध्यान में सुनत और की वात ।
नारायण उत्तर दियो मृदुल मनोहर गात ॥ ५३ ॥
पलक निगम मधि ध्यान धर वरुणी जटा वनाय ।
नैन दिगंवर होरहे रूप विभूति लगाय ॥ ५४ ॥
तन वंदूक मन जामकी हियो रिजक जिय साज ।
प्रेम पलीता दगगई निकसी आह अवाज ॥ ५५ ॥
जरे जरे सो जर वुझे वुझर जरेऊ नाहिं ।
अहमद दाझे प्रेम के वुझ वुझके सिलगाहिं ॥ ५६ ॥
धन दे नीके राख तन तन दे राखिय लाज ।
लाज प्राण तज दीजियै एक प्रेम के काज ॥ ५७ ॥
दारा और सिकंदर हि फूल पना महमद्द ।
वहराम रु मजनू कियो प्रेम सु हद्दोहद्द ॥ ५८ ॥
जोगी जंगम सेवड़ा सन्यासी दरवेस ।
विना प्रेम पहुंचै नही दुर्लभ सतगुरु देस ॥ ५९ ॥
मन पक्षी तवलगि उडै विषय वासना माहिं ।
प्रेम वाजकी झपट में जवलगि आवै नाहिं ॥ ६० ॥
खिनक चढै खिन ऊतरै सोतो प्रेम न होय ।
अघट प्रेम जा घट वसै प्रेम कहावै सोय ॥ ६१ ॥
उपजै इश्क जु अंगतें रहत अंग के वीच ।
हाड मांस गलवो करै इश्क न जानत नीच ॥ ६२ ॥
हाड़ गोड़ रग माँस सो तो विरहा ले चल्यो ।
अहमद रह्यो जु साँस वाही को साँसो पड़्यो ॥ १ ॥
अहमद अपने चोर कुं सव कोउ कहै हनेउ ।
जो मनहरन जु मो मिलै तो वार फेर जिव देउ ॥ ६३ ॥
दीन्हो होय सो पाइहै कहते वेद पुरान ।
मन दे पाई वेदना वाहरे मेरा दान ॥ ६४ ॥
नेह नगर में पग धरै फेर विचारै लाज ।
नारायण नेही नहीं वातनको महाराज ॥ ६५ ॥
नारायण घाटी कठिन जहाँ नेहको धाम ।
विकल रु मूर्छा ससकिवो यह मगमे विश्राम ॥ ६६ ॥
नारायण हरि लगन में यह पांचों न सुहात ।
विषय भोग निद्रा हसी जगत प्रीति वहुवात ॥ ६७ ॥

इति ।

छप्पय।

पारब्रह्म पतसाह ज्ञान कहियै सहजादो
सांख्यजोग अरु भक्ति बड़े उमराव अनादो।
और क्रिया सब रेत जोग जिग जपतप जेते
तीरथ अटन स्नान दान यम नेमसु केते
ज्यों ब्याह समय अपने सुतहि सहजादो कर गाइयो
कहै सुन्दर सहजादो यहै पातसाह उरलाइयो ॥ १ ॥

दोहा।

रमा शंख विष धनु सुरा वैद्य धेनु हय हेय।
मणि रंभा गज कल्पतरु सुधा सोम आदेय ॥ १ ॥

कवित्त।

लक्ष्मी है सुबुद्धि अनुभूत कौस्तुभ मणि वैराग्य कल्पवृक्ष शंख सु वचन है।
ऐरावत उद्यम प्रतीति रंभा उदे विष कामधेनु निजरा सुधा प्रमोद धन है ॥
ध्यान चाप प्रेम रीति मदिरा विवेक वैद्य शुद्धभाव चन्द्रमा तुरंग रूप मन है।
चौदह रतन ए प्रगट होहि तहां जहां ज्ञान के उद्योत घट सिंधु को मथन है ॥ १ ॥
भेख में न ज्ञान नहीं ज्ञान गुरु वत्तन में मन्त्र जन्त्र तन्त्र में न ज्ञान की कहानी है।
ग्रन्थ में न ज्ञान नहीं ज्ञान कवि चातुरी में बातन में ज्ञान नाहीं ज्ञान कहा बानी है ॥
तातें भेख गुरुता कवित्त ग्रन्थ मन्त्र बात इतनें अतीत ज्ञान चेतन निशानी है।
ज्ञानही में ज्ञान नहीं ज्ञान और ठौर कहू जाके घट ज्ञान सोइ ज्ञान को निदानी है ॥ २ ॥

दोहा।

आपन कह सब स्वर्ग में, औरन नर्क निवास।
सब मत की गति सुनि भयो, दास स्वरूप उदास ॥ १ ॥
इष्ट धर्मके भजन को, पन्यो जु झगरो आय।
ताते में डन्यो खरो, पन्यो ब्रह्मकुंडमें जाय ॥ २ ॥
पढने की हद समझ है, समझन की हद ज्ञान।
ज्ञान हद्द हरिनाम है, यह सिद्धान्त उर आन ॥ ३ ॥

कवित्त।

जैसे काहू दासीने जुगल पुत्रजने जिन एक दियो बाम्हन के एक घर राख्यो है।
बाम्हन कहायो तिन मद्य मांस त्याग किया दासहू कहायो तिन मद्य मास चाख्यो है ॥
तैसे एक वेदनीकर्म के जुगल पुत्र एक पाप एक पुण्य नाम जिन भाख्यो है।
दुहू माहिं दौर धूप दोऊ कर्म बंधरूप याते ज्ञानवतनि न कोउ अभिलाख्यो है ॥ १ ॥
जैसे महिमंडल में नदी को प्रवाह एक ताही में अनेक भांति नीर की ढरनि है।
पाथर को जोर तहाँ धार की मरोर होत कांकर की खानी तहां झाग की झरनि है ॥

पौंन की झकोर तहां चंचल तरंग उठै भूमिकी निचान तहॉ भौंर की परनि है ।
तैसे एक आतमा अनंत रस पुदगल दुहूं के संजोग मे विभावकी भरनि है ॥ २ ॥

दोहा ।

पलित वृद्धके शीशपर सोतो पलित न पेख ।
गई जवानी भजन विन वानी परी विशेख ॥ १ ॥

छप्पय ।

मिनख जन्म अवतार वरप चालीसां मीठो ।
कड़वो लगै पचास साठमें क्रोध हि दीठो ॥
सत्तर सगो न कोय असी में आस न काई ।
नाहिं निवे में होय हँसै सव लोग लुगाई ॥
डगडग हालै नाड़ की सादज पड़गयो खोखरो ।
सुत नारी परिवार कहै ओ मरै तो सुधरै डोकरो ॥ १ ॥
चरण प्रवल चूरता चरण ऑगणे न चलै ।
पॉण हाथी पेलता पोत छूटती न पलै ॥
नेणां नग निरखता नारी ओलखै न नेणा ।
श्रवण नाद सुणता साद ओलखे न सेणा ॥
वोलती जीभ वडवड वयण लड़ थड़ करती ललरा ।
जोवन गमाय जग निरखता जका कीध गोली जरा ॥ २ ॥
नयन श्रवण नासिका रूप रव गंध सुमुक्किय ।
रसन न रस आचरहि चरण मग चलत सुचुक्किय ॥
दंत दलित कच पलित त्वचा संवलित सलन ते ।
असन वसन वल गलित मलिन तन सकल मलन ते ॥
किय सखा सकल सुरपुर सदन लकरिपकरि विहरति विमति ।
यह दशा भई भावन तदपि तजत न जिय जीवन सुरति ॥ ३ ॥

सवैया ।

लकरी पकरी सु खरी कर में पग पंथ परे न भरे डगरी ।
न घरी भर वैठि भज्यो सु हरी कथ कूर करी जगरी सगरी ॥
नगरी तनरी सु पुरानि परी भगरी अव लूटतु हैं ठगरी ।
अवरी विरधापन वात वुरी सु अरी सम होत सवै सुतरी ॥१॥

माया ।

दोहा ।

माया तो ठगनी भई ठगत फिरी सव देश ।
जा ठगनें ठगनी ठगी ता ठग को आदेश ॥ १ ॥

कबीर माया पापिणी लुल लुल लागै पाय।
हिरदा भीतर बैठकर काढ़ कलेजो खाय ॥ २ ॥
कबीर माथा ऊपर सींगड़ा लाया नव नव हाथ।
पाछे मारै लात सू आगे दाता खात ॥ ३ ॥
कबीर माया मोहिनी मांगी मिलै न हाथ।
मना उतारी ऊठकर भागी डोलै साथ ॥ ४ ॥
कबीर मोटी माया सब तजै झीणी तजी न जाय।
सिध साधक जोगी जती झीणी सबकू खाय ॥ ५ ॥
माया नाना भांति की हरिया जगमें जान।
काहू सुत वित अस्तरी काहू अनुभव वान ॥ ६ ॥

पद।

माया जग ठगनी हम जानी निगुणी पास लियां कर गोलै बोलै मधुरी बानी ॥ टेर।
जोगी के जोगन हुय बैठी राजाके घर रानी पंडा के मूरति हुय बैठी तीरथ जायरु पानी ॥१॥
केशव के कमला हुय बैठी ब्रह्माके ब्रह्मानी, ईशर के गौरी हुय बैठी इन्दर के इन्द्रानी ॥२॥
भक्तों के भक्तन हुय बैठी तुर्कों के तुर्कानी लखचौरासीचुनचुनखायेतोइहहिकिननपिछानी॥३
काहू के हीरा हुय बैठी काहू के कौड़ीकानी, दासकबीरसाहबकाबन्दाजिनकेहाथविकानी॥४

पद।

धोवनियाँ हम जानी घर घुघरु रही बजाय। टेर
मारकण्डेय के लारे लागी दुर्वासा के रंग मे पागी
नैना सैन चलाय पलक में कियो पाराशर ख्वार ॥ १ ॥
सुर तैतीसा लारे लागी शृंगी ऋषि के तन में पागी
भांडी ऋषि झण्डे के नीचे दियो पलक में डार ॥ २ ॥
अजामील काल्ह क्या कीना पकड़ मछन्दर भोगल दीना
उद्दालक तिरिया के कारण गयो ब्रह्म दरबार ॥ ३ ॥
नवू नाथ पलका में राखी सिद्ध चौरासी जुल जुल भाखी
कच्छ देश सलिता के बिचमें दियो गोरख शिर भार ॥ ४ ॥
गौतमऋषि की नारि अहिल्या दिया शाप धोवण घर घाल्या
शशि को कलङ्क इन्द्र सहस्र भग अजनि पुत्र कुमार ॥ ५ ॥
मोहिनि रूप धन्यो भगवाना शंकर होद भरे हम जाना
ब्रह्म को नाच नचाय गवरजा लियो भसासुर मार ॥ ६ ॥
खर को रूप धन्यो मृग नैनी ताणा तोड्या सो हम जानी
उड़ती आभ गरज दासिनि जाती उड़ागइ छार ॥ ७ ॥
काशी में कीरति सुण आई दास कबीर कथा सुनाई
गुरु रामानन्द चरन के ऊपर डारूँ धोवनिया वार ॥ ८ ॥

श्लोक।

सततधृतिरप्युच्चैः शान्तोऽप्यवाप्तमहोदयो-
प्यधिगतनयोप्यन्तः स्वच्छोप्युदीरितधीरपि।
त्यजति सहजं धैर्यं स्त्रीभिः प्रसारितमानसः
स्वयमपि यतो मायासंगात् पुमानिति विश्रुतः ॥ १ ॥

दोहा।

तनक न रहै विरक्तता लगै दृगन की थाप।
कहुं गीता माला कहूं कहुं वटवा कहुं आप ॥ १ ॥
पण्डित पूजा पाक दिल यह दिमाग़ मति लाय।
लगै जरव अंखियान की तो सवै गर्व उड़िजाय ॥ २ ॥
और ठोर जो दवत है निकसै मौसर पाय।
जो नर नारी से दवै दवत दवत दवजाय ॥ ३ ॥
कवीर दोय घाटी दोरी खरी कही न लंघी जाय।
जो कोउ लंघन की करै सोउ अलूझै आय ॥ ४ ॥
कवीर एक कनक अरु कामिनी विष फल दोऊं पाय।
देखेही सों विष चढ़ै खाया सूं मरजाय ॥ ५ ॥
छोटी मोटी कामिनी सवही विष की वेल।
वैरी मारै दाव सूं या मारै हंस खेल ॥ ६ ॥
कामिनि खोड़ो कील सुत पोरायत परिवार।
रामचरण गृह भाकसी मोहका जड़्या किवार ॥ ७ ॥
कवीर नारी कहूँक नाहरी करै निजर की चोट।
कोइक हरिजन ऊवरै पारब्रह्म की ओट ॥ ८ ॥
कवीर नारी नहिं या नाहरी वाघण वडी वलाय।
जीवत सोखै कालजो मुवां नरक लेजाय ॥ ९ ॥
कवीर जहाँ जलाई सुंदरी तू मति जाहि कवीर।
भस्मीहुइ अंग लागसी सो नासवै शरीर ॥ १० ॥
कवीर राता कपड़ा पहर कर गाढ़ा वंध्या केश।
हाथां मँहदी लायकर वाघण खाया देश ॥ ११ ॥
नारि निसरड़ी कूकरी क्या राती क्या काली।
हिड़काव चढ्यां दोनूं वुरी क्या परकी क्या पाली ॥ १२ ॥
घरका गिणै न वारला हंस हंस देवै गाली।
रामचरण धीजो मती या नारी चिरताली ॥ १३ ॥
विषय विगोई टीकली क्या विन टीके होय।
नुकता माहिं निसरड़ी शरम विगाड़ै दोय ॥ १४ ॥

विष सो गुण दिग अग्नि सो चितवन बाण समान।
हित ठग सो मद सो मिलन सुख चुड़ेल पकवान ॥ १५ ॥

सवैया।

राम से पूत को दे वनवास कुमत्ति ले केकइ कथ को रोई।
जमदग्नी कि त्रिया के कहे सहस्रार्जुन ने तपस्या जो विगोई ॥
शूपनखा सिय की सुध दे दशकन्ध की साहिनी लक्ते खोई।
राड तणे पुरुषाथ ते जु कहो किन को घर भाड न होइ ॥ १ ॥
मुई चुड़ेल उतार को लेइके छोडत है फिर नाम न लेवै।
जीवति या नित लेय उतार को छॉड़त नाहि महा दुख देवै ॥
जीवति सार हरै मन देहको सुख पीछै याहि नर्क पठेवै।
माणक जे बुधवान नही ऐसी जानिके याही के चरण को सेवै ॥ २॥

टीका=चुड़ेल दो प्रकार की है एक मरिके चुड़ेल भई। एक जीवती चुड़ेल बनी है तब बडी कोन होयगी? तहाँ कहे हैं डाकिनी। नाहिं क्यू कि डाकिनी है सो और कू लागि के दु ख देवे है घरका पुरुष पर तो दया धरे है फेर वह लियां वा पीछो तो छोडि देवे है। अरु याती घरका ही पुरुष कू लागिके महा दु ख देवे है वह लियां सू भी छोडती नाहीं। तातें वासे या भिन्न ही है। तातें मरी चुड़ेल से जीवती में अधिकता दिखावे है कि मरी चुडेल है सो अपनो बल लेकर पुरुष को छोड देति है, अरु या जीवती है सो नित मूढ़ माग्यो अन्न वस्त्र आभूषणादि बल कु लेवे है तोभी पुरुष को छोडती है नाही अरु या लोकका पर लोकका जो महादु ख ताकूं देवे है।

साइ कहे है कि पुरुष जीवते तो या देह को सार वीर्य बलादिक मनको सार जो धर्य, विवेक वैराग्य, ध्यान स्मरणादि ताकू पुरुष के चित्त में घसिके खेंचिलेतहै, अरु चिन्ता शोकादि महादु ख को देत है, फेर मरे के पीछे स्त्री के अथ किये जो अनर्थ ता अनर्थ करिके पुरुष को नरकादिक के विषे पठाइ के नरक यातनादि महादु ख को देत है। तावे जो बुद्धिमान पुरुष है सो याको ऐसी महा अनर्थ को कारण जानिक या स्त्रीका चरण को न सेवे। किन्तु ध्यान स्मरण चरणसेवा नारायण की ही करै।

कुंडलिया।

पगा कड़ी सजडी जड़ी तिमण्यो कठ वधाय।
नाक कान घाली कडी दांतां मेख लगाय।
दांता मेख लगाय लक कस वेणी वाधी।
बाजू पुणचा हाथ जड़या सोना के चादी।
एता बधन बाधिके घरमें रखी लुकाय।
तोइ दाबी ना दबै नारी जड़ी वलाय ॥ १ ॥

छप्पय।

कामण चढ़ी शिकार काम घोड़े चढ़ि घरमें।
कुच दोय लागा श्वान कोरड़ो बेनी करमें।
आभूषण धरि तुपक नैन भाला अगवानी।
मिष्ट वचन समशेर ढ़ाल घूंघट की जानी।
विचल्या नर कूं देखि पछाड़े अपना वलसूं।
पटके चरणां हेठ सार सोखै केइ छलसूं।
सूरा सो टल नीसरै कायर कूं ले मार।
जगन्नाथ साची कहै वड़ी शिकारण नार॥ १॥

कवित्त।

सज्जन सुजान कहूँ सुनो सबै साची बात।
नारी और नाली एकस्यानी बनी वाली है॥
देखत की सयानी पर मौत की निशानी फेर।
करै धूरधानी जमजातना की जाली है॥
आवत की आछी फेर फूटत की पाछी परै।
रवीराम माहीं तम ऊपर उजाली है॥
एक नाली लगे गिरि गाढ़े से गिरत जात।
कौन गति होत जाकूं लागत छनाली है॥ १॥
डेडरा से डरै सींगी मच्छ को मरोड़ डारै।
कानन के बीच जाय कुंजर को पक्करे॥
सायर तिरत डूब जात है कठोती नीर।
सींदरी की संके छांय सर्प को जक्करे॥
फूलन से मरै भार गिरि कूं उपार लेय।
बड़े बड़े कुंजर पछारिबे की धक्करे॥
तोरिबे को अम्बर के तारों की हिमत रखै।
त्रिया को विश्वास ज्ञानी नेमी जन नक्करे॥ २॥

श्लोक।

बाला मासियमिच्छतीन्दुवदना सानन्दमुद्वीक्षते
नीलेन्दीवरलोचना पृथुकुचोत्पीड़ं परीरंभते।
का त्वामिच्छति का च पश्यति पशो मांसास्थिभिर्निर्मिता
नारी वेद न किंचिदत्र स पुनः पश्यत्यमूर्तः पुमान्॥ १॥
कान्तेत्युत्पललोचने नु विपुलश्रोणीभरेत्युन्नमत्
पीनोत्तुङ्गपयोधरेति सुमुखांभोजेति सुभ्रूरिति।

दृष्ट्वा मायति मोदतेऽभिरमते प्रस्तौति विद्वानपि
प्रत्यक्षाशुचिपुत्तिका स्त्रियमहो मोहस्य दुश्चेष्टितम् ॥ २ ॥
याजस्य जगदासुरामरमुख यञ्चालकोद्वन्धने
दृष्ट्वा नतयति क्षणेश्च सकल हावाश्रितैर्लीलया ।
सम्प्रेता कुरवश्च रावणमुखा दैत्याश्च यस्या कृते
ता द्वार निरयस्य को नु वृणुयाद्वामा सुखेप्सु कदा ॥ ३ ॥
आवत सशयानामविनयभवन पत्तन साहसानाम्
दोपाणा सन्निधान कपटशतमय क्षेत्रमप्रत्ययानाम् ।
स्वगद्वारस्य विघ्नो नरकपुरमुख सर्वमायाकरण्डम्
स्त्रीयन्त्र केन सृष्ट विपममृतमय प्राणिनामेकपाशः ॥ ४ ॥
मायाकरण्डी नरकस्य हण्डी तपोनिखण्डी सुकृतस्य भण्डी ।
नृणा विखण्डी चिरसेविता चेद् वृथा गत तस्य नरस्य जीवनम् ॥ ५ ॥
दर्शनाद्धरते चित्त स्पर्शनाद्धरते बलम् ।
सम्भोगाद्धरते वीर्य नारी प्रत्यक्षराक्षसी ॥ ६ ॥
योषानलोदधिभव मनुजस्तथायस्कान्ताङ्गना च पुरुपस्त्वय ईरित वै ।
ससगतो द्रवति चाशु विरुप्यतेऽत सग त्यजेदनिशमेव बुधोऽङ्गनानाम् ॥
गौडी माध्वी तथा पैष्टी विज्ञेया त्रिविधा सुरा ।
चतुर्थी स्त्रीसुरा ज्ञेया ययेद मोहित जगत् ॥ ८ ॥
स्त्रियो हि मूल निधनस्य पुस स्त्रियो हि मूल व्यसनस्य पुस ।
स्त्रियो हि मूल नरकस्य पुस स्त्रियो हि मूल कलहस्य पुस ॥ ९ ॥
मलमूत्रपाइ मिसमपुटके नसरोमकफास्त्रचये सतु य ।
रमतेऽस्थिशिरापिशितत्रिचिते स कथ न कृमि प्रमदावपुषि ॥ १० ॥
अमेध्यपूर्णे कृमिराशिसकुले स्वभावगन्धेऽप्यशुचौ च सद्रवे ।
कलेवरे मूत्रपुरीपभाजने रमन्ति मूढा विरमन्ति पडिता ॥ ११ ॥
चर्मखण्ड द्विधाभिन्नमपानोद्गारधूपितम् ।
ये रमन्ति नरास्तत्र कृमितुल्या कथ न ते ॥ १२ ॥
अधस्ताच्छिद्रित चम दुर्गन्धिपरिपूरितम् ।
मूत्रक्लिन्नस्य तस्यार्थे मा रानन् ब्राह्मणान् वधी ॥ १३ ॥
काकमास शुनोच्छिष्ट स्वल्प तदपि दुर्लभम् ।
किं तेन भक्षितेनापि क्षुधा नैव निवर्तते ॥ १४ ॥

टीका—जैसे कागला को तो मास फेर कुत्ता का मुख का ऐंठो सो भी थोडो पेट भरे नहीं सो भी कुत्ता का मुखमें ताते दुर्लभ । अरे एसा मांस खावे ते कहा प्रयोजन सिद्ध होयगो क्यों के जाते अल्प क्षुधा भी निवृत्त नहीं होत है ।

तैसे परस्त्री परधनादिक विषय है सो भी काकमांस के नॉइ अति निषिद्ध है सो भी कुत्ता सरीसा पुरुष को उच्छिष्ट है शुद्ध नाहीं। औ धनादिक की प्राप्ति स्वल्प कहिये थोडी है मनोर्थ पूर्ण करे इतनी नहीं सो थोडो भी पावणो महा मुश्किल है ताते विवेकी है सो कष्ट सहै परन्तु ऐसा विषय की इच्छा न करै।

कवीर नारी भांडा नर्क का बुरा भला के बीच।
उत्तम ते अलगा रहै नेड़ा रहैस नीच॥ १॥
यह अस्थिन को पींजरो मांस लपेट्यो जाहि।
ऊपर चादर चामकी भीतर भिष्टा आहि॥ २॥
रज्जब तिनकी कौन गति जो नित नारीसंग।
जाकी लघु लावण लगे अंधे होत भुजंग॥ ३॥

व्यभिचारनिषिद्ध।

सन्तु विलोकन-भाषण-विलास-परिहास-केलिपरिरंभाः।
स्मरणमपि कामिनीनामलमिह मनसो विकाराय॥ १॥
अदर्शने दर्शनमात्रकामा दृष्ट्वा परिष्वंगरसैकलोलाः।
आलिंगितायां पुनरायताक्ष्यामाशास्महे विग्रहयोरभेदम्॥ २॥

छप्पय।

अप्रतीति अपजश झूठ छलछिद्र मोह मंड।
द्रोह छोह चख मान रहस्य रस दोष भोग झंड॥
स्वाद वाद अरु शोक नाश प्रज्ञा दुख रासी।
पराधीन औ चिंत कलंक दुर्जन हरखासी॥
विरह वियोग सन्ताप तन अभरोसो अन्तःकरण।
जनरामा पर त्रिया स्पर्श इता दोष शिरपर मरण॥ १॥

कवित्त।

जिहि पुरुष को परप्रमदासे प्रेम लग्यो अरु पुरुष से नेह लग्यो जिहि नारीको।
नरक निवास त्रासदायक तेहिको होत जगत मे जश न रहत जारीकारी को॥
धिक अवतार ताको होत धरणीतलपै जिनहीं लजायो कुल तात महतारी को।
सो प्रवीण नहीं पुनि नहीं रस सागरसो चुले मे चतुरपनो पऱ्यो विभचारी को॥ १॥

लंकेश्वरो जनकजाहरणेन वाली
तारापहारकतयाप्यथ कीचकाख्यः।
पाञ्चालिकाग्रहणतो निधनं जगाम
तच्चेतसाऽपि परदाररतिं न कांक्षेत्॥ १॥

परस्योनिगते विन्दौ कोटिपूजा विनश्यति।
जपहानिस्तपोहानिर्ब्रह्महत्या पदे पदे॥ २॥
मद्यपाने महापाप नारीसंगे तथैव च।
तस्मात् द्वद्व परित्यज्य न तेऽद्य नरक यते॥ ३॥

तमाखूखण्डन।

आखुपै विड़ाल तैसे ताकत तमाखूपर
चाखत ना चोखे माल विष मे विल्म के।
सूक जात सार्फी जब माफी माँग जाँचै जल
आगहित लागै जाय पाय वे इल्म के॥
ढढाढोल रोल मे अगार गिरि जात जते
जाते जरि जात गद्दी गदरा औगिल्मके।
चारि वरणहु को धूक चाटन को चेता चूक
हैगये उलूक केते चाकर चिल्मके॥ १॥
नासका नहीं है घर नासका निसानी यह
कहै इम तासों गाली गौलत चटाक दे।
करै मनवार कोउ औरप्रति डिब्बी खोल
पोल्द्स्व वीच आप झोंपत झटाक दे॥
नाक ह्व निकाम जाको देखत उलाक होत
नाक मुख खोय गिरै नरक गटाक दे।
चिमटी चटाक भरि सूंघत सटाक देर
वेर वेर ढेर मुख छींकत उटाक दे॥ २॥

(नीति.)

छप्पय।

बात बात मे बात करै निजमुख प्रभुताई।
जन जन त मित्रता जुगल बाधे समुदाई॥
सब कामन तें अरुचि दाय आनें न महा पटु।
आलसी विपुल असाधु कहै दुरवाद बेन कटु॥
यों राजनीति चाणक्य कहै जग प्रसिद्ध शिक्षा परम।
राखबे योग नाही नृपति ऐसे पटु सेवक अधम॥ १॥

दोहा।

पीर तीर चकरी पथर, और फकीर अमीर।
जोय जोय राखहु पुरुष, सोगुण होय शरीर॥ १॥

छोरा वन्दगी दारा हुड्दंगास्तृतीयकः ।
मुठिया सींगाश्च नागा वै पष्ठोतीतो मतो वुधैः ॥ १ ॥

छप्पय ।

हाकिम जिणदिन होय विधी पट मेख वणावै ।
दोय श्रवण में दिये शब्द नहिं काहि सुनावै ॥
मेख दोय चख माहिं सवल निर्वल नहिं सूझै ।
मेख एक मुख माहिं विपति नहिं किणरी वूझै ॥
पदहीण होय हाकिम जवै छठीमेख तलद्वारमें ।
पांचही मेख छिटकै परी सरल वहै संसारमें ॥ १ ॥

दोहा ।

जो नृप पै अधिकारले, करे न परउपकार ।
पुनि ताके अधिकार में, रहत न आदि अकार ॥ १ ॥
धन जाताँ धर जावताँ, त्रिया पड़ताँ ताव ।
तीनूं दिन है मौतका, कहा रंक कहा राव ॥ २ ॥
रण जीतण कंकण वँधण, पुत्र वधाई चाव ।
तीनूं दिन है त्याग का, कहा रंक कहा राव ॥ ३ ॥
तन संदूक गुन रत्न चुप, ताही दीजै ताल ।
गाहिकविन नहिं खोलियै, कूंची वचन रसाल ॥ ४ ॥

प्रशंसा ।

अद्यापि दुर्निवारं स्तुतिकन्या वहति कौमारम् ।
सद्भ्यो न रोचते साऽसन्तस्तस्यै न रोचन्ते ॥ १ ॥

पट् नकार ।

मौन गमन दूरी अवधि, अधचख क्रोध उचार ।
स्वरूपदास पर भापणा, पट विधि चतुर नकार ॥ १ ॥
जैसी जाकी वुद्धि है, तैसी कहै वनाय ।
ताको वुरो न मानिये, लैन कहाँ से जाय ॥ २ ॥

सोरठा ।

सुधहीणो सरदार, मतहीणा राखै सिनख ।
अस आंधो असवार, राम रुखालो राजिया ॥ १ ॥
नान्हा मिनप नजीक, उमरावां आदर नहीं ।
ठाकर जिणनें ठीक, रणमें पड़सी राजिया ॥ २ ॥

अथ चौरासी बोल ।

दोहा ।

नकारो नीरस वचन, नटतहिं उपजै दुःख ।
यां चौरासी जादिगा, नटै तो वरते सुक्ख ॥ १ ॥
मनुष्य जन्म को पाइके, टाले इतना दोष ।
जगन्नाथ नर नारिको, सुधरै लोक प्रलोक ॥ २ ॥

छन्द एक पय ।

राम सुमरता थकिजे नहीं ॥ १ ॥ गुरु सेवामें सँकिजे नहीं ॥ २ ॥
करणी कर गरवाजे नहीं ॥ ३ ॥ नितको नियम घटाजे नहीं ॥ ४ ॥
दानदेत अल्साजे नहीं ॥ ५ ॥ सन्त देख टलजाजे नहीं ॥ ६ ॥
लछ विन शीश नमाजे नहीं ॥ ७ ॥ साची बात उठाजे नहीं ॥ ८ ॥
नीची संगति कीजे नहीं ॥ ९ ॥ साची परिहर दीजे नहीं ॥ १० ॥
नृपसे वाद वधाजे नहीं ॥ ११ ॥ ओछी अकल उपाजे नहीं ॥ १२ ॥
दया पालता लजिजे नहीं ॥ १३ ॥ भाग भरोसो तजिजे नहीं ॥ १४ ॥
आप बडाई कीजे नहीं ॥ १५ ॥ दान उदक फिर लीजे नहीं ॥ १६ ॥
दान देत पछिताजे नहीं ॥ १७ ॥ गुरु को ग्यान लजाजे नहीं ॥ १८ ॥
आन आसरो लीजे नही ॥ १९ ॥ न्याव अदल विन कीजे नहीं ॥ २० ॥
परमाथ से मुड़जे नहीं ॥ २१ ॥ ऊझड़ मारग खड़जे नही ॥ २२ ॥
मन को मान्यो कीजे नहीं ॥ २३ ॥ दगो किसीको दीजे नहीं ॥ २४ ॥
दिन आथ्या से सोजे नहीं ॥ २५ ॥ शोक भणते रोजे नहीं ॥ २६ ॥
रणमें पूठ वताजे नहीं ॥ २७ ॥ हाथा कुरव घटाजे नहीं ॥ २८ ॥
अणछाण्यो जल पीजे नहीं ॥ २९ ॥ कुयश किसीको लीजे नही ॥ ३० ॥
झूठी कविता करजे नहीं ॥ ३१ ॥ साची कहताँ डरजे नहीं ॥ ३२ ॥
झूठी निन्दा कीजे नहीं ॥ ३३ ॥ पर नारी चित दीजे नहीं ॥ ३४ ॥
घर तजि विषय कमाजे नही ॥ ३५ ॥ जहर जाणतां खाजे नहीं ॥ ३६ ॥
काछ विकल मग लीजे नहीं ॥ ३७ ॥ कपटी मित्र कीजे नहीं ॥ ३८ ॥
सम्पति में ऋण रखजे नहीं ॥ ३९ ॥ धन योवन में छकजे नहीं ॥ ४० ॥
राज पुकारू जाजे नहीं ॥ ४१ ॥ बुरी पराई कीजे नहीं ॥ ४२ ॥
चोरी जारी कीजे नहीं ॥ ४३ ॥ पूठ धणी को दीजे नहीं ॥ ४४ ॥
सूने मन्दिर जाजे नहीं ॥ ४५ ॥ जगमें बुरो कहाजे नहीं ॥ ४६ ॥
ओछी वस्ती वसजे नही ॥ ४७ ॥ तात्पय विन हसजे नहीं ॥ ४८ ॥
चुगल पाडोसी कीजे नहीं ॥ ४९ ॥ धाम परायो लीजे नहीं ॥ ५० ॥
भरम्या भटका खाजे नहीं ॥ ५१ ॥ अल्गा उत्तर जाजे नहीं ॥ ५२ ॥

भांग तम्बाकू खाजे नहीं ॥ ५३ ॥ उपर खेती वाजे नहीं ॥ ५४ ॥
वेश्या के घर जाजे नहीं ॥ ५५ ॥ कुलकों दोष लगाजे नहीं ॥ ५६ ॥
पर धन काको हरिजे नहीं ॥ ५७ ॥ नीची संगति करिजे नहीं ॥ ५८ ॥
सूतो सिंह जगाजे नहीं ॥ ५९ ॥ चूड़ेलण वतलाजे नहीं ॥ ६० ॥
हरिकी भक्ति विसरजे नहीं ॥ ६१ ॥ विकर्म कवहू करजे नहीं ॥ ६२ ॥
वाद् विवादू है जे नहीं ॥ ६३ ॥ हलकी वाणी कहजे नहीं ॥ ६४ ॥
झूठी हामल भरजे नहीं ॥ ६५ ॥ वचन काढ़के फिरजे नहीं ॥ ६६ ॥
रॉड भाँड से अड़जे नहीं ॥ ६७ ॥ गतराड़े से लड़जे नहीं ॥ ६८ ॥
नदी वहाला तिरजे नहीं ॥ ६९ ॥ डूंगर सेती गिरजे नहीं ॥ ७० ॥
सुणी वात फैलाजे नहीं ॥ ७१ ॥ अनजान्या फल खाजे नहीं ॥ ७२ ॥
सुलझ्यां को उलझाजे नहीं ॥ ७३ ॥ निर्धन कों डरपाजे नहीं ॥ ७४ ॥
अपयश कांना सुणजे नहीं ॥ ७५ ॥ चच्चो मम्मो भणजे नहीं ॥ ७६ ॥
जामन किसका हुइजे नहीं ॥ ७७ ॥ अरि से गाफिल रहिजे नहीं ॥७८॥
झूठो दोषण दीजे नहीं ॥ ७९ ॥ निर्वल शरणो लीजे नहीं ॥ ८० ॥
मूर्ख को वतलाजे नहीं ॥ ८१ ॥ धन विन अर्थ गमाजे नहीं ॥ ८२ ॥
लेताँ देताँ लजिजे नही ॥ ८३ ॥ भल माणस को तजिजे नहीं ॥ ८४ ॥

दोहा ।

यह चौरासी शुभ अशुभ, कही ठामकी ठाम ।
जगन्नाथ करिये सवै, जवलग गृह विश्राम ॥ ३ ॥
इन चलगत चालै सुघर, भला कहै सव लोय ।
निश्चय या वा लोकमें, पला न पकड़े कोय ॥ ४ ॥
यह चौरासी चित धरै, वह चौरासी वाद ।
अपनी अपने हाथ है, मन माने सो साथ ॥ ५ ॥
वार वार नरतनु नहीं, कहै शास्त्र अरु सन्त ।
ताते सुकृत कीजिये, कै भजिये भगवन्त ॥ ६ ॥
जैन यवन शिव धर्म कहै, करणी सुधरे काम ।
दया धर्म इकतार से, जगन्नाथ कह राम ॥ ७ ॥

॥ इति श्रीचौरासी वोल ॥

हरदम कृष्ण कहे श्रीकृष्ण कहे तू जवाँ मेरी,
यही मतवल खातर करताहूँ खुशामद मैं तेरी,
दही और दूध शक्कर रोज खिलाताहूँ तुझे,
तो भी हररोज हरनाम न सुनाती मुझे,
खोई जिंदगानी सारी सोई गुनाह माफ तेरा,
दया मत भूले प्रभुनाम आखिर वक्त मेरा ॥ १ ॥ (दया)

नथा कुछ तो खुदा था कुछ न होता तो खुदा होता,
डुबोया मुझको होने ने न होता मैं तो क्या होता,
हुई मुद्दत कि गालिब मरगया पर याद आता है,
वह हर एक बात पर कहना कि यों होता तो क्या होता ॥ १ ॥ (गालिब)
खुदा पूछेगा महशर मे यह तकसीर किसकी है।
कहूँगा बरमला मैं तक्‍दीर म यह तहरीर किसकी है ॥ १ ॥
न कुछ हम हसके सीखे हैं न कुछ हम रोके सीखे हैं।
जो कुछ थोड़ासा सीखे हैं किसीके होके सीखे हैं ॥ १ ॥ (अजीज)

नजीर ।

दुनिया अजब बाजार है कुछ जिन्स यहा की साथ ले।
नेकी का दरजा नेक है बद से बदी की बात ले ॥
आराम दे आराम ले आफात दे आफात ले।
मेवा खिये मेवा मिलै फल फूल दे फल पात ले ॥
कल्जुग नहीं कर जुग है यहा दिनको दे और रात ले।
क्या खूब सौदा नक्‍द है इस हाथ दे उस हाथ ले ॥ १ ॥
काटा किसी के मत लगा गो मिस्ले गुल फूला है तू।
वो तेरे हक म तीर है किस बात मे भूला है तू ॥
मत आग मे दे और कू फिर घास का पूला है तू।
सुन रक्ख यह नुक्ता बे खबर किस बात पर भूला है तू ॥ कल्जुग ॥२॥
चाहे सो लेले इस घडी सब जिन्स यहा तैयार है।
आराम में आराम है आजार मे आजार है ॥
दुनिया न जाने इस को मियॉ दरिया की यह मँझधार है।
औरों का बेडा पार कर तेरा भी बेडा पार है ॥ कल्जुग ॥ ३ ॥
शोखी शरारत मॅकरो फन्द सबका बसेखा है यहा।
जो जो दिखाया और कू वो आप भी देखा है यहा ॥
नेकी बदी जो कुछ करे सबका परेखा है यहा।
जो जो पड़ा तुल्ता है दिल तिल तिल का लेखा है यहा ॥ कलजुग ॥ ४ ॥
जो और की बस्ती रखे उसका भी वस्ता है पुरा।
जो और की तोड़े धुरी उसका भी टूटे है धुरा ॥
जो और के मारे छुरी उसके भी लगता है छुरा।
जो और की चीते बुरी उसका भी होता है बुरा ॥ कल्जुग ॥ ५ ॥

---

१ मानद। २ तकलीफ। ३ चालाकी। ४ बदी। ५ धोका।

जो और कूं फल देवेगा वो भी सदा फल पावेगा।
गेहूं से गेहूं जों से जों चाँवल से चाँवल पावेगा॥
जो आज देवेगा यहां वैसाही वो कल पावेगा।
कल देवेगा कल पावेगा कलपायगा कलपावेगा॥ कलजुग॥ ६॥
तू और की तारीफ[1] कर तुझको सनांख्वानी मिले।
कर मुश्किल आशां और की तुझ को भी आसानी मिले॥
तू और को मेहमान रख तुझको भी महमानी मिले।
रोटी खिला रोटी मिले पानी पिला पानी मिले॥ कलजुग॥ ७॥
करले जो करना है अब यह दम तो कोई आँन[2] है।
एहसान[3] में एहसान है नुकसान में नुकसान है॥
तुहमत में यहां तुहमत मिले तूफान में तूफान है।
शैतान[4] कूं शैतान है रहमान[5] कूं रहमान है॥ कलजुग॥ ८॥
यहां ज़हर दे तो ज़हरले शक्कर में शक्कर देखले।
नेकों को नेकी का मजा मूंजी को टक्कर देखले॥
मोती दिये मोती मिले पत्थर में पत्थर पेखले।
गर तुझको यह बाँवर[6] नहीं तो तूभी करके देखले॥ कलजुग॥ ९॥
जो हारमें दे और को सो वह भी हारा जायगा।
खोवे सहारा और का उसका सहारा जायगा॥
यहां आज जिसके हाथ से कोइ मर विचारा जायगा।
गाफिल न हो इस बात पर कल वो भी मारा जायगा॥ कलजुग॥ १०॥
गफलत कि यह जागे नहीं यहां साँहिवे ईदराक[8] रहु।
दिल शाद[9] रख दिल शाद रहु गमनाक[10] रख गमनाक रहु॥
हर हाल में तू भी नजीर अब हर कदम की खाक रहु।
यह वो मकां है अय मियां यहां पाक रहु बेवाक[11] रहु॥ कलजुग॥ ११॥

वनजारानामा।

टुक हिर्स[12] हवा को छोड़ सियां मत देश विदेश फिरे मारा।
कज़्ज़ाक[13] अजल[14] का लूटे है दिन रात बजाकर नक्कारा॥
क्या भैंसा वधिया बैल सुतर[15] क्या गोने पल्ला सर भारा।
क्या गेहूं चावल मोठ मटर क्या आग धुआँ और अंगारा॥
सब ठाट पड़ा रहजावेगा जब लाद चलेगा वनजारा॥ १॥

---

१ तारीफ करना। २ घड़ी। ३ नेकी। ४ दुष्ट। ५ परमेश्वर। ६ यकीन। ७ मजबूत। ८ दरयाफ्त। ९ खुश। १० तकलीफ। ११ वेखोफ। १२ चाह। १३ वटपाड। १४ मोत। १५ ऊंठ।

जो और कूं फल देवेगा वो भी सदा फल पावेगा।
गेहूं से गेहूं जों से जों चॉवल से चॉवल पावेगा॥
जो आज देवेगा यहां वैसाही वो कल पावेगा।
कल देवेगा कल पावेगा कलपायगा कलपावेगा॥ कलजुग॥ ६॥
तू और की तारीफ कर तुझको सनांख्वानी मिले।
कर मुश्किल आशां और की तुझ को भी आसानी मिले॥
तू और को मेहमान रख तुझको भी महमानी मिले।
रोटी खिला रोटी मिले पानी पिला पानी मिले॥ कलजुग॥ ७॥
करले जो करना है अब यह दम तो कोई आंन है।
एहसान में एहसान है नुकसान में नुकसान है॥
तुहमत मे यहां तुहमत मिले तूफान में तूफान है।
शैतांन कूं शैतान है रहमांन कूं रहमान है॥ कलजुग॥ ८॥
यहां ज़हर दे तो ज़हरले शक्कर मे शक्कर देखले।
नेकों को नेकी का मजा मूंजी को टक्कर देखले॥
मोती दिये मोती मिले पत्थर में पत्थर पेखले।
गर तुझको यह बॉवर नहीं तो तूभी करके देखले॥ कलजुग॥ ९॥
जो हारसे दे और को सो वह भी हारा जायगा।
खोवे सहारा और का उसका सहारा जायगा॥
यहां आज जिसके हाथ से कोइ मर विचारा जायगा।
गाफिल न हो इस बात पर कल वो भी मारा जायगा॥ कलजुग॥ १०॥
गफलत कि यह जागे नहीं यहां सॉहिवे इंदराक रहु।
दिल शांद रख दिल शाद रहु गमनांक रख गमनाक रहु॥
हर हाल में तू भी नजीर अब हूर कदम की खाक रहु।
यह [illegible] वेबाक रहु॥ कलजुग॥ ११॥

।

[illegible] देश विदेश [illegible] ।

॥

॥

[illegible] ६ महीन।
[illegible] १२ माह।

गर है तू लक्खी बनजारा और खेप भी तेरी भारी है।
अय गाफ़िल तुझसे भी चढ़ता एक और बड़ा ब्योपारी है॥
क्या शक्कर मिश्री कन्द गिरी क्या साँभर मीठा खारी है।
क्या दाख मुनक्का सोंठ मिरच क्या केसर लौंग सुपारी है॥ सब ॥२॥
तू बधिया लादे बैल भरे जो पूरब पच्छिम जावेगा।
या सूद बढ़ाकर लावेगा या घाटा टोटा पावेगा॥
बटमार अजल का रस्ते में जब भाला मार गिरावेगा।
धन दौलत नाती पोते क्या इक कुनबा पास न आवेगा॥ सब ॥ ३ ॥
हर मंजिल में अब साथ तेरे यह जितना डेरा डाडा है।
जर दाम दिरम का भाडा है ब दूक सिपर और खाडा है॥
जब नायक तन का निकल गया जो मुल्कों मुल्कों हाडा है।
फिर हाडा है न भाडा है न हल्वा है न माडा है॥ सब ॥ ४ ॥
जब चलते चलते रस्ते में यह गौन तेरी ढल जावेगी।
एक बधिया तेरी मट्टी पर फिर चरने घास न पावेगी॥
यह खेप जो तूने लादी है सब हिस्सों में बट जावेगी।
धी पूत जँवाई बेटा क्या बनजारन पास न आवेगी॥ सब ॥ ५ ॥
क्यों नाहक बोझ उठाता है इन गोनों भारी भारी के।
जब काल लुटेरा आन पड़ा फिर दूने हैं ब्योपारी के॥
क्या साज जड़ाऊ जर जेवर क्या गोटे थान किनारी के।
क्या घोड़े जीन सुनहरी के क्या हाथी लाल अम्बारी के॥ सब ॥ ६ ॥
जो खेप भरे तू जाता है यह खेप मियाँ मत जान अपनी।
अब कोई घड़ी पल साअत में यह खेप बदन की है खपनी॥
क्या थाल कटोरे चादी के क्या पीतल के ढकना ढकनी।
क्या बरतन सोने रूपे के क्या मट्टी की हँडिया चपनी॥ सब ॥ ७ ॥
मग़रूर न हो तलवारों पर मत भूल भरोसे ढालों के।
सब पत्तातोड़ के भागेंगे मुह देख अजल के भालों के॥
क्या डिब्बे हीरे मोती के क्या ढेर खजाने मालों के।
क्या बुगचे तास मुशज्जर के क्या तख्ते साल दुसालों के॥ सब ॥ ८ ॥
कुछ काम न आवेगे तेरे यह लाल जमुर्रद सीमो जर।
सब पूँजी बाट में बिखरेगी जब आन बनेगी जी ऊपर॥
क्या मसनद तकिये मुल्क मकाँ क्या चौकी कुर्सी तख्त छतर।
क्या माल ख़जाने मुल्क मकाँ क्या दौलत हशमत फौजें लश्कर॥ सब ॥ ९

१ छोटा बैल। २ परवार। ३ ढाल। ४ खेनखाप। ५ पन्ना। ६ चाँदी। ७ सोना।
८ बिछौना। ९ घबराहट=हड़बड़ा।

यह धूम धड़ाका साथ लिये क्यों फिरता है जंगल जंगल।
इक भुनगा पास न आवेगा मोकूफ हुआ जव अन्न रु जल॥
घर वार अटारी चौवारे क्या खाशा तनसुख ओर मल मल।
क्या चिलमन तकिये रेशम के क्या लाल पलंग क्या रंगमहल॥ सव १०॥
क्यों पुख्त मकां बनवाता है है खंभ तेरे तनका पोला।
तू उंची गढ़ी उठाता है यहां घोर गढ़े ने मुंह खोला॥
क्या रेवनी खंद करंद वड़ा क्या कोट कंगूरा अनमोला।
क्या वुर्ज रेहकला तोप किला क्या शीशा दारू और गोला॥ सव॥११॥
जव काल फिराकर चावुक को यह वैल वदन का हाकेगा।
कोइ नाज समेटेगा तेरा कोई गोंन सिये और टांकेगा॥
हो ढ़ेर अकेला जंगल में तू खाक लहद[1] की फांकेगा।
उस जंगल में जव आह नजीर एक भुनगा आन न झांकेगा॥ सव॥ १२॥

धोकेकी टट्टी।

यह पैठ अजव है दुनिया की और क्या क्या जिन्स इकट्ठी है।
यहां माल किसी का मीठा है और चीज किसी की खट्टी है॥
कुछ पकता है कुछ भुनता है पकवान मिठाई पट्टी है।
जव देखा खूव तो आखिर को न चूल्हा भाड़ न भट्टी है॥
गुल शोर ववूला आग हवा और कीचड़ पानी मट्टी है।
हम देख चुके इस दुनिया को सव धोखे कीसी टट्टी है॥ १॥
कोइ ताज खरीदे हंस हंस कर कोइ रख्त खड़ा वनवाता है।
कोइ कपड़े रंगे पहिने है कोइ गुदड़ी ओढ़े जाता है॥
कोइ भाई वाप चचा नाना कोइ नाती पूत कहाता है।
जव देखा खूव तो आखिर को न रिश्ता है न नाता है॥ गुल॥ २॥
कोइ सेठ महाजन लक्खपती वज्जाज कोई पन्सारी है।
यहां वोझ किसी का हल्का है और खेप किसी की भारी है॥
क्या जाने कौन खरीदे है और किसने जिन्स उतारी है।
जव देखा खूव तो आखिर को दल्लाल न को वोपारी है॥ गुल॥ ३॥
कोइ फूल के वैठे मशनद पर कोइ रोवे अपनी दौलत खो।
कोइ वोले अपना मुझसे लो और मेरा है सो मुझको दो॥
कोइ लड़ता है कोइ मरता है कोइ झगड़े हक और नाहक को।
जव देखा खूव तो आखिर को कुछ लेना एक न देना दो॥ गुल॥ ४॥

---

१ पड़दा। २ कम्र।

रम्मोल नजूमी आमिल है और फाज़िल मुल्ला स्याना है।
कोइ आमिल कामिल दाना है कोइ मस्त सिड़ी दीवाना है॥
तावीज़ फतीला फाल फिसूं और जादू मंतर लाना है।
जब देखा खूब तो आखिर को सब हील मक्र बहाना है॥ गुल॥ ५॥
कोइ लौंडे कूचे गलियों में तैयार किसी का धोरा है।
कोइ बाग कुआँ बनवाता है और घेर किसी ने घेरा है॥
नित कजिये झगड़े रहते हैं यह मेरा है यह तेरा है।
जब देखा खूब तो आखिर को न मेरा है न तेरा है॥ गुल॥ ६॥
कोइ टोपी टोप बनाता है कोइ बाँध फिरै अमामा है।
कोइ साफ बरहना फिरता है न पगड़ी है न पजामा है॥
कमखाब गजी और गाढ़े का नित कजिया और हंगामा है।
जब देखा खूब तो आखिर को न पगड़ी है न जामा है॥ गुल॥ ७॥
कोइ बाल बढ़ाये फिरता है कोइ सर को घोट मुड़ाता है।
कोइ कपड़े रंगे पहिने है कोइ नग मुनगा खाता है॥
कोइ पूजा कथा बखाने है कोइ छापा तिलक लगाता है।
जब देखा खूब तो आखिर को सब छोड़ अकेला जाता है॥ गुल॥ ८॥
कोइ रोता है कोइ हँसता है कोइ नाचे है कोइ गाता है।
कोइ छीनै झपटै ले भागै कोइ घूँस का डर दिखलाता है॥
कोइ माल इकट्ठा करता है कोइ कुंजी कुल्फ लगाता है।
जब देखा खूब तो आखिर को सब झगड़ा रहा जाता है॥ गुल॥ ९॥
कोइ बेचे भंग शराब अफियून कहीं दूध दही की फेरी है।
कोइ पल्ला सर पर लावा है कोइ लादे बैल मुकेरी है॥
कोइ झगड़े अपनी जागाह पर यह मेरी है यह तेरी है।
जब देखा खूब तो आखिर कोन तेरी है न मेरी है॥ गुल॥ १०॥
कहिं पत्ती टेकी थूनी है कहिं घास कडब की पूली है।
कहिं चलनी छाज पिटारी है कहिं चूल्हा चक्की चूल्ही है॥
तरकारी बैंगन साग हरा गुड़गाडा गाजर मूली है।
जब देखा खूब तो आखिर को सब बिकरी देखत भूली है॥ गुल॥ ११॥
कहिं थान अटेरन टाट गजी कहिं दमरख चमरख तकला है।
कहिं रोक रुपये का खुरदा कहिं काडी पैसा धेला है॥
कहिं छलना छाज पिटारी है कहिं बिकता खाट खटोला है।
जब देखा खूब तो आखिर को न पीढी खाट खटोला है॥ गुल॥ १२॥

---

१ रमली। २ जोतषी। ३ मन्त्रतन्त्रवादी। ४ पूरा। ५ बत्ती। ६ मुहूरत। ७ मन्त्र फूकना। ८ बहाना। ९ धोका। १० साफा। ११ दोवटी। १२ लड़ाई।

कोइ शिकरा बाज उड़ाता है कोइ हाथ में रक्खै तुतली है।
शहबाज कोई ले बैठा है और दौड़ किसीने दुतली है॥
है तार किसी के हाथों में और नाचत फिरती पुतली है।
जब देखा खूब तो आखिर को न रेशम सूत न सुतली है॥ गुल ॥ १३ ॥
अब किसका रंग बुरा कहिये और किसका रूप भला कहिये।
इक दम की पैठ लगी है यह अम्बोह मजा चरचा कहिये॥
यह सैर तमाशा देख नजीर अब जा कहिये बेजा कहिये।
कुछ बात नहीं बनआने की चुपचाप भला है क्या कहिये॥ गुल ॥ १४ ॥

बुढ्ढा।

बटमार[1] अजल का आ पहुँचा टुक इसको देख डरो बाबा।
अब अश्क[3] बहाओ आँखों से और आहें शर्द भरो बाबा॥
दिल हाथ उठाकर जीनेसे बेबस मन मार मरो बाबा।
जब बाप की खातिर रोतेथे अब अपनी खातिर रो बाबा॥
तन सूखा कुबड़ी पीठ हुई घोड़े पर जीन धरो बाबा।
अब मौत नकारा आ बागा चलने का फिकर करो बाबा॥ १ ॥
अब जीने को तुम रुखसत दो और मरने को महमान करो।
खैरात करो अहसान करो या पुण्य करो या दान करो॥
या पूरी लड्डू बँटवाओ या खासा हलवा नान करो।
कुछ लुत्फ नहीं अब जीनेनें अब चलने का सामान करो॥ तन ॥ २ ॥
दिल काटो अपने जीनेसे अब और गले को मत काटो।
अब चाट फना की टुक चक्खो और खून किसीका मत चाटो।
धुन छोड़ो हिस्से बखरे की तुम भाजी अपनी मत बाँटो॥
नाँकंद बछेरे कूद चुके अब और दुलत्ती मत छाँटो॥ तन ॥ ३ ॥
यह अस्प बहुत कूदा उछला अब कोड़ा मारो जेरकरो।
जब माल इकट्ठा करते थे अब तनका अपने ढेर करो॥
गढ़ टूटा लश्कर भाग चुका अब म्यान में तुम शमसेर करो।
तुम साफ लड़ाई हारचुके अब भागन में मत देर करो॥ तन ॥ ४ ॥
सर कांपा चांदी बाल हुए मुंह पीला पल्के पलट गई।
कद टेढी कान हुए बहरे अरु आँखें भी चुंधियाय गई॥
सुख नींद गई और भूख घटी दिल सुस्त हुआ आवाज महीं।
जो होनी थी सो हो गुजरी अब चलने में कुछ देर नहीं॥ तन ॥ ५ ॥

---

१ हाट। २ भीड़भाड़। ३ आसू। ४ ठढी। ५ रोटी। ६ मरना। ७ जिस-परसवारनहो। ८ घोड़ा।

इस पाँव घसिट कर चलने से मत रस्ते को हैरान करो।
और पोपले मुह से रोटी को मत मल मल कर हलकान करो॥
अब आप हुए तुम पानी से मत पानी का नुकसान करो।
कुछ लाभ नहीं इस जीनेमें अब मरने से पहिचान करो॥ तन॥ ६॥
गर अच्छी करनी नेक अमल तुम दुनिया से ले जाओगे।
तो घर भी अच्छा पाओगे और सुख से बैठे खाओगे॥
और ऐसी दौल्त छोड़ के तुम जो खाली हाथों जाओगे।
कुछ बात नहीं बनआने की घबराओगे पछिताओगे॥ तन॥ ७॥
घर बार रुपैये पैसे में मत दिल को तुम खुरान्द करो।
या घोर बनाओ जगल में या जमुना पर आनद करो॥
मौत जो आन लताड़ेगी आखिर मक्र करो या फन्द करो।
बस बहुत तमाशा देख चुके अब आँखें अपनी बध करो॥ तन॥ ८॥
बोपार तो यहा का बहुत किया अब वहा का भी कुछ सौदा लो।
जो खेप उधर को चढ़ती हो उस खेप को यहा से लदवालो॥
उस राह में जो कुछ खाते हो उस खाने को भी मगवालो।
सब साथी पहुँचे मजिल पर अब तुमभी अपना रस्ता लो॥ तन॥ ९॥
दो चार घड़ी या दो दिन में अब तन से जान निकलनी है।
यह हड्डी पसली जितनी है या गलनी है या जलनी है॥
है रात जो बाकी थोड़ी सी कोइ दम को वह भी ढलनी है।
उठ बाधो कमर सवेरे से तुम को भी मजिल चलनी है॥ तन॥ १०॥
यह दौलत काम न आवेगी मत इसको तुम जजीर करो।
यह खाक बदन की पारा है मन मार इसे अक्सीर करो॥
जो पार उतारे दरिया से उन बातों को गुरु पीर करो।
अब नाव किनारे आ पहुँची अब चढ़ने की तदबीर करो॥ तन॥ ११॥
कुछ देर नहीं अब चलने में या आज चलो या काल चलो।
जो कपड़ लत्ते लेने हैं सो जल्दी बाँध सँभल निकलो॥
अब शाम नहीं अब सुबह हुई ज्यू मोम पिघलकर ढल निकलो।
क्यों नाहक धूप चढ़ावे हो बस ठढे हि ठढे चल निकलो॥ तन॥ १२॥
यह ऊंठ गिरावेगा यारो सन्दूक जनाजा अँर्थी है।
जब इसपे हो असवार चले फिर घोड़ा है न हस्ती है॥
किस नींद पड़े तुम सोते हो यह बोझ तुम्हारा भारी है।
कुछ देर नहीं अब आह नजीर तैय्यार खड़ी असवारी है॥ तन॥ १३॥

---

१ बरताव। २ दुख। ३ कीमिया। ४ सीढी। ५ रथी।

खुदमस्ती ।

कोइ हाल मस्त कोइ माल मस्त कोइ तूती मैना सूवे में ।
कोइ खान मस्त पहिरान मस्त कोइ राग रागिणी धूवे में ॥
कोइ अमल मस्त कोइ रमल मस्त कोइ शतरंज चौपड़ जूवे में ।
एक खुद मस्ती विन और मस्त सब पड़े अविद्या कूवे में ॥ १ ॥
कोइ अकल मस्त कोइ शकल मस्त कोइ चंचलताई हाँसी में ।
कोइ वेद मस्त कत्तेव मस्त कोइ मक्के में कोइ कासी में ॥
कोइ ग्राम मस्त कोइ धाम मस्त कोइ सेवक में कोइ दासी में ।
एक खुद मस्ती विन और मस्त सब पड़े अविद्या फासी में ॥ २ ॥
कोइ पाठ मस्त कोइ ठाठ मस्त कोइ भैरव में कोइ काली में ।
कोइ ग्रन्थ मस्त कोइ पन्थ मस्त कोइ श्वेत पीत रंग लाली में ॥
कोइ काम मस्त कोइ खाम मस्त कोइ पूरण में कोइ खाली में ।
एक खुद मस्ती विन और मस्त सब वंधे अविद्या जाली में ॥ ३ ॥
कोइ हाट मस्त कोइ घाट मस्त कोइ वन परवत औजारा में ।
कोइ जाति मस्त कोइ पाँति मस्त कोइ तात मात सुत दारा में ॥
कोइ कर्म मस्त कोइ धर्म मस्त कोइ मस्जिद ठाकुरद्वारा में ।
एक खुद मस्ती विन और मस्त सब वहे अविद्या धारा में ॥ ४ ॥
कोइ राज मस्त गज वाज मस्त कोइ छप्पर में कोइ फूले में ।
कोइ जुद्ध मस्त कोइ क्रुद्ध मस्त कोइ खड्ग कुठार वसूले में ॥
कोइ प्रेम मस्त कोइ नेम मस्त कोइ छींके में कोइ झूले में ।
एक खुद मस्ती विन और मस्त सब जले अविद्या चूल्हे मे ॥ ५ ॥
कोइ शाक मस्त कोइ खाक मस्त कोइ खासे में कोइ मलमल में ।
कोइ जोग मस्त कोइ भोग मस्त कोइ स्थिति में कोइ चंचल में ॥
कोइ रिद्धि मस्त कोइ सिद्धि मस्त कोइ लेन देन की गलगल में ।
एक खुद मस्ती विन और मस्त सब फँसे अविद्या दलदल में ॥ ६ ॥
कोइ ऊर्ध्व मस्त कोइ अधः मस्त कोइ वाहिर में कोइ अन्तर में ।
कोइ देश मस्त विदेश मस्त कोइ औषधि में कोइ मंतर में ॥
कोइ आप मस्त कोइ ताप मस्त कोइ नाटक चेटक तंतर में ।
एक खुद मस्ती विन और मस्त सब भ्रमे अविद्या जंतर में ॥ ७ ॥
कोइ सुष्ट मस्त कोइ तुष्ट मस्त कोइ दीरघ में कोइ छोटे में ।
कोइ गुफा मस्त कोइ सुफा मस्त कोइ तूंबे मे कोइ लोटे में ॥
कोइ ज्ञान मस्त कोइ ध्यान मस्त कोइ असली में कोइ खोटे में ।
एक खुद मस्ती विन और मस्त सब रहे अविद्या टोटे में ॥ ८ ॥

यह लौकिक मस्त कहाँ र्गा चरण् हैं माया के दगल में।
कौन करे तिनकी गिनती सब जकड़ हैं दढ़ सगल में॥
छिन में रुष्ट तुष्ट इक छिन में स्थिति सदा अमगल में।
एक खुद मस्ती बिन और मस्त सब भुले अविद्या जगल में॥ ९॥

॥ श्रीहरि ॥

विविधपुष्पगुच्छः।

श्लोक।

असितगिरिसम स्यात्कज्जल सिंधुपात्रे
सुरतरुवरशाखा लेखनी पत्रमुर्वी।
लिखति यदि गृहीत्वा शारदा सर्वकाल
तदपि तव गुणानामीश पार न याति॥ १॥

प्रह्लादनारदपराशरपुडरीकव्यासाबरीषशुकशौनकभीष्मकाद्या।
रुक्मागदार्जुनवसिष्ठविभीषणाद्या एतानह परमभागवतान्नमामि॥ २॥
यावन्निरजनमज पुरुष जरत सचितयामि सकले जगति स्फुरतम्।
तावद्बलात्स्फुरति हत हृदतरे मे गोपस्य कोपि शिशुरजनपुजमजु॥३॥

ध्यानाभ्यासवशीकृतेन मनसा यन्निर्गुण निष्क्रिय
ज्योति किंचन योगिनो यदि पर पश्यति पश्यतु ते।
अस्माक तु तदेव लोचनचमत्काराय भूयाच्चिर
कालिंदीपुलिनेषु यत्किमपि तन्नील महो-(तेजः) धावति॥४॥

अद्वैतवीथीपथिकैरुपास्या स्वानदसिंहासनलब्धदीक्षा।
शठेन केनापि वय हठेन दासीकृता गोपवधूविटेन॥ ५॥

शास्त्र भूरि निजस्वरूपमतये स्वाराधनार्थं वपु
स्वध्यानाय मनश्च शुद्धिमनघा लब्ध च तीर्थादिकम्।
तत्त्वान्यप्युपदेष्टुमुत्तमगुरून् दत्त्वानुगृह्णाति न
ससारे तदपि भ्रमेमाह स किं कुर्वीत सर्वेश्वर॥ ६॥

रे कदर्प के तु कदर्थयसि किं कोदडटकारितै
रे रे कोकिल कोमलै कलरवै किं त्व वृथा जल्पसि।
मुग्धे स्निग्धविदग्धमुग्धमधुरैर्लोलै कटाक्षैरल
चेतश्चुबितचद्रचूडचरणध्यानामृत वर्तते॥ ७॥

का चिंता मम जीवने यदि हरिर्विश्वभरो गीयते
नो चेदर्भकजीवनाय जननीस्तन्य कथ निःसरेत्।
इत्यालोच्य मुहुर्मुहुर्यदुपते लक्ष्मीपते केवल
त्वत्पादाबुजसेवनेन सतत कालो मया नीयते॥ ८॥

नाहं विप्रो नच नरपतिर्नापि वैश्यो न शूद्रो
नो वा वर्णी न च गृहपतिर्नो वनस्थो यतिर्वा ।
किन्तु प्रोद्यन्निखिलपरमानंदपूर्णामृताब्धे-
र्लक्ष्मीभर्तुः पदकमलयोर्दासदासानुदासः ॥ ९ ॥
आनीता नटवन्मया तव पुरः श्रीकृष्ण या भूमिका
व्योमाकाशखखाम्बराब्धिवसवस्त्वत्प्रीतयेऽद्यावधि ।
प्रीतस्त्वं यदि चेन्निरीक्ष्य भगवन्मत्प्रार्थितं देहि मे
नो चेद्ब्रूहि कदापि मानय तनूस्त्वेतादृशीर्भूमिकाः ॥ १० ॥
अहल्या पाषाणः प्रकृतिपशुरासीत् कपिचमू-
र्गुहोऽभूच्चांडालस्त्रदपि गमितास्ते निजपदम् ।
अहं चित्तेनाश्मा पशुरपि तवार्चादिकरणात्
क्रियाभिश्चांडालो रघुवर न मामुद्धरसि किम् ॥ ११ ॥

यद्यात्रया व्यापकता हता ते भिदैकता वाक्परता च नुत्या ।
ध्यानेन बुद्धेः परता परेश जात्याऽजता क्षंतुमिहार्हसि त्वम् ॥ १२ ॥
आत्मा नदी भारतपुण्यतीर्था सत्यावहा शीलतटा दयोर्मिः ।
तत्राभिषेकं कुरु पांडुपुत्र न वारिणा शुद्ध्यति चान्तरात्मा ॥ १३ ॥
भूमौ जले नभसि देवनरासुरेषु भूतेषु देवि सकलेषु चराचरेषु ।
पश्यंति शुद्धमनसा खलु रामरूपं रामस्य ते क्षितितले समुपासकाश्च१४

ये पापं शमयंति संगतिभृतां ये दानशृंगारिणो
येषां चित्तमतीव निर्मलतरं येषां न मानव्रतम् ।
ये सर्वान्सुखयंति हि प्रतिदिनं ते साधवो दुर्लभा
गंगावद्गजगंडवद् गगनवद् गांगेयवज्ज्ञेयवत् ॥ १५ ॥
अनंतशास्त्रं बहुला च विद्या अल्पश्च कालो बहुविघ्नता च ।
यत्सारभूतं तदुपासनीयं हंसो यथा क्षीरमिवाम्बुमध्यात् ॥ १६ ॥
अर्च्ये विष्णौ शिलाधीर्गुरुषु नरमतिर्वैष्णवे जातिबुद्धि-
र्विष्णोर्वा वैष्णवानां कलिमलमथने पादतीर्थेऽम्बुबुद्धिः ।
सिद्धे तन्नाम्नि मंत्रे कलिकलुषहरे शब्दसामान्यबुद्धि-
श्रीशे सर्वेश्वरेशे तदितरसमधीर्यस्य वा नारकी सः ॥ १७ ॥
नृदेहमाद्यं सुलभं सुदुर्लभं प्लवं सुकल्पं गुरुकर्णधारम् ।
मयानुकूलेन नभस्वतेरितं पुमान् भवाब्धिं न तरेत्स आत्महा ॥१८॥
जातोऽहं जनको ममैष जननी क्षेत्रं कलत्रं कुलं
पुत्रो मित्रमरातयो वसु बलं विद्याः सुहृद्बांधवाः ॥
चित्तस्पंदितकल्पनामनुभवन्विद्वानविद्यामयीं
निद्रामेत्य विघूर्णितो बहुविधान् स्वप्नानिमान्पश्यति ॥ १९ ॥

वसतु गह्वरकाननकोटरे तपतु चोग्रतपोभ्दशतैरपि।
पठतु शास्त्रकदम्बमहर्निशं नहि विचारमृते सुखमेधते ॥ २० ॥
तपन्तु तापैर्निपतन्तु पर्वतादटन्तु तीर्थानि पठन्तु चागमान्।
यजन्तु यागैर्विवदन्तु वादैर्हरिं विना नैव मृतिं तरन्ति ॥ २१ ॥
धनानि भूमौ पशवश्च गोष्ठे भार्या गृहद्वारि जनः श्मशाने।
देहश्चितायां परलोकमार्गे कर्मानुगो गच्छति जीव एकः ॥ २२ ॥
त्यक्त्वाशुकं जीर्णमथापरं नरो गृह्णाति नव्यं च यथोरगस्त्वचम्।
शष्पं जलौका च यथा तथा ह्यसौ देही शरीरं किमिहात्र शोचति ॥२३॥
यच्चिंतितं तदिह दूरतरं प्रयाति यच्चेतसा न गणितं तदिहाभ्युपैति।
प्रातर्भवामि वसुधाधिपचक्रवर्ती सोऽहं व्रजामि विपिने जटिलस्तपस्वी॥
न शास्त्रतुल्यं नयनं न सत्यसमं तपस्तोषसमं न लाभम्।
विरागतुल्यं न सुखं च रागसमं न दुःखं कवयो वदन्ति ॥ २५ ॥
मृत्युर्नृत्यति मूर्ध्नि शश्वदुरगी घोरा जरारूपिणी
त्वामेषा ग्रसते परिग्रहमयैर्गृध्रैर्जगद्भक्ष्यते।
धूत्वा बोधजलैरबोधबहुलं तल्लोभजन्यं रजः
सन्तोषामृतसागराम्भसि मनाङ् मग्नः सुखं जीवति ॥ २६ ॥
न जातु कामान्न भयान्न लोभाद्धर्मं त्यजेज्जीवितस्यापि हेतोः।
धर्मो नित्यः सुखदुःखे त्वनित्ये जीवो नित्यो हेतुरस्य त्वनित्यः ॥ २७ ॥
न जनको जननी न च सोदरोऽप्यति वल्लभं न कुलं द्रविणं तथा।
सह तथममृतेहममुत्र यै सततमेव तमेव ततश्चरेत् ॥ २८ ॥
ह्यसस्तथैवुश्च नभोऽवनिजलं वह्निश्च वायुश्च दिनं निशा यमः।
पश्यति यद्यत्कुरुते जनो हि ते जानाति मूढस्तु न कोऽप्यवेक्ष्यते ॥ २९ ॥
संपूर्णं जगदेव नन्दनवनं सर्वेऽपि कल्पद्रुमा
गाङ्गं वारि समस्तवारिनिवहाः पुण्याः समस्ताः क्रियाः।
वाचः प्राकृतसंस्कृताः श्रुतिशिरो वाराणसी मेदिनी
सर्वावस्थितिरस्य वस्तुविषया दृष्टे परब्रह्मणि ॥ ३० ॥
कथा इमास्ते कथिता महीयसां वितत्य लोकेषु यशः परेयुषाम्।
विज्ञानवैराग्यविवक्षया विभो वचो विभूतिर्नतु पारमार्थ्यम् ॥ ३१ ॥
क्षाव्यापगं कृमिकुजन्तुमहः कृतान्तं वैश्वानरानलमथामयदूतवाधम्।
चिन्तार्कतापमथ काममुखाशिपत्रं दृष्ट्वापि देहनरकं न विरज्यतेऽज्ञः ॥३२
मेदाग्रक्षतजाकुलं कृमिगणैर्व्याप्तं शिरासन्ततं
लिप्तं मांसचयैश्चितास्थिनिबद्धं चर्मावृतं सर्वतः ॥
दौर्गन्ध्येन परिप्लुतं भवमुखाशीर्णेन रोगालयं
सज्जन्ते मलिनं कलेवरमिदं ये वेश्यते रासभाः ॥ ३३ ॥

निःस्वोप्येकशतं शती दशशतं सोपीह लक्षेशतां
लक्षेशः क्षितिराजतां क्षितिपतिश्चक्रेशतां वाञ्छति ।
चक्रेशः सुरराजतां सुरपतिर्ब्रह्मास्पदं वाञ्छति
ब्रह्मा विष्णुपदं हरिः शिवपदं तृष्णावधिं को गतः ॥ ३४ ॥
गर्जसि मेघ न यच्छसि तोयं चातकपक्षी व्याकुलितोऽहम् ।
दैवादिह यदि दक्षिणवातः क्व त्वं क्वाहं क्व च जलपातः ॥ ३५ ॥
सर्वोद्वेगकरं मृगादनममुं संत्यज्य हा धिक् त्वया
लोकस्यानपकारिणं गिरिनदीतीराटवीनिर्वृतम् ।
अश्नन्तं तृणमेणशावमदयं व्याध घ्नतामुं वृथा
देवो दुर्बलघातकोऽयमिति सा गाथा यथार्थीकृता ॥ ३६ ॥
कान्तं वक्ति कपोतिकाऽऽकुलतया नाथान्तकालोऽधुना
व्याधोऽधो धृतचापसज्जितशरः श्येनः परिभ्राम्यति ।
इत्थं सत्यहिना स दष्ट इषुणा श्येनोपि तेनाहत-
स्तूर्णं तौ तु यमालयं प्रति गतौ दैवी विचित्रा गतिः ॥ ३७ ॥
क्रमो न वाचां शिरसो न शूलं न चित्ततापो न तनोर्विमर्दः ।
न चापि हिंसादिरनर्थयोगः श्लाघ्या परं क्रोधजयेहमेका ॥ ३८ ॥
क्रुद्धे स्मेरमुखोऽवधीरणमथाविष्टे प्रसादक्रमोऽ-
व्याक्रोशे कुशलोक्तिरात्मदुरितोच्छेदोत्सवस्ताडने ।
धिग्जंतोरजितात्मनोऽस्य महती दैवादुपेता विपत्
दुर्वारेति दयारसार्द्रमनसः क्रोधस्य कुत्रोदयः ॥ ३९ ॥
ददतु ददतु गालीर्गालिमन्तो भवंतः
अहमपि तदभावे गालिदानेऽसमर्थः ।
जगति विदितमेतद्दीयते दीयमानं
नहि शशकविषाणं कोऽपि कस्मै ददाति ॥ ४० ॥
रे चित्तकाक फलपुष्पविकीर्णमात्माऽऽरामं विधर्ममथ विश्वसगालयं च
शांत्यावहं निकटगं शठ संविहाय संसारभोगशमले वद किं रतोऽसि॥४१॥
एतस्माच्च किमिन्द्रजालमपरं यद्गर्भवासस्थितं
रेतश्चेतति हस्तमस्तकपदप्रोद्भूतनानांकुरम् ।
पर्यायेण शिशुत्वयौवनजरावेषैरनेकैर्वृतं
पश्यत्यत्ति शृणोति जिघ्रति तथा गच्छत्यथागच्छति ॥४२॥
शूद्रे श्रुतिर्न सिकतासु यथा च तैलं वृक्षो न खे करतले न च रोम जातु ।
वह्नौ न शैत्यमुडुपेपि यथोष्णता वै मुक्तिर्न रागिणि तथैव बुधा वदंति४३
भिक्षाशनं तदपि नीरसमेकवारं शय्या च भूः परिजनो निजदेहमात्रम् ।
वस्त्रं च जीर्णशतखंडमलाढ्यकंथा हाहा तथापि विषया न परित्यजंति४४

जिह्वा रसाय नयनं सुविलोकनाय श्रोत्रं तथा कलरवश्रवणाय चर्म ।
स्पर्शाय कर्षति सुगन्धहते तु नासा प्रत्यर्थिनोऽप्यगमिव प्रलुनत्यविश्रम्,
कुरङ्गमातङ्गपतङ्गभृङ्गमीना हताः पञ्चभिरेव पञ्च ।
एकः प्रमादी स कथं न हन्यते यः सेवते पञ्चभिरेव पञ्च ॥ ४६ ॥

वपुः कुब्जीभूतं गतिरपि तथा यष्टिशरणा
विशीर्णा दन्तालिः श्रवणविकलं श्रोत्रयुगलम् ।
शिरः शुक्लं चक्षुस्तिमिरपटलैरावृतमहो
मनो मे निर्लज्जं तदपि विषयेभ्यः स्पृहयति ॥ ४७ ॥

पद्मं यथा चलदलस्य च वेधुताभा
केतुश्शुकं च ललनाक्षिशिखानलस्य ।
शाखामृगश्च कमठस्य शिरस्तथैव
चित्तं समेति तरलं स्थिरता न जातु ॥ ४८ ॥

अजानन्माहात्म्यं पततु शलभो दीपदहने
स मीनोऽप्यज्ञानाद्बडिशयुतमश्नातु पिशितम् ।
विजानन्तोऽप्येते वयमिह विपज्जालजटिलान्
न मुञ्चामः कामानहह गहनो मोहमहिमा ॥ ४९ ॥

कृशः काणः खञ्जः श्रवणरहितः पुच्छविकलो
व्रणी पूयक्लिन्नः कृमिकुलशतैरावृततनुः ।
क्षुधाक्षामो जीर्णः पिठरककपालार्पितगलः
शुनीमन्वेति श्वा हतमपि निहन्त्येव मदनः ॥ ५० ॥

गात्रं सङ्कुचितं गतिर्विगलिता भ्रष्टा च दन्तावलिः
दृष्टिर्नश्यति वर्धते बधिरता वक्त्रं च लालायते ।
वाक्यं नाद्रियते च बान्धवजनो भार्या न शुश्रूषते
हा कष्टं पुरुषस्य जीर्णवयसः पुत्रोऽप्यमित्रायते ॥ ५१ ॥

सङ्गाद्गुरुरयमगमज्जरधिश्च धार्तराष्ट्रो हतश्च तपसः स्खलितो मृगीजः ।
लङ्काधिपस्य शकुनेश्च तथागनाशास्तसात्यजेदविरतं हि बुधः कुसङ्गम् ॥
निःसङ्गता मुक्तिपदं यतीनां सङ्गादशेषाः प्रभवन्ति दोषाः ।
आरूढयोगोपि निपात्यतेऽधः सङ्गेन योगी किमुताल्पसिद्धिः ॥ ५३ ॥

स्वार्थं धनानि धनिकात् प्रतिगृह्णतो यः
हास्यं भजेन् मलिनतां किमिदं विचित्रम् ।
गृह्णन् परार्थमपि वारिनिधेः पयोऽपि
मेघोऽयमेति सकलोऽपि च कालिमानम् ॥ ५४ ॥

समारम्भा भग्नाः कति कति न धारास्तव पशो
पिपासोस्तुच्छेऽस्मिन् द्रविणमृगतृष्णार्णवजले ।

तथापि प्रत्याशा विरमति न ते मूढ शतधा
विदीर्णं यच्चेतो नियतमशनिग्रावघटितम् ॥ ५५ ॥
फलं स्वेच्छालभ्यं प्रतिवनमखेदं क्षितिरुहां
पयः स्थाने स्थाने शिशिरमधुरं पुण्यसरिताम् ।
मृदुस्पर्शा शय्या सुललितलतापल्लवमयी
सहंते संतापं तदिह धनिनां द्वारि कृपणाः ॥ ५६ ॥
प्रथमतः पठनं कठिनं कृतं पुनरहो परदेशनिषेवणम् ।
वदति दीनमयं वचनं सदा कठिनता विधिना विदुषां कृता ॥५७॥
अर्द्धं दानववैरिणा गिरिजयाप्यर्धं शिवस्याहृतं
देवेत्थं जगतीतले स्मरहराभावे समुन्मीलति ।
गंगा सागरमंबरं शशिकला नागाधिपः क्ष्मातलं
सर्वज्ञत्वमधीश्वरत्वमगमत् त्वां मां च भिक्षाटनम् ॥ ५८ ॥
जातः शूली कदनविषयात् भैक्ष्ययोगात्कपाली
वस्त्राभावाद्गगनवसनः स्नेहरौक्ष्याज्जटावान् ।
युष्मत्सेवापरिचयवशादीश्वरत्वं मयाप्त-
मद्यापि त्वं मम नरपते ह्यर्धचंद्रं न दासि ॥ ५९ ॥
तावत्सर्वगुणालयः पटुमतिः साधुः सतां वल्लभः
शूरः सच्चरितः कलंकरहितो मानी कृतज्ञः कविः ।
यावन्निष्ठुरवज्रपातसदृशं देहीति नो भाषते
तस्माद्वाक्यमिदं मम शृणु सखे मा ब्रूहि दीनं वचः ॥ ६० ॥
रेरे चातक सावधानमनसा मित्र क्षणं श्रूयता-
मंभोदा बहवो वसंति गगने सर्वेऽपि नैतादृशाः ।
केचिद्वृष्टिभिरार्द्रयंति वसुधां गर्जंति केचिद्वृथा
यं यं पश्यसि तस्य तस्य पुरतो मा ब्रूहि दीनं वचः ॥ ६१ ॥
हस्तौ दानविवर्जितौ श्रुतिपुटौ सारस्वतद्रोहिणौ
नेत्रे साधुविलोकनेन रहिते पादौ न तीर्थं गतौ ।
अन्यायार्जितवित्तपूर्णमुदरं गर्वेण तुंगं शिरो
रेरे जंबुक मुंच मुंच सहसा नीचस्य निंद्यं वपुः ॥ ६२ ॥
लोभात्त्रयो निपतिता गहने स कूपे दुर्योधनश्च सवलोऽन्तकवेश्म यातः ।
सद्यो वियंति सुगुणा गुणिनां यशश्च तस्मात्त्यजेन्नरकदं हि बुधस्तु लोभम्
संत्येते मम दंतिनो मदजलप्रम्लानगंडस्थला
वातव्यायतपातिनश्च तुरगा भूयोपि लप्स्ये परात् ।
एतल्लब्धमिदं लभे पुनरिदं लब्धाधिकं ध्यायतां
चिन्ताजर्जरचेतसां बत नृणां का नाम शांतेः कथा ॥ ६४ ॥

रात्रिर्गमिष्यति भविष्यति सुप्रभातं
भास्वानुदेष्यति हसिष्यति पंकजश्री ।
इत्थं विचिंतयति कोषगते द्विरेफे
हा हन्त हन्त नलिनीं गज उज्जहार ॥ ६५ ॥
शेषोऽशेषधराधरश्च गिरिशः सर्वांतकश्चात्मभू
र्लोकोद्भूतिकरश्च कोणपरिपुस्त्रैलोक्यसंपालकः ।
येऽन्ये काकभुशुंडलोमशमुखा योग्या स नो कुर्वते
गर्वं त्वल्पधनः क्षणायुरवशो मर्त्यः करोतीत्यहो ॥ ६६ ॥
मूर्खत्वं सुलभं भजस्व कुमते मूर्खस्य चाष्टौ गुणा
निश्चिंतो बहुभोजकोऽतिमुखरो रात्रिंदिवं स्वप्नभाक् ।
कार्याकार्यविचारणांधबधिरो मानापमाने समः
प्रायेणामयवर्जितो दृढवपुर्मूर्खः सुखं जीवति ॥ ६७ ॥
न सध्यां संधत्ते नियमितनिमाजं न कुरुते
न वा मौञ्जीबन्धं कलयति न वा सुन्नतविधिम् ।
न रोजां जानीते व्रतमपि हरेर्नैव कुरुते
न काशी मक्का वा शिव शिव न हिन्दुर्न यवनः ॥ ६८ ॥
मूर्खस्य पंच चिह्नानि गर्वो दुर्वचनी तथा ।
हठी चाप्रियवादी च परोक्तं नैव मन्यते ॥ ६९ ॥
मूर्खस्य चाष्टचिह्नानि शीका टीका च मालिका ।
प्रतिष्ठा लम्बधोत्राणि हाजी हाँजी च योग्यता ॥ ७० ॥
सिंहो व्याकरणस्य कर्तुरहरत्प्राणान्प्रियान्पाणिनेः
मीमांसाकृतमुन्ममाथ सहसा हस्ती मुनिं जैमिनिम् ।
छंदोज्ञाननिधिं जघान मकरो वेलातटे पिंगलं
ह्यज्ञानावृतचेतसामतिरुषां कोऽर्थस्तिरश्चां गुणैः ॥ ७१ ॥
वह्निस्तस्य जलायते जलनिधिः कुल्यायते तत्क्षणान्
मेरुः स्वल्पशिलायते मृगपतिः सद्यः कुरंगायते ।
व्यालो माल्यगुणायते विषरसः पीयूषवर्षायते
यस्यांगेऽखिललोकवल्लभतमं शीलं समुन्मीलति ॥ ७२ ॥
प्राणाघातान्निवृत्तिः परधनहरणे संयमः सत्यवाक्यं
काले शक्त्या प्रदानं युवतिजनकथामूकभावः परेषाम् ।
तृष्णास्रोतोविभंगो गुरुषु च विनयः सर्वभूतानुकंपा
सामान्यः सर्वशास्त्रेष्वनुपहतविधिः श्रेयसामेष पन्थाः ॥ ७३ ॥
सानंदं सदनं सुतास्तु सुधियः कांता प्रियालापिनी
इच्छापूर्तिधनं स्वयोषिति रतिः स्वाज्ञापराः सेवकाः ।

आतिथ्यं शिवपूजनं प्रतिदिनं मिष्टान्नपानं गृहे
साधोः संगमुपासते च सततं धन्यो गृहस्थाश्रमः ॥ ७४ ॥
सर्वौषधीनाममृता प्रधाना सर्वेषु सौख्येष्वशनं प्रधानम्।
सर्वेन्द्रियाणां नयनं प्रधानं सर्वेषु गात्रेषु शिरः प्रधानम् ॥ ७५ ॥
किं वाससैवं न विचारणीयं वासः प्रधानं खलु योग्यतायाः।
पीताम्बरं वीक्ष्य ददौ तनूजां दिगंबरं वीक्ष्य विषं समुद्रः ॥ ७६ ॥
नाभिषेको न संस्कारः सिंहस्य क्रियते मृगैः।
विक्रमार्जितराज्यस्य स्वयमेव मृगेन्द्रता ॥ ७७ ॥
धन्या द्विजमयी नौका विपरीता भवार्णवे।
तरंत्यधोगताः सर्वे उपरिस्थाः पतंत्यधः ॥ ७८ ॥
चितं जीर्णैः पर्णैर्गृहमपि तथैश्वर्यविकलं
विशीर्णं चैलं चाशनमपि कदन्नं गतरसम्।
कुरूपाज्ञा योषित् कटुवचनसंभाषणपरा
तथाप्यज्ञो लोकः क्षणमपि न हन्तोपरमते ॥ ७९ ॥
नैवात्र काव्यगुण एव तु चिन्तनीयो
ग्राह्यः परं गुणवता खलु सार एव।
सिन्दूरचित्ररहिता भुवि रूपशून्या
पारं न किं नयति नौरिह गन्तुकामान् ॥ ८० ॥
सान्द्रानन्दपुरंदरादिदिविषद्वृन्दैरमन्दादरा-
दानम्रैर्मुकुटेन्द्रनीलमणिभिः सन्दर्शितेन्दीवरम्।
स्वच्छन्दं मकरन्दसुन्दरगलन्मन्दाकिनीमेदुरं
श्रीगोविन्दपदारविन्दमशुभस्कन्दाय वन्दामहे ॥ ८१ ॥
मङ्गलं लेखकानां च पाठकानां च मङ्गलम्।
मङ्गलं सर्वलोकानां भूयो भूयोऽस्तु मङ्गलम् ॥ ८२ ॥
सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयाः।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चिद्दुःखभाग्भवेत् ॥ ८३ ॥

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध	पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१९३	२१	[illegible]	[illegible]	२७७	३२	कपि	कपि जग
१९७	२२	दुरधर	[illegible]	२७८	२८	वीज	बीज
२०३	३	[illegible]	[illegible]	२९३	८	वर	जन
२०६	३	परज	[illegible]	३११	२१	साधन	साधना
२१०	९	[illegible]	[illegible]	३१५	१४	साह	से
२२६	९	सो	[illegible]	३१९	२६	डाकीणी	डाकिणी
२२७	९	[illegible]	[illegible]	३२३	१८	निरनै	निर्भय
२२७	१२	[illegible]	[illegible]	३४१	२०	नही	नहिं
२२७	२८	जुरा	[illegible]	३४५	३०	मुरधर	मरुधर
२३१	१२	जेव	[illegible]	३५२	३१	मुरधर	मरुधर
२३२	७	अनुसारे	[illegible]	३५५	१६	मुरधर	मरुधर
२३५	५	सास	[illegible]	३८४	१६	पभी	पक्षी
[illegible]	७	मुरधर	[illegible]	अकारादि			
[illegible]	१६	सरंग	सारंग	पत्रांक			
[illegible]	२१	मेट	[illegible]	कर्नेल नोट	१	नेखा	नेख
[illegible]	१	धा	धौ	,,	११	पलाना	नागौर पलाना

श्रीरामस्नेह धर्मप्रकाश ग्रंथका शुद्धिपत्र ।

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
३	९	क्रिया	क्रियाजु
३	१२	आपने	अपने
१०	१२	अवनीराति	अवनीपती
१३	१०	यौं	ऐसे
१५	१७	नहि	न
१५	२०	तनननधन	तन धन
१६	२९	साधुहन	साधु
१९	१२	सुरधर	मरुधर
१९	१९	नब	[illegible]
२०	२२	सुरधर	मरुधर
२१	३१	बरपायो	बरषायो
२३	२५	सारनी	सारगो
२४	१	साधू	साधू
२९	हेडिंग	परचीसार	परिचय
३१	२०	सुरधरा	मरुधरा
३३	१८	सुरधर	मरुधर
३३	२८	सब	सद
३३	३२	निरधारा	निर्धाराके
३५	१६	उतम	उत्तम
३६	६	सकेविस्तार	सक विस्तार
४१-४३	हेडिंग	परचीसार	परिचय
६३-६९	हेडिंग	परचै	चेतावनी
६३	४	नाहत	न्हावत
६३	२५	कोय	लोय
[illegible]	३२	डोली	झंखर
[illegible]	[illegible]	पसवा	पशुवा
		[illegible]	रोवै
			तिविर
			बावरा
			।नास
			।नी

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१२१	२	[illegible]	[illegible]
१२२	१८	हिन्दु	हिन्दू
१२०	२०	दरश	दरशने
१२८	२०	दरशन	दरशसो
१२९	[illegible]	कसो	तव कसो
१२९	१२	की देरो	देरो
१३१	१५	अ।	अजपो
१३२	२५	सूई	सुई
१३३	६	आप	आप।
१३३	५	हे	होए
१३३	८	बाहिरो	बाहिरी
१३३	२०	रच	रचा
१५५	चोकड़ा अर्थात लोहेकी कांटेदार लगाम		
१५६	साहि अर्थात पकड़ना		
१५८	४	जल स्नान	जलकरस्नान
१५८	१३	तुमारि	तुम्हारि
१६१	२२	रामदास	रामादास
१६८	१	भाय	भौंय
१६८	४	धिरकार	धिक्कार
१७०	१६	पिलाया	मिलाया
१७१	२६	जिवेणी	त्रिवेणी
१७२	३	नहि अधन	नाहीं अध-
१७८	९	राणै	राण
१८१	८	निर्मल	विमल
१८२	१०	सेव	सेवा
१८२	१६	ग्रह	गेह
१८४	२	सुणै	सुनिहौ
१९१	२८-२९	दारुण	दारुण
१९२	१७	दारुण	दारुण
१९२	२०	जाय	आय

श्रीरामस्नेह धर्मप्रकाश ग्रंथका शुद्धिपत्र।



पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध	पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१	९	क्रिया	क्रियाजु	१३१	३	विन्दु	विन्दू
३	१२	आपने	अपने	१३३	१२	हिन्दु	हिन्दू
१०	१२	अवनीपति	अवनीपती	१३८	२०	दशम	दश्शमे
१३	१०	यौं	ऐसे	१३८	२८	दश्शम	दश्शमो
१५	१७	नहि	न	१३९	४	कसी	तव कसी
१५	२०	तनमनधन	तन धन	१३९	१३	की देखै	देखै
१६	२९	साधुहम	साधु	१४२	१५	अज	अजयो
१९	१२	मुरधर	मरुधर	१४२	२५	मूई	मुइ
१९	१९	नव	तव	१४३	६	आप	आपा
२०	२२	मुरधर	मरुधर	१४४	५	हे	हॉए
२१	३१	वरषायो	वरपावो	१४४	८	बाहिरो	बाहिरी
२३	२५	सारगी	सारगो	१४४	२०	रय	रया
२८	१	अघू	अघू	१५५	चौकड़ा	अर्थात् लोहेकी काटेदार लगाम	
२९	हेडिंग	परचीसार	परिचय				
३१	२०	मुरधरा	मरुधरा	१५६	साहि	अर्थात् पकड़ना	
३३	१८	मुरधर	मरुधर	१५८	४	जल स्नान	जलकरस्नान
३३	२८	सव	सद	१५८	१३	तुमारे	तुम्हारे
३३	३२	निरधारा	निर्धाराके	१६१	२२	रामदास	रामादास
३५	१६	उतम	उत्तम	१६८	१	भाय	भौंय
३६	६	सकेविस्तार	सक विस्तार	१६८	४	धिरकार	धिक्कार
४१-४३	हेडिंग	परचीसार	परिचय	१७०	१६	पिलाया	मिलाया
६३-६९	हेडिग	परचै	चेतावनी	१७१	२६	जिवेणी	त्रिवेणी
६३	४	नाहत	न्हावत	१७२	३	नहि अधन	नाहीं अध-
६३	२५	कोय	लोय	१७८	९	राणै	राण
६७	३२	डोली	झखर	१८१	८	निर्मल	विमल
६८	१०	पसवा	पशुवा	१८२	१०	सेव	सेवा
६९	९	रोयज	रोवै	१८२	१६	ग्रह	गेह
७१	१३	तिमिर	तिविर	१८४	२	सुणौ	सुनिहौ
७४	१४	बावरा	बावरा	१९१	२८-२९	दारुण	दाझण
७७	१	अहवास	आभास	१९२	२७	दारुण	दाझण
८७	३३	जिदगानी	जिदगानी	१९२	३०	जाय	आय

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१९३	२१	दारुण	दारुण
१९७	२३	मुरधर	मरुधर
२०५	३	जिग	जग
२०६	३	परज	प्रजा
२२०	९	वली	वली
२२६	१	सो	मोइ
२२७	९	सनकादू	सनकाद
२२७	१२	विति	वृत्ति
२२७	२८	जुरा	जरा
२३१	१२	जीते	जिते
२३२	७	अनुसारं	असारं
२३५	५	खास	स्वास
२५८	७	मुरधर	मरुधर
२६७	१६	सरंग	सारंग
२६८	२१	मट	मेन
२७३	१	धा	र्धा
२७७	३२	कथि	कथि जग
२७८	२८	वीज	वीज
२९३	८	जर	जन
३११	२१	साधन	साधना
३१५	१४	याह्व	से
३१९	२६	डाकीणी	डाकिणी
३२३	१८	निरभै	निर्भय
३४१	२०	नही	नहिं
३४५	३	मुरधर	मरुधर
३५२	३१	मुरधर	मरुधर
३५५	१६	मुरधर	मरुधर
३८४	१६	पभी	पक्षी
अकारादि पताठि-कानेका नोट	१	भेखा	भेख
,	१३	पलाना	नागौर, पग्लना

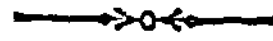
१६१ पृष्ठकी बिज्ञप्ति का नोट —

श्रीखड़ापे में तथा खेड़ापे के अन्यस्थलों में भी श्रीसिंहथलमहन्तमहाराज के विराजते हुए जो वाणी पाठ होता है वह श्रीसिंहथल पाठक्रमानुसार ही होता है केवल श्रीपूरणदासजी महाराज श्रीअर्जुनदासजी महाराज तथा अपने २ ठिकाणों की वाणी का पाठ विशेष होता है।

॥ श्रीः ॥

सिंहथल खैड़ापा रामस्नेही थॉभायत व खालशाही रामद्वारोंका

ठिकाना पताः—



अहमदाबादः–(गुजरात) पचमुखी हनुमानके पास (थॉ. वडलू म. की प्रशा)

अटिया–पो. पीपाड रोड (मारवाड) (थॉ वर्तमानस्थान वोयल पो. पीपाड सिटी)

अंगलौरः–(गुजरात) (थॉ ईडरकी प्रशा)

आराहीः–पो. किशनगढ (राजपूताना) (खा. गूंदलीकी शा.)

आचीणाः–(मारवाड) (थॉ. वर्तमानस्थान भीनासर वीकानेर)

आसोपः–(मारवाड) (खा. शा)

आहड़ाः–पो. वालोतरा (मारवाड) (थॉ. वूडीवाडा)

आतरसूबाः–(गुजरात) (थॉ. ईडरकी प्रशा)

इंगणोदः–पो. ढोढर (मालवा) (थॉ. रतलामकी शा.)

ईडरः–(गुजरात) केशरवागके सामने (थॉ)

उदयपुरः–(मेवाड) कुम्हारोंका वास (थॉ. मोतीचौक जोधपुरकी शा.)

ऊदसरः–पो. नोखा (वीकानेर) (थॉ) श्रीनारायणदासजी महाराज भेख और अवस्थामें सवशिष्योंसे वड़े होनेके कारण मुख्य थे, गुरुदेवजी की आज्ञानुसार अपने जीवन पर्यन्त आपने अपने गुरुधाम सिंहथलको नहीं छोडा। और न अन्यत्र कोई स्थान वनाया। आपके ४७ शिष्य हुए आपके परमधाम पधारनेपर ऊदसर के मुख्य होने पर भी किसी एक को चादर नहीं उढाई गई अतएव सारेही थॉभायतमहन्तकहलाए। इनमें ८ मुख्य हुए। जिनमें ६ के ठिकाने मौजूद है। सॉवतरामजी विजयरामजी सिंहथलहीमें रहे। यहापर सोवतराजीका एक स्थान है और विजयरामजीकी वनवाई हुई विजोलाई नामक तलाई है। (N)

ओसियॉः–(मारवाड) (थॉ. पॉचोड़ीका आदिस्थान)

करणू–पो. सीवसर (मारवाड) (खा. दासोटीकी शा चाखूका आदिस्थान) (S)

कापरड़ा.–(मारवाड) (थॉ वोयल)

कालू–पो लूणकरणसर (वीकानेर) (थॉ. वर्तमानस्थान श्रीडूँगरगढ) (N)

कालाउनाः–पो निलाडा (मारवाड) (थॉ)

किस्मीदेसर.–पो भीनासर (वीकानेर) कूएके पास (थॉ. आचीणेकी शा)

कीतलसरः–पो. चॉदारूण (मारवाड़) (खा. शा.)

कुचेराः–(मारवाड) (थॉ. नींवाज)

कूडीः–(मारवाड) (थॉ.)

केकड़ः–(मारवाड) मालानी (थॉ. वानारावासकी शा)

कोटवन.–(वृजमण्डल) (थॉ. तीतरीकी प्रशा)

कोसाणाः–पो पीपाड (मारवाड) ठि. सेठ भीरमल केसरीमल कॉकरियाकी दुकान (खा गुसॉईसरका वर्तमानस्थान। (S) यहॉ एक और भी खा. शा. स्थान है। (S)

कोलायत–श्रीकोलायतजी पो. गजनेर (वीकानेर) श्रीरामस्नेही आश्रम इसमें कुल रु २४७९५।≈)। खर्च हुये जिनमें श्री सिंहथल समुदायकी तरफसे रु. १२२९) और श्री खैड़ापा समुदायकी तरफसे रु. ४४७) सहायतार्थ प्राप्त हुए, वाकी-रु. २३,११०।≈)। साधचौकसरामजीने अपने निजके लगाकर इस रामस्नेही आश्रमको वनवाया। जिसमें श्रीरामेश्वरदासजी महाराजकी साल तो पहिले से ही वनी हुई थी और भी हालमें जिन्होंने उपका-

राये कोटडिये बनवाई है उनके नाम निम्न लिखित है। नरोत्तमदासजी साधु (कालू) एक कोटडी। खेतारामजी गवया साधु (खेनापा) दो कोटडी। इनकी कोटडी के आगे की चौकीपर एक जलकी कुण्डी लालारामजीने बनवाई है। रामधनजीकी धर्मपत्नी बाई लिछमाँ (बीकानेर) एक को टडी। रेखचन्दजी (बीकानेर) एक को टडी। रामगोपालजीकी धर्मपत्नी बाई धौर्ते (बीकानेर) एक कोटडी। रामचन्दजी (बीकानेर) एक कोटडी। सूरजमलजी की धर्मपत्नी बाई बाउला (बीकानेर) दो कोटडी। सेठ जगरूपदासजी रामध नदासजी (सिद्धवल) एक कोटडी। सेठ जगन्नाथजी करणीदानजी (नागोर) एक कोटडी। मघराजकी धर्मपत्नी बाई पाडा (बीकानेर) एक कोटडी।

कटालिया -(मारवाड) (थाँ)

खजवाना:-(मारवाड) (खा शा) (४)

खराल्ठू -(गुजरात) (खा झावलकी शा)

खवासपुरा -पो गोठन (मारवाड) (थाँ)

खारिया -भादावतोंका (मारवाड) (थाँ नींबाजकी शा)

खाँगटा -पो उमद (मारवाड) भाखरीपर (थाँ बडलू मनीरामजीम की शा) भा खरीपरके शाखावा यहीं पर एक स्थान ग्राममें और है उसका वर्तमानस्थान वी सनगर है।

खीचन्द -पो फलोधीहकूमत (मारवाड) (खा पोकरणकी शा)

खींवसर -(मारवाड) (खा)

खेजडला -पो पीपाड सिटी (मारवाड) (थाँ वर्तमानस्थान है। इसका आदिस्थान पीपाडमें है)

खैडापा -पो बडलू (मारवाड) पूज्यपाद श्री१०८श्री आचार्यरामधाम।

खैरवा -(मारवाड) (खा सीयाटकी शा)

गच्छीपुरा -पो आसोप (मारवाड) (खा शा)

गधाल्ठू -पो खजवाना (मारवाड) (खा देशनोक उम्यरामजीकी शा) (४)

गरौता -पो चम्बल (मालवा) (थाँ श्री यबदनी शा)

गाजू -(मारवाड) (थाँ बीनरीकी शा) यह रामद्वारा सिंहथलमहंतांमहाराजको भेट किया हुवा है।

गारासणी -पो आसोप (मारवाड) (थाँ)

गिरी -(मारवाड) (थाँ नींबाजकी शा)

गीगासर -पो देशनोक (बिकानेर) (थाँ वर्तमानस्थान वेळासर) (५)

गुसाँइसरछोटा -पो नापासर (बीकानेर) (खा वर्तमानस्थान कोशाणा) (४)

गुसाँइसरबडा -(बीकानेर) (थाँ कालूकी शा) (५)

गूँदली:-पो किशनगढ (राजपुताना) (खा शा)

गौतमपुरा -(मालवा) झालपर (थाँ रव लामकी शा) इनका एकस्थान शहरमें है।

गगारडा -(मारवाड) (खा गुसाईसरकी मशा) (४)

गगाशहर (बीकानेर) नईलाइन महेश्व रियांका मुहल्ला (थाँ बीतरीकी शा)
,, (थाँ आचीणेकी मशा)

चतरखेडा -पो सेवनी बनापुरा (होसंगा बाद) (शा)

चासू -पो फलोधीहकूमत (मारवाड) ठि सेठ हीरचन्द कस्तूरचन्द बरडियेकी दुकान (खा वासोजकी शा) (४)

चार्जाँ -(मारवाड) (थाँ जोधपुर सूरसाग रकी शा)

चाँचोडिया -(मारवाड) (यहाँपर दो था भायतोंके रामद्वारे हैं)

चिडाणी -पो पीपाडसिटी (मारवाड) (थाँ खेजडलेकी शा)

चीतलवाना -पो बालोतरा (मारवाड) (थाँ बानाराबासकी शा) इसका स्थान जोधपुरसागरमें भी है।

छापरः-पो. तालछापर (बीकानेर) (खा. लाडणूकी शा)

जयपुरः-पुराणीवस्ती यज्ञशालावावडीके पास (खा खुद)

जालौरः-(मारवाड़) बागेश्वरमहादेवके पास (खा. वालोतराकी शा.)

जेसलसरः-(बीकानेर) (थॉ तीतरीकी शा.)

जैतारणः-(मारवाड़) त्रिपोलियामे (थॉ.)

जैतपुरः-पो. अर्जुनसर (बीकानेर) (थॉ) (४)

जोधपुरः-(मारवाड) सूरसागर[1] खरबूजावावडीपर परमहंसजी महाराजका रामद्वारा (थॉ.) पासहीमे इनहीका भंडारनामक एक स्थान और है।

" महरोकावासमे बुधारामजी म० का रामद्वारा (थॉ.)

" नागोरीदरवाजा मालियोंका वासमें तीजॉवाईका रामद्वारा (थॉ) बुधा. की शा) कागेकी वारी वाहिर इनका एक स्थान और है।

" मोतीचौक (थॉ. गुप्तरामजीम का रामद्वारा बोयलका वर्तमानस्थान) कागेकी वारी वाहिर इनहीका एक स्थान और है।

" घाटीमें भूरारामजीका रामद्वारा (थॉ. मोतीचौक की शा.)

" नागोरीमालियोंके वासमें विष्णुदासजीका रामद्वारा (थॉ.)

" गोलमे वाघजीभाटकी हवेलीके पास दामोदरदासजीम का मॉहिलारामद्वारा (खा.शा) इसके सामनेवाला भंडारनामकस्थानभी आपका है।

---

१ सूरसागर ठिकानेके नए परमहंस गद्दी बैठते हैं. तव उनके लिए सिंहथल खेड़ापा दोनो महन्तॉमहाराजाओके सामने रूईदार गद्दी विछाई जाती है गद्दीकी रीति रसम कर फिर अपनी परंपराके अनुसार बाघंबर या मृगचर्म अथवा टाटके आसनपर विराजमान होते है।

जोधपुरः-राममुहल्ला नागोरीदरवाजे वाहिर (खा. मॉहिले रामद्वारेका है) इनही का एकस्थान राममुहल्लेके सामने है।

" वागरमें भावनादासजीम का रामद्वारा मॉहिलेरामद्वारे की शा)। चारस्थान आपके और है जिनमे दोस्थान तो इस रामद्वारेके पास हीमें है एक फते सागरकी नहरपर और एक कागेकी वारी वाहिर है। मॉहिले रामद्वारेके पास शालगरामजीका स्थान आपकी शा।

" खालशाहीरामद्वारा जूनीमालीमेलामे (खा.खुद)महरोंके वासके पासही वागरमें खुद खालशाही स्थान एक और है।

" जूनीमालीमेलामें गवैया खेतारामजी का रामद्वारा (खा शा.)।

" मेहरोंका वास हरिदासजीका रामद्वारा (खा. शा.)।

" रामगढी (थॉ. मोतीचोककी शा.) रामगढीके नीचे "नोहरा" नामका स्थान इनहीका है।

" वागरमें पुरखारामजी व रामलालजी का रामद्वारा रामगढीकी शा।

" कागडी परमहंसजीका रामद्वारा (खा शा.)

" फतैसागरकी नहर पर युक्तिरामजीका रामद्वारा (खा. शा)

" वारियोंके वासमें त्यागीरामजीका रामद्वारा (थॉ नीवाजकी शा)

" उदयमंदिरमें भूरारामजीका रामद्वारा (थॉ खेजडलेकी शा.)

" सोजतियेदरवाजे वाहिर चतुरदासजीका रामद्वारा (खा. सीयाटका वर्तमानस्थान है)।

" किलेके नीचे आदूरामजीका रामद्वारा (खा सीयाटकी शा)

" किलेकी घाटीमे विनतिरामजीका रामद्वारा (थॉ डॉगियासकी शा.)

" चांदपोलदरवाजे मावड़ियोंकी घाटीमे केवलरामजीका रामद्वारा (थॉ. सूरसागरकी शा.)

डाकल -पो साचोर (मारवाड़) (खा द्वा)
झोटावद पो रीची दर्लारिच्छा(मालवा)(था)
टीमटाकला -पो रायरिया तहसील शीवनी
 बनापुर जिला होशंगाबाद (गोंडवाणा)
 (खा गु)
डाँगास -पो मेड़तासिटी (मारवाड़) (खा
 द्वा) (8)
डाँगियास -पो बीसलपुर (मारवाड़)(थाँ)
दाभडिया -पो दर्लारिच्छा (था रतलाम
 की द्वा)
डीघाड़ी -(मारवाड़) (खा बीसलपुरकी द्वा)
डीसाकम्प -(गुजरात) (खा द्वा)
डूँगरगढ -श्रीडूंगरगढ -(बीकानेर) कालू
 के वासम (था थालूका वर्तमान
 स्थान) (४)
 ,, निगके वासमें उमारामजीका रामद्वारा
 (था कालूकी द्वा) (४)
 ,, गंगारामजीका रामद्वारा (थाँ का
 लूकी द्वा) (४)
डूमच -(गुजरात) (थाँ ईडरकी प्रद्वा)
डोवा -(गुजरात) (खा लाड़नूंकी प्रद्वा)
डावा -पो मेड़तारोड़ (मारवाड़) (थाँ
 बदलू मनीरामजी म० की प्रद्वा)
तलवाड़ा -(मारवाड़) (था समुन्दाकी द्वा)
तीतरी -पो नागोर (मारवाड़) ठि रामप्या
 लजी बालमुकुन्दजी सारडाकी दुकान (थाँ)
दवाणा -(मारवाड़) (खा द्वा)
ददीवा -पो बीगासर (बीकानेर) (खा
 बीकानेर दुरगारामजीकी द्वा)
दासोडी -(बीकानेर) (खा वर्तमान भेद
 का आदिस्थान) (S)
दाचोद -(व्रजमण्डल) थाँ बीदासरी प्रद्वा)
दुधोड -(मेवाड़) (थाँ नींबाजकी द्वा)
देवातडा -पो पीपाड़रोड़ (मारवाड़ (था)
देवरिया -(मारवाड़) थाँ बदलू मनारामजी
 म की प्रद्वा)

१ वातरा थाँभायत ठिकानेमें से छन्नी बाँकिया चँवरआदि मयलवाजमाके एक "सद्ग्रंथ" नामक द्वारा निकली है।

देवली -पो चम्पावत (मारवाड़) (थाँ
 सूरसागरकी द्वा)
देशणोक -(बीकानेर) नए कूपके पास
 दानरामजीका रामद्वारा (खा गा)
 ,, शीयावतोंके वासमें उदयरामजीका
 रामद्वारा (खा द्वा) (8)
 ,, मदनूआदका रामद्वारा (खा
 उदयरामजीकी द्वा) (S)
 ,, वाबोलाइतलावपर परमहंसजीम की
 गुफा (थाँ आचीणेकी द्वा)
 ,, दूगड़ोंके वासमें उक्त परमहंसजी
 महाराजका स्थान एक और है।
दहली -नीलका कटला रामप्रसादजीका
 रामद्वारा (थाँ बीवरीकी द्वा)
 ,, सब्जीमंडीकेपास मेवलरामजीका
 रामद्वारा (रामप्रसादजीकी द्वा)
धमासिया -पो पीपाड़सिटी (मारवाड़)
 (खा पीपाड़मुगतरामजी म० की द्वा)
धूँदाड़ा मजल -(मारवाड़) (थाँ पाँचो
 डीकी द्वा)
नसीराबाद -(राजपुताना) (थाँ)
नापासर -(बीकानेर) राजपुतोंके वासमें
 जालारामजीकी झोंपड़ी (खा द्वा) (S)
नागोर -(मारवाड़) बखतसागरतालावपर
 जमनादासजीकी बगीची (खा द्वा)
नींबोल -(मारवाड़) (खा पीपाड़ वेजरा
 मजी म० द्वा)
नींबेड़ा -(मारवाड़) (थाँ नींबाजकी द्वा)
नींबाज -(मारवाड़) (थाँ)
पलाना -(बीकानेर) (था) (N)
पळाना -पो मावली (मेवाड़) (खा सी
 यादकी द्वा)
पाली -(मारवाड़) वेरलादरवाजा (था
 यहांपर इनका एक औरभी स्थान है।
 ,, (थाँभायत नींबाजकाभी यहाँपर
 एकस्थान है)
पाकड़ी -(मारवाड़) (खा शीतलसरकी द्वा)

१ नींबाज थाँभायत ठिकानेको छन्नी बाँकिया बक्शीस किया हुवा है।

पालडीः–मेड़तियारी (मारवाड) (थॉ. खवासपुरेकी शा.)

पालडीः–जोधारी पो. खजवाना (मारवाड) (था. वडलू मनीरामजी म० की प्रशा)

पादूः–(मेवाड़) (खा. वालोतरेकी शा.)

पाँचोडी.–पो. सीवसर (मारवाड) ठि. रामधनजी फूसमलजी मिस्त्रीकी दुकान (थॉ.)

पिसांगणः–(अजमेर राजपुताना) (थॉ नीवाजकी शा.)

पीपाडसिटीः–(मारवाड) राठोलाई तलाईपर मुगतरामजीम० का रामद्वारा (खा शा)

,, राठोलाई तलाईकेपास भक्तिरामजीम का नयारामद्वारा (खा शा. इनका आदि स्थान कोशाणाकी वाडियामें है)

,, राठोलाईतलाईके पासही वाईयोका रामद्वारा (खा. शा.)

,, इसके पासका रामद्वारा (खा. शा)

पुनाहनाः–(वृजमण्डल) (थॉ.तीतरीकी प्रशा)

पुष्करः–(राजपुताना) (थॉ. वड्लू मनीरामजीम की प्रशा.)

पूठोलीः–पो. चन्देरी (मेवाड़) (खा. वालोतरेकी शा

पूजलूः–(मारवाड़) (खा. पीपाड़ तेजरामजी म० प्रशा.)

पोकरण.–(मारवाड़) यकोंकी पिरोल (खा. शा.)

पंचेवाः–पो. पीपलोदा (मालवा) (थॉ. रतलामकी शा.)

प्रतापनगर–(चक १ यू) पो. केसरीसिंहपुर (वीकानेर) (खा. खुद.) (S)

प्रान्तीजः–(गुजरात) वोकमें मुक्तरामजी म० की वाड़ी (था. ईडरकी प्रशा.) इनका एक रामद्वारा कुम्हारवाडामें भी है ।

फलोधीः–मेड़तारोड (मारवाड़) (थॉ. कूडीकी शा.)

फलोधीः–हकूमत (मारवाड़) (खा. जोधपुर भावनादासजी म. का स्थान है) ।

फागलियाः–(मारवाड़) (खा. झाकलकीप्रशा)

फुलेराः–(जयपुर) स्टेशनके पास रामद्वारा (खा. मैंदसरकी शा) (S)

बड़लूः–(मारवाड) यहापर दो थांभायतो के दो स्थान है।

,, तलाईकी पालपर एकस्थान (खा. खुद है)

बठोडाः–(अमरावती) शुक्रेश्वरकेपास (था. कूडीकी प्रशा.)

बलौदाः–पो जैतारण (मारवाड़) (थॉ. जैतारणकी शा.)

बड़साराः–पो. वरणा (गुजरात) (खा. जोधपुर महिलेरामद्वारेकी शा)

बड़ौदाः–पो नीमड़ीचौक (गुजरात) कुम्हारवाडा (था. ईडरकी शा.) यहाँपर चार स्थान इनके और है ।

बरसीसरः–पो. पलाना (वीकानेर) (थॉ. ऊड़सरकी शा.) (N)

वानारावासः–पो. आसोप (मारवाड) (थॉ.)

वारणीः–(मारवाड़) (थॉ. वोयलकी शा.)

वाजोलीः–पो. पिसागण (मारवाड) (खा. मैंदसरकी शा) (S)

वावडी.–पो. गाधानी (मारवाड़) (खा. खुद)

वालोतराः–(मारवाड़) नयावास (खा.शा)

वालेः–(मारवाड) (थॉ. वोयलकी शा.)

वामटसरः–पो सरूपुरा (वीकानेर) (था कालूका आदिस्थान है) (N)

वासणीः–गाडेलारी पो. नागोर (मारवाड) (था. तीतरीकी शा.)

वासणीः–ताड़ारी (मारवाड़) (थॉ. वडलू मनीरामजी म० प्रशा.)

वाघरासरः–(मारवाड़) (थॉ तीतरीकीप्रशा.

वारौंदाः–(मारवाड) (थॉ. वडलू मनीरामजीम० की शा.) यहाँपर थॉ. खवासपुरे का भी एकस्थान है ।

वालीसरः–(मारवाड़) (थॉ.) यहाँपर थांभायत टॉगियासकी शाखाके दो स्थान और है ।

वीदासरः–(वीकानेर) चोतीने कूएकेपास (खा. लाडणूकी शा.)

बीदासर –अगरवालोंका मुहल्ला (थाँ तीतरी)
बीसलपुर –(मारवाड़) (खा)
बीसनगर –(गुजरात) गोविन्दचकला श्री रामजी महाराजका रामद्वारा (थाँ बड़ल् मनीरामजी म०की शा)
,, चमेरोंमें रामद्वारा (थाँ जोधपुर सूरसागरकी शा)
बीकानेर –बड़ारामद्वारा (खा मुद) पासही सामने भंडार नामकस्थान आपका एक और है। गिनाणीपर धावड़ीमालि योंके बासमें एक आपकी बगीची है। डूगर मोमोरियल कालेजके पास रा मस्नेहीआश्रमभी आपहीका है। (३)
,, सुथारोंकी बड़ीगवाड़ रूपदासजीका रामद्वारा (थाँ)
,, ,, कालारामजीका रामद्वारा (खा रामसरकी शा)
,, ,, सुखराम॰ासजीका रामद्वारा (खा देशणोक प चरण दासजी म० का है)।
,, आचार्योंकी घाटीके नीचे चरण दासजीका रामद्वारा (खा दुरगदा सजी का है)
,, जेलकेपास ईश्वरदासजीका रामद्वारा (था कल्सरका है) (४)
,, नयकुएपास साधुसभा नामका रामद्वारा (खालसाही गुमॉसरके आत्मारामजी का बनाया हुवा है सिं हथल खजाना भेलमें पाठशाला खो लनेके लिए कोइ खास स्थान न होने के कारण आत्मारामजीने आप का बनाया हुआ उक्त "साधुसभा" नामका स्थान वास्ते पाठशालाके मुकर्रिर कर नकद रुपये ८८०) तथा अपनी कुलपुस्तकें वर्तन बासन कपडे आदि सब सामानसे सहायता देकर इस "रामस्नेहीसंस्कृतपाठ शाला" की आपने सबसे प्रथम नींव डाली।

१ बीसनगर श्रीरामजी महाराजके लिये श्रीसिंहथल श्रीखेड़ापा दोनों महन्ता महारा जाओंकी तरफसे गद्दी बख्शी हुई है।

बीकानेरः–मुहल्ला गूजरान वैद बालकदासजी का रामद्वारा (खा रामधरकी प्रशा)
,, नयाशहर डागांके मुहल्लेमें आत्माराम जीका रामद्वारा था आचीणेकी प्रशा
,, जलके कूएके पास बलदेवदासजीका रामद्वारा (खा शा) (४)
बीकूँकोर –पो आसोप (मारवाड़) (थाँ बालारावासकी शा)
बीजापुर –(गुजरात) (थाँ इडरकी शा)
बूँदी –(हाड़ोती) गुड़गावड़ी दरवाजा मुख रामदासजीका रामद्वारा (खा शा) (5)
बूड़ीवाड़ा –पो बालोतरा (मारवाड़) (था)
बेलासर –पो नापासर (बीकानेर) (थाँ) गीगासरका वर्तमान (स्थान) (३)
बोड़ावड़ –(मारवाड़) (थाँ)
बोयल –पो पीपाड़सिटी (मारवाड़) (था जोधपुर मोतीचौकका आदिस्थान) और (थाँ अर्जियाका वर्तमानस्थानभी यहींपर है)
ब्यावर –(राजपुताना) चांगदरवाजा (भारती भवन) (थाँ नींबाजका वर्तमान स्थान)
भादरेस –बाड़मेर (मारवाड़ मालानी) (खा शा)
भादावसिया –(मारवाड़) (था नींबाज)
भाणेरा –पो देशनोक (बीकानेर) (खा शा) (३)
भाखू –पो निवरी (मारवाड़) (थाँ जोध पुर सूरसागरकी शा)
भावगढ़–(मालवा) (था छोटावदकी शा)
भावी –(मारवाड़) (थाँ बोयलकी प्रशा)
भिलोडा –पो ईडर (गुजरात) (था इड रकी शा)
भीनासरः–(बीकानेर)हनुमानजी के मन्दिरके पास छ॰जीरामजीका रामद्वारा (था आचीणेका वर्तमानस्थान)

१ भारती भवन अर्थात् सरस्वती (वाणी) भवन न कि दयानामी भवन।

भीनासारः–सारडोंके वासमे लखारामजीका रामद्वारा (खा. दासोडी) (s)

भेलू.–(बीकानेर) पो. फलोधीहकूमत(मारवाड)ठि.सेठ चोथमल सूरजमल वरडियेकी हवेली (खा. दासोड़ीकी शा.) दासोडी स्थानाधीश कन्हीरामजी म. यहीपर निवास करते हैं। (s)

भैंसवाडाः–(मारवाड) (थाँ नीवाजकी शा)

मकलॉः–पो. झारड़ा स्टेशन महेंदपुर (मालवा) (थाँ.)

मथाणियाः–(मारवाड) (खा.)

मथुरा.–वृन्दावनदरवाजा मुहल्लाकागदियोंका (यू पी.) (था तीतरीकी प्रशा.)

मरोलीः–(वृजमड़ल) (था. तीतरीकी प्रशा)

मादलियाः–(मारवाड़) (खा. पीपाड़ तेजरामजी म० शा)

मालासः–(मारवाड़) (खा पीपाडतेजरामजी म० प्र शा.)

मूँधियाड़ः–(मारवाड़) (खा. शा)

मूँडवा.–(मारवाड) लाखोलाव तलावकी पालपर (खा खुद) (s)

,, बागके पास मलूकदासजीका रामद्वारा (थाँ तीतरीकी प्रशा)

मैंदसरः–पो सूरपुरा (बीकानेर) (खा. शा) (s)

,, एकस्थान (थाँ तीतरीकी शाखाका है।

मंडलॉ.–(मेवाड) (थाँ जोधपुर सूरसागरकी शा.)

रतनगढः–पो. (बीकानेर) शीतलके मढके पास (थाँ तीतरीकी प्रशा)

,, गढकी सफीलके पास रूपदासजीका रामद्वारा (खा. देशणोक पीरारामजी म की शा) (s)

,, पीजरापिरोलके पास (खा. लाडणूकी शा)

रतलामः–(मालवा) पुरोहितजीकावास (थाँ.)[1]

रतकूडियाः–(मारवाड़) (खा. गुसाँईसरकी शा.) (s)

रणीगामः–(मारवाड) (थाँ. नींवाजकी शा.)

राजलदेसरः–(बीकानेर) सेवगोंके मुहल्लेमें (थाँ तीतरीकी शा)

,, इनके पासही (थाँ. तीतरीकी दो शाखाएं और है)।

,, यहीपर झूँथारामजीका एक स्थान है (देश. खा पीरा. शा.) (s)

रायपुरः–(मारवाड़) (थाँ. नीवाजकी शा.)

रासीसर.–पो. देशणोक (बीकानेर) (खा. शा) (s)

रायमलाला·–(मारवाड) (थाँ.)

रामसरः–(बीकानेर) (खा शा (यहाँपर हिमतरामजीकी झोंपडी था मकलॉके शाखाकी है)

राँधेलः–(गुजरात) (था ईडरकी प्र. शा.)

लाडणूः–(मारवाड़) कुम्हारोंका वास (खा. सीयानेका वर्तमान स्थान) यहींपर राममुहल्ला नामका स्थान भी इन्हीका है।

लालमदेसरः–(बीकानेर) (थाँ) (s)

शिवकरः–पो वायडमेर (मारवाड़) (खा. सियाटकी शा)

शिवगज छावनी.–(दक्षिण) (खा सियाटकी शा)

शीलवाः–(मारवाड़) (थाँ. चोयलकी शा)।

सरदारशहरः–(बीकानेर) (थाँ तीतरीकी शा)

समँदसरः–(बीकानेर) (थाँ)

समदड़ी·–(मारवाड) (था.)

सवराड़ः–(मारवाड़) (था नीवाजकी शा.)

सवालिया.–(मारवाड) (खा. देशणोक पीरारामजी म० की शा) (s)

सरसी.–पो. नामली (मालवा) (थाँ. रतलामकी शा.)

साचोर.–(मारवाड़) (खा शा)

सामसर.–(मारवाड़) खा शा)

सारूँडाः–(बीकानेर) (खा. शा.)

---

[1] रतलाम थाँभायत ठिकानेको बाँकिया छड़ी और महन्त पदवी बखसी हुई है।

साथीण:-पो पीपाड़सिटी (मारवाड़) (थाँ बड्ल मनीरामजी म० शा)

,, बाईयोंका रामद्वारा (खा गुसाँई सरवीशा) (३)

सिणली -(मारवाड़) (था समुद्रजीकी शा)

सिणियाळा -(मारवाड़ मालानी) (थाँ वा रुकी शा) (४)

सिरोही -(राजपुताना) रत्ननावके सामने (खा शा)

सिंहथळ -पो नापासर (बीकानेर) पूज्य पाद श्री १०८श्रीपाटआचार्योंका रामधाम।

सियाणा -(बीकानेर) (खा लाडणूना आदिस्थान)

सियाट -(मारवाड़) (खा जोधपुर सो जळिये दरवानेवाले रामद्वारेका आदिस्थान)

सुजानगढ -(बीकानेर) (खा लाडणूकी शा)

सूरतगढ -(बीकानेर) नईमंडीमें (थाँ पालूकी शा) (४)

सूरत -(गुजरात) जदाखाडी (थाँ इव रवी प्रशा)

,, लालदरवाजा मोटीसेरी (खा जोधपुर माहिले रामद्वारेकी प्रशा)

,, फोलवाड़ मधुपुरा जयरामजीका रामद्वारा (खा जोधपुर माहिले रामद्वारेकी प्रशा)

सूडसर -(बीकानेर) (था) (४)

सोजत -(मारवाड़) कुम्हारांका वास (खा पीपाड़ उधोवरामजी म० की शा)

सौंखेडा:-(मालवा) (थाँ रतरामकी शा)

ससारदेसर -(बीकानेर) (खा शा) (३)

हसनपुर -(यू पी) (था वीतरीकी प्रशा)

हनुमानगढ -(बीकानेर) (खा शा) (८)

हुरडा -(मेवाड़) (था नीबाजकी शा)

नोट —सिंहथल खेड़ापा मेखा में मेला महोत्सव आदिके लिए परम्परा से "थलवटम ण्डल" और "मारवाड़मण्डल" दो मण्डल माने गये हैं, थलवटमण्डल में मेला करनेवाले निम्नलिखित ठिकाणों को पत्रिका दिया करते हैं, और मारवाड़ मण्डल में मेला करनेवाले थलवट मण्डल के ठिकानोंको छोड़कर शेषको पत्रिका दिया करते हैं । यह साधारण मेले कहलाते हैं और जिनमें दोनों मण्डलों को पत्रिका दी जाती है वे असाधारण मेले अथवा महामहोत्सव कहलाते हैं। इनके सिवाय जो सिंहथल खेड़ापा के दोनों महन्त महाराज को न पधराकर अपने ही ठिकाने के महन्त को पाँचपचीस साधुओं के साथ बुलाकर चद्दर पिछोड़ी देते हैं वह जिसनाम से पुकारा जाता है वह अनिश्चित है । श्रीसिंहथल चैत्रके मेलेपर अथवा श्रीखेड़ापा होलीफूलडोलपर जो मेला करना चाहे उसको मण्डलमें पत्रिका देनेकी कोई विशेष आवश्यकता नहीं रखीगई है । थलव मण्डलके ठिकानों के नाम —ऊ'सर, वरणू, काळू, किसीदेसर, कोडायत, गीगासर गुसाँईसर छोटा, गुसाँईसर बड़ा, गंगाशहर (सबठिकाने) चाखू, छापर, जैसलसर, डूंगरगढ (सबठिकाने) दीतरी दडीबा, दासोड़ी, देशनोक (सबठिकाने), नापासर पलाना, पाचोड़ी, प्रतापनगर (डिवि जन श्रीगंगानगर बीकानेर) बरसीसर, वामटसर बागरासर, बीदासर (सबठिकाने), बीकानेर (सबठिकाने), बेनीसर, भाणेरा, भीनासर (सबठिकाने), भेळू, मं'सर (सब ठिकाने), रतनगढ (सबठिकाने), राजलदेसर (सबठिकाने), रासीसर, रामसर, ला डणूं, लाखमदेसर, शीलवा, सरदारशहर, साहूँवा, सियाणा, सुजानगढ, सूरतगढ, सूडसर, ससारदेसर, हनुमानगढ ।

आपका,

रामनारायण ।